Development of Education System

DEDU501

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

शैक्षिक व्यवस्था का विकास

DEVELOPMENT OF EDUCATION SYSTEM

Copyright © 2012
All rights reserved with publishers

Produced & Printed by
USI PUBLICATIONS
2/31, Nehru Enclave, Kalkaji Extn.,
New Delhi-110019
for
Lovely Professional University
Phagwara

पाठ्यक्रम (SYLLABUS)

शैक्षिक व्यवस्था का विकास
(DEVELOPMENT OF EDUCATION SYSTEM)

उद्देश्य:
1. विद्यार्थियों को भारत में शिक्षा की प्राचीन, मध्यकालीन तथा ब्रिटिश प्रणाली की विशिष्टताओं, उसकी शक्तियों तथा सीमाओं की जानकारी उपलब्ध करवाना।
2. विद्यार्थियों को स्वातंत्रता के पश्चात् भारतीय शिक्षा के विकास से अवगत करवाना।
3. विद्यार्थियों को भारत में शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों की जानकारी उपलब्ध करवाना।

Objectives:
1. Acquire knowledge of characteristics features of ancient, medieval and British system of education in India and of their strengths and limitations.
2. Appreciate the developments in India education during the post-independence era.
3. Understand he constitutional obligation in relation o education in India.

Sr. No.	Content
1	Education in India during ancient period: Vedic and Buddhist Education, Education in India during medieval period: Islamic Education, Education in India during British period: Macaulay's minutes, Wood's dispatch and Hunter commission
2	Education in India after independence: Secondary Education Commission (1952-53), Indian Education Commission (1964-66), National Policy of Education (1986)
3	Programme of Action (1992), Quality of education: concept, parameters, status and prospects with focus on objectives outlined in Delor's Commision Report, National Knowledge Commission(2009), National curriculum Framework (2005)
4	Functions of apex bodies of Education: NCERT, SCERT, Functions of CBSE and State Boards of Education, Functions of UGC, NAAC, NCTE, Constitutional provisions with special reference to Education in India
5	Universalization of elementary Education: concept and problems, Programs of UEE, District Primary Education Programme, Sarav Shiksha Abhiyan, Right to Education (2009)
6	Secondary Education: concept and need, Problems of Secondary Education: Aims, Curriculum, Methods, Examination, Vocationalisation of secondary education
7	Teacher Education: concept and importance, Types of Teacher education (pre-service and in-service), Teacher education at various levels, emerging trends in teacher Education

8	Distance Education: concept, need and modes of distance education, Privatization of higher education, Globalization of education
9	Human Rights Education: concept and importance of human rights education and role of education in promoting human rights, Brief historical background of human rights with special reference to Universal Declaration of Human rights ,Human Rights Act in Indian Legislation,
10	Environmental Education: Concept and need, Role of Education in generating environmental awareness

विषय-सूची

इकाई (Units) **(CONTENTS)** **पृष्ठ संख्या (Page No.)**

1.	प्राचीन काल के दौरान भारत में शिक्षा: वैदिक और बौद्धकालीन शिक्षा (Education in India during ancient Period Vedic and Buddhist Education)	1
2.	भारत में मध्यकालीन शिक्षा—इस्लामिक शिक्षा (Education in India during medieval Period: Islamic Education)	27
3.	ब्रिटिशकालीन भारतीय शिक्षा (Education in India during British Period)	40
4.	स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा (Education in India After Independent)	48
5.	भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) (Indian Education Commission-1964-66)	58
6.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति—1986 (National Policy of Education–1986)	85
7.	कार्य योजना (1992) (Programme of Action (1992))	101
8.	शिक्षा की गुणवत्ता: डेलर्स कमीशन रिपोर्ट (Quality of Education: Delor's Commission Report)	109
9.	राष्ट्रीय ज्ञान आयोग—2009 (National Knowledge Commission—2009)	118
10.	राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (2005) (National Curriculum Framework-2005)	122
11.	शिक्षा के शीर्षस्थ अंगों के कार्य: एन.सी.ई.आर.टी. तथा एस.सी.ई.आर.टी. (Functions of Apex Bodies of Education: NCERT, SCERT)	128
12.	सी.बी.एस.ई. तथा राज्य शैक्षिक बोर्ड के कार्य (Functions of CBSE and State Board of Education)	134
13.	यू.जी.सी., एन.ए.ए.सी. तथा एन.सी.टी.ई. के कार्य (Functions of UGC, NAAC and NCTE)	141
14.	भारत में शिक्षा के संदर्भ में विशेष संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Special Reference to Education in India)	150
15.	प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण : अवधारणा तथा समस्याएँ (Universalization of Elementary Education : Concept and Problems)	155
16.	यू.ई.ई. के कार्यक्रम (Programmes of UEE)	162
17.	जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme)	169
18.	सर्वशिक्षा अभियान (Sarvashiksha Abhiyan)	175

19.	शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) (Right to Education Act, 2009)	179
20.	माध्यमिक शिक्षा–अवधारणा एवं आवश्यकता (Secondary Education—Concept and Need)	185
21.	माध्यमिक शिक्षा की समस्याएँ (Problems of Secondary Education)	198
22.	माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण (Vocationalisation of Secondary Education)	206
23.	अध्यापक शिक्षा (Teacher Education)	215
24.	अध्यापक शिक्षा के प्रकार (Types of Teacher Education)	221
25.	अध्यापक शिक्षा के विभिन्न स्तर (Teacher Education at Various Levels)	243
26.	दूरस्थ शिक्षा (Distance Education)	258
27.	उच्च शिक्षा का निजीकरण (Privatization of Higher Education)	267
28.	शिक्षा का सार्वभौमीकरण (Globalization of Education)	277
29.	मानवाधिकार की संक्षिप्त सार्वत्रिक ऐतिहासिक घोषणा (Brief Historical Universal Decleration of Human Rights)	289
30.	पर्यावरणीय शिक्षा : अवधारणा एवं आवश्यकता (Environmental Education : Concept and Need)	295
31.	पर्यावरणीय जागरूकता के प्रसार में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in Developing Environmental Awareness)	310

नोट

इकाई–1: प्राचीन काल के दौरान भारत में शिक्षा: वैदिक और बौद्धकालीन शिक्षा (Education in India during ancient Period Vedic and Buddhist Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
1.1 वैदिककाल में भारतीय शिक्षा व्यवस्था (Education System in India during Vedic Period)
1.2 बौद्ध कालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था (Education System in India during Buddhist Period)
1.3 सारांश (Summary)
1.4 शब्दकोश (Keywords)
1.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
1.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्राचीन काल की भारतीय शैक्षिक व्यवस्था (वैदिक और बौद्धकालीन) की व्याख्या एवं विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

वेदकालीन युग में शिक्षा का सर्वाधिक प्रमुख उद्देश्य छात्रों में अच्छे संस्कारों का विकास करना था। शिक्षा के द्वारा वैदिक आदर्शों के अनुरूप संस्कारों को छात्रों में विकसित किया जाता था। ब्रह्मचर्य, सदाचार, परमार्थ, जनहित भावना, परोपकार, सामाजिक भोजन, गुरु व बड़ों का आदर, कर्त्तव्य पालन, सत्य व्रत, धर्म के प्रति निष्ठा, श्रम के प्रति रुचि, उच्च विचार आदि संस्कारों को विकसित करके छात्रों को संस्कारयुक्त बनाया जाता था। प्राचीन शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत ज्ञान एवं अनुभव का समन्वय करके शिक्षा प्रदान की जाती थी, जिसके फलस्वरूप शिक्षार्थी ज्ञान को आत्मसात् करने में सफल हो पाते थे। इस शिक्षा पद्धति में चिन्तन, मनन, स्वाध्याय इत्यादि के द्वारा शिक्षार्थियों को यथासम्भव योग्य व कुशल बनाने का प्रयास गुरुजनों द्वारा किया जाता था। इस उद्देश्य के सन्दर्भ में **डॉ. आर. के. मुकर्जी ने लिखा है कि–** "शिक्षा का उद्देश्य पढ़ना नहीं था, वरन् ज्ञान एवं अनुभव का आत्मसात करना था।"

वैदिक युग में शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य मानव का आत्मिक विकास करना था। उस काल में मानव जीवन को अत्यधिक सरल, स्वाभाविक तथा पवित्र बनाने का प्रयास किया जाता था। जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति था। मनुष्य की ईश्वर में पूर्ण आस्था थी तथा धर्म के द्वारा सत्य तक पहुँचकर मोक्ष प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा था।

वैदिक कालीन शिक्षा का एक अन्य महत्वपूर्ण गुण, छात्रों की चित्तवृत्तियों का निरोध करना था। प्राचीन भारतीय शिक्षाविद् जीवन को सफल बनाने हेतु आत्मज्ञान एवं आत्मसंयम का समान महत्व मानते थे। इसी कारणवश वैदिक काल में

नोट

शिक्षार्थियों को न केवल मौखिक या सैद्धान्तिक रूप से सत्य का ज्ञान कराया जाता था, अपितु सत्य के मार्ग पर चलने के लिये उन्हें आत्मसंयम की दिशा में प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता था। इसी उद्देश्य से शिक्षार्थियों को भिन्न-भिन्न प्रकार की कठोर परीक्षाओं में अपने को खरा सिद्ध करना आवश्यक था। शिक्षार्थियों को दिनचर्याओं का कठोरता से पालन करना पड़ता था। **डॉ. आर. के. मुखर्जी** के अनुसार–"मन के उन कार्यों का निषेध था, जिनके कारण यह भौतिक जगत में उलझ जाता है।"

वैदिक काल में शिक्षार्थियों के चरित्र-निर्माण तथा विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इसी को शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य समझा जाता था। वैदिक काल में ज्ञान सम्पन्न परन्तु चरित्रहीन व्यक्ति को अत्यंत निम्न दृष्टि से देखा जाता था। शिक्षार्थियों के चारित्रिक निर्माण हेतु, उनमें आरम्भ से ही विभिन्न नैतिक प्रवृत्तियों का विकास करना नितान्त आवश्यक माना जाता था। गुरुजन शिक्षार्थियों को सदाचरण के उपदेश देते थे एवं स्वयं अपने उन्नत चरित्र को उदाहरण स्वरूप शिक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत करते थे।

1.1 वैदिक काल में भारतीय शिक्षा व्यवस्था (Education System in India during Vedic Period)

डॉ. एस. के. अल्तेकर के अनुसार–"प्राचीन भारत में सम्भवत: 400 ई. पू. से पहले प्राथमिक शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी। उस समय तक बालक का परिवार ही उसकी शिक्षा का केन्द्र था। उसके बाद कुछ ब्राह्मणों ने व्यक्तिगत रूप से शिक्षा देने का कार्य आरम्भ किया।" इसके परिणामस्वरूप, जिस शिक्षा-प्रणाली का विकास हुआ, उसमें प्राथमिक और उच्च शिक्षा की समुचित व्यवस्था थी। प्राचीन भारत में शिक्षा के यही दो स्तर थे।

1. प्राथमिक शिक्षा (Primary Education)

1. **सामान्य परिचय**–प्राथमिक शिक्षा के विषय में सर्वप्रथम उल्लेखनीय बात यह है कि इस पर ब्राह्मणों का आधिपत्य नहीं था। यही कारण है कि उन्होंने धर्मग्रन्थों में इसका विवरण न देकर इसकी उपेक्षा की है। **संतोष कुमार दास** ने ठीक लिखा है–**"ब्राह्मणों के पास उस शिक्षा की उपेक्षा करने के कारण थे, जो उनके हाथ में नहीं थे।"**

   ब्राह्मणों की उपेक्षा के बावजूद 'ऋग्वेद' में यत्र-तत्र ऐसे संकेत मिलते हैं जिनसे पाठशाला की भाँति किसी शिक्षा-संस्था की कल्पना की जा सकती है।
2. **प्रवेश तथा अवधि**–**डॉ. वेद मित्र** के अनुसार, "प्राथमिक शिक्षा का आरम्भ 5 वर्ष की आयु में "विद्यारम्भ संस्कार" से होता था और सभी जातियों के बालकों के लिये अनिवार्य था। इसका अभिप्राय यह है कि सभी जातियों के बालक प्राथमिक शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। इस शिक्षा की अवधि का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कोई स्रोत उपलब्ध नहीं है; पर डॉ. ए. एस. अल्तेकर के अनुसार इसकी अवधि 6 वर्ष की थी।"
3. **पाठ्यक्रम**–प्राथमिक शिक्षा के अन्तर्गत बालकों को पहले कुछ वादक यन्त्रों का उच्चारण करना और बोलना सिखाया जाता था। जब वे उन यन्त्रों को कंठस्थ कर लेते थे तब उनको पढ़ने और लिखने की शिक्षा दी जाती थी। भाषा का वाँछित ज्ञान हो जाने के पश्चात् उनको साहित्य तथा व्याकरण से परिचित कराया जाता था।

क्या आप जानते हैं वैदिक शिक्षा का पाठ्यक्रम था–वैदिक मन्त्रों का स्मरण, पढ़ना और लिखना, भाषा, साहित्य तथा व्याकरण।

2. उच्च शिक्षा (Higher Education)

1. **सामान्य परिचय**–प्राचीन काल में सर्वप्रथम केवल प्राथमिक शिक्षा की ही व्यवस्था थी। परन्तु सामाजिक प्रगति के साथ-साथ शिक्षा के विषयों की संख्या में वृद्धि होती चली गयी और उनके लिये पृथक शिक्षा-संस्थाओं

नोट

की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विशिष्ट विद्यालयों की स्थापना की गयी। लेखकों का अनुमान है कि इनकी स्थापना ईसा पूर्व 5वीं शताब्दी तक हो गई थी। यहीं से उच्च शिक्षा के इतिहास का सूत्रपात होता है।

2. **प्रवेश तथा अवधि**–उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार केवल ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों को था। इन जातियों के बालक सामान्य रूप से क्रमश: 8, 11 और 12 वर्ष की आयु में शिक्षा-संस्था में प्रवेश करते थे। साहित्य तथा धर्मशास्त्र के अध्ययन की अवधि 10 वर्ष और एक वेद के अध्ययन की अवधि 12 वर्ष की थी।
3. **पाठ्यक्रम**–पाठ्यक्रम में परा (आध्यात्मिक) विद्या तथा अपरा (लौकिक) विद्या–दोनों को स्थान दिया गया था। परा विद्या के अन्तर्गत वेद, वेदांग, पुराण, दर्शन, उपनिषद् आदि आध्यात्मिक विषय थे। अपरा विद्या के अन्तर्गत इतिहास, तर्कशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, भौतिकशास्त्र आदि लौकिक विषय थे।
4. **शिक्षण-विधि**–मुद्रित पुस्तकों का अभाव होने के कारण शिक्षण-विधि प्राय: मौखिक थी। छात्र गुरु से वेदादि ग्रन्थों को सुनते थे, उसे उच्चारण का अनुकरण करते थे और पाठ्य-विषय दोहराते थे। फिर वे एकान्त में पाठ्य-विषय का मनन, चिन्तन, स्वाध्याय और पुनरावृत्ति करते थे। शिक्षण-विधि में प्रवचन, व्याख्यान शास्त्रार्थ, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद आदि का भी प्रयोग किया जाता था।
5. **परीक्षाएँ तथा उपलब्धियाँ**–शिक्षा समाप्त होने पर छात्रों की मौखिक परीक्षा होती थी इसके लिये उन्हें विद्वानों की सभा में उपस्थित होना पड़ता था, जहाँ उन्हें विद्वानों द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों के उत्तर देने पड़ते थे। परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने वाले छात्रों को उपाधियाँ नहीं दी जाती थीं।
6. **शिक्षा-संस्थाएँ**–प्राचीन काल में अनेक प्रकार की शिक्षा संस्थाएँ थी; जैसे–

   (1) **टोल**–टोल में संस्कृत की शिक्षा दी जाती थी। एक टोल में एक शिक्षक होता था।

   (2) **चरण**–चरण में वेद के एक अंग की शिक्षा दी जाती थी। एक चरण में एक शिक्षक होता था।

   (3) **परिषद**–परिषद् में विभिन्न विषयों की शिक्षा दी जाती थी। एक परिषद् में साधारणत: दस शिक्षक होते थे।

   (4) **विद्यापीठ**–विद्यापीठ में व्याकरण और तर्कशास्त्र की शिक्षा दी जाती थी। एक विद्यापीठ में अनेक शिक्षक होते थे।

   (5) **मन्दिर-महाविद्यालय**–किसी मन्दिर से सम्बद्ध मन्दिर-महाविद्यालय में धर्म, दर्शन, वेदों, व्याकरणादि की शिक्षा दी जाती थी।

   (6) **घाटिका**–घाटिका में धर्म और दर्शन की उच्च शिक्षा दी जाती थी। एक घटिका में अनेक शिक्षक होते थे।

   (7) **गुरुकुल**–गुरुकुल में वेदों, साहित्य, धर्मशास्त्र आदि की शिक्षा दी जाती थी। एक गुरुकुल में एक शिक्षक होता था।

   (8) **विशिष्ट विद्यालय**–विशिष्ट विद्यालय में एक विशिष्ट विषय की शिक्षा दी जाती थी. जैसे–वैदिक विद्यालयों में वेदों की और सूत्र विद्यालय में यज्ञ, हवन आदि की। एक विशिष्ट विद्यालय में एक शिक्षक होता था।

   (9) **ब्राह्मणीय महाविद्यालय**–इस महाविद्यालय को 'चतुष्पथी' कहा जाता था, क्योंकि इसमें चारों शास्त्रों अर्थात् अग्रांकित चार विषयों की शिक्षा दी जाती थी–दर्शन, पुराण, कानून और व्याकरण। एक ब्राह्मणीय महाविद्यालय में एक शिक्षक होता था।

   (10) **विश्वविद्यालय**–उच्च शिक्षा की कुछ संस्थाओं ने कालान्तर में विश्वविद्यालयों का रूप ग्रहण किया। इनमें धार्मिक शिक्षा के अतिरिक्त वाणिज्य, चित्रकला, चिकित्साशास्त्र आदि की भी शिक्षा विभिन्न शिक्षकों द्वारा दी जाती थी। बनारस, नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालय सबसे अधिक प्रसिद्ध थे।

नोट

> *टास्क* एक परिषद में कितने शिक्षक होते थे?

शिक्षा के अन्य क्षेत्र (Other Spheres of Education)

1. **स्त्री शिक्षा** (Women's Education)—वैदिक काल में पुरुषों के समान स्त्रियों को भी शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त था। स्त्रियों को वेदों का अध्ययन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी तथा वे पुरुषों के साथ यज्ञ में भाग लेती थीं। प्राचीन काल में अनेक विदुषी स्त्रियाँ थीं; जैसे—मैत्रेयी, विश्ववरा, घोषा, गार्गी, अपाला, शकुन्तला तथा अनुसुईया।

   बालिकाओं को धर्म तथा साहित्य के अतिरिक्त नृत्य, संगीत, काव्य-रचना, वाद-विवाद आदि की भी शिक्षा दी जाती थी। उनको शिक्षा अधिकतर अपने परिवारों में अपनी माता, भाई, बहन या कुल-पुरोहित के द्वारा दी जाती थी। यद्यपि बालिकाओं के लिये पृथक विद्यालयों की व्यवस्था नहीं थी, तथापि सह-शिक्षा का कुछ सीमा तक प्रचलन था। जैसे—आत्रेयी ने लव तथा कुश के साथ बाल्मीकि के आश्रम में शिक्षा प्राप्त की थी।

   बालिकाओं और स्त्रियों को 200 ई. पू. तक शिक्षा की सभी सुविधाएँ प्राप्त थीं, पर उसके बाद उनकी शिक्षा पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया, जिससे उनकी शिक्षा अवरुद्ध हो गयी। इस सम्बन्ध में **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार, **"धर्मशास्त्र युग (200 ई. पू.–500 ई.) में बालिकाओं के लिये विवाह की आयु को कम करके 12 वर्ष तक कर दिया गया और स्त्रियों के लिये वेदाध्ययन को निषेध कर दिया गया। इनसे उनकी शिक्षा को प्रबल आघात पहुँचा।"**

2. **व्यावसायिक शिक्षा** (Professional Education)—प्राचीन भारत में धर्म का मानव-जीवन में विशेष स्थान था। अत: शिक्षा मुख्यत: धार्मिक और आध्यात्मिक थी। किन्तु व्यावासायिक शिक्षा को आवश्यक मानकर उसकी भी समुचित व्यवस्था की गयी थी। इस सन्दर्भ में **डॉ. आर. के मुखर्जी** के अनुसार **"व्यावसायिक शिक्षा के आधार पर ही प्राचीन भारत अपने आर्थिक जीवन और वैभव का निर्माण करने में सफल हुआ।"**

प्राचीन भारत में व्यावसायिक शिक्षा के महत्वपूर्ण अंग निम्न प्रकार हैं–

1. **चिकित्साशास्त्र की शिक्षा** (Medical Education)—प्राचीन काल में चिकित्साशास्त्र की शिक्षा व्यक्तिगत शिक्षकों द्वारा दी जाती है, जो अपने विषय के विशेषज्ञ होते थे। इन शिक्षकों में अश्विनी कुमारों के नाम अपनी विलक्षण प्रतिभा के लिए आज भी प्रसिद्ध हैं। चिकित्साशास्त्र की शिक्षा आरम्भ करने से पूर्व उपनयन संस्कार होता था। इस संस्कार के लिये उसी छात्र को योग्य समझा जाता था, जो पूर्णतया स्वस्थ होता था। चिकित्साशास्त्र के अध्ययन की अवधि साधारणत: 8 वर्ष की थी।

2. **सैनिक शिक्षा** (Military Education)—प्राचीन भारत में सैनिक शिक्षा व्यावसायिक आचार्यों द्वारा दी जाती थी। इन आचार्यों में द्रोणाचार्य का नाम आज भी प्रसिद्ध है। उत्तर भारत में तक्षशिला, सैनिक शिक्षा का विख्यात केन्द्र था। यह शिक्षा विशेष रूप से क्षत्रियों और राजकुमारों के लिये थी। सैनिक शिक्षा आरम्भ करने से पूर्व शिक्षार्थी के लिये उपनयन संस्कार आवश्यक था। उसके पश्चात् उसे युद्धकला का ज्ञान प्रदान किया जाता था और उस समय के प्रमुख अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग का प्रशिक्षण दिया जाता था।

3. **वाणिज्य शिक्षा** (Commercial Education)—यह शिक्षा–वैश्यों के लिये थी। 'मनुस्मृति' और कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र में इस शिक्षा का पूर्ण वर्णन मिलता है। इसमें अनेक विषय सम्मिलित थे; यथा–क्रय-विक्रय के नियम, आर्थिक एवं व्यापारिक भूगोल, विभिन्न क्षेत्रों की उपज एवं आवश्यकताएँ, उपज-क्षेत्रों और मंडियों को जाने के मार्ग इत्यादि। वैश्य बालकों को वाणिज्य की व्यावहारिक शिक्षा अपने पिता से और अपने घर की दुकान पर अनुभव तथा अभ्यास से प्राप्त होती थी। यह शिक्षा कुछ शिक्षकों द्वारा भी दी जाती थी।

नोट

उत्तर वैदिक–उत्तर वैदिक युग में शिक्षा के पाठ्यक्रम में विभिन्न ग्रन्थों एवं धर्मों को सम्मिलित किये जाने के कारण इस युग की शिक्षा पूर्व वैदिक युगीन शिक्षा की तुलना में अधिक उन्नत बन गयी थी। इस युग की शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं–

(1) **उपनयन संस्कार**–उपनयन का अर्थ है पास ले जाना। शिक्षा के प्रसंग में इसका अर्थ है कि शिक्षा का प्रारम्भ करने के लिये बालक को गुरु के समीप ले जाना। अत: इस संस्कार के बाद बालक को शिक्षिकोपार्जन के लिये गुरु के पास ले जाया जाता था।

(2) **शिक्षा संस्थायें**–प्राचीन भारत में आजकल की तरह शिक्षण संस्थायें नहीं थीं। तक्षशिला, बनारस आदि उत्तर वैदिक काल की प्रमुख संस्थायें थीं। इस प्रकार की संस्थायें बौद्ध युग में उदित हुई थीं। उत्तर वैदिक काल में गुरुकुल की शिक्षा का प्रमुख केन्द्र थे। भव्य मन्दिरों के विशाल प्राँगणों में भी शिक्षा कार्य का उल्लेख मिलता है।

प्रोफेसर वी. कुमार के अनुसार, "वैदिक काल में मनोवैज्ञानिक शिक्षण पद्धतियों पर ध्यान आकर्षित किया गया। श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन विधि को शिक्षण में प्रयुक्त किया जाता था। श्रवण विधि में छात्र बड़े ध्यान और श्रद्धापूर्वक गुरुवाणी को सुनता था। तदोपरान्त मनन और चिन्तन द्वारा श्रवण की गयी बातों का विश्लेषण करता था। विश्लेषण के उपरान्त वह जिन तथ्यों तक पहुँचता था उन्हें निदिध्यासन प्रक्रिया के द्वारा अपने मस्तिष्क में ग्रहण करता था। इस युग में मौखिक कार्य पर अधिक बल दिया जाता था। लेखन कार्य भोजपत्र पर हुआ करता था। लेखन कार्य का अभ्यास भी अधिक कराया जाता था। शंका समाधान, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद आदि के माध्यम से भी छात्र-छात्राओं को शिक्षा दी जाती थी।"

(3) **ब्रह्मचर्य**–इस काल में शिक्षार्थी द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत लिया जाता था। साथ ही उसके कठोरता से पालन पर पूरा जोर दिया जाता था।

(4) **समावर्तन उपदेश**–सम्पूर्ण शिक्षण कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् विद्यार्थियों का समावर्तन संस्कार होता था। यह संस्कार गुरुओं की देखरेख में सम्पन्न किया जाता था। वर्तमान दीक्षान्त समारोह समावर्तन उपदेश का आधुनिक रूप है।

उत्तर वैदिक काल में सम्पन्न किये जाने वाले समावर्तन उपदेश के सम्बन्ध में **डॉ. वर्मा** के अनुसार–

"लगभग 12 वर्षों तक विद्याध्ययन करने के पश्चात् छात्र जब आश्रम से विदा होते थे तो गुरु के समक्ष उपस्थित होते थे। गुरुजन उन्हें आशीर्वाद तथा उपदेश देते थे। यह प्रक्रिया समावर्तन संस्कार अथवा दीक्षान्त समारोह के नाम से जानी जाती थी। विश्वविद्यालयों में आज भी यह समारोह दीक्षान्त भाषण के नाम से जाना जाता है। इस अवसर पर गुरुजन छात्रों को ऐसा उपदेश देते थे जो उसके भावी जीवन में सहायक सिद्ध होता था। छात्रों को सदाचारी, संयमित तथा मानव सेवी बनने का सुन्दर उपदेश दिया जाता था। समावर्तन संस्कार के कुछ उपदेशों का आजकल के दीक्षान्त समारोह में भी ज्यों का त्यों दोहराया जाता है।" जैसे–

"सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यान्मा प्रमद।
मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव।"

(5) **शिक्षण विधियाँ**–इस काल में शिक्षण विधि मौखिक थी। शिक्षार्थियों को गुरुओं द्वारा समझाई गयी सभी बातों को कण्ठस्थ करना होता था। लेखन कार्य के लिये जरूरी अभ्यास कराया जाता था। प्रश्नोत्तर तथा वाद-विवाद पर जोर दिया जाता था। शंका-समाधान के लिये परिषदों का आयोजन किया जाता था।

(6) **पाठ्यक्रम**–इस काल में अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, वेद, पुराण, शस्त्रविद्या, व्याकरण, औषधि विज्ञान तथा नक्षत्र विद्या आदि अध्ययन के विषय थे।

(7) **धर्म प्रधानता**–इस काल में धार्मिक शिक्षा पर बल दिया जाता था। गुरुकुल में शिक्षार्थियों की दिनचर्या में धार्मिक कर्मकाण्डों का अभ्यास शामिल था तथा गुरुजन यह अभ्यास कराते थे। इस सम्बन्ध में **प्रोफेसर वर्मा** के अनुसार–

नोट

"ब्राह्मण कालीन शिक्षा में धार्मिक भावों की प्रधानता थी। छात्रों को विभिन्न प्रकार की धार्मिक क्रियाओं का ज्ञान कराया जाता था। आश्रमों में तरह-तरह की धार्मिक क्रियायें की जाती थीं जिनके माध्यम से छात्र धार्मिक कार्यों को सीखते थे। छात्रों का ईश्वर के प्रति अनुराग होता था। वे यज्ञ, हवन आदि क्रियाओं को करने में दक्ष हो जाते थे। तत्कालीन धार्मिक कर्मकाण्डों को भी छात्रों को सिखाया जाता था। उस समय समाज अधिक धार्मिक था। अत: शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में धार्मिक भावनाओं का प्रभुत्व हुआ करता था।"

(8) **भिक्षावृत्ति**—शिक्षार्थियों को कुण मेखला, मृगछाला तथा लम्बे केश रखने पड़ते थे। शिक्षार्थियों द्वारा माँगी हुई भिक्षा से विद्यार्थियों की भोजन व्यवस्था चलती थी। शिक्षार्थियों से भिक्षा मँगवाने का उद्देश्य उनके अहंकार को समाप्त करना होता था।

(9) **नारी शिक्षा**—उत्तर वैदिक काल में नारी की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। इस युग में नारी शिक्षा को सीमित कर दिया गया था। नारी के घर से बाहर निकलने तथा सामाजिक क्रिया-कलापों में भाग लेने पर बन्दिशें लगा दी गयी थीं। इस युग में नारी का सामाजिक स्तर इतना गिर गया था कि कन्या के जन्म को ही अमंगल समझा जाने लगा था।

(10) **गुरु-शिष्य सम्बन्ध**—इस काल की शिक्षा के अन्तर्गत गुरु छात्र के लिये पिता के समान माना जाता था एवं प्रत्येक परिस्थितियों में छात्र के लिये आदर का पात्र होता था। गुरु भी छात्र को पुत्र के समान समझता था और उसके भविष्य को उज्ज्वल बनाने का पूरा प्रयत्न करता था। गुरु के सम्मुख छात्र विनम्र होकर रहता था और सेवा भाव से उसका कार्य करता था। गुरु छात्र के कल्याण के लिये तत्पर रहता था। सारांश यह है कि गुरु तथा शिष्य आपस में परिवार की तरह रहते थे।

(11) **वैयक्तिक शिक्षा का प्रचलन**—इस काल में शिष्यों एवं गुरुओं के बीच वैयक्तिक सम्पर्क अधिक होता था। आश्रमों एवं अन्य स्थानों पर सामूहिक शिक्षा का प्रबन्ध न होने पर छात्र गुरुओं के पास जाकर ही शिक्षा ग्रहण करते थे। इस प्रकार गुरुजन शिष्यों के वैयक्तिक विकास पर अधिक ध्यान देते थे। छात्रों के सर्वांगीण विकास का उत्तरदायित्व गुरुओं पर ही होता था।

(12) **शिक्षा काल**—ब्राह्मणकालीन शिक्षा में वैदिक कालीन शिक्षा के समान ही शिक्षा प्राप्त करने का समय लगभग 12 वर्ष का था। विशेष परिस्थितियों में 12 वर्ष से अधिक आयु में भी ब्रह्मचारी शिक्षा का अध्ययन करते थे। ऐसे छात्रों को आश्रम में रहकर सेवा भी करनी पड़ती थी।

(13) **परीक्षा प्रणालियाँ**—इस काल में परीक्षाएँ नहीं होती थीं। शिक्षक छात्र को नया पाठ तभी पढ़ाता था जबकि मौखिक प्रश्नों को पूछने के पश्चात् उसे विश्वास हो जाता था कि उसने पुराना पाठ कंठस्थ कर लिया है।

(14) **छात्रों की जीवनचर्या**—इस काल में छात्रों की जीवनचर्या को निर्धारित कर दिया गया था। छात्रों की दिनचर्या इस प्रकार थी—

(1) शिक्षा प्राप्त करना

(2) आश्रम में पशुओं की सेवा एवं रक्षा करना।

(3) यज्ञ कुण्ड में अग्नि बनाये रखना।

(4) कृषि कार्य करना।

इसके अतिरिक्त छात्र ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके प्रतिदिन आश्रमों में बौद्धिक शिक्षा ग्रहण करते थे। पूर्ण अनुशासित तथा संयमित रहकर सदैव सदाचार का पालन करते थे। वे गुरुओं की आज्ञा का पालन करते थे।

(15) **शिक्षा की सामाजिक व्यवस्था**—इस काल में वर्ण व्यवस्था के नियम कठोर हो गये थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र वर्णों के कार्यों का विभाजन कर दिया गया था। सम्पूर्ण शिक्षा की व्यवस्था ब्राह्मणों के ही हाथ में थी। सर्वत्र उन्हें ही प्राथमिकता दी जाती थी एवं ग्रन्थों का प्रमाणक भी उन्हें ही माना जाता था। शूद्रों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर इस काल में नहीं दिया जाता था। इस काल में ही वर्ण एवं जाति भेद के कारण समाज

नोट

में संकीर्णता व्याप्त हो गयी थी। जाति के अनुसार ही व्यक्ति का वर्ण निर्धारण होता था। वर्ण के आधार पर उसके कार्य का निर्धारण होता था तथा उसी के अनुसार उसकी प्रतिष्ठा होती थी। इस काल में चारो वर्णों में ब्राह्मण को उच्च समझा जाता था एवं उसके अधिकार भी अधिक थे। क्षत्रिय वर्ग को राजसत्ता का अधिकार दिया गया। वैश्यों को व्यवसाय कार्यों का अधिकार दिया गया। इस काल में वैश्यों के सामाजिक स्तर में कुछ अन्तर हुआ। उन्हें कुछ व्यावसायिक कार्यों, जैसे–हलवाई, लुहार, बढ़ई आदि कार्यों को अपनाना पड़ा। वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत शूद्रों को सर्वाधिक हानि हुई। उन्हें अछूत समझा गया। धार्मिक तथा शिक्षा संस्थाओं में उनका प्रवेश वर्जित कर दिया गया। आधुनिक काल में जाति एवं वर्ण को अशोभनीय दृष्टि से देखा जाता है।

नोट्स उपनयन संस्कार की आयु, ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य के लिये क्रमशः 8, 11, व 12 वर्ष थी। उपनयन संस्कार के पश्चात् शिक्षा प्रारम्भ की जाती थी। इसमें शिक्षार्थी को ब्रह्मचर्य का व्रत दिलाया जाता था।

प्राचीन भारतीय शिक्षा की विशेषताएँ (Characteristics of Ancient Indian Education)

प्राचीन भारतीय सभ्यताओं में वैदिक सभ्यता को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। इस सभ्यता के निर्माता आर्य थे। आर्यों के द्वारा जिस शिक्षा प्रणाली का विकास किया गया, उसके सम्बन्ध में वेदों से पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। प्राचीन भारतीय शिक्षा मूल रूप से आध्यात्मिक तत्वों पर ही आधारित है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक ऐसे पक्ष हैं जो इस शिक्षा प्रणाली को अद्वितीय बनाने में सहायक हुए हैं। **डॉ. अल्तेकर** के अनुसार–"वैदिक युग से लेकर अब तक शिक्षा का प्रकाश के स्रोत से अभिप्राय रहा है और यह जीवन के विविध क्षेत्रों में हमारा मार्ग आलोकित करता है।"

शिक्षा के क्षेत्र में आर्यों ने जिन शैक्षिक उद्देश्यों और आदर्शों को निर्धारित किया है, जिस शिक्षा प्रणाली की खोज की वह हजारों वर्षों के उपरान्त भी आज के युग में अपने किसी न किसी रूप में विद्यमान है। आर्यों द्वारा विकसित इस उत्कृष्ट शिक्षा प्रणाली की और भी अनेक विशेषताएँ हैं। **इन समस्त विशेषताओं का उल्लेख निम्न प्रकार है।**

(1) उपनयन संस्कार–वैदिक कालीन शिक्षा की सर्वप्रथम विशेषता थी–उपनयन संस्कार। यह वैदिक शिक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार था। वैदिक काल में बालक के विद्याध्ययन का औपचारिक प्रारम्भ इस संस्कार के द्वारा होता था। उपनयन का शाब्दिक अर्थ है पास ले जाना। अतः बालक को शिक्षा के लिये गुरु के पास ले जाना ही उपनयन संस्कार कहलाता था। इस संस्कार के अन्तर्गत बालक सर्वप्रथम गुरु के दर्शन करता था एवं तात्कालिक गुरुजन बालक की योग्यताओं और सद्गुणों को परखते थे और अपना निर्णय देते थे। उनके द्वारा बालक को शिक्षा का अधिकारी घोषित किये जाने पर ही दीक्षा का आयोजन होता था। वास्तव में उपनयन संस्कार के उपरान्त ही बालक ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश करता था तथा ब्रह्मचारी कहलाता था। उपनयन बालक का दूसरा जन्म माना जाता था। उस समय माना जाता था कि माता-पिता बालक के शरीर को जन्म देते हैं जिसे मात्र शारीरिक जन्म स्वीकार किया जा सकता है।

गुरु के यहाँ उपनयन के द्वारा दीक्षित होने पर उसका आध्यात्मिक जीवन प्रारम्भ होता है तथा इस दौरान बालक की आत्मा तथा मस्तिष्क विकसित होता है। इसलिये उपनयन के संस्कार को दूसरा जन्म अथवा आध्यात्मिक जन्म भी कहा जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्णों के बालकों के लिये उपनयन संस्कार आवश्यक था। इन तीनों वर्णों को द्विज कहते थे। द्विज का अर्थ है–दो बार जन्म लेने वाला। उपनयन संस्कार न कराने वाले बालकों को हीन दृष्टि से देखा जाता है तथा उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाता था। स्पष्ट है कि वैदिक युग में शिक्षा अनिवार्य तथा सार्वभौमिक थी।

(2) विद्यारम्भ संस्कार–बालक का उपनयन संस्कार हो जाने पर, गुरुकुल में प्रवेश प्राप्त करता था। प्रवेश के उपरान्त जिस दिन बालक की शिक्षा का आरम्भ होता था उस दिन उसका विद्यारम्भ संस्कार किया जाता था। वैदिक

नोट

शास्त्रों में इस संस्कार के लिये "अक्षर स्वीकर्णय" शब्द प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ अक्षर ज्ञान का प्रारम्भ अर्थात् उस दिन उसे अक्षर का ज्ञान कराया जाता था। बालक गुरु के साथ सरस्वती तथा कुल के देवताओं की उपासना के साथ अक्षर ज्ञान का प्रारम्भ करते थे। इस संस्कार के विषय में **डॉ. वेद मित्र** ने लिखा है–

"यह संस्कार, पाँच वर्ष की आयु में होता था और साधारणत: सब जातियों के बालकों के लिये था।"

(3) समावर्तन संस्कार–शिक्षा पूर्ण कर लेने के उपरान्त बालकों का समावर्तन संस्कार किया जाता था, तदोपरान्त ही वे पुन: अपने घर जाते थे। समावर्तन संस्कार गुरुओं के द्वारा सम्पन्न कराया जाता था। इस संस्कार के सम्बन्ध में **डॉ. एम. एन. वर्मा** लिखते हैं–

"यह संस्कार 15 वर्ष की आयु में किया जाता था। 'समावर्तन का शाब्दिक अर्थ 'घर लौटना' है। जब छात्र अपनी वैदिक शिक्षा पूर्ण करके ब्रह्मचर्य आश्रम से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता था तब यह संस्कार, गुरु द्वारा सम्पन्न किया जाता था। संस्कार के समय, छात्र स्नानादि के पश्चात् नये वस्त्र धारण करता था। सर्वप्रथम गुरु उसे मधुपर्क देता था तथा समावर्तन उपदेश देता था। यह उपदेश निम्न वाक्याँशों में दिया जाता था–

"हे शिष्य ! सदा सत्य बोलना, स्वाध्याय में प्रमाद मत करना, श्रद्धा से दान देना। तुम्हें हमारा यही आदेश है, यही उपदेश है।" आधुनिक शिक्षा प्रणाली में 'दीक्षान्त समारोह' समावर्तन संस्कार का रूप है।

(4) गुरुकुल पद्धति–जिस प्रकार वर्तमान युग में छात्र विद्यालयों में स्थित छात्रावासों में रहकर शिक्षा प्राप्त करते हैं, इसी प्रकार गुरुकुलों में रहकर ही छात्र अध्ययन किया करते थे। गुरुकुल ग्राम एवं नगर के कोलाहलपूर्ण वातावरण में होते थे। **प्रो. वी. कुमार** ने इस सम्बन्ध में लिखा है–

"वर्तमान युग में आवासीय विद्यालयों की भाँति प्राचीन काल में शिष्य गुरु के आश्रम अथवा गुरु के कुल (गुरु-गृह) में स्थायी रूप से रहकर ही शिक्षा प्राप्त करते थे। ग्राम अथवा नगर के निकट स्थित गुरुओं के आश्रम, प्राकृतिक छटा से आच्छादित रहते थे। कोलाहल से सर्वथा दूर, वृक्षों की शीतल छाया में अध्ययन करते हुए छात्र मानसिक रूप से एकाग्र और शारीरिक दृष्टि से पुष्ट थे। समय-समय पर गुरुकुलों से कुछ दूर स्थित ग्रामों अथवा नगरों में भिक्षाटन के लिये भी छात्र आया करते थे। गुरुकुल में गुरुओं की सेवा करते हुए, छात्र शिक्षा तो प्राप्त करते ही थे, साथ ही गुरु के गृहस्थ सम्बन्धी कार्यों में हाथ बँटाकर गृहस्थ जीवन के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना भी सीखते थे। गुरुकुल अथवा गुरु आश्रमों के अतिरिक्त मठों और विहारों में भी शिक्षण कार्य चलता था। भव्य मन्दिरों के विशाल प्राँगणों में शिक्षण कार्य का उल्लेख मिलता है तथापि मुख्यतया गुरुकुल अथवा गुरु आश्रम ही शिक्षा के मुख्य क्षेत्र थे।"

(5) व्यावसायिक शिक्षा–वैदिक काल में छात्रों को भिन्न-भिन्न प्रकार के कौशलों में दक्ष बनाने के साथ ही जीविका का निर्वाह करने के लिये भी तैयार किया जाता था। जीविकोपार्जन के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये बालकों को व्यावसायिक शिक्षा में कृषि एवं वाणिज्य की शिक्षा, औषधि शास्त्र की शिक्षा, सैनिक शिक्षा आदि का विकास हुआ। उपयोगी हस्त कलाओं में पीतल व मिट्टी की वस्तुयें बनाना, लकड़ी का सामान बनाना, कपड़ा बुनना एवं सोने और चाँदी के आभूषण बनाना आदि की शिक्षा दी जाती थी।

(6) कक्षा-नाटकीय विधि–इस काल में कक्षा-नाटकीय विधि भी प्रचलित थी। इस पद्धति में गुरु कक्षा के सबसे योग्य छात्र को नायक बना देता था। यह छात्र निम्न कक्षाओं को पढ़ाते थे। इस पद्धति में छात्रों का सहयोग मिलने के कारण गुरुओं पर अध्यापन के कार्य का भार कम हो जाता था। इस सम्बन्ध में **डॉ. वेद मित्र** लिखते हैं–

"कक्षा-नाटकीय विधि, विवेकशील विद्यार्थियों को भिक्षा-कला सीखने का अवसर देती थी तथा इस तरह अपराध रूप से उसी कार्य को करती थी, जिसे वर्तमान शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय सम्पन्न करते हैं।"

(7) विद्यार्थियों के जीवन सम्बन्धी नियमों में कठोरता–वैदिक कालीन शिक्षा में विद्यार्थियों को कठोरता के साथ कुछ नियमों का पालन करना पड़ता था। जैसे–सूर्योदय के पूर्व उठना, स्नान एवं नित्य क्रिया से निवृत्त होकर हवन करना आदि।

इन नियमों का उल्लेख करते हुए **डॉ. एम. एन. वर्मा** ने लिखा है–

वैदिक शिक्षा को प्राप्त करते समय छात्रों को अनेक नियमों का पालन करना पड़ता था, जैसे–

(अ) **दिनचर्या**–छात्र प्रात:काल उठकर, शौचादि से निवृत्त होकर, हवन आदि करते थे। हवन के पश्चात् वे अपने पढ़े हुए पाठों को दोहराते थे तथा नये पाठों की तैयारी करते थे। मध्याह्न में भोजन करते थे। सूर्य-अस्त के समय वे संध्या-भजन करते थे तथा उसके पश्चात् रात्रि को भोजन ग्रहण करते थे।

(ब) **आदतें**–छात्रों में कोई भेदभाव नहीं देखा जा सकता था। सभी वर्ग के व्यक्ति, चाहे वे निर्धन हों अथवा धनी, सभी को सरल जीवन व्यतीत करना पड़ता था।

(स) **वेशभूषा**–इस काल में विभिन्न जातियों के छात्रों की वेशभूषा भी भिन्न थी। प्रत्येक छात्र के लिये यज्ञोपवीत धारण करना अनिवार्य था। प्रत्येक छात्र को मेखला धारण करनी पड़ती थी। छात्र अपने शरीर को मृग तथा बकरे की खाल से ढक कर रखते थे।

(द) **आचार एवं व्यवहार**–वैदिक शिक्षा में व्यवहार को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता था। छात्रों में शिष्टाचार युक्त आदतें तथा संयम का विकास किया जाता था। उन्हें जुआ, नृत्य, संगीत आदि से दूर रखा जाता था। खान-पान में माँस, मदिरा आदि का सेवन नहीं करते थे। काम, क्रोध लोभ से रहित होकर वे पवित्रता का जीवन-व्यतीत करते थे।

(8) गुरु-शिष्य सम्बन्ध–वैदिक काल में शिष्य गुरु की तन-मन-धन से सेवा करते थे। शिष्य गुरु के प्रति श्रद्धा तथा विनय रखते थे। इस काल में गुरु को विशेष सम्मानप्रद स्थान प्राप्त था। गुरु की सेवा करना उनका धर्म था। गुरु को छात्रों का बौद्धिक तथा आध्यात्मिक पिता माना जाता था। गुरु के भी छात्रों के प्रति कुछ कर्त्तव्य थे। गुरु अपने छात्रों का विकास करने हेतु पूर्णतया सचेत रहते थे।

छात्र के कर्त्तव्य–गुरु की आज्ञा का पालन करना, अध्ययन करना, पशु चराना, भिक्षा माँगना, लकड़ी चुनना, पानी भरना आदि।

गुरु के कर्त्तव्य–अध्यापन, छात्रों को भोजन, वस्त्र आदि की व्यवस्था करना, चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराना आदि।

गुरु-शिष्य सम्बन्धों को विकसित करने में गुरुकुल प्रणाली का विशेष योगदान रहा है। गुरु एवं शिष्य एक ही परिसर में रहते थे। गुरु छात्रों की प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान रखते थे दोनों में पारस्परिक स्नेह, श्रद्धा के भावों का पूर्ण विकास, इस काल में देखने को मिलता है। **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार–

"शिक्षक एवं छात्र के सम्बन्ध स्नेहपूर्ण तथा घनिष्ठ थे और उनके भावी जीवन में भी ऐसे ही बने रहते थे।"

छात्र एवं गुरुओं के प्रत्यक्ष सम्बन्ध के बारे में **डॉ. अल्तेकर** ने लिखा है कि इस प्रकार के सम्बन्धों के लिये किसी संस्था की एक माध्यम के रूप में आवश्यकता नहीं होती थी। इन्होंने अपने शब्दों में लिखा है–

"छात्र तथा अध्यापक के मध्य सम्बन्ध किसी संस्था के माध्यम से नहीं, अपितु सीधे उन्हीं के बीच था। छात्र विद्याध्ययन के लिये उन्हीं लब्ध प्रतिष्ठित गुरुओं के पास जाते थे, विद्वता के कारण जिनकी ख्याति थी।"

(9) व्यावहारिकता का समावेश–प्राचीन कालीन शिक्षा कोरे सैद्धान्तिक आधारों पर ही अवस्थित नहीं थी अपितु शिक्षा में व्यावहारिक पक्षों का पूर्ण ध्यान रखा गया था। विभिन्न प्रकार की क्रियात्मक शैक्षिक गतिविधियाँ जैसे–गौ-पालन, कृषि की शिक्षा के साथ-साथ चिकित्सा आदि की शिक्षा इस तथ्य का स्पष्ट संकेत करती है। **डॉ. अल्तेकर** ने इस सम्बन्ध में लिखा है–

"शिक्षा का उद्देश्य अनेक विषयों का साधारण ज्ञान मात्र करा देना नहीं था अपितु उसका आदर्श विभिन्न क्षेत्रों में उच्च कोटि के विशेषज्ञ बनाना था। इसी कारण व्यावसायिक शिक्षा में प्रयोगिक शिक्षण पर बल दिया जाता था।

(10) अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा–प्राचीन कालीन शिक्षा की एक अन्य प्रमुख विशेषता थी–शिक्षा का अनिवार्य एवं नि:शुल्क होना। प्राचीन काल में शिक्षा नि:शुल्क दी जाती थी और शिक्षा सर्वसुलभ थी, परन्तु विद्वानों के अनुसार शिक्षा अनिवार्य थी। ब्राह्मण का कर्त्तव्य ही शिक्षा प्रदान करना समझा जाता था। छात्र अपनी शिक्षा

नोट समाप्ति पर ही गुरु को दक्षिणा के रूप में पशु, अन्न, भूमि आदि देता था। **डॉ. वेदमित्र** के अनुसार–

उनका यह विचार मनु के इस कथन पर आधारित है–"मनु के कथानुसार राज्य और समाज को 8 वर्ष की आयु के पश्चात् बालकों और बालिकाओं के लिये, शिक्षा को अनिवार्य बना देना चाहिये और जो व्यक्ति अपने बच्चे को इस आयु के पश्चात् घर पर रखे, उसको दण्ड दिया जाना चाहिये।"

(11) शिक्षा का उद्देश्य–प्राचीन कालीन शिक्षा का उद्देश्य चरित्र का निर्माण, धार्मिकता तथा आध्यात्मिकता आदि पर आधारित भावनाओं का विकास करना था। **डॉ. अल्तेकर के** अनुसार–

"ईश्वर की भक्ति, धार्मिकता की भावना, चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिकता तथा सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन, सामाजिक कुशलता की अभिवृद्धि, राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण तथा प्रसार प्राचीन भारत में शिक्षा के उद्देश्य थे।"

(12) शिक्षा का स्वरूप–प्राचीन कालीन शिक्षा का स्वरूप धर्म पर आधारित था। शिक्षा का सम्पूर्ण कार्य-कलाप धार्मिक अनुष्ठानों के रूप में सम्पन्न होता था। **गुन्नार मिरडल के अनुसार–**

"शिक्षा पीढ़ी-दर-पीढ़ी होने वाले धार्मिक व्यक्तियों के निर्देशों का संकलन थी। मन्त्रों, देवताओं, धर्म-ग्रन्थों का उस समय तक पाठ किया जाता था जब तक वे कण्ठस्थ नहीं हो जाते थे।"

(13) ब्रह्मचर्य–प्राचीन काल में प्रत्येक छात्र को जीवन के विशिष्ट भाग में ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता था। आचरण की शुद्धता को प्रमुखता दी जाती थी। अविवाहित छात्रों को ही गुरुकुल में प्रवेश मिलता था।

(14) पाठ्यक्रम–प्राचीन कालीन शिक्षा के पाठ्यक्रम में वेदों को प्रमुख स्थान दिया गया था। छात्रों को चारों वेदों का अध्ययन कराया जाता था। इसके अतिरिक्त छन्दशास्त्र, गणित, तर्क, दर्शन, व्याकरण आदि को भी पाठ्यक्रम में समुचित स्थान दिया गया था। परम्परागत अभिवृत्ति, पाठ्यक्रम का प्रमुख आधार थी। यज्ञ तथा अन्य संस्कार विधियों का प्रयोगात्मक ज्ञान प्रदान किया जाता था। अपरा विद्या के अन्तर्गत इतिहास, ज्योतिष, गणित, जीवविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, भू-गर्भ विद्या, चिकित्सा आदि विषय पढ़ाये जाते थे। शिक्षा का माध्यम संस्कृत भाषा थी। अतः संस्कृत का ज्ञान आवश्यक था। सम्पूर्ण वेदाँगों को समझने के लिये तर्कशास्त्र को विशेष महत्व प्राप्त था।

(15) दण्ड व्यवस्था–प्राचीन काल की शिक्षा में दण्ड की आवश्यकता नहीं होती थी। शारीरिक दण्ड तो निषिद्ध था। आवश्यकता होने पर गुरु छात्र की शुद्धि के लिये उद्दालक व्रत का पालन करने का दण्ड देते थे। उद्दालक व्रत में छात्र को लगभग तीन माह अत्यन्त अल्पाहार पर रहकर आत्मशुद्धि करनी पड़ती थी। दो महीने तक जौ के माँड (Barley gruel), एक महीने तक दूध, आधे महीने तक छेन्ना (Amiska Solid part of milk), आठ दिन तक व्रत, छः दिन तक बिन माँगी भिक्षा तथा तीन दिन तक केवल पानी का सेवन करना पड़ता था तथा एक दिन निराहर रहकर गुजारना पड़ता था।

(16) नारी शिक्षा–वैदिक काल में नारी शिक्षा को पर्याप्त महत्व दिया गया था। वैदिक काल में महिलाओं को विद्याध्ययन का पूर्ण अधिकार था। अधिकाँशतः माता-पिता अथवा कुलपुरोहित लड़कियों को घर पर शिक्षा दिया करते थे। गृहस्थ आश्रम में प्रवेश से पहले तक लड़कियाँ अध्ययन करती थीं।

वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख दोष (Main Defects of Vedic Period Education)

प्राचीन भारत में जिस शिक्षा-प्रणाली की नींव डाली गई, वह अनेक शताब्दियों तक अति अल्प परिवर्तनों के साथ चलती रही। यह इस बात का प्रमाण है कि इस शिक्षा-प्रणाली में अनेक महत्वपूर्ण तत्व विद्यमान थे। इन तत्वों ने भारतीयों की सब आवश्यकताओं की पूर्ति की और अनेक महान् विचारकों तथा सत्य के अन्वेषकों को जन्म दिया, जिसका बौद्धिक योगदान प्रत्येक दृष्टि से सराहनीय था।

किन्तु जैसा कि **डॉ. अल्तेकर** के अनुसार, लगभग 500 ई. से भारत की प्राचीन शिक्षा-प्रणाली में दोष प्रकट होने आरम्भ हो गये। समय की गति के साथ-साथ इन दोषों में वृद्धि होती चली गई, जिनके परिणामस्वरूप यह प्रणाली भारतीयों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थ हो गई और इसका पतन आरम्भ हो गया। **डॉ. एफ. ई.**

नोट

के शब्दों में– **"ब्राह्मणीय शिक्षा-प्रणाली रुढ़िबद्ध एवं औपचारिक हो गई और प्रगतिशील सभ्यता की आवश्यकता को पूर्ण करने में असमर्थ हो गयी।"**

ब्राह्मणीय शिक्षा-प्रणाली अपने जिन दोषों के कारण भारतीयों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में विफल हुई और उसका पतन आरम्भ हुआ, उसका वर्णन निम्न प्रकार है–

1. **धर्म-निरपेक्ष विषयों की उपेक्षा** (Neglect of Secular Subjects)–प्राचीन भारतीय शिक्षा में धर्म का आधारभूत स्थान था और सम्पूर्ण शिक्षा उससे सम्बद्ध थी। फलस्वरूप, धर्म-निरपेक्ष विषयों की बहुत सीमा तक उपेक्षा हुई। अत: उनका पर्याप्त विकास नहीं हुआ।
2. **जनसाधारण की शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of the Education of Masses)–प्राचीन भारतीय शिक्षा-प्रणाली ने जनसाधारण की शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा की। इस सम्बन्ध में **डॉ. आल्तेकर** के अनुसार, **"सम्भवत: संस्कृत को केन्द्रित रखने और लोकभाषाओं की उपेक्षा करने के कारण हिन्दू-शिक्षा-प्रणाली, जनसाधारण की शिक्षा का विकास न कर सकी।"**
3. **लोकभाषाओं की उपेक्षा** (Neglect of Vernacular)–प्राचीन भारतीय शिक्षा में केवल संस्कृत के अध्ययन और अध्यापन पर सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित था। फलत: लोकभाषाओं की उपेक्षा हुई और उनकी प्रगति न हो सकी।
4. **शूद्रों की शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of the Education of Shudras)–प्राचीन भारत में शूद्रों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। अत: प्राचीन भारतीय शिक्षा के द्वार उनके लिए बन्द थे। इस प्रकार उनकी शिक्षा की न केवल उपेक्षा की गयी, वरन् उनको शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित रखकर उनके प्रति घोर अन्याय किया गया।
5. **स्त्री-शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of Women's Education)–प्राचीन भारत में पुरुषों के समान स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। किन्तु बालकों की शिक्षा के समान बालिकाओं की शिक्षा की व्यवस्था न करके स्त्री-शिक्षा की पर्याप्त मात्रा में उपेक्षा की गई। इस सन्दर्भ में **डॉ. पी.एन. प्रभु** के अनुसार, **"ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दू-शिक्षा-योजना का निर्माण केवल भारत के पुत्रों के लिये किया गया था। इस योजना में भारत की पुत्रियों के लिये कोई स्थान नहीं जान पड़ता है।"**
6. **विचार-स्वातन्त्र्य का अभाव** (Lack of Freedom of Thought)–प्राचीन भारतीय शिक्षा में धर्म को अत्यधिक महत्व दिये जाने के कारण व्यक्तियों में वह प्रवृत्ति उत्पन्न हो गयी कि धर्मशास्त्रों में लिखी हुई सब बातें पूर्णतया सत्य हैं और उन्होंने जिन बातों को असत्य बताया है, वे कदापि सत्य नहीं हो सकती हैं। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप भारतीय समाज में अनेक-अन्धविश्वासों और रुढ़िवादिताओं का प्रवेश हुआ।
7. **धर्म को अत्यधिक महत्व** (Immense Importance of Religion)–प्राचीन भारतीय शिक्षा में धर्म को अत्यधिक महत्व दिया जाता था। शिक्षा की सम्पूर्ण संरचना धार्मिक आदर्शों से सुसज्जित थी। इन्हीं आदर्शों के अनुसार, शिक्षा के विषयों, उद्देश्यों और पाठ्यक्रमों को निर्धारित किया गया था। छात्रों के समय का अधिकांश भाग धर्म-शास्त्रों के अध्ययन और कर्मकाण्डों के सम्पादन में व्यतीत होता था। उनको निष्काम कर्म करने और अपनी इच्छाओं का दमन करने का उपदेश दिया जाता था। **डॉ. एफ. केई** के अनुसार, **"इस प्रकार की शिक्षा ने छात्रों में उच्च आदर्शों का तो समावेश किया, किन्तु शिक्षा की प्रगति में योगदान नहीं दिया।"**
8. **सांसारिक जीवन की उपेक्षा** (Neglect of Worldly Life)–शिक्षाशास्त्रियों के विचारानुसार, शिक्षा का मुख्य उद्देश्य–व्यक्ति को पूर्ण जीवन के लिये तैयार करना है। इसका अभिप्राय यह है कि शिक्षा द्वारा व्यक्ति को लौकिक और पारलौकिक–दोनों जीवन के लिये तैयार किया जाना चाहिए। किन्तु जैसा **डॉ. एफ.ई. केई** के अनुसार, **"ब्राह्मणीय शिक्षा में जीवन व्यावहारिक कर्त्तव्यों और उसके लिए व्यक्ति को तैयार करने के प्रति घृणा की प्रवृत्ति थी।"**

नोट

9. **हस्तकार्य व शारीरिक श्रम के प्रति घृणा** (Hatred for Handwork & Physical Labour)—प्राचीन भारतीय शिक्षा में धार्मिक शिक्षा की तुलना में लौकिक शिक्षा का स्थान बहुत निम्न था। फलस्वरूप, अध्ययन केन्द्रों में लौकिक शिक्षा से सम्बन्धित हस्तकार्यों की शिक्षा को कोई स्थान प्राप्त नहीं हुआ। अतः उच्च वर्गों के छात्रों का, जो इन अध्ययन-केन्द्रों में शिक्षा ग्रहण करते थे, इन कार्यों से कोई सम्पर्क नहीं हुआ। ये कार्य वर्गों तक ही सीमित रहे, जिनको इनकी शिक्षा अपने परिवारों में प्राप्त होती थी। इन वर्गों के व्यक्तियों को हेय समझा जाता था। अतः उनके द्वारा किये जाने वाले हस्तकार्यों और शारीरिक श्रम को घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा।

10. **नवीन धर्मों का आविर्भाव** (Birth of New Religions)—**डॉ. एस.एन. मुखर्जी** का विचार है—लगभग पाँचवी शताब्दी के अन्त तक शिक्षा अधिकांश रूप में ब्राह्मणों तक ही सीमित रह गयी थी और शिक्षा के व्यवसाय पर उनका एकमात्र अधिकार था। इस अधिकार को बनाये रखने के लिये उन्होंने धर्म का सहारा और उसमें जटिलता को कूट-कूट कर भर दिया। इस जटिलता के परिणामस्वरूप धार्मिक कृत्यों और ब्राह्मणों द्वारा उनमें प्रयोग की जाने वाली संस्कृत भाषा का जनसाधारण के लिये कोई महत्व नहीं रह गया। वैदिक धर्म के प्रति जनसाधारण के इसी परिवर्तित दृष्टिकोण के कारण नवीन धर्मों का आविर्भाव हुआ—बौद्ध धर्म एवं जैन धर्म।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्राचीन भारतीय शिक्षा में अनेक गम्भीर दोष थे, जिनके कारण वह कालान्तर में समयानुकूल न रह सकी और उसका ह्रास आरम्भ हो गया। इन दोषों और इनके कारण होने वाले ह्रास को रोकने के विषय में **डॉ. एफ.ई.** केई के अनुसार—"प्राचीन भारतीय शिक्षा में अनेक दोष थे। इस शिक्षा को नवीन गति प्रदान करने और रूपान्तरित करने के लिये किसी प्रकार के नवजीवन की आवश्यकता थी।"

आधुनिक शिक्षा के लिये ग्राह्य तत्व (Acceptable Features for Modern Education)

प्राचीन भारतीय शिक्षा और आधुनिक भारतीय शिक्षा के मध्य अनेक शताब्दियों का अन्तर है। पर फिर भी, प्राचीन शिक्षा के अनेक तत्व हैं, जिनको सिद्धान्त और व्यवहार दोनों दृष्टियों से आधुनिक शिक्षा में स्थान दिया जा सकता है। इस प्रकार के मुख्य तत्व अधोलिखित हैं—

1. आदर्शवादिता (Idealism)—आज हम आधुनिक युग में निवास कर रहे हैं किन्तु हमें अपने पूर्वजों से जो सभ्यता और संस्कृति विरासत में मिली है, उन पर हमें आज भी गर्व है। हम आज भी धर्म, ईश्वर तथा निष्काम कर्म को महत्त्व देते हैं। हम आज भी धन की अपेक्षा चरित्र को, भौतिकता की अपेक्षा आध्यात्मिकता की और विज्ञान की अपेक्षा दर्शन को श्रेष्ठतर समझते हैं। आज जबकि सम्पूर्ण विश्व-धन, शक्ति, हिंसा तथा कूटनीति में आस्था रखता है, हम प्रेम, सत्य, अहिंसा, त्याग और तपस्या के समक्ष श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं।

उपर्युक्त सभी बातों का अभिप्राय यह है कि हम आज भी उस आदर्शवादिता को नहीं भूले हैं, जिसका प्राचीन शिक्षा द्वारा छात्रों के मन एवं मस्तिष्क में समावेश किया जाता था। इससे स्वाभाविक निष्कर्ष यही निकलता है कि प्राचीन आदर्शवादिता को आधुनिक शिक्षा में स्थान दिया जा सकता है और दिया जाना चाहिये। **डॉ. महेशचन्द सिंघल** के अनुसार, "हम वैदिक कालीन शिक्षा की आदर्शवादिता को आधुनिक शिक्षा के एक मूल सिद्धांत के रूप में ग्रहण कर सकते हैं और जीवन-निर्माण, चरित्र-निर्माण तथा सादा जीवन और उच्च विचार को शिक्षा के महत्वपूर्ण उद्देश्यों में स्थान दे सकते हैं।"

2. अनुशासन तथा गुरु-शिष्य सम्बन्ध (Discipline and Teacher-Public Relationship)—प्राचीन काल की छात्रों की अनुशासन की भावना और गुरु एवं शिष्य का मधुर सम्बन्ध विश्वविख्यात है। आज इन दोनों बातों पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है, क्योंकि शैक्षिक वातावरण अत्यन्त विषम हो चुका है एवं अनुशासनहीनता का ताण्डव सर्वत्र हो रहा है। छात्रों में अनुशासन की भावना का विकास और वैदिक कालीन गुरु-शिष्य सम्बन्ध की पुनर्स्थापना करके ही इन दोनों दोषों से मुक्ति पाने की आशा की जा सकती है।

नोट

मानव-सम्बन्धों को घनिष्ठता प्रदान करने के लिये पारस्परिक स्नेह तथा सम्मान की भावनाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। छात्र, शिक्षा तभी ग्रहण कर सकते हैं और शिक्षक, अध्ययन-कार्य में तभी रुचि ले सकते हैं, जब दोनों सुन्दर सम्बन्ध के सूत्र से आबद्ध हों। यह सत्य है कि आज के छात्र और शिक्षक प्राचीन युग के आदर्श पर नहीं पहुँच सकते हैं, पर फिर भी दृढ़ निश्चय से उसकी ओर अग्रसर होकर बहुत-कुछ सफलता प्राप्त की जा सकती है। अत: छात्रों तथा शिक्षकों का उस आदर्श की दिशा में अग्रसर होना केवल वाँछनीय ही नहीं, वरन् अत्यन्त आवश्यक भी है। पर यह तभी सम्भव हो सकता है, जब छात्र गुरु-शिष्य सम्बन्धी वैदिक आदर्श के प्रति निष्ठावान बने और शिक्षक उस आदर्श के अनुसार सरस्वती-साधना में लीन होकर सरल जीवन व्यतीत करे।

3. शान्त वातावरण (Peaceful Atmosphere)—प्राचीन काल की सभी शिक्षा-शालाएँ नगर के कोलाहल और विषाक्त वातावरण से दूर किसी शान्त एवं रमणीक स्थान में स्थित थीं। आधुनिक युग में नगरीकरण के प्रभाव के कारण सभी व्यक्तियों में नगरों में निवास करने की प्रवृत्ति सबल हो गयी है। ऐसी दशा में आज की शिक्षा-संस्थाओं की नगरों से पृथकता सम्भव नहीं है। फिर भी, उनका निर्माण नगरों के कोलाहल और गन्दगी से दूर किसी शान्त, स्वच्छ, स्वास्थ्यकर और प्राकृतिक वातावरण में किया जा सकता है।

इस प्रकार की शिक्षा-संस्थाएँ न केवल छात्रों के शारीरिक और मानसिक विकास में योगदान देंगी, वरन् उनकी नगरों के दिन-प्रतिदिन के झगड़ों, राजनीतिक कुचक्रों और अवांछनीय प्रवृत्तियों से रक्षा भी करेंगी।

4. शिक्षण विधि व शिक्षा-सिद्धांत (Teaching Method and Principles of Education)—प्राचीन भारत की शिक्षण-विधि में श्रवण, मनन, चिन्तन, स्मरण, प्रवचन, प्रश्नोत्तर, व्याख्यान, वाद-विवाद, आदि का प्रयोग किया जाता था। अत: यह शिक्षण-विधि आज भी विभिन्न विषयों के पठन-पाठन में प्रयोग किये जाने के योग्य है और उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

प्राचीन काल के अनेक सिद्धांत आज भी उतने उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं, जितने कि वे प्राचीन काल में थे। इस प्रकार के कुछ सिद्धान्त हैं—छोटी कक्षायें, व्यस्त दिनचर्या, व्यक्तिगत ध्यान और अच्छी आदतों का निर्माण।

5. अध्ययन के विषय (Subject of Study)—आधुनिक भारतीय शिक्षा में अनेक विषयों को स्थान दिया गया है, पर संस्कृत की प्राय: पूर्ण उपेक्षा की गयी है। वस्तुत: संस्कृत भाषा और साहित्य में शान्ति, मानवता और विश्व-भ्रातृत्व की ऐसी अमूल्य निधियाँ हैं, जिनको न केवल भारत के पाठ्यक्रम में वरन् सब देशों के पाठ्यक्रमों का अभिन्न अंग होना चाहिये। इसके अतिरिक्त वैदिक पाठ्यक्रम से ऐसे अनेक तत्व ग्रहण किये जा सकते हैं, जो आधुनिक भारत के नैतिक, राष्ट्रीय और सांस्कृतिक उत्कर्ष में अद्वितीय योगदान दे सकते हैं। डॉ. महेशचन्द्र सिंघल के अनुसार, "यदि इन बातों की उपेक्षा की जाती है, तो भारतीय शिक्षा, पश्चिम का थोथा अनुकरण मात्र रह जायेगी, जिसमें मौलिकता की झलक नहीं मिल सकेगी।"

6. छात्रों का सरल जीवन (Simple Life of Students)—वैदिक कालीन भारत के छात्र सदा, सरल और संयमी जीवन व्यतीत करते थे। आधुनिक भारत में उनका जीवन भले ही अक्षरश: अनुकरणीय न हो, पर ग्रहणीय अवश्य है। आज के छात्रों के जीवन में आमूल परिवर्तन हो गया है। उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य, शिक्षा प्राप्त करना नहीं है, अपितु सिनेमा देखना, हड़तालें करना, अश्लील साहित्य पढ़ना, नशीली वस्तुओं का प्रयोग करना और ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करना हो गया है।

ऐसी परिस्थिति में प्राचीन काल के छात्रों के उदाहरण को आज के छात्रों के समक्ष रखकर उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन किया जाना अनिवार्य है। **डॉ. महेशचन्द्र सिंघल** के अनुसार, "सिद्धान्त रूप में हमें इतना तो मानना ही चाहिये कि आज भले ही सिर मूँडने, लँगोटी बाँधने तथा स्त्री जाति के दर्शन मात्र से बचकर रहने की तो आवश्यकता नहीं है, लेकिन सादा और संयमी जीवन, नियमित दिनचर्या तथा दुर्व्यसनों से बचकर रहना वाँछनीय है।"

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self - Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए। (Fill in the blanks)**

   1. वैदिक काल में प्राथमिक शिक्षा पर .... का आधिपत्य नहीं था।
   2. वैदिक काल के दौरान उच्चशिक्षा के अंतर्गत साहित्य एवं धर्मशास्त्र के अध्ययन की अवधि .... थी।
   3. वैदिक पाठ्यक्रम में .... तथा अपरा (लौकिक विद्या) दोनों को स्थान दिया गया था।
   4. वैदिक काल में शिक्षा समाप्त होने पर छात्रों की .... परीक्षा होती थी।
   5. प्राचीन काल में प्रवचन, व्याख्यान, शास्त्रार्थ, प्रश्नोत्तर वादविवाद आदि .... के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी।

1.2 बौद्धकालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था (Education System in India During Buddhistic Period)

शिक्षा की व्यवस्था (Organization of Education)

बौद्ध धर्म का विकास मठों में हुआ था। ये मठ केवल धर्म के ही नहीं वरन् शिक्षा के भी केन्द्र थे और शिक्षा देने का कार्य उनमें निवास करने वाले भिक्षुओं द्वारा किया जाता था। इन तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए **डॉ. आर. के. मुखर्जी** ने लिखा–"बौद्ध मठ और बौद्ध-शिक्षा ज्ञान के केन्द्र थे। बौद्ध-संसार अपने मठों से पृथक् या स्वतन्त्र रूप में शिक्षा प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं देता था। धार्मिक और लौकिक, सब प्रकार की शिक्षा, भिक्षुकों के हाथ में थी।"

प्राचीन काल के समान बौद्ध काल में भी केवल प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी और शिक्षा के यही दो स्तर थे। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

1. प्राथमिक शिक्षा (Primary Education)

1. **सामान्य परिचय**–हमें 'जातक कथाओं' से ज्ञात होता है कि प्राथमिक शिक्षा केवल बौद्ध धर्मावलम्बियों को ही नहीं, वरन् सब जातियों के बालकों को उपलब्ध थी। यह शिक्षा मठों में दी जाती थी और आरम्भ से पूर्णतया धार्मिक थी। किन्तु जब कुछ समय के उपरान्त ब्राह्मणों ने प्रतिद्वन्द्वी शिक्षा-संस्थायें स्थापित करके, उनमें लौकिक शिक्षा देनी आरम्भ कर दी, तब मठों में भी इस शिक्षा की व्यवस्था कर दी गयी। पाँचवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी-यात्री फाह्यान (Fa-Hein) के लेखों में इस बात का उल्लेख मिलता है।
2. **प्रवेश तथा अवधि**–सातवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री, आइसाँग (I-Tsing) के अनुसार, प्राथमिक शिक्षा आरम्भ करने की आयु 6 वर्ष की थी। इस शिक्षा की अवधि साधारणत: 6 वर्ष की थी।
3. **पाठ्यक्रम**–सातवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री ह्वेनसाँग (Hiuen-Tsing) ने प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम का वर्णन इस प्रकार किया है–बालकों को प्रथम 6 माह में 'सिद्धिरस्तु' अक्षर थे, जिनको विभिन्न क्रम में रखकर 300 से अधिक श्लोकों की रचना की गयी थी की शिक्षा दी जाती थी। 16 माह के बाद बालकों को अग्राँकित पाँच विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी–शब्द-विद्या, चिकित्सा-विद्या, अध्यात्म-विद्या और शिल्प-स्थान-विद्या। इस प्रकार पाठ्यक्रम में धार्मिक और लौकिक दोनों विषयों को स्थान दिया गया था।
4. **शिक्षण-विधि**–एलबर्ट फिटके (Albert Fytche) के अनुसार, सामान्य शिक्षण-विधि इस प्रकार थी–शिक्षक, लकड़ी की तख्ती पर वर्णमाला के अक्षरों को लिखता था और उनका उच्चारण करता था। बालक उसके उच्चारण का अनुकरण करते थे। इस प्रकार, जब कुछ समय के बाद उनको अक्षरों का ज्ञान हो जाता था, तब वे उनको लिखते थे। पाठ्य-विषय के शिक्षण का अध्यापक आगे-आगे बोलता था और बालक

उसके कथन को उस समय तक दोहराते थे, जब तक उनको पाठ्य-विषय कंठस्थ नहीं हो जाता था। इस प्रकार, शिक्षण विधि पूर्णतया मौखिक थी।

5. **शिक्षा का माध्यम**–मठ-विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम, जनसाधारण की भाषा पाली थी, न कि ब्राह्मणीय शिक्षालयों की संस्कृति।

2. उच्च शिक्षा (Higher Education)

1. **सामान्य परिचय**–उच्च शिक्षा के द्वार सभी धर्मों और जातियों के बालकों के लिये खुले हुए थे। इस शिक्षा के प्रमुख केन्द्र–बौद्ध-मठ थे पर सब मठों में समान विषयों की शिक्षा नहीं दी जाती थी। **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार–"मठों ने उच्च शिक्षा में अपनी दक्षता से कोरिया, चीन, तिब्बत और जावा जैसे सुदूर देशों के छात्रों को आकर्षित करके, भारत की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति में वृद्धि की।"

2. **प्रवेश तथा अवधि**–उच्च शिक्षा का आरम्भ प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् होता था। अत: बालक इसका आरम्भ साधारणतया 12 वर्ष की आयु में करते थे। अध्ययन की अवधि 12 वर्ष की थी ताकि छात्र प्राचीन परम्परा के अनुसार 25 वर्ष की आयु में किसी व्यवसाय को ग्रहण करके, गृहस्थ के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सकें।

3. **पाठ्यक्रम**–पाठ्यक्रम दो भागों में बँटा हुआ था–धार्मिक और लौकिक। धार्मिक पाठ्यक्रम–भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिये था। इसका मुख्य उद्देश्य–उनको निर्वाण प्राप्त करने और धर्म का प्रचार करने की योग्यता प्रदान करना था। उनको धार्मिक और जीवनोपयोगी–दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। मुख्य धार्मिक विषय थे–बौद्ध धर्म, साहित्य, त्रिपिटक, विनय, धम्म आदि। जीवनोपयोगी विषयों में मठों और विहारों के निर्माण का व्यावहारिक ज्ञान, दान की सम्पत्ति का प्रबन्ध और हिसाब-किताब आदि सम्मिलित थे।

   लौकिक पाठ्यक्रम साधारण नागरिकों के लिये था। इसका मुख्य उद्देश्य–उनको सुयोग्य नागरिक बनाना तथा आर्थिक और सामाजिक जीवन के लिये तैयार करना था। उनके पाठ्यक्रम में अग्रलिखित विषय सम्मिलित थे–धर्म, दर्शन, साहित्य, तर्कशास्त्र, न्यायशास्त्र, चिकित्साशास्त्र आदि।

4. **शिक्षा का माध्यम**–शिक्षा का माध्यम सामान्य रूप से पाली भाषा थी, पर वैदिक साहित्य की शिक्षा, संस्कृत के माध्यम से दी जाती थी। इसके अतिरिक्त, देश की अन्य प्रचलित भाषाओं का भी प्रयोग किया जाता था। इसका कारण **महात्मा बुद्ध** की भिक्षुओं को यह अनुमति थी–"ओ भिक्षुओं! मैं तुम में से प्रत्येक को अपनी भाषा में बुद्ध की शिक्षाओं को सीखने की अनुमति देता हूँ।"

5. **शिक्षा के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय**–बौद्ध-काल में शिक्षा के मुख्य केन्द्र–मठ और विहार थे। इनसे छात्रावास सम्बद्ध थे। छात्रों को नि:शुल्क शिक्षा, भोजन, वस्त्र, चिकित्सा आदि की सुविधा प्राप्त थी। कुछ मठों और विहारों ने विश्वविद्यालयों के रूप में विकसित होकर पर्याप्त ख्याति अर्जित की; यथा–

   (1) **वल्लभी विश्वविद्यालय**–यह विश्वविद्यालय पूर्वी काठियावाड़ में वला नामक स्थान में था। 7वीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी तक पश्चिमी भारत का प्रमुख शिक्षा-केन्द्र था।

   (2) **नदिया विश्वविद्यालय**–यह विश्वविद्यालय पूर्वी बंगाल में नदिया नामक स्थान में था। 11वीं शताब्दी में राजा लक्ष्मण सेन के संरक्षण में यह शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र हो गया।

   (3) **तक्षशिला विश्वविद्यालय**–यह विश्वविद्यालय आधुनिक रावलपिंडी से लगभग 20 मील पश्चिम में था। यह अनेक शताब्दियों तक पहले वैदिक शिक्षा का और उसके बाद बौद्ध-शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र था। यह 600 ई. पू. तक अपनी प्रसिद्धि की पराकाष्ठा पर था। वैयाकरण पाणिनी, राजनीतिज्ञ एवं

नोट

अर्थशास्त्री चाणक्य अथवा कौटिल्य, महात्मा बुद्ध के व्यक्तिगत चिकित्सक जीवक एवं सम्राट चन्द्रगुप्त और पुष्यमित्र इसी विश्वविद्यालय की उपज थे। पाँचवीं शताब्दी के मध्य में बर्बर हूणों ने इसका सदैव के लिये विनाश कर दिया।

(4) **विक्रमशिला विश्वविद्यालय**—यह विश्वविद्यालय उत्तरी मगध में गंगा नदी के तट पर एक अत्यन्त सुन्दर पहाड़ी पर स्थित था। इसमें 108 भिक्षु-शिक्षक और 3,000 छात्र थे। इसे बख्तियार खिलजी ने सन् 1203 ई. में नष्ट कर दिया।

(5) **नालन्दा विश्वविद्यालय**—यह विश्वविद्यालय पटना से लगभग 50 मील दूर दक्षिण में था। यह लगभग एक मील लम्बा और आधा मील चौड़ा था एवं चहारदीवारी से घिरा हुआ था। इसमें 8 बड़े सभा-भवन और 3,000 अध्ययन-कक्ष थे। इसका विशाल पुस्तकालय था। इसमें 10 से अधिक सरोवर थे; जिनमें छात्र, जल-क्रीड़ा करते थे। जब नालंदा विश्वविद्यालय अपनी पराकाष्ठा पर था, तब इसमें लगभग, 1,500 शिक्षक एवं 10,000 छात्र थे और प्रतिदिन 100 भाषण होते थे, इसमें चीन, जावा, ब्रह्मा आदि सुदूर देशों के छात्र अध्ययन करने आते थे। इस प्रकार, इसने अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का रूप ग्रहण कर लिया। सन् 1203 में बख्तियार खिलजी ने प्राचीन भारत की सभ्यता के प्रतीक इस विश्वविद्यालय को धराशायी कर दिया।

शिक्षा के अन्य क्षेत्र (Other Spheres of Education)

1. स्त्री शिक्षा (Women's Education)—वैदिक काल के अन्तिम चरण में लगभग 200 ई. पू. से स्त्री-शिक्षा की अवनति आरम्भ हो गयी। महात्मा बुद्ध के कारण इस शिक्षा को नवजीवन प्राप्त हुआ। उन्होंने अपने प्रिय शिष्य, आनन्द की प्रार्थना स्वीकार करके, स्त्रियों को संघ में प्रवेश करने की आज्ञा दे दी। इसके परिणामस्वरूप, स्त्री-शिक्षा का पर्याप्त विकास हुआ। बौद्ध-काल की सुशिक्षित स्त्रियों में अग्राँकित के नाम उल्लेखनीय हैं—बौद्ध-धर्म की प्रसिद्ध प्रचारिकाएँ, सुभा, अनुपमाँ तथा सुमेधा; कवियित्री के रूप में कालिदास के बाद मानी जाने वाली विजयंका और लंका में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिये भेजी जाने वाली सम्राट अशोक की पुत्री संघमित्रा।

उपर्युक्त उदाहरण इस बात का संकेत देते हैं कि स्त्रियों ने संघ में प्रवेश करके उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त की और कुछ क्षेत्रों में पुरुषों से प्रतिद्वन्द्विता करके उनसे समानता रखने का प्रमाण दिया। किन्तु यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि स्त्री-शिक्षा की सामान्य रूप से प्रगति हुई है। इसकी पुष्टि में चार कारण दिये जा सकते हैं। पहला, बौद्ध धर्म में स्त्रियों का स्थान पुरुषों से निम्नतर है। अत: सामान्य स्त्रियों की शिक्षा के प्रति ध्यान नहीं दिया गया। दूसरा, संघों में स्त्रियों का प्रवेश भिक्षुकों की आज्ञा पर निर्भर था क्योंकि भिक्षुओं को स्त्रियों से दूर रहने का उपदेश दिया जाता था, इसलिये उन्होंने बहुत ही कम स्त्रियों को संघ में प्रवेश करने की आज्ञा दी। तीसरा, संघों में प्रवेश करने का अधिकार विशेष रूप से समाज के कुलीन तथा व्यावसायिक वर्गों की स्त्रियों एवं बालिकाओं को प्राप्त हुआ। अत: इन्हीं की शिक्षा को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ, साधारण स्त्रियों की शिक्षा को नहीं। चौथा, बौद्ध मठ में प्रवेश करने वाली स्त्रियाँ—भिक्षुणियाँ थीं और उनके लिये अलग मठों की स्थापना की गयी थी। पर उन्होंने भिक्षुओं के समान अपने मठों में स्त्रियों और बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने का कार्य नहीं किया। **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार—"स्त्री-शिक्षा को बौद्ध धर्म से किसी प्रकार की प्रेरणा प्राप्त न हो सकी।"

2. व्यावसायिक शिक्षा (Professional Education)—बौद्ध-शिक्षा धर्म-प्रधान थी। किन्तु बौद्ध साहित्य में हमकों इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं कि भिक्षुओं और जनसाधारण को व्यावसायिक शिक्षा की अत्युत्तम सुविधायें प्राप्त थीं—

(1) **लाभप्रद व्यवसायों की शिक्षा** (Education in Useful Occupations)—बौद्ध धर्म के अनुयायियों और जनसाधारण के लिये अनेक लाभप्रद व्यवसायों की शिक्षा की सुन्दर व्यवस्था थी, ताकि वे अपनी जीविका का सरलता से उपार्जन कर सकें। इस प्रकार के कुछ व्यवसाय थे—कृषि, वाणिज्य, लेखन-कला, पशु-पालन और हिसाब-किताब।

नोट

(2) **प्राविधिक व वैज्ञानिक शिक्षा** (Technical and Scientific Education)–हमें 'मिलिन्द पान्हा' (Milinda Panha) में बौद्धकला में प्रचलित 19 'सिप्पाओं' अर्थात् 'शिल्पों' (Sippas or Shilps) का वर्णन मिलता है। इनका सम्बन्ध प्राविधिक और वैज्ञानिक शिक्षा से था। इनमें से अग्राँकित 10 की शिक्षा तशक्षिला में प्रदान की जाती थी–आखेट, चिकित्सा, धनुर्विद्या, इन्द्र-जाल (Magic Charm), हस्ति-ज्ञान, (Elephant Love), भविष्य कथन, शारीरिक लक्षणों का अर्थ, मृत व्यक्तियों को जीवित करने का मंत्र, सब पशुओं की बोलियाँ समझने का ज्ञान और इन्द्रिय-सम्बन्धी सब कार्यों पर नियन्त्रण करने की कला।

इस प्रकार, जैसा कि **डॉ. आर. के. मुखर्जी** ने लिखा है–"सिप्पाओं के ज्ञान अर्थात् प्राविधिक और वैज्ञानिक शिक्षा की माँग, सामान्य शिक्षा या धार्मिक अध्ययन की माँग से कम नहीं थी।"

(3) **हस्तशिल्पों की शिक्षा** (Education in Handicrafts)–'महावग्ग' (Mahavagga) में हमें एक स्थान पर इस बात का उल्लेख मिलता है कि बौद्ध-काल में भिक्षुओं को अपने मठों में विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्पों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। उदाहरणार्थ, उनको सूत कातने, कपड़ा बुनने और वस्त्र सिलने की शिक्षा दी जाती थी, ताकि वे वस्त्र-सम्बन्धी अपनी आवश्यकताओं की स्वयं पूर्ति कर सकें।

(4) **चिकित्साशास्त्र की शिक्षा** (Medical Education)–बौद्ध-काल में चिकित्सा-शास्त्र की शिक्षा का अभूतपूर्व विकास हुआ। इस शिक्षा का मुख्य केन्द्र तक्षशिला विश्वविद्यालय था और इसकी अवधि 7 वर्ष की थी। जीवक, चरक, धन्वन्तरि आदि महान् आयुर्वेदाचार्य बौद्ध युग की ही देन हैं।

(5) **भवन निर्माण-कला, मूर्तिकला व चित्रकला की शिक्षा** (Education in Architecture, Sculpture and Painting)–बौद्धकला में भवन-निर्माण कला की विशिष्ट शिक्षा उपलब्ध होने के कारण इस कला का आश्चर्यजनक विकास हुआ। इस काल के बौद्ध विहार, स्तूप एवं नालन्दा और विक्रमशिला की विशाल इमारतें–भवन निर्माण-कला का सजीव प्रमाण हैं। इस कला के साथ-साथ मूर्तिकला और चित्रकला की भी, शिक्षा की सुविधाओं के कारण, असाधारण प्रगति हुई। अजन्ता और एलोरा के भित्ति-चित्र, मूर्तिकला इस प्रगति के आज भी साक्षी हैं।

बौद्धकालीन शिक्षा की विशेषतायें (Characteristics of Buddhistic Education)

बौद्धकालीन शिक्षा की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) **शिक्षा का माध्यम**–शिक्षा का माध्यम पाली भाषा थी। इसके अतिरिक्त संस्कृत भाषा का भी प्रयोग किया जाता था। **प्रो. पी. डी.** पाठक के अनुसार–"शिक्षा का माध्यम सामान्य रूप से पाली भाषा थी, परन्तु वैदिक साहित्य की शिक्षा का माध्यम संस्कृत भाषा थी। इसके अतिरिक्त देश की अन्य प्रचलित भाषाओं का भी प्रयोग किया जाता था।"

(2) **छात्र योग्यता**–बौद्ध काल में चण्डालों को छोड़कर सभी जातियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। विकलांग, रोगी, अस्वस्थ, दण्डित एवं असम्मानित लोगों को शिक्षा का अधिकार नहीं था। विद्यारम्भ 8 वर्ष की आयु में होता था। 12 वर्ष तक भ्रमण की स्थिति में रहता था। 20 वर्ष की आयु के पश्चात् वह भिक्षु बन सकता था।

(3) **शिक्षण पद्धति**–इस काल में शिक्षण की पद्धति मुख्यत: मौखिक थी, रटने पर बल दिया जाता था। वाद-विवाद, तर्क-विश्लेषण, व्याख्या और स्पष्टीकरण विधियों का प्रयोग किया जाता था। **ह्वेनसाँग** के अनुसार–"शिक्षक पाठ्य-वस्तु का सामान्य अर्थ बताते हैं तथा विद्यार्थियों को सविस्तार पढ़ाते हैं। शिक्षक विद्यार्थियों को परिश्रम के लिये प्रोत्साहित करते हैं और कुशलता से उन्नति के पथ पर अग्रसर करते हैं। वे क्रियाशून्य छात्रों को निर्देशित करते हैं और मन्दबुद्धि विद्यार्थियों को ज्ञानार्जन के लिये उत्सुक करते हैं।"

(4) **गुरु-शिष्य सम्बन्ध**–गुरु और शिष्य के मध्य मधुर तथा प्रगाढ़ सम्बन्ध थे। छात्र अपने गुरुओं की सेवा करते थे और गुरु के प्रति भक्ति एवं श्रद्धा-भाव रखते थे। गुरु भी छात्रों को अपने व्यक्तित्व से प्रभावित

नोट

कर उनके विकास के लिये सदैव सजग रहता था। **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार–"अपने गुरु के साथ शिष्य के सम्बन्धों का स्वरूप पुत्रानुरूप था। वे पारस्परिक सम्मान, विश्वास और प्रेम से आबद्ध थे। गुरु भी आध्यात्मिक मार्ग का प्रदर्शन करता था।"

(5) **प्रवज्जा संस्कार**–प्रवज्जा का शाब्दिक अर्थ है 'बाहर जाना' (Going Out)। इस संस्कार का अभिप्राय था बालक अपने परिवार एवं पूर्व स्थिति का परित्याग करके संघ में प्रवेश करता था, जिनके जीवन का उद्देश्य बौद्ध भिक्षु बनना था। यह संस्कार 8 वर्ष की आयु से पहले सम्पन्न नहीं हो सकता था। प्रवज्जा संस्कार के समय विद्यार्थी अपने केश मुँडाकर पीले वस्त्र धारण कर लेता था। **विनय पटक** के अनुसार–"बालक अपने सिर को मुँडाता था, पीले वस्त्र धारण करता था, प्रवेश करने वाले मठ के भिक्षुओं के चरणों को अपने मस्तक से स्पर्श करता था और उनके सामने पालथी मारकर भूमि कर बैठ जाता था। मठ का सबसे बड़ा भिक्षु उससे तीन बार यह शपथ लेने को कहता था–

"बुद्धं शरणं गच्छामि
धम्मं शरणं गच्छामि
संघ शरणं गच्छामि।"

इस शपथ के बाद 10 उपदेश दिये जाते थे, जो कि निम्नलिखित हैं–

(1) चोरी न करना।
(2) जीव-हत्या न करना।
(3) असत्य न बोलना।
(4) मादक वस्तुओं का सेवन न करना।
(5) ऊँचे बिस्तर पर न सोना।
(6) वर्जित समय में भोजन न करना।
(7) अशुद्धता से दूर रहना।
(8) नृत्य-संगीत आदि से दूर रहना।
(9) सोने-चाँदी का दान न लेना।
(10) श्रृंगार प्रसाधनों का प्रयोग न करना।

(6) **उपसम्पदा संस्कार**–इस संस्कार में 12 वर्ष की आयु से 22 वर्ष की आयु तक की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् छात्र को मठ छोड़ना अनिवार्य होता था परन्तु वह उपसम्पदा संस्कार सम्पादित करके पूर्ण भिक्षु के रूप में संघ में रहने का अधिकारी बन जाता था। संघ में रहने का अधिकारी छात्र भिक्षुकों के निर्णय के अनुसार बनता था। शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् छात्र अपने प्राचार्य के साथ श्रेष्ठ भिक्षुकों के समक्ष उपस्थित होता था। भिक्षुगण छात्र से प्रश्न पूछते थे। यदि छात्र, इस परीक्षा में सफल हो जाता था तो उसका उपसम्पदा संस्कार किया जाता था। उपसम्पदा संस्कार करते समय भिक्षु को संघ में रहने के लिये कतिपय नियमों का पालन करना पड़ता था। ये नियम निम्नलिखित हैं–

(1) वृक्ष के नीचे निवास करना।
(2) भिक्षा माँगकर भोजन करना।
(3) स्त्री समागम, चोरी और हत्या से बचना।
(4) अलौकिक शक्तियों का दावा न करना।
(5) साधारण वस्त्रों को धारण करना।
(6) औषधि के रूप में गोमूत्र का सेवन करना।

नोट

(7) **व्यावसायिक शिक्षा**–बौद्ध काल में व्यावसायिक शिक्षा भी दी जाती थी, जैसे–औषधि विज्ञान, कताई-बुनाई, भविष्य कथन आदि। **डॉ. सुरेश भटनागर** के अनुसार–"बौद्ध काल में लेखन, गणना, रूपम, कृषि, वाणिज्य, कुटीर उद्योग और पशु-पालन, हस्तज्ञान, इन्द्रजाल, मृतकों को जीवित करने का मन्त्र, पशुओं की बोली का ज्ञान, धनुर्विद्या, भविष्य कथन, इन्द्रिय सम्बन्धी क्रियाओं का वशीकरण, शारीरिक संकेत, आदि पाठ्यक्रम में थे।"

(8) **शिक्षा पद्धति**–बौद्ध काल में शिक्षा मठों और बिहारों में भी दी जाती थी। इसमें केवल संघ के श्रमणों को ही शिक्षा दी जाती थी। इस काल में प्रश्नोत्तर विधि, व्याख्या, वाद-विवाद, निरीक्षण एवं प्रवचन विधि, देशाटन और प्रकृति निरीक्षण विधि आदि शिक्षण विधियों को प्रयोग में लाया जाता था। विद्यार्थियों को अनुभव प्राप्त करने के लिये देशाटन को भेजा जा सकता था। महान् व्यक्तियों के प्रवचन कराये जाते थे और विद्यार्थियों के ज्ञानवर्द्धन के लिये वाद-विवाद प्रतियोगिता आयोजित की जाती थी। **गुन्नार मिरडल** के अनुसार–"शास्त्रीय विचारों को प्रोत्साहित किया जाता था।"

(9) **छात्र जीवन सम्बन्धित नियम**–बौद्धकालीन शिक्षा में छात्रों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सम्भावित नियमों का पालन करना पड़ता था। ये क्षेत्र निम्नलिखित हैं–

भोजन–छात्रों को दिन में तीन बार भोजन करने का नियम था। भोजन शाकाहारी और शुद्ध होता था। रात्रि के भोजन के लिये शिष्य और गुरु कहीं-न-कहीं आमन्त्रित होते थे।

भिक्षाटन–छात्रों को भिक्षाटन के नियमों का पालन करना पड़ता था। छात्र प्रातःकाल ही भिक्षाटन को निकल जाते थे। भिक्षा मौन रूप से माँगी जाती थी। भिक्षा उतनी ही ली जाती थी जितनी की आवश्यकता होती थी।

स्नान–प्रतिदिन स्नान करना आवश्यक था। दूसरे व्यक्ति से शरीर का मैल उतरवाना वर्जित था। शरीर को लकड़ी से नहीं मल सकते थे और स्नान करते समय क्रीड़ायें नहीं कर सकते थे।

वस्त्र धारण–छात्र को कम वस्त्र धारण करने का आदेश था। छात्र साधारणतः तीन वस्त्र धारण करते थे जिन्हें 'तिसिंवरा' कहते थे।

अनुशासन–बौद्धकालीन शिक्षा में छात्र अनुशासन में रहते थे। फूल-पत्तियाँ तोड़ना, शृंगार-प्रसाधनों का प्रयोग, अपशब्दों का बोलना, सार्वजनिक स्थानों पर तमाशे देखना आदि वर्जित था। जो छात्र इन नियमों को तोड़ते थे, उन्हें दण्डित किया जाता था।

(10) **स्त्री शिक्षा**–**प्रो. एस. वर्मा** के अनुसार–"बौद्धकालीन शिक्षा में स्त्रियों को शिक्षा नहीं दी जाती थी। बौद्ध भिक्षुकों के लिये स्त्रियों का समीप्य निषिद्ध था, परन्तु कुछ समय पश्चात् अपनी विमाता महाप्रजापति के आग्रह पर स्त्रियों को संघ में प्रवेश की आज्ञा प्राप्त हो गयी। स्त्रियों के संघ बौद्ध भिक्षुओं के संघ से अलग होते थे। स्त्रियाँ संघ में प्रवेश करके भिक्षुणी कहलाती थीं। इस प्रकार बौद्ध काल में शिक्षा का प्रसार स्त्री शिक्षा के रूप में विकसित हुआ।"

प्रो. ए. एस. अल्तेकर के अनुसार–"स्त्रियों के संघ में प्रवेश करने की अनुमति ने स्त्री शिक्षा को विशेष रूप से समाज के कुलीन और व्यावसायिक वर्गों की स्त्रियों की शिक्षा को बहुत अधिक प्रोत्साहन दिया।"

(11) **पाठ्यक्रम**–बौद्ध काल का पाठ्यक्रम उच्च-स्तर का माना जाता था। इस काल में बौद्ध धर्म, जैन धर्म, हिन्दू दर्शन, संस्कृत, पाली अध्यात्मशास्त्र, खगोलशास्त्र तथा औषधिशास्त्र की शिक्षा दी जाती थी। **डॉ. सुरेश भटनागर** के अनुसार–"इस युग में पाठ्यक्रम दो प्रकार का था–धार्मिक और लौकिक। धार्मिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वेद शास्त्र तथा बौद्ध शास्त्र पढ़ाये जाते थे। उन दिनों वेद और बौद्ध ग्रन्थों का उदारतापूर्वक अध्ययन कराया जाता था। लौकिक पाठ्यक्रम में, समाज की भौतिक आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया

नोट

जाता था। इसमें लेखन, गणित, कताई, बुनाई, छपाई, शास्त्रार्थ, सिलाई, रंगाई, चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, वास्तुकला, पशु-पालन, कृषि तथा चिकित्सा आदि थी। इस युग में गुरु-शिष्य के सम्बन्ध, वैदिक तथा ब्राह्मण युग की तरह मधुर थे। आचार्य की आज्ञा का पालन और सेवा करना शिष्यों का कर्त्तव्य था। अपराध होने पर प्रायश्चित की व्यवस्था थी।"

बौद्धकालीन शिक्षा के प्रमुख दोष (Main Defects of Buddhistic Education)

डॉ. एफ. ई केई के अनुसार–"बौद्ध-शिक्षा के आदर्शों और प्रयोग का ब्राह्मणीय शिक्षा आदर्शों और प्रयोग से घनिष्ठ सम्बन्ध था।"

डॉ. केई के उक्त कथन को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार ब्राह्मणीय शिक्षा में कतिपय दोष थे, उसी प्रकार बौद्ध-शिक्षा में भी थे। इन दोषों का संक्षिप्त वर्णन नीचे प्रस्तुत है–

1. **देश की दुर्बलता** (Weakness of the Country)–अहिंसा में विश्वास करने के कारण बौद्ध धर्म ने 'अहिंसा परमो धर्मः' के सिद्धान्त का पोषण किया। अतः बौद्ध काल में युद्ध-कला, सैनिक विज्ञान, अस्त्र-शस्त्र निर्माण की शिक्षा के प्रति लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि देश–सैनिक दृष्टि से दुर्बल हो गया। अतः जब भारत पर मुसलमानों के आक्रमण आरम्भ हुए, तब इस देश के निवासी सैनिक शक्ति से उनका सामना न कर सकने के कारण पददलित हुए और कई शताब्दियों तक यवनों के दास रहे।
2. **स्त्री-शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of Women's Education)–बौद्ध-शिक्षा से केवल धनी और कुलीन परिवारों की स्त्रियाँ ही लाभान्वित हुईं। जहाँ तक सामान्य स्त्रियों की शिक्षा का प्रश्न था, उसके लिये बौद्धों ने कोई कदम नहीं उठाया। इसका दोष मुख्यतः भिक्षुणियों पर था, क्योंकि जिस प्रकार बालकों और पुरुषों की शिक्षा का भार भिक्षुओं पर था, उसी प्रकार बलिकाओं और स्त्रियों की शिक्षा का उत्तरदायित्व भिक्षुणियों पर था। किन्तु भिक्षुणियों ने अपने मठों में किसी प्रकार की शिक्षा का कार्यक्रम आयोजित नहीं किया। अतः **डॉ. एफ. ई. केई** का मत है–**"यह कल्पना करना 'उचित न होगा कि बौद्ध-धर्म ने भारत में स्त्रियों की शिक्षा के लिये कोई विशेष कार्य किया।"**
3. **बौद्ध धर्म का पतन** (Decline of Buddhism)–शिक्षा के केन्द्रों के रूप में मठों और विहारों का जनतन्त्रीय आधार पर संगठन किया गया था। पर उसके संगठन में कुछ समय के उपरान्त शिथिलता आ गई। फलस्वरूप, पृथक् मठों में रहते हुए भी भिक्षुओं और भिक्षुणियों का सम्पर्क आरम्भ हो गया। इस सम्पर्क ने व्यभिचार को जन्म दिया, जो कुछ समय के पश्चात् बौद्ध धर्म के पतन का कारण बना।
4. **हस्तकार्य के प्रति घृणा** (Hatred for Handwork)–मठों में प्रदान की जाने वाली शिक्षा मुख्यतः धार्मिक और आध्यात्मिक थी। उसमें लौकिक विषयों को तो स्थान दिया गया था, किन्तु हस्तकार्यों से सम्बन्धित शिक्षा की उपेक्षा की गयी थी। अतः जैसा कि **डॉ. महेश चन्द्र सिंघल** ने लिखा है–**"हस्तकार्यों को हेय समझा जाने लगा, जिससे उच्च वर्गों के लोगों ने इसे पूर्णतः छोड़ दिया। इस प्रकार श्रम की गुरुता की भावना का विनाश हुआ।"**
5. **कट्टर धार्मिक विचारों का समावेश** (Infusion of Puritanical Ideas)–बौद्ध-शिक्षा पर धर्म की इतनी गहरी छाप थी कि इस शिक्षा को प्राप्त करने वाले व्यक्ति–धर्म की सीमा से बाहर किसी बात की कल्पना नहीं कर सकते थे। इस प्रकार बौद्धों ने अपनी शिक्षा द्वारा जनसाधारण के मस्तिष्क में धार्मिक कट्टरता का समावेश कर दिया। **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** ने ठीक ही लिखा है–**"जन-साधारण के मस्तिष्क में शनैः-शनैः कट्टर धार्मिक विचारों का समावेश करने के लिये बौद्ध लोग उत्तरदायी हैं।"**
6. **लौकिक जीवन की उपेक्षा** (Neglect of Worldy Life)–धर्म-प्रधान होने के कारण बौद्ध-शिक्षा में आध्यात्मिक विकास पर विशेष बल दिया जाता था। बौद्धों और अबौद्धों को जीवन को मिथ्या और संसार

को क्षण-भंगुर मानने की निरन्तर शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार बौद्ध धर्म, जो शिक्षा प्रदान करता था, वह व्यक्तियों को इस जीवन और संसार के लिये तैयार न करके, दूसरे संसार के लिये तैयार करती थी। इस प्रसंग में **डॉ. एफ. ई. केई** के अनुसार–**"बौद्ध धर्म ने जीवन का ऐसा आदर्श उपस्थित किया, जिसमें इस क्षण-भंगुर संसार के लिये घृणा थी और इसलिये इस धर्म ने शिक्षा द्वारा व्यक्ति को दूसरे संसार के लिये तैयार किया।"**

आधुनिक भारतीय शिक्षा में बौद्ध धर्म का योगदान (Contribution of Buddhism to Modern Indian Education)

आधुनिक भारतीय शिक्षा को बौद्ध-शिक्षा का योगदान अत्यन्त व्यापक और अभिनन्दनीय है। शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे अनेक आयोजन किए गये हैं, जो बौद्ध-शिक्षा के अभिन्न अंग थे; यथा–

1. सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा का आयोजन।
2. खेल-कूद और शारीरिक व्यायाम का आयोजन।
3. व्यावसायिक और लाभप्रद विषयों की शिक्षा का आयोजन।
4. बहु-शिक्षक और सामूहिक शिक्षा प्रणालियों का आयोजन।
5. शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन की निश्चित अवधि का आयोजन।
6. सामान्य विद्यालयों का आयोजन।
7. शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश-सम्बन्धी न्यूनतम आयु, नियमों और परीक्षा का आयोजन।
8. सभी धर्मों, वर्गों और जातियों के बालकों को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने का आयोजन।
9. माता-पिता और अभिभावकों के साथ रहने वाले बालकों के लिये शिक्षा की सुविधाओं का आयोजन।
10. स्त्रियों के लिये उच्च शिक्षा का आयोजन।
11. प्राविधिक और वैज्ञानिक शिक्षा का आयोजन।
12. लौकिक और सामान्य विषयों की शिक्षा प्रदान करने का आयोजन।
13. उच्च स्तर पर सैद्धान्तिक और प्रयोगात्मक शिक्षा का आयोजन।
14. लोकसभाओं को प्रोत्साहन और उनको शिक्षा का माध्यम बनाने का आयोजन।

आधुनिक शिक्षा के लिये ग्राह्य तत्व (Acceptable Features for Modern Education)

यद्यपि बौद्धकालीन शिक्षा का भारत में लोप हो चुका है, तथापि इसके कुछ तत्व आधुनिक भारतीय शिक्षा के लिये ग्रहणीय हैं; यथा–

(1) **छात्रों के अधिकार** (Student's Rights)–बौद्ध काल में जब छात्र को भिक्षु के रूप में मठ में प्रवेश करने की आज्ञा मिल जाती है, तब उसे पूर्ण स्वतन्त्रता और जीवन-सम्बन्धी सभी अधिकार प्राप्त हो जाते थे।

आधुनिक भारतीय शिक्षा में इस तत्त्व का अत्यन्त महत्त्व है। छात्रों को अपनी शिक्षा-संस्थाओं से सम्बन्धित सभी कार्यों में भाग लेने की स्वतन्त्रता और अधिकार होना चाहिए। आधुनिक शिक्षा में इस तत्त्व को समाविष्ट करके अनेक समस्याओं का समाधान किया जाता है। **डॉ. महेश चन्द्र सिंघल** के शब्दों में–**"आज भारतीय विश्वविद्यालयों के समस्त उपकुलपतियों ने इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि शिक्षा के विभिन्न पक्षों में जिनमें प्रशासन भी शामिल है, किस सीमा तक छात्रों को सम्मिलित किया जाये और उन्हें अधिकार प्रदान किये जायें।"**

नोट

(2) **छात्रों का जीवन** (Student's Life)—बौद्ध काल में छात्रों के जीवन के दो मुख्य आदर्श थे—सादगी और श्रेष्ठ विचार। इन आदर्शों के बावजूद उनके लिये तपस्यापूर्ण जीवन के बजाए सुख-सुविधापूर्ण जीवन को अच्छा माना जाता था। इसलिये उनको भोजन, वस्त्र, निवास, चिकित्सा आदि की सुविधायें प्रदान की गयी थीं।

आधुनिक भारत में उस मध्य मार्ग का अनुसरण सर्वथा उचित प्रतीत होता है। छात्रों को आधुनिक आविष्कारों से प्राप्त होने वाली सुख-सुविधाओं से वंचित न करके, सादगी और श्रेष्ठ विचारों के आदर्शों को प्राप्त करने के लिये अनुप्राणित किया जा सकता है।

(3) **शिक्षा-संस्थाओं का जनतन्त्रीय संगठन** (Democractic Organization of Educational Institutions)—बौद्ध काल में शिक्षा-संस्थायें बाह्य नियन्त्रण से मुक्त थीं और उनका संगठन जनतन्त्रीय आधार पर किया गया था। आज हमारे देश में ऐसी सहस्त्रों शिक्षा-संस्थायें हैं, जो न तो बाह्य नियन्त्रण से मुक्त हैं और न जिनका संगठन ही जनतन्त्रीय है। इन संस्थाओं का स्वरूप बौद्ध काल की शिक्षा-संस्थाओं के अनुरूप बनाया जाना वाँछनीय है।

इस स्वरूप को अंकित करते हुए **डॉ. आर. के. मुखर्जी** ने लिखा है—**"बौद्ध-प्रणाली में शिक्षा, विहार या मठ में दी जाती थी, जिसमें सामूहिक जीवन, भ्रातृत्व भावना और जनतन्त्र के लिये अवसर प्रदान होता था।"**

(4) **अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र** (Centre of International Education)—बौद्ध काल में भारत अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र था। सुदूर देशों से आने वाले छात्र, अध्ययन समाप्त करके अपने देशों को लौटते थे और वहाँ दया, प्रेम, अहिंसा, बौद्ध धर्म, विश्व-बन्धुत्व और भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का संदेश फैलाते थे।

हमारा देश आज भी प्रेम, शान्ति एवं अहिंसा के सिद्धान्तों का उपासक माना जाता है। अत: भारत को एक बार फिर अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र बनाकर इन सिद्धान्तों का विश्व में व्यापक प्रचार किया जा सकता है। **डॉ. महेश चन्द्र सिंघल** के अनुसार—**"शान्ति, अहिंसा, प्रेम और वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धान्त विश्व में फैलाने का कार्य भारतीय शिक्षा और विश्वविद्यालय के द्वारा आज भी किया जा सकता है।"**

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)—

1. वैदिक कालीन शिक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार था—
   (*a*) विद्यारम्भ संस्कार (*b*) उपनयन संस्कार
   (*c*) प्रवज्या संस्कार (*d*) समावर्तन संस्कार
2. उपनयन संस्कार किया जाता था—
   (*a*) सभी जाति के बालकों का (*b*) केवल ब्राह्मण बालकों का
   (*c*) वैश्य जाति के बालकों का (*d*) क्षत्रिय जाति के बालकों का
3. प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली को किस नाम से जाना जाता था—
   (*a*) वैदिक शिक्षा प्रणाली (*b*) गुरुकुल प्रणाली
   (*c*) भारतीय शिक्षा प्रणाली (*d*) धार्मिक शिक्षा
4. गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली में किस शिक्षण-विधि को अपनाया जाता था—
   (*a*) विद्यारम्भ संस्कार (*b*) मौखिक विधि
   (*c*) लिखित तथा मौखिक विधि (*d*) उपर्युक्त में से कोई नहीं

नोट

5. प्राचीन भारतीय शिक्षा-प्रणाली में स्त्री-शिक्षा की क्या स्थिति थी–
   (*a*) पूर्ण अवहेलना की गयी थी   (*b*) स्त्री-शिक्षा को समुचित महत्त्व दिया जाता था
   (*c*) केवल साक्षरता प्रदान की जाती थी   (*d*) केवल गृहस्थ सम्बन्धी शिक्षा दी जाती थी।
6. बौद्धकालीन शिक्षा-प्रणाली में बालक के द्वारा शिक्षा प्रारम्भ किये जाने पर कौन-सा संस्कार किया जाता था–
   (*a*) उपसम्पदा संस्कार   (*b*) यज्ञोपवीत संस्कार
   (*c*) प्रवज्या संस्कार   (*d*) उपर्युक्त सभी संस्कार
7. बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत बालक द्वारा 'बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि, मन्त्र का उच्चारण कब किया जाता था–
   (*a*) शिक्षा प्रारम्भ करने के समय   (*b*) शिक्षा पूर्ण करने के समय
   (*c*) युवा होने पर   (*d*) प्रतिवर्ष
8. बौद्धकालीन शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत किन व्यक्तियों को शिक्षा से वंचित रखा गया था–
   (*a*) ब्राह्मण को   (*b*) क्षत्रियों को
   (*c*) कोढ़, तपेदिक तथा नपुंसकता के शिकार व्यक्तियों को
   (*d*) हिंसा के समर्थकों को
9. बौद्धकालीन शिक्षा के मुख्य केन्द्र थे–
   (*a*) सारनाथ   (*b*) बौद्धगण
   (*c*) नालन्दा एवं तक्षशिला   (*d*) दिल्ली
10. समावर्तन संस्कार किस आयु में किया जाता था–
   (*a*) 15 वर्ष की आयु में   (*b*) 20 वर्ष की आयु में
   (*c*) 25 वर्ष की आयु में   (*d*) 30 वर्ष की आयु में।

1.3 सारांश (Summary)

- **डॉ. एस. के अल्तेकर** के अनुसार–"प्राचीन भारत में सम्भवत: 400 ई. पू. से पहले प्राथमिक शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी। उस समय तक बालक का परिवार ही उसकी शिक्षा का केन्द्र था। उसके बाद कुछ ब्राह्मणों ने व्यक्तिगत रूप में शिक्षा देने का कार्य आरम्भ किया।" इसके परिणामस्वरूप, जिस शिक्षा-प्रणाली का विकास हुआ, उसमें प्राथमिक और उच्च शिक्षा की समुचित व्यवस्था थी। प्राचीन भारत में शिक्षा के यही दो स्तर थे।
- "प्राथमिक शिक्षा का आरम्भ 5 वर्ष की आयु में "विद्यारम्भ संस्कार" से होता था और सभी जातियों के बालकों के लिये अनिवार्य था। इसका अभिप्राय यह है कि सभी जातियों के बालक प्राथमिक शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। इस शिक्षा की अवधि का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कोई स्रोत उपलब्ध नहीं है; पर डॉ. ए. एस. अल्तेकर के अनुसार इसकी अवधि 6 वर्ष की थी।"
- प्राथमिक शिक्षा के अन्तर्गत बालकों को पहले कुछ वादक यन्त्रों का उच्चारण करना और बोलना सिखाया जाता था। जब वे उन यन्त्रों को कंठस्थ कर लेते थे तब उनको पढ़ने और लिखने की शिक्षा दी जाती थी। भाषा का वाँछित ज्ञान हो जाने के पश्चात् उनको साहित्य तथा व्याकरण से परिचित कराया जाता था।
- उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार केवल ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों को था। इन जातियों के बालक सामान्य रूप से क्रमश: 8, 11 और 12 वर्ष की आयु में शिक्षा-संस्था में प्रवेश करते थे। साहित्य तथा धर्मशास्त्र के अध्ययन की अवधि 10 वर्ष और एक वेद के अध्ययन की अवधि 12 वर्ष की थी।

नोट

- परिषद् में विभिन्न विषयों की शिक्षा दी जाती थी। एक परिषद् में साधारणतः दस शिक्षक होते थे।
- विद्यापीठ में व्याकरण और तर्कशास्त्र की शिक्षा दी जाती थी। एक विद्यापीठ में अनेक शिक्षक होते थे।
- इस महाविद्यालय को 'चतुष्पथी' कहा जाता था, क्योंकि इसमें चारों शास्त्रों अर्थात् अग्रांकित चार विषयों की शिक्षा दी जाती थी—दर्शन, पुराण, कानून और व्याकरण। एक ब्राह्मणीय महाविद्यालय में एक शिक्षक होता था।
- उच्च शिक्षा की कुछ संस्थाओं ने कालान्तर में विश्वविद्यालयों का रूप ग्रहण किया। इनमें धार्मिक शिक्षा के अतिरिक्त वाणिज्य, चित्रकला, चिकित्साशास्त्र आदि की भी शिक्षा विभिन्न शिक्षकों द्वारा दी जाती थी। बनारस, नालन्दा और तक्षशिला के विश्वविद्यालय सबसे अधिक प्रसिद्ध थे।
- उत्तर वैदिक युग में शिक्षा के पाठ्यक्रम में विभिन्न ग्रन्थों एवं धर्मों को सम्मिलित किये जाने के कारण इस युग की शिक्षा पूर्व वैदिक युगीन शिक्षा की तुलना में अधिक उन्नत बन गयी थी।
- उपनयन का अर्थ है पास ले जाना। शिक्षा के प्रसंग में इसका अर्थ है कि शिक्षा का प्रारम्भ करने के लिये बालक को गुरु के समीप ले जाना।
- सम्पूर्ण शिक्षण कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् विद्यार्थियों का समावर्तन संस्कार होता था। यह संस्कार गुरुओं की देखरेख में सम्पन्न किया जाता था। वर्तमान दीक्षान्त समारोह समावर्तन उपदेश का आधुनिक रूप है।
- उत्तर वैदिक काल में नारी की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। इस युग में नारी शिक्षा को सीमित कर दिया गया था। नारी के घर से बाहर निकलने तथा सामाजिक क्रिया-कलापों पर बन्दिशें लगा दी गयी थीं। इस युग में नारी का सामाजिक स्तर इतना गिर गया था कि कन्या के जन्म को ही अमंगल समझा जाने लगा था।
- इस काल की शिक्षा के अन्तर्गत गुरु छात्र के लिये पिता के समान माना जाता था एवं प्रत्येक परिस्थितियों में छात्र के लिये आदर का पात्र होता था। गुरु भी छात्र को पुत्र के समान समझता था और उसके भविष्य को उज्ज्वल बनाने का पूरा प्रयत्न करता था।
- इस काल में परीक्षायें नहीं होती थीं। शिक्षक छात्र को नया पाठ तभी पढ़ते थे जब मौखिक प्रश्नों को पूछने के बाद उन्हें विश्वास हो जाता था कि उसने पुराना पाठ याद कर लिया है।
- प्राचीन भारतीय सभ्यताओं में वैदिक सभ्यता को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। इस सभ्यता के निर्माता आर्य थे। आर्यों के द्वारा जिस शिक्षा प्रणाली का विकास किया गया, उसके सम्बन्ध में वेदों से पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है।
- बालक का उपनयन संस्कार हो जाने पर, गुरुकुल में प्रवेश प्राप्त करता था। प्रवेश के उपरान्त जिस दिन बालक की शिक्षा का आरम्भ होता था उस दिन उसका विद्यारम्भ संस्कार किया जाता था। वैदिक शास्त्रों में इस संस्कार के लिये "अक्षर स्वीकर्णय" शब्द प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ अक्षर ज्ञान का प्रारम्भ अर्थात् उस दिन उसे अक्षर का ज्ञान कराया जाता था।
- प्राचीन भारतीय शिक्षा और आधुनिक भारतीय शिक्षा के मध्य अनेक शताब्दियों का अन्तर है। पर फिर भी, प्राचीन शिक्षा के अनेक तत्व हैं, जिनको सिद्धान्त और व्यवहार दोनों दृष्टियों से आधुनिक शिक्षा में स्थान दिया जा सकता है।
- आज हम आधुनिक युग में निवास कर रहे हैं। किन्तु हमें अपने पूर्वजों से जो सभ्यता और संस्कृति विरासत में मिली है, उन पर हमें आज भी गर्व है। हम आज भी धर्म, ईश्वर तथा निष्कास कर्म को महत्त्व देते हैं। हम आज भी धन की अपेक्षा चरित्र को, भौतिकता की अपेक्षा आध्यात्मिकता की और विज्ञान की अपेक्षा दर्शन को श्रेष्ठतर समझते हैं। आज जबकि सम्पूर्ण विश्व-धन, शक्ति, हिंसा तथा कूटनीति में आस्था रखता है, हम प्रेम, सत्य, अहिंसा, त्याग और तपस्या के समक्ष श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं।

नोट

- बौद्ध धर्म का विकास मठों में हुआ था। ये मठ न केवल धर्म के वरन् शिक्षा के भी केन्द्र थे और शिक्षा देने का कार्य उनमें निवास करने वाले भिक्षुओं द्वारा किया जाता था। इन तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए **डॉ. आर. के. मुखर्जी** ने लिखा—"बौद्ध मठ और बौद्ध-शिक्षा ज्ञान के केन्द्र थे। बौद्ध-संसार अपने मठों से पृथक् या स्वतन्त्र रूप में शिक्षा प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं देता था। धार्मिक और लौकिक, सब प्रकार की शिक्षा, भिक्षुकों के हाथ में थी।"
- सातवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री ह्वेनसाँग (Hiuen-Tsing) ने प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम का वर्णन इस प्रकार किया है—बालकों को प्रथम 6 माह में 'सिद्धिरस्तु' अक्षर का ज्ञान कराया जाता था जिनको विभिन्न क्रम में रखकर 300 से अधिक श्लोकों की रचना की गयी थी। 16 माह के बाद बालकों को अग्रांकित पाँच विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी—शब्द-विद्या, चिकित्सा-विद्या, अध्यात्म-विद्या और शिल्प-स्थान-विद्या। इस प्रकार पाठ्यक्रम में धार्मिक और लौकिक दोनों विषयों को स्थान दिया गया था।
- उच्च शिक्षा के द्वार सभी धर्मों और जातियों के बालकों के लिये खुले हुए थे। इस शिक्षा के प्रमुख केन्द्र—बौद्ध-मठ थे पर सब मठों में समान विषयों की शिक्षा नहीं दी जाती थी। इस शिक्षा की प्रशंसा में **डॉ. ए. एस. अल्तेकर** के अनुसार—"मठों ने उच्च शिक्षा में अपनी दक्षता से कोरिया, चीन, तिब्बत और जावा जैसे सुदूर देशों के छात्रों को आकर्षित करके, भारत की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति में वृद्धि की।"
- पाठ्यक्रम दो भागों में बँटा हुआ था—धार्मिक और लौकिक। धार्मिक पाठ्यक्रम—भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिये था। इसका मुख्य उद्देश्य—उनको निर्वाण प्राप्त करने और धर्म का प्रचार करने की योग्यता प्रदान करना था। उनको धार्मिक और जीवनोपयोगी—दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। मुख्य धार्मिक विषय थे—बौद्ध धर्म, साहित्य, त्रिपिटक, विनय, धम्म आदि।
- बौद्ध काल में चाण्डालों को छोड़कर सभी जातियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। विकलांग, रोगी, अस्वस्थ, दण्डित एवं असम्मानित लोगों को शिक्षा का अधिकार नहीं था। विद्यारम्भ 8 वर्ष की आयु में होता था। 12 वर्ष तक भ्रमण की स्थिति में रहता था। 20 वर्ष की आयु के पश्चात् वह भिक्षु बन सकता था।
- इस काल में शिक्षण की पद्धति मुख्यतः मौखिक थी, रटने पर बल दिया जाता था। वाद-विवाद, तर्क-विश्लेषण, व्याख्या और स्पष्टीकरण विधियों का प्रयोग किया जाता था।
- प्रवज्जा का शाब्दिक अर्थ है 'बाहर जाना' (Going Out)। इस संस्कार का अभिप्राय था बालक अपने परिवार एवं पूर्व स्थिति का परित्याग करके संघ में प्रवेश करता था, जिनके जीवन का उद्देश्य बौद्ध भिक्षु बनना था। यह संस्कार 8 वर्ष की आयु से पहले सम्पन्न नहीं हो सकता था।
- इस संस्कार में 12 वर्ष की आयु से 22 वर्ष की आयु तक की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् छात्र, को मठ छोड़ना अनिवार्य होता था परन्तु वह उपसम्पदा संस्कार सम्पादित करके पूर्ण भिक्षु के रूप में संघ में रहने का अधिकारी बन जाता था।
- बौद्ध काल में व्यावसायिक शिक्षा भी दी जाती थी, जैसे—औषधि विज्ञान, कताई-बुनाई, भविष्य कथन आदि। **डॉ. सुरेश भटनागर** के अनुसार—"बौद्ध काल में लेखन, गणना, रूपम, कृषि, वाणिज्य, कुटीर उद्योग और पशु-पालन, हस्तज्ञान, इन्द्रजाल, मृतकों को जीवित करने का मन्त्र, पशुओं की बोली का ज्ञान, धनुर्विद्या, भविष्य कथन, इन्द्रिय सम्बन्धी क्रियाओं का वशीकरण, शारीरिक संकेत आदि पाठ्यक्रम में थे।"
- "बौद्धकालीन शिक्षा में स्त्रियों को शिक्षा नहीं दी जाती थी। बौद्ध भिक्षुकों के लिये स्त्रियों का समीप्य निषिद्ध था, परन्तु कुछ समय पश्चात् गौतम बुद्ध की विमाता महाप्रजापति के आग्रह पर स्त्रियों को संघ में प्रवेश की आज्ञा प्राप्त हो गयी।
- बौद्ध काल का पाठ्यक्रम उच्च-स्तर का माना जाता था। इस काल में बौद्ध धर्म, जैन धर्म, हिन्दू दर्शन, संस्कृत, पाली अध्यात्मशास्त्र, खगोलशास्त्र तथा औषधिशास्त्र की शिक्षा दी जाती थी।

नोट

1.4 शब्दकोश (Keywords)

- **टोल**–टोल एक संस्था थी जिसमें संस्कृत की शिक्षा दी जाती थी।
- **चरण**–इसमें वेद के एक अंग की शिक्षा दी जाती थी।

1.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. वैदिक काल में शिक्षा की व्यवस्था पर प्रकाश डालिए।
2. उत्तर वैदिक काल की शैक्षिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं का विवेचन कीजिए।
3. प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. बौद्धकालीन शिक्षा व्यवस्था पर टिप्पणी लिखिए–

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (1) ब्राह्मणों (2) 10 वर्ष (3) परा (आध्यात्मिक विद्या)
(4) मौखिक (5) शिक्षण विधि

2. (1) (*b*) (2) (*a*) (3) (*b*) (4) (*b*)
(5) (*b*) (6) (*c*) (7) (*a*) (8) (*c*)
(9) (*c*) (10) (*c*)

1.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–2: भारत में मध्यकालीन शिक्षा–इस्लामिक शिक्षा (Education in India during medieval Period: Islamic Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
2.1 मध्यकालीन शिक्षा (इस्लामिक शिक्षा) (Medieval Education (Islamic Education)
2.2 मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था के मुख्य दोष (Main Defects of Medieval Education System)
2.3 सारांश (Summary)
2.4 शब्दकोश (Keywords)
2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- भारत की मध्यकालीन (इस्लामिक) शिक्षा की व्याख्या एवं विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मुस्लिम शिक्षा का प्रारम्भ बिस्मिल्लाह रस्म से होता था। बिस्मिल्लाह रस्म वैदिक काल के उपनयन संस्कार और बौद्ध काल के प्रवज्जा संस्कार से मिलती-जुलती थी। इसमें बालक की आयु 4 वर्ष 4 माह और 4 दिन की हो जाने पर उसे नये कपड़े पहनाकर मौलवी साहब के यहाँ ले जाते थे। यहाँ पर बालक को मौलवी साहब के द्वारा, उच्चारित कुरान की कुछ आयतों को दोहराना पड़ता था। यदि बालक उन आयतों को नहीं दोहरा पाता था तब बिस्मिल्लाह शब्द कहना ही पर्याप्त समझा जाता था और बालक की औपचारिक पढ़ाई शुरू हो जाती थी। मौलवी साहब को कुछ नजराना देकर बालक को मकतब में प्रवेश दिया जाता था। मुस्लिम काल में शिक्षा की व्यवस्था के लिए दो प्रमुख अभिकरण मकतब और मदरसा थे। मकतबों में प्रारंभिक शिक्षा दी जाती थी और मदरसों में उच्च शिक्षा दी जाती थी। मौलवी साहब के द्वारा बिस्मिल्लाह की रस्म के साथ बालक को मकतब में शिक्षा के लिए प्रवेश दिया जाता था। मकतब मस्जिदों से जुड़े होते थे और मस्जिद के मौलवी साहब ही मकतब में शिक्षा का कार्य करते थे। मकतबों में बालक को शब्द ज्ञान तथा धार्मिक प्रार्थनाएँ सिखाई जाती थीं। मकतब की शिक्षा पूरी करके छात्र मदरसों में प्रवेश लेते थे। मदरसों में भिन्न-भिन्न विषयों के विद्वान् शिक्षक नियमित रूप से शिक्षण कार्य करते थे।

मकतबों में दी जाने वाली प्रारम्भिक शिक्षा के अन्तर्गत छात्रों को लिखना-पढ़ना, पत्र-व्यवहार, साधारण गणित, अरबी-फारसी की शिक्षा देकर उनमें जीविकोपार्जन की क्षमता का विकास किया जाता था। इस्लाम धर्म का ज्ञान देकर तथा कुरान को कण्ठस्थ कराकर छात्रों में धार्मिक और नैतिक आचरण से सम्बन्धित प्रवृत्ति का विकास किया

नोट

जाता था। मदरसों में प्रदान की जाने वाली उच्च शिक्षा के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को दो भागों–धार्मिक तथा लौकिक में बाँटा जाता था। धार्मिक शिक्षा के अन्तर्गत कुरान, हदीस व फिक्र (धर्मशास्त्र) का गहन तथा विस्तृत अध्ययन छात्रों को कराया जाता था। लौकिक शिक्षा के अन्तर्गत अरबी, इतिहास, भूगोल, गणित, ज्योतिषशास्त्र, यूनानी चिकित्सा, व्याकरण, तर्कशास्त्र, कानून तथा कृषि आदि विषयों का विस्तृत ज्ञान प्रदान किया जाता था। मुस्लिम काल में शिक्षण की पद्धति मुख्यत: मौखिक थी, रटने तथा स्मरण पर बल दिया जाता था। व्याख्यान, प्रश्नोत्तर और वाद-विवाद विधियों का प्रयोग किया जाता था। छात्रों को स्वाध्याय विधि से ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। अध्यापक की उपस्थिति में बड़ी कक्षा के कुशल और योग्य छात्र छोटी कक्षा के छात्रों को पढ़ाने का कार्य करते थे। राज-दरबारों में महत्वपूर्ण विषयों पर शास्त्रार्थ भी कराया जाता था। शिक्षा अरबी-फारसी के माध्यम से दी जाती थी, लेकिन बाद में प्रारम्भिक शिक्षा उर्दू के माध्यम से प्रदान की जाने लगी।

मुस्लिम काल में गुरु और शिष्यों के सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ थे। शिक्षकों को समाज में अत्यन्त सम्मानीय स्थान दिया जाता था। शिक्षकों को वेतन बहुत कम मिलता था फिर भी उन्हें सभी स्थानों पर बहुत सम्मान मिलता था। छात्र गुरु के आदेशों का पालन करके अनुशासित, विनम्र और सहनशील बन जाते थे तथा गुरु छात्रों से श्रद्धा पाकर पूजनीय बन जाता था। मुस्लिम काल में छात्र अत्यधिक अनुशासित रहते थे। नैतिक व व्यावहारिक शिष्टाचार, आत्मानुशासन और विनयशीलता सभी छात्रों के लिए अनिवार्य था। अनैतिक आचरण करने पर, झूठ बोलने पर, दैनिक पाठ याद न करने पर और अशिष्ट आचरण करने पर छात्रों को कठोर शारीरिक दण्ड दिया जाता था। शिक्षक छात्रों को अपनी इच्छानुसार दण्ड देते थे। बेंत, लात-घूँसे, कोड़े लगाने, ऊठक-बैठक कराने, खड़ा करने तथा मुर्गा बनाने जैसे दण्ड दिये जाते थे।

2.1 मध्यकालीन शिक्षा "इस्लामिक शिक्षा" (Medieval Education "Islamic Education")

भारत में मुस्लिम शासकों ने केन्द्रीय या प्रान्तीय स्तर पर शिक्षा के किसी विभाग की स्थापना नहीं की, पर उन्होंने साधारणत: शिक्षा में रुचि अवश्य ली। फलस्वरूप, लगभग सम्पूर्ण मुस्लिम काल में प्राथमिक और उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। उस काल में शिक्षा के केवल यही दो स्तर थे। इन दोनों स्तरों पर शिक्षा प्रदान करने के लिए मुस्लिम शासकों और विद्या-प्रेमी, धनी व्यक्तियों द्वारा मकतबों और मदरसों की स्थापना की गई थी। इन संस्थाओं में शिक्षा का आयोजन मुख्यत: मुसलमानों के लिए ही था। **डॉ. एफ.ई. केई** के अनुसार–"कुछ अपवादों के अलावा मुस्लिम-शिक्षा जनता के उन अल्पसंख्यकों के लिए थी, जो मुस्लिम-धर्म को अंगीकार कर लेते थे।"

केई के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि मुस्लिम-शिक्षा संस्थाओं में हिन्दुओं का प्रवेश वर्जित नहीं था। परन्तु इन संस्थाओं का धार्मिक कट्टरता का वातावरण, हिन्दू छात्रों के लिए इतना विषाक्त था कि वे इनमें प्रदान की जाने वाली शिक्षा से पूर्णरूपेण लाभान्वित नहीं हो पाते थे।

1. प्राथमिक शिक्षा (Primary Education)

(*i*) सामान्य परिचय–प्राथमिक शिक्षा के मुख्य केन्द्र–मकतब थे। उनके अतिरिक्त, खानकाहों और दरगाहों (Khanaqahas & Dargahas) में भी प्राथमिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। इन शिक्षा-संस्थाओं में केवल मुसलमान बच्चे ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। कुछ व्यक्तिगत शिक्षक अपने घरों पर प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने का कार्य करते थे।

(*ii*) प्रवेश तथा अवधि–जिस प्रकार वैदिक युग में 'उपनयन संस्कार' के पश्चात् और बौद्ध-युग में "प्रवज्या संस्कार" के उपरान्त बालक की शिक्षा आरम्भ होती थी, उसी प्रकार मुस्लिम युग में "बिस्मिल्लाह-खानी" (Bismillah-Khani) की रस्म के बाद बालक अपनी शिक्षा आरम्भ करता है। यह रस्म उस समय होती थी, जब बालक 4 वर्ष 4 माह और 4 दिन का होता था। इस रस्म के समय बालक के लगभग सभी सम्बन्धी उपस्थित रहते थे और वह नए वस्त्र धारण करके मौलवी साहब के समक्ष उपस्थित होता था। मौलवी साहब कुरान शरीफ की आयतें पढ़ते थे और बालक से उनको दोहरवाते थे। यदि बालक उनको दोहराने में असमर्थ होता था, तो उसके द्वारा केवल "बिस्मिल्लाह" कहा जाना ही पर्याप्त समझा जाता था।

इस प्रकार बालक की प्राथमिक शिक्षा का श्रीगणेश होता था। **डॉ. एफ.ई. केई** के अनुसार—"सभी मुसलमान बालकों से प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने की आशा की जाती थी, ताकि वे अपने प्रतिदिन के धार्मिक कार्यों से सम्बन्धित कुरान की आयतों को स्मरण कर लें। किन्तु इस बात को निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि सभी बालक इस शिक्षा को प्राप्त करते थे।"

***(iii)* पाठ्यक्रम**—मकतबों का पाठ्यक्रम अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग था। साधारणत: बालकों को पढ़ने, लिखने और साधारण अंकगणित की शिक्षा दी जाती थी। उनको सबसे पहले वर्णमाला के अक्षरों का ज्ञान कराया जाता था तथा उसके पश्चात् कुरान की कुछ आयतें कंठस्थ कराई जाती थीं। बालक के लिए उनका अर्थ समझना आवश्यक नहीं था, पर उनका शुद्ध उच्चारण करना अनिवार्य था। उसके पश्चात् बालक को लिखना सिखाया जाता था। जब बालक को पढ़ने और लिखने का पर्याप्त ज्ञान हो जाता था, तब उसे व्याकरण और फारसी भाषा की शिक्षा दी जाती थी। व्यावहारिक शिक्षा के अन्तर्गत बातचीत करने के ढंग, सुन्दर लेख, पत्र-लेखन तथा अर्जीनवीसी का प्रमुख स्थान था।

यहाँ यह लिख देना अनुपयुक्त न होगा कि शाहजादों और सम्पन्न परिवारों के बालकों को उनके निवास स्थानों पर व्यक्तिगत अध्यापकों द्वारा शिक्षा दी जाती थी और उनका पाठ्यक्रम उनकी आवश्यकताओं के अनुसार विशेष प्रकार का होता था।

***(iv)* शिक्षण-विधि**—मकतबों में शिक्षण-विधि मौखिक और प्रत्यक्ष थी। बालक को शुद्ध उच्चारण का ज्ञान हो जाने के बाद कलमा और कुरान की कुछ आयतें कंठस्थ करनी पड़ती थीं। कक्षा के सब बालक उच्च स्वर में एक साथ बोलकर पढ़ते रहते थे। मौलवी साहब नया पाठ तभी पढ़ाते थे, जब बालकों को पिछला पाठ कण्ठस्थ हो जाता था। इस प्रकार, कण्ठस्थ करना, शिक्षण-विधि का मुख्य तत्व था।

बालक द्वारा लिखने के लिए लकड़ी की तख्ती का प्रयोग किया जाता था। वह उस पर मोटे सरकन्डे की कलम से लिखने का अभ्यास करता था। जब उसे लिखने का कुछ अभ्यास हो जाता था तब वह पतले कलम से कागज पर लिखता था।

क्या आप जानते हैं बालक का नैतिक और चारित्रिक विकास करने के लिए उसे शेख सादी की प्रसिद्ध पुस्तकें, "बोस्ताँ" एवं "गुलिस्ता" पढ़ाई जाती थीं और पैगम्बरों की कथाएँ तथा मुस्लिम फकीरों की कहानियाँ सुनाई जाती थीं। इनके अतिरिक्त, उसको "लैला-मजनू" "यूसुफ-जुलेखा", "सिकन्दरनामा" आदि काव्यों का ज्ञान प्रदान किया जाता था।

2. उच्च शिक्षा (Higher Education)

1. शिक्षा संस्थाएँ—उच्च शिक्षा की संस्थाएँ—मदरसे थे। बालक अपनी प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए मदरसे में प्रवेश करता था। उस प्रवेश के समय कोई संस्कार सम्पन्न नहीं करना पड़ता था। उच्च शिक्षा के केन्द्र सम्पूर्ण देश में बिखरे हुये थे। इनमें आगरा, दिल्ली, लाहौर, मुल्तान, अजमेर, लखनऊ, स्यालकोट और मुर्शिदाबाद के मदरसों ने शिक्षा के क्षेत्र में विशेष ख्याति अर्जित की थी। इसीलिए, बुखारा, अफगानिस्तान और अन्य मुस्लिम देशों के छात्र उनमें ज्ञान का अर्जन करने के लिए आते थे।

2. पाठ्यक्रम—उच्च शिक्षा की अवधि 10 से 12 वर्ष की थी। उसका पाठ्यक्रम बहुत विस्तृत था और निम्नलिखित दो भागों में विभाजित था—

(1) **लौकिक शिक्षा**—लौकिक शिक्षा के अन्तर्गत छात्र को अग्रांकित विषयों की शिक्षा दी जाती थी—अरबी और फारसी भाषाओं का साहित्य एवं व्याकरण, कृषि, गणित, भूगोल, कानून, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, यूनानी चिकित्सा आदि।

नोट

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त सब विषयों की शिक्षा सब मदरसों में नहीं दी जाती थी। इसके विपरीत, प्रत्येक मदरसे में साधारणत: दो विषयों की शिक्षा दी जाती थी; जैसे—दिल्ली के मदरसे में कविता और संगीत की, स्यालकोट के मदरसे में गणित और ज्योतिष की एवं रामपुर के मदरसे में ज्योतिष और अर्थशास्त्र की।

(2) **धार्मिक शिक्षा**—धार्मिक शिक्षा के अन्तर्गत छात्र को कुरान की आयतें कण्ठस्थ करनी पड़ती थीं और उनका सूक्ष्म एवं आलोचनात्मक अध्ययन करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त, उसे सूफी सिद्धान्तों एवं इस्लामी इतिहास, कानूनों, सिद्धान्तों और परम्पराओं का अध्ययन करना पड़ता था।

3. शिक्षण-विधि—मदरसों में शिक्षण-विधि मौखिक थी तथा छात्रों को शिक्षा देने के लिए अध्यापक, भाषण-विधि का प्रयोग करते थे। कक्षा-नायकीय पद्धति (Monitorial System) का पर्याप्त प्रचलन था। धर्म, दर्शन, तर्कशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के शिक्षण में तर्क-विधि का मुख्य स्थान था। संगीत, हस्तकला, चित्रकला और चिकित्साशास्त्र आदि विषयों की शिक्षा में व्यावहारिक कार्य की समुचित व्यवस्था थी। छात्रों को स्वाध्याय के लिए प्रोत्साहित किया जाता था तथा उनकी कठिनाइयों का अध्यापकों के द्वारा निराकरण किया जाता था।

इस प्रकार, यद्यपि मदरसों में शिक्षण-विधि मुख्यत: मौखिक थीं, तथापि पढ़ने और लिखने को उससे श्रेष्ठतर स्थान प्रदान किया जाता था। **गुन्नार मिरडल** के अनुसार—**"उच्च-शिक्षा की संस्थाओं में पढ़ने और लिखने को मौखिक शिक्षण-विधियों से श्रेष्ठतर स्थान प्रदान किया जाता था।"**

4. शिक्षा का माध्यम—मुस्लिम शासन-काल में राज्य की भाषा, फारसी थी। इस भाषा का ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्यों को राजपद प्राप्त हो सकते थे। इस कार्य में सहायता देने के लिए फारसी को शिक्षा के माध्यम के पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। **गुन्नार मिरडल** के अनुसार—**"उच्च स्तर पर शिक्षा का माध्यम फारसी भाषा थी।"**

5. परीक्षाएँ—आधुनिक युग के समान मुस्लिम युग में छात्रों की परीक्षा की कोई निश्चित प्रणाली नहीं थी। शिक्षक प्रत्येक छात्र के ज्ञान का स्वयं मूल्यांकन करके उसे उच्च कक्षा में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार दे देता था।

6. उपाधियाँ—सामान्य रूप से शिक्षा समाप्त करने वाले छात्रों को प्रमाण-पत्र अथवा उपाधियाँ नहीं दी जाती थीं। किन्तु जो छात्र अपने अध्ययन के विषय में असाधारण योग्यता का प्रमाण देते थे, उनको उपाधियों से विभूषित किया जाता था। **उदाहरणार्थ**—साहित्य के छात्रों को "काबिल" की धर्मशास्त्र के छात्रों को "आलिम" की और तर्कशास्त्र के छात्रों को "फाजिल" की उपाधि से अलंकृत किया जाता था। छात्रों को उपाधियाँ प्रदान करने के समय नियमित रूप से समारोह का आयोजन किया जाता था।

शिक्षा-संस्थाओं के प्रकार

मुस्लिम युग में अनेक प्रकार की शिक्षा-संस्थाएँ थीं; यथा—

1. मकतब (Maktabs)—"मकतब" शब्द की उत्पत्ति, अरबी के "कुतुब" (Kutub) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—"उसने लिखा" (He wrote)। उर्दू भाषा में "कुतुब" शब्द—"किताब" का बहुवचन है। इस प्रकार, "मकतब" वह स्थान है, जहाँ **बालकों** को पढ़ना तथा लिखना सिखाया जाता है। मकतब, माध्यमिक शिक्षा के केन्द्र थे और साधारणत: किसी मस्जिद से सम्बद्ध होते थे। कहीं-कहीं मौलवी लोग व्यक्तिगत रूप से अपने घरों पर अथवा अन्य सुविधाजनक स्थानों पर मकतब चलाते थे। मकतबों में मुसलमान बालकों के साथ हिन्दू बालक भी शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। परन्तु मकतबों की संख्या इतनी कम थी कि सब बालकों की प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता पूर्ण नहीं हो पाती थी।

2. खानकाहें (Khanqahs)—"खानकाह" प्रारम्भिक शिक्षा के केन्द्र थे। इनमें केवल मुसलमान बालक ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। इनका खर्च—दान में प्राप्त होने वाले धन से चलता था।

3. दरगाहें (Dargahas)—"खानकाहों" की भाँति "दरगाह" भी प्राथमिक शिक्षा के केन्द्र थे। इनकी स्थिति बहुत-कुछ खानकाहों के समान थीं। इनमें भी केवल मुसलमान बालक ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे।

4. फारसी के स्कूल (Persian Schools)—मुस्लिम शासन-काल में फारसी, राजभाषा थी। अत: राजपद प्राप्त करने के इच्छुक हिन्दुओं और मुसलमानों के लिए फारसी भाषा का ज्ञान होना अनिवार्य था। इस माँग की पूर्ति करने के लिए फारसी के स्कूलों की स्थापना की गई थी। इसमें छात्रों को सादी और हाफिज के काव्यों एवं मुस्लिम संस्कृति की शिक्षा दी जाती थी। इन स्कूलों में शिक्षा का स्तर काफी ऊँचा था।

नोट

5. कुरान स्कूल (Koran Schools)—"इन स्कूलों में केवल कुरान की शिक्षा दी जाती थी।" इसका वर्णन करते हुए **डी ला फॉस** (De La Fosse) ने "Quinqunnial Review of India, 1907-1912" में लिखा है—"कुरान स्कूल साधारणत: किसी मस्जिद से संलग्न होते थे। इनमें छात्रों को पहले अरबी लिपि का ज्ञान कराया जाता था और फिर कुरान की आयतें कण्ठस्थ कराई जाती थीं। उनको लिखने की और गणित की शिक्षा नहीं दी जाती थी।"

6. फारसी व कुरान के स्कूल (Persian Koran Schools)—जैसा कि नाम से विदित है, ये स्कूल—फारसी और कुरान स्कूलों के मिश्रित रूप थे। दूसरे शब्दों में, इन स्कूलों में फारसी और कुरान—दोनों की शिक्षा दी जाती थी।

7. मदरसे (Madarsahs)—"मदरसा" शब्द की उत्पत्ति, अरबी भाषा के "दरस" (Dars) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—"भाषण" (A Lecture)। इस प्रकार, "मदरसा" वह स्थान है, जहाँ शिक्षण के लिए भाषण या व्याख्यान-विधि का प्रयोग किया जाता है। मदरसे, उच्च शिक्षा के केन्द्र थे और सामान्यतया किसी मस्जिद में संलग्न होते थे। इनकी स्थापना—राज्य और धनी विद्या प्रेमियों द्वारा की जाती थी। इनमें विभिन्न शिक्षकों द्वारा विभिन्न विषयों की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा का माध्यम फारसी था।

मदरसे, सावास शिक्षा-केन्द्र थे, पर अपने परिवारों के साथ रहने वाले छात्र भी वहाँ जाकर शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। इतिहासकार **इलियट** (Elliot) ने एक छात्र के विषय में लिखा है, जो दो मील दूर से प्रतिदिन दिल्ली के मदरसे में अध्ययन करने जाया करता था। मदरसों के साथ छात्रावास संलग्न थे, जिनमें छात्रों के दैनिक भोजन की सुन्दर व्यवस्था थी। प्रत्येक छात्र को आर्थिक सहायता के रूप में कुछ धन मिलता था। योग्य छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जाती थीं। शिक्षकों के लिए मदरसों में निवास और भोजन का प्रबन्ध था। इस प्रकार, छात्र और शिक्षक निरन्तर घनिष्ठ सम्पर्क में रहते थे।

8. अरबी के स्कूल (Arabic Schools)—इन स्कूलों का मुख्य उद्देश्य—अरबी भाषा और साहित्य के विद्वानों का निर्माण करना था। अत: इनमें शिक्षा का स्तर अत्यन्त उच्च होना स्वाभाविक था।

नोट्स "मकतब" एक शिक्षक वाली संस्थाएँ थीं। इनमें शिक्षण-कार्य प्रात:काल से मध्यान्ह तक तथा फिर अपरान्ह में होता था। छात्रों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था। शिक्षकों के भरण-पोषण की व्यवस्था धनी व्यक्तियों द्वारा की जाती थी। राज्य को मकतबों में विशेष प्रयोजन नहीं था। जिन स्थानों में मदरसे नहीं थे, वहाँ के कुछ मकतबों में उच्च शिक्षा का भी प्रबन्ध था।

शिक्षा के अन्य क्षेत्र (Other Spheres of Education)

1. स्त्री शिक्षा (Women's Education)—**डॉ. एफ. ई. केई** के शब्दों में—**"पर्दा-प्रथा ने, जिसमें छोटी बालिकाओं के अलावा सभी मुसलमान स्त्रियों को एकान्त में बन्द रखा, उनकी शिक्षा को अत्यधिक कठिनाई का कारण बना दिया।"**

पर्दा-प्रथा के कारण केवल छोटी आयु की बालिकाएँ मकतबों में जाकर बालकों के साथ विद्या का अर्जन करती थीं, पर उन्हें कुछ ही समय के बाद यह कार्य स्थगित करना पड़ता था। उनको उच्च शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं, क्योंकि राज्य या समाज की ओर से उनके लिए पृथक् शिक्षा-संस्थाओं की कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी। फलस्वरूप, निम्न और निर्धन वर्गों की बालिकाएँ या तो ज्ञान-प्राप्ति के लाभ से वंचित रह जाती थीं अथवा उनका अत्यन्त अल्प पढ़ने और लिखने तक सीमित रह जाता था।

मध्य वर्ग की बालिकाओं को शिक्षा के अधिक अवसर प्राप्त थे। वे विद्याध्ययन के लिए सामान्य मकतबों में न जाकर, व्यक्तिगत रूप से स्त्रियों द्वारा अपने घरों पर चलाए जाने वाले मकतबों में जाकर विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लेती थीं। इस सम्बन्ध में **डॉ. यूसुफ हुसैन** के अनुसार—**"निजी घरों में बालिकाओं को धार्मिक शिक्षा प्रदान करने के लिए मकतब थे, जहाँ अधिक आयु की महिलाएँ उनको कुरान, गुलिस्ताँ, बोस्ताँ और सदाचार की पुस्तकें पढ़ाती थीं।"**

नोट

मालवा के शासक, गियासुद्दीन तुगलक ने, जिसने सन् 1469 से 1500 तक शासन किया, सारंगपुर में सभी वर्गों की बालिकाओं के लिए, एक मदरसे की स्थापना की। **"फरिश्ता** (Ferishta) के अनुसार–**इस मदरसे में बालिकाओं को नृत्य, संगीत, सिलाई, बुनाई, बढ़ईगीरी, सुनारगीरी, लुहारगीरी, जूते बनाने, मखमल बनाने, युद्ध कला, रणक्षेत्र कला आदि की शिक्षा दी जाती थी। उनकी शिक्षा का भार उनके अभिभावकों को वहन करना पड़ता था। अतः केवल धन-सम्पन्न व्यक्ति ही अपनी बालिकाओं को इस विद्यालय में अध्ययन के लिए भेज पाते थे।"**

राजघरानों तथा कुलीन परिवारों की बालिकाओं और स्त्रियों को उनके निवास-स्थानों पर ही व्यक्तिगत रूप से शिक्षा दी जाती थी। उनको धर्म एवं साहित्य के अतिरिक्त, नृत्य, संगीत एवं अन्य ललित कलाओं की भी शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार, शिक्षा प्राप्त करने वाली अनेक मुस्लिम राजकुमारियों के नाम आज भी गर्व से स्मरण किये जाते हैं; जैसे–अल्तमश की पुत्री, रजिया सुल्ताना अपनी विद्वता के लिए विख्यात थी। दक्षिण की वीरांगना, चाँद सुल्ताना को तुर्की, अरबी, फारसी और मराठी भाषाओं पर समान अधिकार था। बाबर की पुत्री, गुलबदन बेगम की कृति, "हुमायूँनामा" इतिहास की अमूल्य निधि मानी जाती है। हुमायूँ की भतीजी सलीमा सुल्ताना; जहाँगीर की पत्नी, नूरजहाँ और औरंगजेब की पुत्री जेबुन्निसा बेगम–सभी विदुषी महिलाएँ थीं।

उक्त महिलाओं के अतिरिक्त और भी अनेक सुशिक्षित स्त्रियाँ थीं। किन्तु इनकी तुलना में उन सामान्य स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक थी, जो अशिक्षित थीं। वस्तुस्थिति यह थी कि जबकि राजघरानों और कुलीन परिवारों की स्त्रियों में शिक्षा का प्रचलन था, सामान्य स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार नहीं हुआ। अतः वे शिक्षा से रंचमात्र भी लाभान्वित नहीं हुईं। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए **डॉ. एफ.ई. केई** ने लिखा है–**"मुसलमान स्त्रियों के विशाल सामान्य समूह को पारिवारिक कर्तव्यों को करने के लिए घरेलू प्रशिक्षण के अलावा किसी प्रकार की कोई शिक्षा प्राप्त नहीं हुई।"**

2. व्यावसायिक शिक्षा (Professional Education)–दिल्ली के सुल्तानों और मुगल सम्राटों को व्यावसायिक शिक्षा के प्रति किसी-न-किसी रूप में कम या अधिक रुचि अवश्य थी। ऐसी परिस्थिति में व्यावसायिक शिक्षा का विकास होना स्वाभाविक था–

(1) **चिकित्साशास्त्र की शिक्षा** (Medical Education)–चिकित्साशास्त्र की उपयुक्त शिक्षा देने के लिए संस्कृत ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद किया गया था। इन ग्रन्थों के आधार पर फारसी में पुस्तकों की रचना की गई। इस प्रकार की कुछ उल्लेखनीय पुस्तकें थीं–"मदानुश-शिफाए-सिकन्दरी", दस्तूर-उल-अतिब्बा" और "तुहफत-अल-मोमिन।"

चिकित्साशास्त्र की शिक्षा, मदरसों में या विशिष्ट शिक्षा-संस्थाओं में दी जाती थी। आगरा में अकबर द्वारा स्थापित किये गये मदरसे और रामपुर की विशिष्ट शिक्षा-संस्था–चिकित्साशास्त्र की शिक्षा के लिए प्रसिद्ध थीं।

(2) **ललित कलाओं की शिक्षा** (Education in Fine Arts)–लगभग सभी मुस्लिम शासक, सौन्दर्य के उपासक थे और अपने महलों एवं दरबाजों की शोभा में वृद्धि करने के लिए उत्कंठित रहते थे। फलस्वरूप, ललित कलाओं का अभूतपूर्व विकास हुआ। इन कलाओं में अग्रांकित को उच्चतम स्थान प्राप्त था–संगीत, चित्रकला और नृत्यकला। इन कलाओं का प्रशिक्षण–कारखानों में, वंशानुगत रूप में और व्यक्तिगत रूप से उस्तादों द्वारा दिया जाता था।

(3) **सैनिक शिक्षा** (Military Education)–भारत में सब मुस्लिम शासकों का लक्ष्य अपने राज्य को स्थायी और सुदृढ़ बनाना था। विदेशी और विधर्मी होने के कारण, वे भारतीयों को सदैव शंका की दृष्टि से देखते थे। उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने और बनाये रखने के लिए मुस्लिम शासकों को समय-समय पर हिन्दू राजाओं से युद्ध करने पड़ते थे।

ऐसी परिस्थिति में मुस्लिम शासकों द्वारा सैनिक शिक्षा पर बल दिया जाना आवश्यक था। यह शिक्षा साधारण सैनिकों और राजकुमारों के लिए भिन्न प्रकार की थी। सैनिकों को तीर, भाला एवं तलवार चलाने, दुर्ग का घेरा डालने पर घोड़े एवं हाथी पर बैठकर युद्ध करने की शिक्षा दी जाती थी। मुगल-काल में उनको गोली

चलाने का भी प्रशिक्षण दिया जाता था। राजकुमारों को इन सभी बातों के अतिरिक्त सेना के संचालन, संगठन और नेतृत्व का विशेष प्रशिक्षण दिया जाता था। यहाँ तक बता देना असंगत न होगा कि सैनिक शिक्षा के लिए प्रशिक्षण-संस्थाएँ नहीं थीं। यह शिक्षा, राज्य के अनुभवी सैनिकों द्वारा दी जाती थी।

(4) **हस्तकलाओं की शिक्षा** (Education of Handicrafts)–अधिकांश मुस्लिम शासक–ऐश्वर्य और विलासिता का जीवन व्यतीत करते थे। अत: इस जीवन की आवश्यकताओं से सम्बन्धित सभी हस्तकलाओं की आश्चर्यजनक उन्नति हुई। इस प्रकार की मुख्य कलाएँ थीं–कशीदाकारी, जरी, लकड़ी एवं हाथी दाँत का काम; दरी, पर्दे, जूते, रेशम, मलमल एवं आभूषण बनाना आदि।

इन हस्तकलाओं की शिक्षा–कारखानों में दी जाती थी। मुहम्मद तुगलक और फिरोज तुगलक के शासन-काल में इन कारखानों का उल्लेख मिलता है। अकबर के समय में सब कारखाने–"दिवाने-बुयतात" नामक सरकारी विभाग की अधीनता में थे। इन कारखानों के विषय में **जाफर** ने लिखा है–**"भारत में हजारों कारखाने थे, जिनमें लड़कों को बहुधा विशिष्ट कलाओं और दस्तकारियों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए किसी व्यवसाय के शिल्पकार का शिष्य बना दिया जाता था।"**

टास्क दीवाने बुयतात से आप क्या समझते हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)–

1. मध्यकाल में प्राथमिक शिक्षा के केन्द्र .... थे।
2. जिस प्रकार वैदिक युग में 'उपनयन संस्कार' के पश्चात् बालक की शिक्षा प्रारम्भ होती थी उसी प्रकार मुस्लिम युग में .... की रस्म के बाद बालक शिक्षा आरम्भ करता था।
3. मध्यकालीन मुस्लिम शिक्षा में उच्च शिक्षण के केन्द्र .... थे।
4. मध्यकालीन मुस्लिम शिक्षा में शिक्षा ग्रहण करने की अवधि .... थी।
5. 'मकतब' शब्द की उत्पत्ति, अरबी भाषा के .... शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है "उसने लिखा"।

2.2 मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था के मुख्य दोष (Main Defects of Medieval Education System)

टी.एन. सिक्वेरा के अनुसार–**"भारत पर मुसलमानों की विजय इस्लामी-शिक्षा के उस अन्धकारपूर्ण युग की समकालीन थी, जबकि विद्यालयों ने अपने व्यापक सांस्कृतिक आदर्शों को खो दिया था।"**

सिक्वेरा के इस कथन को ध्यान में रखते हुए, हम कह सकते हैं कि मुस्लिम-शिक्षा दोषमुक्त नहीं थी। हम उसके मुख्य दोषों की चर्चा निम्नांकित पंक्तियों में यथास्थान कर रहे हैं–

1. **शिक्षा के लौकिक पक्ष पर बल** (Stress on Secular Aspect of Education)–मुस्लिम-शिक्षा में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान था। किन्तु इस्लाम धर्म पारलौकिक जीवन की अपेक्षा इहलौकिक जीवन को महत्व देता है। अत: मुस्लिम युग में शिक्षा के लौकिक पक्ष को प्रधानता दी गई और शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य स्वीकार किया गया–छात्रों को ज्ञान से सम्पन्न करके, समाज में सुयश और राज्य में श्रेष्ठ पद प्राप्त करने की योग्यता प्रदान करना, ताकि वे सभी सांसारिक सुखों और ऐश्वर्यों का उपभोग कर सकें। छात्र भी अपने समक्ष इसी उद्देश्य को रखकर, कठोर परिश्रम द्वारा ज्ञान का अर्जन करते थे और अपनी योग्यता में अधिक-से-अधिक वृद्धि करने के लिए प्रतिक्षण प्रयत्नशील रहते थे।

नोट

2. **प्रान्तीय भाषाओं की उपेक्षा** (Neglect of Vernaculars)—मुस्लिम-शिक्षा-पद्धति में फारसी और अरबी का शीर्षस्थ स्थान था। मकतबों में बालकों को फारसी की वर्णमाला सिखाई जाती थी और कुरान की आयतें रटाई जाती थीं। मदरसों में उच्च शिक्षा का माध्यम—फारसी थी। फारसी सम्पूर्ण मुस्लिम काल में राजभाषा थी। राजपदों पर उन्हीं लोगों को आसीन किया जाता था, जिनको फारसी का पूर्ण ज्ञान और अरबी का पर्याप्त ज्ञान होता था। अत: इन पदों के लिए इच्छुक न केवल मुसलमानों, वरन् हिन्दुओं को भी फारसी और अरबी का अनिवार्य रूप से अध्ययन करना पड़ता था। इस सब बातों का परिणाम यह हुआ कि प्रान्तीय भाषाओं के प्रति रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप उनका विकास अवरुद्ध हो गया।

   अकबर ने अपनी हिन्दू-नीति के कारण इस बात की कोशिश की कि विद्यालयों में फारसी के अतिरिक्त हिन्दी की भी शिक्षा दी जाये। उसकी चेष्टा के परिणामस्वरूप हिन्दी को प्रोत्साहन तो अवश्य प्राप्त हुआ, पर उसकी प्रगति को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। औरंगजेब ने प्रान्तीय भाषाओं, मुख्यत: उर्दू में शिक्षण और रचना को प्रोत्साहित किया, पर उसे अपने कार्य में विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। वस्तुत: इन दोनों मुगल सम्राटों के प्रयासों का फारसी और अरबी की स्थिति पर केवल अस्थायी प्रभाव पड़ा। इन दोनों भाषाओं की प्रधानता पूर्ववत् बनी रही और प्रान्तीय भाषाओं की पहले के समान उपेक्षा की गई।

3. **स्त्री शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of Women's Education)—मुस्लिम-युग में पर्दे की प्रथा के कारण, स्त्री-शिक्षा का प्रसार नहीं हुआ। जनसाधारण की बालिकाएँ अपने मुहल्लों के मकतबों में बालकों के साथ थोड़ा-सा पढ़ना और लिखना सीख लेती थी। इसके अतिरिक्त, उनकी शिक्षा के लिए राज्य या समाज की ओर से कोई प्रबन्ध नहीं था। राजकुलों और धनी परिवारों की बालिकाओं और स्त्रियों को उनके घरों पर शिक्षा दी जाती थी पर इनकी संख्या अत्यन्त अल्प थी।

   इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि मुस्लिम-काल में सामान्य रूप से स्त्रियों की शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा की गई। इसका परिणाम बताते हुए **टी. एन. सिक्वेरा** के अनुसार—**"स्त्रियों की शिक्षा पढ़ने और लिखने के न्यूनतम तत्वों की संकुचित स्थिति में पहुँच गई थी।"**

4. **हिन्दुओं की शिक्षा की उपेक्षा** (Neglect of Education of Hindus)—आरम्भ में मुस्लिम-शिक्षा केवल उन अल्पसंख्यकों को ही उपलब्ध थी, जो इस्लाम धर्म के अनुगामी थे। सिकन्दर लोदी के शासन-काल में मकतबों और मदरसों के द्वार हिन्दुओं के लिए भी खोल दिये थे; पर वहाँ उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं किया जाता था। केवल—अकबर के शासन-काल में हिन्दू बालकों को मुस्लिम शिक्षा-संस्थाओं में स्वतन्त्रतापूर्वक शिक्षा ग्रहण करने का अवसर प्राप्त हुआ। जहाँ तक हिन्दू शिक्षा-पद्धति का सम्बन्ध था, उसको अनेक मुसलमान शासकों ने नष्ट करने का भरसक प्रयत्न किया।

   इस प्रकार, लगभग सम्पूर्ण मुस्लिम-युग में हिन्दुओं को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर उपलब्ध नहीं हुआ और मुस्लिम शासकों द्वारा उनकी शिक्षा की उपेक्षा की गई। हिन्दुओं की शिक्षा से सम्बन्धित उनकी नीति का वर्णन करते हुए **टी.एन. सिक्वेरा** के अनुसार—"मुसलमान शासकों को अपनी हिन्दू प्रजा की शिक्षा के विषय में दो बातों में से एक का निश्चय करना पड़ा—हिन्दुओं की शिक्षा की उपेक्षा करना या उनके पृथक् विद्यालयों की स्थापना करना। अधिकांश मुस्लिम शासकों ने उनकी शिक्षा की उपेक्षा की, उनकी शिक्षा-संस्थाओं को आर्थिक सहायता नहीं दी और उनके लिए नवीन विद्यालयों का निर्माण नहीं किया। अकबर के समान बहुत ही कम शासकों ने हिन्दुओं की शिक्षा को प्रोत्साहित किया।"

5. **शिक्षा में स्थिरता का अभाव** (Lack of Stability in Education)—इस्लाम-धर्म में अडिग आस्था रखने के कारण मुसलमान, माता-पिता अपने बच्चों के लिए शिक्षा को अनिवार्य मानते थे। परन्तु जैसा कि **टी. एन. सिक्वेरा** ने लिखा है—**"न तो माता-पिता ने और न शासकों ने अपने कर्तव्य का विधिपूर्वक पालन किया। एक शासक या राजकुमार, विद्यालयों की स्थापना करता था और दूसरा यदि उनको नष्ट नहीं करता था, तो बन्द अवश्य कर देता था।"**

नोट

सिक्वेरा के कथन से सिद्ध हो जाता है कि मुस्लिम शासकों की शिक्षा-सम्बन्धी नीति में स्थिरता और क्रमबद्धता का नितान्त अभाव था। यही कारण था कि यदि एक शासक के समय में शिक्षा पुष्पित होती थी, तो दूसरे शासक के समय में कुम्हला जाती थी। शिक्षा के इस अस्थिर स्वरूप के कारण के लिए **डॉ. एफ.ई. केई** ने लिखा है—**"शिक्षा का अस्थिर और अनिश्चित स्वरूप मुख्यतः निरंकुश शासन का परिणाम था।"**

6. **शिक्षा के आध्यात्मिक पक्ष की उपेक्षा** (Neglect of Spiritual Aspects of Education)—मुस्लिम शिक्षा, धर्म-प्रधान थी। छात्रों को अपने सम्पूर्ण अध्ययन-काल में कुरान शरीफ की नियमित रूप से शिक्षा दी जाती थी। किन्तु, इस शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य—उनमें धार्मिकता की भावना का समावेश करना था, न कि उनका आध्यात्मिक विकास करना।

   इस प्रकार, मुस्लिम युग में शिक्षा के आध्यात्मिक पक्ष की प्राय: पूर्ण उपेक्षा की गई। परिणामत: मुस्लिम-शिक्षा आध्यात्मिक उन्नति के उस शिखर से बहुत नीचे रह गई, जिस पर प्राचीन भारतीय शिक्षा पहुँच गई थी और जिनके कारण भारत को विश्व का आध्यात्मिक गुरु माना जाता था।

7. **शिक्षा में व्यापकता का अभाव** (Lack of Universality in Education)—मुस्लिम-युग में शिक्षा को 'इस्लाम-धर्म के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य माना जाता था और उसे राज्य का संरक्षण भी प्राप्त था। फिर भी, वह व्यापक रूप धारण न कर सकी। इसके आधारभूत कारण पाँच थे—

   पहला: मुस्लिम-शिक्षा की व्यवस्था केवल नगरों और बड़े कस्बों में की गई थी, जहाँ मुसलमानों की अधिकांश जनसंख्या निवास करती थी। **दूसरा:** मुस्लिम शासकों को जनसाधारण की शिक्षा में लेशमात्र भी रुचि नहीं थी। अत: नगरों और कस्बों से दूर के स्थानों में न तो मुस्लिम-शिक्षा का आविर्भाव हुआ और न विकास। **तीसरा:** दान, धर्म और उदारता से प्रेरित होकर मुस्लिम शासकों और उनके अमीर-उमरावों ने केवल महत्वपूर्ण स्थानों पर ही मकतबों और मदरसों का निर्माण किया। **चौथा:** मुस्लिम शिक्षा-संस्थाओं में प्रदान की जाने वाली शिक्षा पर धार्मिक कट्टरता की इतनी गहरी और व्यापक छाप थी कि हिन्दू बालक उससे लाभान्वित न हो सके। **पाँचवा:** मुस्लिम युग में शिक्षा-संस्थाओं की संख्या बहुत कम थी। अत: केवल धनी और प्रभावशाली व्यक्तियों के बालकों को ही उनमें प्रवेश मिलता था। फलस्वरूप, सामान्य व्यक्तियों के बालकों के लिए शिक्षा प्राप्त करने का कोई साधन नहीं था। ऐसी स्थिति में शिक्षा में व्यापकता का अभाव होना स्वाभाविक था।

8. **छात्रों की विलासप्रियता** (Students Love of Luxury)—प्राचीन काल की भाँति मुस्लिम काल में छात्रों को कठोर और तपस्वी जीवन व्यतीत नहीं करना पड़ता था। उन्हें छात्रावासों में अनेक प्रकार के सुख-साधन और सौन्दर्य-प्रशासन की सुविधाएँ उपलब्ध थीं। फलस्वरूप, वे कुछ ही समय में इतने विलासी बन जाते थे कि वे सुखभोग के वास्तविक जीवन से पृथक् किसी अन्य जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। यही कारण था कि उनमें आत्म-त्याग, आत्म-निर्भरता और आत्म-अनुशासन आदि सद्गुणों के एक भी चिन्ह की झलक दुर्लभ थी।

9. **कठोर शारीरिक दण्ड** (Severe Corporal Punishment)—मुस्लिम-शिक्षा-व्यवस्था में कठोर दण्ड की प्रथा प्रचलित थी। छात्रों को पाठ याद न होने पर या अन्य अपराध करने पर बेंत, कोड़े, घूँसे, लात, थप्पड़ आदि से शारीरिक यातनाएँ दी जाती थीं।

   एडम (Adam) ने अपनी पुस्तक में कुछ शारीरिक यातनाओं का वर्णन इस प्रकार किया है—छात्र को मुर्गा बनाना, उसको पीठ या गर्दन या दोनों पर निश्चित समय के लिए ईंट या लकड़ी का भारी टुकड़ा रखना, उसे पैरों के बल वृक्ष की शाखा से लटकाना, उसे बिजली या अन्य किसी कष्टदायक पशु के साथ बोरे में बन्द करना, उसे भूमि पर पेट के बल लेट कर अपने शरीर को निश्चित दूरी तक घसीटना।

   ये सभी दण्ड निष्ठुर तथा अमानवीय होने के साथ-साथ अमनोवैज्ञानिक और शिक्षा-सिद्धान्तों के प्रतिकूल थे। इस प्रकार के दण्ड दिए जाने का कारण यह था कि राज्य की ओर से कोई दण्ड विधान निर्धारित नहीं था। अत: शिक्षक अपनी व्यक्तिगत इच्छा के अनुसार छात्रों को कोई दण्ड देने के लिए पूर्णतया स्वतंत्र थे।

10. **अन्य दोष** (Other Defects)—उपर्युक्त के अतिरिक्त, मुस्लिम शिक्षा-पद्धति में कुछ अन्य दोष और थे जैसे—

    पहला: बालकों को मकतबों में कुरान की आयतें कण्ठस्थ कराई जाती थीं, जिनका अर्थ जानना उनके लिए

नोट

आवश्यक नहीं समझा जाता था। इसमें उनकी स्मरण-शक्ति तो निश्चित रूप से तीव्र हो जाती थी, पर उनकी मनन, चिन्तन आदि अन्य मानसिक शक्तियों का विकास नहीं होता था।

दूसरा: बालकों को पहले पढ़ने का अभ्यास कराया जाता था और उसकी समाप्ति के पश्चात् लिखने का। इससे उनका पर्याप्त समय नष्ट होता था और उनका सन्तुलित विकास भी नहीं होता था।

तीसरा: मौखिक शिक्षण पर इतना अधिक बल दिया जाता था कि बालकों को निरीक्षण, परीक्षण आदि व्यावहारिक क्रियाओं के लिए कोई अवसर प्राप्त नहीं होता था।

चौथा: डॉ. यूसुफ हुसैन के शब्दों में–"मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति में लचीलेपन का अभाव था। परिणामत: वह अत्यधिक अनम्य (Right) और अनिर्माणकारी (Non-creative) बन गई थी।"

पाँचवां: डॉ. यूसुफ हुसैन के शब्दों में–"मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति में छात्रों में व्यावहारिक निर्णय प्रदान करने की क्षमता नहीं थी। वह अत्यधिक निष्प्राण और पुस्तकीय थी।"

अन्तिम: डॉ. यूसुफ हुसैन के विचारानुसार–**"यह कहना ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य होगा कि मध्यकालीन शिक्षा-पद्धति, नेतृत्व के गुणों का विकास करने में विफल हुई। अत: वह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के लिए असाधारण व्यक्तियों की मांग की पूर्ति नहीं कर सकी।"**

आधुनिक शिक्षा के लिए ग्राह्य तत्व

(Acceptable Features for Modern Education)

मुस्लिम-शिक्षा में हमें ऐसे अनेक उपयोगी तत्व मिलते हैं, जो आधुनिक भारतीय शिक्षा के लिए ग्राह्य हैं–

1. **नि:शुल्क शिक्षा** (Free Education)–मुस्लिम-शिक्षा प्राथमिक और उच्च–दोनों स्तरों पर नि:शुल्क बनाया जाना चाहिए। इसका मुख्य कारण यह है कि आज की शिक्षा इतनी महँगी हो गई है कि अनेक छात्र माध्यमिक और विशेष रूप से उच्च शिक्षा के लिए लालायित होने पर भी उसे प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं।

   यह तथ्य निर्धन परिवारों के बालकों के विषय में विशेष रूप से सत्य है। उच्च शिक्षा को नि:शुल्क बनाने से राज्य-सरकारों का व्यय अवश्य बढ़ जायेगा, पर इससे हित भी अवश्य अधिक होगा। इसकी पुष्टि में यह कारण प्रस्तुत किया जा सकता है कि देश को प्रतिभाशाली व्यक्ति उपलब्ध हो सकते हैं, जो प्रखर बुद्धि वाले होते हुए भी उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए अपने को असमर्थ पाते हैं।

2. **व्यावहारिक शिक्षा** (Practical Education)–आज के वैज्ञानिक युग में शिक्षा को आध्यात्मिक विकास और मोक्ष-प्राप्ति का साधन बनाना सर्वथा अनुचित है। अत: यह आवश्यक है कि जिस प्रकार मुस्लिम-शिक्षा में व्यावहारिक विषयों को महत्व दिया जाता था, उसी प्रकार भारत की आधुनिक शिक्षा में भी दिया जाये। व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करके छात्र–समाज के उपयोगी सदस्य बन सकते हैं और साथ ही अपनी जीविका का सरलता से उपार्जन भी कर सकते हैं।

3. **शिक्षक की स्थिति में उन्नति** (Elevation of Teacher's Status)–आधुनिक भारत में शिक्षक की स्थिति निम्न से निम्नतर होती चली जा रही है। इसके लिए आंशिक रूप से शिक्षक, पर मुख्य रूप से समाज और राज्य उत्तरदायी हैं। इसका कारण यह है कि न तो शिक्षक को समाज में सम्मान प्राप्त है और न राज्य का संरक्षण। अत: आवश्यक है कि समाज और राज्य–दोनों ही उसके प्रति अपने दृष्टिकोण को परिवर्तित करें और उसकी स्थिति को समुन्नत बनाने में उद्योग करें। मुस्लिम युग में शिक्षक को छात्रों की भक्ति, समाज का सम्मान और राज्य का संरक्षण प्राप्त था। आधुनिक भारत में मुस्लिम-शिक्षा के इस तत्व को एकमत से स्वीकार किया जाना चाहिए।

4. **व्यक्तिगत सम्पर्क** (Individual Contact)–मुस्लिम युग के अधिकांश मदरसों में शिक्षक और छात्र साथ-साथ रहते थे। फलस्वरूप, उनमें व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित हो जाता था। इस सम्पर्क के माध्यम से शिक्षक, छात्रों में विशिष्ट गुणों का समावेश करते थे।

   आधुनिक भारतीय शिक्षा में व्यक्तिगत सम्पर्क नाम की कोई चीज नहीं है। यही कारण है कि छात्रों में

नोट

उच्छृंखलता और अनुशासनहीनता की निरन्तर वृद्धि होती चली जा रही है। इसको समाप्त करने और छात्रों का चारित्रिक उन्नयन करने के लिए, शिक्षकों से उनका निकट और व्यक्तिगत सम्पर्क होना परम आवश्यक है। अत: मुस्लिम शिक्षा में पाये जाने वाले शिक्षकों और छात्रों के व्यक्तिगत सम्पर्क को आधुनिक भारतीय शिक्षा में समाविष्ट किया जाना अनिवार्य है।

5. **धार्मिक व लौकिक शिक्षा का समन्वय** (Synthesis of Religious & Secular Education)—आज के भौतिकवादी युग में लौकिक शिक्षा की असीम आवश्यकता है। किन्तु इस शाश्वत सत्य को विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए कि धर्म-व्यक्ति के जीवन और चरित्र का प्रधान आधार-स्तम्भ है। आधुनिक भारतीय शिक्षा की परिधि में से धर्म को बाहर निकाल कर इस आधार-स्तम्भ को हटा दिया गया है।

इसके कुत्सित परिणाम, भारत के प्रत्येक स्थान में देखने को मिल रहे हैं। अकारण झूठ बोलना, स्वार्थवश धोखा देना, निजहित के लिए लूटमार करना, कामवासना की तृप्ति के लिए अबलाओं का अपहरण करना—ये सभी बातें धर्मविहीन शिक्षा की द्योतक हैं। इनके कारण आज के भारतीय अपने आदि पूर्वजों की बर्बर अवस्था की ओर अत्यन्त त्वरित गति से बढ़ रहे हैं। इससे उनकी रक्षा तभी की जा सकती है, जब मुस्लिम-शिक्षा का अनुकरण करके, आधुनिक भारतीय शिक्षा में भी धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा का समन्वय किया जाए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)—

1. मध्यकालीन भारतीय शिक्षा के माध्यम क्या थे?
   (*a*) विश्वविद्यालय (*b*) प्राथमिक विद्यालय (*c*) मदरसे तथा मकतब (*d*) सरायें
2. मध्यकालीन भारतीय शिक्षा के मुख्य उद्देश्य क्या थे?
   (*a*) इस्लाम धर्म का प्रचार (*b*) ज्ञानार्जन करना
   (*c*) भौतिक उन्नति (*d*) उपर्युक्त सभी
3. मध्यकालीन शिक्षा-प्रणाली के अंतर्गत बालक की शिक्षा प्रारम्भ करने के अवसर पर कौन-सी रस्म अथवा औपचारिकता पूरी की जाती थी?
   (*a*) प्रवज्या संस्कार (*b*) उपसम्पदा संस्कार (*c*) बिस्मिल्लाह रस्म (*d*) उपर्युक्त में से कोई नहीं
4. मध्यकालीन शिक्षा के माध्यम के रूप में किस भाषा को प्राथमिकता दी गयी थी?
   (*a*) उर्दू (*b*) हिन्दी (*c*) संस्कृत (*d*) अरबी-फारसी
5. मुस्लिम काल में निम्न में से किस भाषा का विकास हुआ?
   (*a*) हिन्दी (*b*) उर्दू (*c*) संस्कृत (*d*) अरबी

2.3 सारांश (Summary)

- भारत में मुस्लिम शासकों ने केन्द्रीय या प्रान्तीय स्तर पर शिक्षा के किसी विभाग की स्थापना नहीं की, पर उन्होंने साधारणत: शिक्षा में रुचि अवश्य ली। फलस्वरूप, लगभग सम्पूर्ण मुस्लिम काल में प्राथमिक और उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। उस काल में शिक्षा के केवल यही दो स्तर थे। इन दोनों स्तरों पर शिक्षा प्रदान करने के लिए मुस्लिम शासकों और विद्या-प्रेमी, धनी व्यक्तियों द्वारा मकतबों और मदरसों की स्थापना की गई थी।
- प्राथमिक शिक्षा के मुख्य केन्द्र—मकतब थे। उनके अतिरिक्त, खानकाहों और दरगाहों (Khanaqahas & Dargahas) में भी प्राथमिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। इन शिक्षा-संस्थाओं में केवल मुसलमान बच्चे ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे।
- जिस प्रकार वैदिक युग में 'उपनयन संस्कार' के पश्चात् और बौद्ध-युग में "प्रवज्या संस्कार" के उपरान्त बालक की शिक्षा आरम्भ होती थी, उसी प्रकार मुस्लिम युग में "बिस्मिल्लाह-खानी" (Bismillah-Khani) की रस्म

नोट

के बाद बालक अपनी शिक्षा आरम्भ करता है। यह रस्म उस समय होती थी, जब बालक 4 वर्ष 4 माह और 4 दिन का होता था।

- मकतबों का पाठ्यक्रम विभिन्न स्थानों में अलग-अलग था। साधारणत: बालकों को पढ़ने, लिखने और साधारण अंकगणित की शिक्षा दी जाती थी। उनको सबसे पहले वर्णमाला के अक्षरों का ज्ञान कराया जाता था तथा उसके पश्चात् कुरान की कुछ आयतें कंठस्थ कराई जाती थीं। बालक के लिए उनका अर्थ समझना आवश्यक नहीं था, पर उनका शुद्ध उच्चारण करना अनिवार्य था।
- उच्च शिक्षा की संस्थाएँ—मदरसे थे। बालक अपनी प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए मदरसे में प्रवेश करता था। उस प्रवेश के समय कोई संस्कार सम्पन्न नहीं करना पड़ता था। उच्च शिक्षा के केन्द्र सम्पूर्ण देश में बिखरे हुये थे। इनमें आगरा, दिल्ली, लाहौर, मुल्तान, अजमेर, लखनऊ, स्यालकोट और मुर्शिदाबाद के मदरसों ने शिक्षा के क्षेत्र में विशेष ख्याति अर्जित की थी। इसीलिए, बुखारा, अफगानिस्तान और अन्य मुस्लिम देशों के छात्र उनमें ज्ञान का अर्जन करने के लिए आते थे।
- लौकिक शिक्षा के अन्तर्गत छात्र को अग्रांकित विषयों की शिक्षा दी जाती थी—अरबी और फारसी भाषाओं का साहित्य एवं व्याकरण, कृषि, गणित, भूगोल, कानून, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, यूनानी चिकित्सा आदि।
- धार्मिक शिक्षा के अन्तर्गत छात्र को कुरान की आयतें कण्ठस्थ करनी पड़ती थीं और उनका सूक्ष्म एवं आलोचनात्मक अध्ययन करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त, उसे सूफी सिद्धान्तों एवं इस्लामी इतिहास, कानूनों, सिद्धान्तों और परम्पराओं का अध्ययन करना पड़ता था।
- मुस्लिम शासन-काल में राज्य की भाषा, फारसी थी। इस भाषा का ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्यों को राजपद प्राप्त हो सकते थे। इस कार्य में सहायता देने के लिए फारसी को शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित किया गया था।
- "मकतब" शब्द की उत्पत्ति, अरबी के "कुतुब" (Kutub) शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—"उसने लिखा" (He wrote)। उर्दू भाषा में "कुतुब" शब्द—"किताब" का बहुवचन है। इस प्रकार, "मकतब" वह स्थान है, जहाँ **बालकों** को पढ़ना तथा लिखना सिखाया जाता है। मकतब, माध्यमिक शिक्षा के केन्द्र थे और साधारणत: किसी मस्जिद से सम्बद्ध होते थे। कहीं-कहीं मौलवी लोग व्यक्तिगत रूप से अपने घरों पर अथवा अन्य सुविधाजनक स्थानों पर मकतब चलाते थे।
- "खानकाह" प्रारम्भिक शिक्षा के केन्द्र थे। इनमें केवल मुसलमान बालक ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। इनका व्यय-दान में प्राप्त होने वाले धन से चलता था।
- "खानकाहों" की भाँति "दरगाह" भी प्राथमिक शिक्षा के केन्द्र थे। इनकी स्थिति बहुत-कुछ खानकाहों के समान थीं। इनमें भी केवल मुसलमान बालक ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे।
- "इन स्कूलों में केवल कुरान की शिक्षा दी जाती थी।" इसका वर्णन करते हुए **डी ला फॉस** (De La Fosse) ने "Quinqunnial Review of India, 1907-1912" में लिखा है—"कुरान स्कूल साधारणत: किसी मस्जिद से संलग्न होते थे। इनमें छात्रों को पहले अरबी लिपि का ज्ञान कराया जाता था और फिर कुरान की आयतें कण्ठस्थ कराई जाती थीं। उनको लिखने की और गणित की शिक्षा नहीं दी जाती थी।"
- "मदरसा" शब्द की उत्पत्ति, अरबी भाषा के "दरस" (Dars) शब्द हुई है, जिसका अर्थ है—"भाषण" (A Lecture)। इस प्रकार, "मदरसा" वह स्थान है, जहाँ शिक्षण के लिए भाषण या व्याख्यान-विधि का प्रयोग किया जाता है। मदरसे, उच्च शिक्षा के केन्द्र थे और सामान्यतया किसी मस्जिद से संलग्न होते थे। इनकी स्थापना—राज्य और धनी विद्याप्रेमियों द्वारा की जाती थी। इनमें विभिन्न शिक्षकों द्वारा विभिन्न विषयों की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा का माध्यम फारसी था।
- पर्दा-प्रथा के कारण केवल छोटी आयु की बालिकाएँ मकतबों में जाकर बालकों के साथ विद्या का अर्जन करती थीं, पर उन्हें कुछ ही समय के बाद यह कार्य स्थगित करना पड़ता था। उनको उच्च शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं, क्योंकि राज्य या समाज की ओर से उनके लिए पृथक् शिक्षा-संस्थाओं की कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी।

नोट

- मध्य वर्ग की बालिकाओं को शिक्षा के अधिक अवसर प्राप्त थे। वे विद्याध्ययन के लिए सामान्य मकतबों में न जाकर, व्यक्तिगत रूप से स्त्रियों द्वारा अपने घरों पर चलाए जाने वाले मकतबों में जाकर विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लेती थीं।
- दिल्ली के सुल्तानों और मुगल सम्राटों को व्यावसायिक शिक्षा के प्रति किसी-न-किसी रूप में कम या अधिक रुचि अवश्य थी। ऐसी परिस्थिति में व्यावसायिक शिक्षा का विकास होना स्वाभाविक था
- चिकित्साशास्त्र की उपयुक्त शिक्षा देने के लिए संस्कृत व ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद किया गया था। इन ग्रन्थों के आधार पर फारसी में पुस्तकों की रचना की गई। इस प्रकार की कुछ उल्लेखनीय पुस्तकें थीं—"मदानुश-शिफाए-सिकन्दरी", दस्तूर-उल-अतिब्बा" और "तुहफत-अल-मोमिन।"
- भारत में सभी मुस्लिम शासकों का लक्ष्य अपने राज्य को स्थायी और सुदृढ़ बनाना था। विदेशी और विधर्मी होने के कारण, वे भारतीयों को सदैव शंका की दृष्टि से देखते थे। उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने और बनाये रखने के लिए मुस्लिम शासकों को समय-समय पर हिन्दू राजाओं से युद्ध करने पड़ते थे।

  ऐसी परिस्थिति में मुस्लिम शासकों द्वारा सैनिक शिक्षा पर बल दिया जाना आवश्यक था। यह शिक्षा साधारण सैनिकों और राजकुमारों के लिए भिन्न प्रकार की थी।

2.4 शब्दकोश (Keywords)

- **मकतब**—उसने लिखा अर्थात वह स्थान जहाँ बच्चे पढ़ते-लिखते थे।
- **मदरसा**—मदरसा शब्द की उत्पत्ति 'दरस' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है भाषण।

2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्यकालीन इस्लामिक शिक्षा व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
2. भारत में मध्यकालीन इस्लामिक शैक्षिक व्यवस्था के प्रमुख दोषों का विवेचन कीजिए।
3. भारत में मध्यकालीन शिक्षण व्यवस्था में स्त्री शिक्षा की स्थिति का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (1) मकतब (2) बिस्मिल्लाह-खानी
(3) मदरसे (4) 10 से 12 वर्ष (5) "कुतुब"

2. (1) (*c*) (2) (*d*) (3) (*c*) (4) (*d*) (5) (*b*)।

2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—3: ब्रिटिशकालीन भारतीय शिक्षा (Education in India during British Period)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
3.1 मैकाले का विवरण पत्र (Mecaulay's Minute, 1835)
3.2 वुड का घोषणा पत्र (Wood's Despatch)
3.3 हण्टर आयोग (Hunter Commission)
3.4 सारांश (Summary)
3.5 शब्दकोश (Keywords)
3.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
3.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- भारत में ब्रिटिशकालीन शिक्षा व्यवस्था-मैकाले के विवरण पत्र, वुड के घोषणा पत्र, हण्टर आयोग की सिफारिशों-की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

ब्रिटिश कालीन शिक्षा में औपचारिक गुरु-शिष्य सम्बंध की शुरूआत हुई और गुरु अब आदर्शवाद के दायरे से बाहर आ गया। प्राचीन तथा मध्यकालीन स्नेहपूर्णता व घनिष्टता लगभग समाप्त हो गयी थी। यद्यपि शिष्य अपने गुरुओं का सम्मान करते थे।

ब्रिटिश काल के दौरान व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा का विधिवत् शिक्षण कार्य प्रारम्भ हुआ। कृषि कॉलेज, इंजीनियरिंग कॉलेज व तकनीकी शिक्षा संस्थान आदि संस्थाएँ खोली गयीं।

3.1 मैकाले का विवरण पत्र, 1835 (Macaulay's minute, 1835)

10 जून, सन् 1834 को लार्ड मैकाले गवर्नर-जनरल की कौंसिल के "कानून-सदस्य" के रूप में भारत आया। उस समय तक "प्राच्य-पाश्चात्य विवाद" उग्रतम रूप धारण कर चुका था। बैंटिंक का विश्वास था कि मैकाले जैसा विद्वान ही इस विवाद को समाप्त कर सकता था। इस विचार से उसने मैकॉले को बंगाल की "लोक-शिक्षा-समिति" का सभापति नियुक्त किया। फिर, उसने मैकाले से सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा में अंकित एक लाख

नोट

रुपये की धनराशि को व्यय करने की विधि तथा अन्य विवादग्रस्त विषयों के सम्बन्ध में कानूनी सलाह देने का अनुरोध किया। साथ ही उसने "समिति" के मन्त्री को प्राच्यवादी और पाश्चात्यवादी दलों के वक्तव्यों को मैकाले के समक्ष उपस्थित करने का आदेश दिया।

मैकाले ने सर्वप्रथम "आज्ञा-पत्र" की उक्त धारा और दोनों दलों के वक्तव्यों का सूक्ष्म अध्ययन किया। फिर, उसने तर्कपूर्ण और बलवती भाषा में अपनी सलाह को अपने प्रसिद्ध "विवरण-पत्र" में लेखबद्ध करके, 2 फरवरी, सन् 1835 को बैंटिंक के पास भेज दिया। मैकॉले के 'विवरण-पत्र' के दो प्रमुख अंशों का वर्णन निम्न प्रकार है–

(1) 43वीं धारा की व्याख्या (Interpretation of 43rd Section)–मैकाले ने अपने "विवरण-पत्र" में सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा की निम्नलिखित प्रकार से व्याख्या की है–

1. "साहित्य" शब्द के अन्तर्गत केवल अरबी और संस्कृत साहित्य ही नहीं, अपितु अंग्रेजी साहित्य भी सम्मिलित किया जा सकता है।
2. एक लाख रुपये की धनराशि व्यय करने के लिए सरकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। वह इस धनराशि को अपनी इच्छानुसार किसी प्रकार भी व्यय कर सकती है।
3. "भारतीय विद्वान" मुसलमान मौलवी एवं संस्कृत के पण्डित के अलावा अंग्रेजी भाषा और साहित्य का विद्वान भी हो सकता है।

(2) अंग्रेजी के पक्ष में तर्क (Arguments in Favour of English)–सबसे पहले, मैकाले ने भारतीय भाषाओं को अध्ययन के लिए, पूर्णतया निरर्थक बताते हुए लिखा–"**भारत के निवासियों में प्रचलित देशी भाषाओं में साहित्यिक तथा वैज्ञानिक ज्ञान-कोष का अभाव है और वे इतनी अविकसित तथा गँवारू हैं कि जब तक उनको बाह्य भण्डार से सम्पन्न नहीं किया जायेगा, तब तक उनसे किसी भी महत्वपूर्ण पुस्तक का सरलता से अनुवाद न हो सकेगा।"।**

भारतीय भाषाओं की निरर्थकता सिद्ध करने के पश्चात् मैकाले ने अरबी, फारसी तथा संस्कृत की अपेक्षा अंग्रेजी को कहीं अधिक उच्च स्थान देते हुए लिखा–"**एक अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अलमारी का साहित्य भारत और अरब के सम्पूर्ण साहित्य से कम महत्वपूर्ण नहीं है।"**

इस प्रकार अरबी, फारसी और संस्कृत के अध्ययन क्षेत्र से बाहर निकाल कर मैकाले ने अंग्रेजी को इनकी अपेक्षा अधिक समृद्ध बताया और उसके अध्ययन के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिए–

1. अंग्रेजी इस देश के शासकों की भाषा है, भारत के उच्च वर्गों द्वारा बोली जाती है और पूर्वी समुद्रों में व्यापार की भाषा बन सकती है।
2. अरबी और संस्कृत की तुलना में अंग्रेजी अधिक उपयोगी है, क्योंकि यह नवीन ज्ञान की कुंजी है।

क्या आप जानते हैं "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा की व्याख्या करने के बाद, मैकाले ने प्राच्य-शिक्षा एवं साहित्य का खण्डन और अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञानों की शिक्षा का जोरदार समर्थन किया।

मैकाले का निस्यन्दन-सिद्धान्त (Macaulay's Filtration Theory)

1. **सिद्धान्त का अर्थ**–अंग्रेजी के "Filtration" शब्द का अर्थ हैं–"निस्यन्दन" अर्थात् "छानने की क्रिया"। व्यापारियों की कम्पनी होने के कारण वह भारतीयों की शिक्षा पर कम-से-कम धन व्यय करना चाहती थी। अत: उसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि शिक्षा का नियोजन केवल उच्च वर्गों के लिए किया जाये, क्योंकि शिक्षा इन वर्गों से अन्य व्यक्तियों तक पहुंच जायेगी। इस सिद्धान्त के अर्थ का स्पष्टीकरण करते हुए **अरथर**

नोट

ने कहा–"**शिक्षा ऊपर से प्रवेश करके, जनसाधारण तक पहुँचनी थी। लाभप्रद ज्ञान, भारत के सर्वोच्च वर्गों से बूँद-बूँद करके नीचे टपकना था।**"

2. **सिद्धान्त के समर्थक**

   (*i*) इसाई-मिशनरियों का आग्रह था कि यदि भारत के उच्च वर्गों के हिन्दुओं को अंग्रेजी शिक्षा देकर इसाई-धर्म का अवलम्बी बना लिया जायेगा, तो निम्न वर्गों के व्यक्ति उनके उदाहरण से प्रभावित होकर स्वयं ही इसाई धर्म में दीक्षित हो जायेंगे।

   (*ii*) फ्रांसिस वार्डन ने 23 दिसम्बर, सन् 1823 के अपने "विवरण-पत्र में यह विचार व्यक्त किया–"बहुत से व्यक्तियों को थोड़ा-सा ज्ञान देने की बजाए थोड़े से व्यक्तियों को बहुत सा ज्ञान देना अधिक उत्तम और निरापद है।"

   (*iii*) कम्पनी के संचालकों ने 29 सितम्बर, सन् 1830 के अपने "आदेश पत्र" में मद्रास के गवर्नर को यह परामर्श दिया–"शिक्षा की प्रगति उसी समय हो जाती है, जब उच्च वर्ग के उन व्यक्तियों को शिक्षा दी जाये, जिनके पास अवकाश है और जिनका अपने देश के निवासियों पर प्रभाव है।"

   (*iv*) मैकॉले ने अपने सन् 1835 के "विवरण-पत्र" निस्यन्दन-सिद्धान्त" का समर्थन करते हुए कहा–हमें इस समय तक ऐसे वर्ग का निर्माण करने का पूरा-पूरा प्रयास करना चाहिए, जो हमारे और उन लोगों के बीच में दुभाषिए का काम करे, जिन पर हम शासन करते हैं।"

3. **ऑकलैंड द्वारा सिद्धान्त की स्वीकृति–**भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल, लार्ड ऑकलैंड ने "निस्यन्दन-सिद्धान्त" को शिक्षा की सरकारी नीति के रूप में स्वीकार किया और 24 नवम्बर, सन् 1839 के अपने "विवरण-पत्र" द्वारा अग्रांकित घोषणा की–"सरकार के प्रयास, समाज के उन उच्च वर्गों में उच्च शिक्षा का प्रसार करने तक सीमित रहने चाहिए, जिनके पास अध्ययन के लिए अवकाश है और जिनकी संस्कृति छन-छन कर जनसाधारण तक पहुँचेगी।"

4. अंग्रेजी की शिक्षा द्वारा इस देश में एक ऐसे वर्ग का निर्माण किया जा सकता है जो रक्त और रंग में भले ही भारतीय हो, पर रुचियों, नैतिकता और विद्वता में अंग्रेज होगा।

5. भारतवासी–अरबी और संस्कृत की शिक्षा की अपेक्षा अंग्रेजी की शिक्षा के लिए अधिक उत्कंठित हैं।

6. जिस प्रकार लेटिन एवं यूनानी भाषाओं से इंग्लैण्ड में और पश्चिमी यूरोप की भाषाओं से रूस में पुनरुत्थान हुआ, उसी प्रकार अंग्रेजी से भारत में होगा।

7. भारतवासियों को अंग्रेजी का अच्छा विद्वान बनाया जा सकता है और हमारा प्रयास इसी दिशा में होना चाहिए।

उपर्युक्त तर्कों के आधार पर मैकाले ने यह मत व्यक्त किया कि प्राच्य-शिक्षा की संस्थाओं पर धन व्यय करना मूर्खता है और इनको बन्द कर दिया जाये। अंग्रेजी पश्चिमी भाषाओं में भी सर्वोपरि है। जो व्यक्ति अंग्रेजी भाषा जानता है, वह उस विशाल ज्ञान-भण्डार को सुगमता से प्राप्त कर लेता है जिनकी विश्व की सबसे बुद्धिमान जातियों ने रचना की है।"

नोट्स निस्यन्दन-सिद्धान्त के समर्थकों में थे–इसाई मिशनरी, मुम्बई के गवर्नर की कौंसिल का सदस्य, फ्रांसिस वार्डन (Francis Warden), कम्पनी के संचालक और मैकाले।

बैंटिंक द्वारा विवरण-पत्र की स्वीकृति, 1835 (Bentinck's Approval of The Minute, 1835)

लॉर्ड विलियम बैंटिंक ने मैकाले के "विवरण-पत्र" में व्यक्त किए गए सभी विचारों का अनुमोदन किया। फिर 7 मार्च, सन् 1835 को एक विज्ञप्ति (Proclamation) द्वारा, उसने सरकार की शिक्षा-नीति को अग्रांकित शब्दों में

नोट

घोषित किया–"शिक्षा के लिए निर्धारित सम्पूर्ण धन का सर्वोत्कृष्ट प्रयोग केवल अंग्रेजी की शिक्षा के लिए ही किया जा सकता है।"

इस विज्ञप्ति ने कम्पनी की शिक्षा–नीति में अचानक परिवर्तन करके भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक नया मोड़ दिया। **टी. एन. सिक्वेरा** के शब्दों में–"इस विज्ञप्ति ने भारत में शिक्षा के इतिहास को एक नया मोड़ दिय। यह उस दिशा के विषय में, जो सरकार सार्वजनिक शिक्षा को देना चाहती थी, निश्चित नीति की प्रथम सरकारी घोषणा थी।"

3.2 वुड का घोषणा-पत्र (Wood's Despatch)

विलियम बैंटिंक ने सन् 1835 की विज्ञप्ति में अंग्रेजी भाषा के प्रसार करने की घोषणा की थी। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अंग्रेज मिशनरियों द्वारा भारत में अनेक नई संस्थायें खोली गयीं।

ब्रिटिश संसद को यह अनुभूति हो चुकी थी कि भारतीय शिक्षा नीति–में कुछ परिवर्तन किया जाना चाहिए एवं एक स्थायी नीति का निर्माण किया जाना चाहिये। इसलिए ब्रिटिश संसद ने एक संसदीय समिति नियुक्त की तथा इस समिति द्वारा प्रस्तुत कुछ आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर सन् 1854 में शिक्षा सम्बन्धी एक घोषणा–पत्र प्रस्तुत किया गया जिसे संचालन समिति के अध्यक्ष पर चार्ल्स वुड के नाम पर वुड का घोषणा–पत्र (Wood's Despatch) कहा जाता है। इस घोषणा–पत्र में तत्कालीन शिक्षा–व्यवस्था के पुनरीक्षण तथा भविष्य में शैक्षिक पुनर्निर्माण हेतु सुनिश्चित तथा बहु–आयामी नीति को सूचीबद्ध करने का प्रयास किया गया था।

वुड के इस घोषणा–पत्र ने शिक्षा का एक उचित ढाँचा प्रस्तुत किया। घोषणा–पत्र की प्रमुख सिफारिशें निम्नलिखित थीं–

(1) समस्त भारत में विभिन्न स्तरों (प्रथमिक, मिडिल तथा हाईस्कूल आदि) के स्कूलों की स्थापना करना।

(2) भारत के नागरिकों का मानसिक विकास करना।

(3) चरित्र का विकास करना।

(4) भारतवासियों को पाश्चात्य ज्ञान के माध्यम से सशक्त बनाना।

(5) इस पत्र में मुम्बई, कोलकाता तथा चेन्नई में उच्च शिक्षा के लिए विश्वविद्यालयों के खोलने की घोषणा की गयी।

(6) प्रान्तों में शिक्षा विभागों की स्थापना करना तथा प्रत्येक प्रान्त में एक शिक्षा–निदेशक (Director) और उसकी सहायता के लिए उपशिक्षा निदेशक तथा दूसरे निरीक्षकों की नियुक्ति करना।

(7) शिक्षा–व्यवस्था किसी वर्ग विशेष के लिए न होकर जन–साधारण के लिए हो।

(8) अध्यापकों के प्रशिक्षण की कक्षायें प्रारम्भ की जायें।

(9) भारत के पाँच राज्यों में 'लोक शिक्षा विभाग' की स्थापना करना।

(10) शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओं व अंग्रेजी को समन्वित रूप से स्वीकार किया गया।

(11) राजकीय पदों के लिए योग्य व्यक्तियों को तैयार करना।

(12) सभी भारतीय भाषाओं में उचित पाठ्य-पुस्तकों का प्रबन्ध किया जाये।

(13) औद्योगिक विकास हेतु विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की स्थापना की जाये।

(14) नारी शिक्षा के प्रसार के लिए अनुदान दिया जाये।

(15) अनुदान के सम्बन्ध में स्पष्ट किया गया कि प्राइवेट स्कूलों में स्थानीय प्रबन्ध समिति कार्य करें और वे फीस लगायें, किन्तु इन संस्थाओं का निरीक्षण शिक्षा विभाग के सरकारी अधिकारी करेंगे और अध्यापकों के वेतन, पुस्तकालय, भवन निर्माण एवं छात्रवृत्ति आदि के लिए सरकार अनुदान दे।

(16) शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक तटस्थता को अपनाया जाये।

नोट

उपरोक्त सिफारिशों से स्पष्ट है कि वुड के घोषणा-पत्र का भारतीय शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान है। यह पहला घोषणा-पत्र था जिसने ब्रिटिशकालीन शिक्षा को प्रारम्भिक ढाँचा प्रदान किया। वुड के घोषण-पत्र के सम्बन्ध में **ए. एन. बसु** ने लिखा है कि–

"वुड का घोषणा-पत्र भारतीय शिक्षा का शिलाधार था।"

सर फिलिप हटाँग के शब्दों में–

"यह घोषण-पत्र भारत के कल्याण हेतु बुद्धिमत्ता को विकसित करने वाली नीति का निर्धारक था।"

इस घोषणा-पत्र का इतना अधिक महत्व होने के कारण इस घोषणा-पत्र को भारत में अंग्रेजी शिक्षा का मेग्ना कार्टा (Manga Carta of English Education in India) अर्थात् शिक्षा का महाधिकार-पत्र भी कहा जाता है।

किन्तु क्या वास्तव में वुड का घोषणा-पत्र भारतीय शिक्षा का महाधिकार-पत्र था, यह बात विवादास्पद है। कुछ भारतीय शिक्षाविदों का मत था कि घोषणा-पत्र में शिक्षा का उद्देश्य-निर्धारण अनुचित था। इसमें भारतीय संस्कृति की अवहेलना की गयी तथा घोषणा-पत्र के पीछे सरकार का अपना राजनीतिक व आर्थिक स्वार्थ निहित था। कुछ शिक्षाविदों ने इसकी कड़ी आलोचना भी की है। यह नेतृत्व प्रदान करने, छात्रों की शिक्षा में राज्य का दायित्व निभाने, निर्धन छात्रों को सुविधा प्रदान करने एवं लाल फीताशाही से शिक्षा के नियन्त्रण तथा संचालन को मुक्त करने में सर्वथा असफल रहा। इसने धर्म को शिक्षा से पृथक् कर दिया।

उपरोक्त वर्णन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वुड का घोषणा-पत्र भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक अपरिवर्तनीय बिन्दु है। इस घोषणा-पत्र की संस्तुतियों के आधार पर ही भारतीय शिक्षा में समानता आ सकी, प्रत्येक प्रान्त में शिक्षा विभागों की स्थापना की जा सकी तथा विश्वविद्यालयों की स्थापना हो सकी। यद्यपि इस घोषणा-पत्र के द्वारा भारतीय शिक्षा में कतिपय असमानताओं का विकास हुआ, तथापि यह घोषणा-पत्र भारत के कल्याण हेतु बुद्धिमता को विकसित करने वाली नीति का निर्धारक था।

3.3 हण्टर आयोग (Hunter Commission)

हन्टर शिक्षा आयोग, 1882-83 (Hunter Education Commission)–1882 में सरकार ने डब्ल्यू. डब्ल्यू. हन्टर की अध्यक्षता में एक आयोग शिक्षा के क्षेत्र में 1854 के पश्चात् हुई प्रगति की समीक्षा करने के लिये नियुक्त किया। एक कारण यह भी था कि इंग्लैंड में पादरी लोग यह प्रचार कर रहे थे कि भारत में शिक्षा, वुड के पत्र के प्रस्तावों के अनुसार नहीं हो रही है। प्रस्ताव में यह भी कहा गया था कि आयोग ऐसे सुझाव दे कि जिससे भारत में लोक-शिक्षण की भिन्न शाखाएं, एकत्रित हो आगे बढ़ सकें अर्थात् समस्त भारत के प्राथमिक शिक्षण-अध्ययन की समीक्षा की जाए और देखा-जाए कि कैसे इसका सुधार और विस्तार किया जा सकता है। इसका कार्य विश्वविद्यालयों के कार्य की समीक्षा करना नहीं था, इसे केवल प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा समीकरण तक ही सीमित रहना था। इसने सभी प्रान्तों का भ्रमण किया और लगभग 200 प्रस्ताव पारित किए। इसके सुझाव निम्नलिखित थे–

1. सरकार को प्राथमिक शिक्षा के सुधार और विकास की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। यह शिक्षा स्थानीय भाषा में हो और उपयोगी विषयों में हो। निजी प्रयत्न का स्वागत हो परन्तु प्राथमिक शिक्षा उसके बिना भी दी जानी चाहिए। इन प्राथमिक पाठशालाओं का नियंत्रण नव संस्थापित जिला और नगर बोर्डों को दे दिया जाए। शिक्षा के लिये वे उपकर भी लगा सकते थे।
2. माध्यमिक शिक्षा के दो खण्ड हों, एक में साहित्यिक शिक्षा जो विश्वविद्यालय के लिये प्रवेश परीक्षा के लिए विद्यार्थी तैयार करे और दूसरी व्यावहारिक ढंग की जो विद्यार्थियों को व्यावसायिक तथा व्यापारिक जीवन के लिए तैयार करे।
3. आयोग ने यह भी सुझाव दिया कि निजी प्रयत्नों को शिक्षा के क्षेत्र में पूर्णरूपेण बढ़ावा मिलना चाहिए। इसके लिये सहायता अनुदान में उदारता तथा सहायता प्राप्त पाठशालाओं को सरकारी पाठशालाओं के बराबर मान्यता प्राप्त करने इत्यादि के लिए अवसर होने चाहिए। जितना शीघ्र हो सके सरकार को माध्यमिक और कॉलेज शिक्षा से हट जाना चाहिए।

नोट

4. आयोग ने प्रेज़िडेंसी नगरों (बम्बई, कलकत्ता और मद्रास) के अतिरिक्त अन्य सभी स्थानों पर महिला शिक्षा के पर्याप्त प्रबन्ध न होने पर खेद प्रकट किया और बढ़ावा देने को कहा।

इस आयोग के सुझावों के पश्चात आने वाले 20 वर्षों में माध्यमिक और कॉलेज शिक्षा का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। इस क्षेत्र में दानी लोगों का विशेष सहयोग था। भारत के सभी भागों में साम्प्रदायिक संस्थाएँ भी बनने लगीं।

पाश्चात्य ज्ञान के अतिरिक्त भारतीय तथा प्राच्य भाषाओं के पठनपाठन में भी विशेष रुचि देखने को मिली। इसके अतिरिक्त अध्यापन तथा परीक्षा के लिए विश्वविद्यालय भी बनने लगे। 1882 में पंजाब और 1887 में इलाहबाद विश्वविद्यालय स्थापित किये गये।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्ष भारत में बढ़ती हुई राजनैतिक व्यग्रता और शिक्षा क्षेत्रों में वाद-विवाद के वर्ष थे। शिक्षा संस्थाओं में राजनैतिक बेचैनी की प्रक्रिया और प्रतिक्रिया हुई और सरकार का यह विचार था कि निजी प्रबन्ध के अधीन संस्थाओं में स्तर गिरे हैं और यहां बहुत अधिक अनुशासनहीनता है और ये संस्थाएँ राजनैतिक क्रान्तिकारियों को उत्पन्न करने के लिये कारखाने मात्र बन गई हैं। राष्ट्रवादियों ने यह तो स्वीकार किया कि स्तर गिर गए हैं परन्तु इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया कि सरकार निरक्षता को दूर करने का भरसक प्रयत्न नहीं कर रही है।

कर्ज़न ने अपने प्रशासन को सुधारने के स्वाभाविक जोश में भारतीय शिक्षा को भी सुधारने का प्रयत्न किया। उसने मैकाले की नीति की आलोचना की और कहा कि उसमें देशी भाषाओं के विरुद्ध पक्षपात था। उसने हीन स्तर के अध्यापक वर्ग और परीक्षाओं पर बल देने वाली शिक्षा पद्धति की भी कटु आलोचना की। परन्तु उसके मुख्य उद्देश्य राजनैतिक थे और केवल आंशिक रूप से शैक्षिक। उसने विश्वविद्यालयों पर सरकारी नियंत्रण बढ़ाया और उसे गुण और दक्षता के नाम पर उचित ठहराया। राष्ट्रवादियों ने इसे साम्राज्यवाद को दृढ़ करने और राष्ट्रीयता की भावना के विकास को समाप्त करने का प्रयत्न कहा।

टास्क इलाहाबाद विश्वविद्यालय कब स्थापित किया गया?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)–

1. ब्रिटिश काल में गुरु-शिष्य सम्बन्ध थे–
   (*a*) मात्र औपचारिक (*b*) स्नेहपूर्ण (*c*) घनिष्ठ (*d*) इनमें से कोई नहीं
2. ब्रिटिशकाल में छात्रों के शैक्षिक विकास का मापन होता था–
   (*a*) मौखिक परीक्षा के द्वारा (*b*) लिखित परीक्षा के द्वारा
   (*c*) क्रियात्मक परीक्षा के द्वारा (*d*) उपर्युक्त सभी परीक्षाओं के द्वारा
3. ब्रिटिशकाल में किस शैक्षिक योजना ने भारतीय शिक्षा को सर्वाधिक प्रभावित किया?
   (*a*) गोखले का शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव (*b*) मैकाले का विवरण पत्र
   (*c*) वर्धा योजना (*d*) वुड का घोषण पत्र
4. मैकाले ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया–
   (*a*) 1831 ई. में (*b*) 1834 ई. में (*c*) 1835 ई. में (*d*) 1836 ई. में
5. वुड का घोषणा-पत्र प्रस्तुत किया गया–
   (*a*) सन् 1856 में (*b*) सन् 1854 में (*c*) सन् 1858 में (*d*) सन् 1860 में

नोट

3.4 सारांश (Summary)

- 10 जून, सन् 1834 को लार्ड मैकाले गवर्नर-जनरल की कौंसिल के "कानून-सदस्य" के रूप में भारत आया। उस समय तक "प्राच्य-पाश्चात्य विवाद" उग्रतम रूप धारण कर चुका था। बैंटिक का विश्वास था कि मैकाले जैसा विद्वान ही इस विवाद को समाप्त कर सकता था।
- उसने मैकाले से सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा में अंकित एक लाख रुपये की धनराशि को व्यय करने की विधि तथा अन्य विवादग्रस्त विषयों के सम्बन्ध में कानूनी सलाह देने का अनुरोध किया।
- मैकाले ने सर्वप्रथम "आज्ञा-पत्र" की उक्त धारा और दोनों दलों के वक्तव्यों का सूक्ष्म अध्ययन किया। फिर, उसने तर्कपूर्ण और बलवती भाषा में अपनी सलाह को अपने प्रसिद्ध "विवरण-पत्र" में लेखबद्ध करके, 2 फरवरी, सन् 1835 को बैंटिंक के पास भेज दिया।
- सबसे पहले, मैकाले ने भारतीय भाषाओं को अध्ययन के लिए, पूर्णतया निरर्थक बताते हुए लिखा–"**भारत के निवासियों में प्रचलित देशी भाषाओं में साहित्यिक तथा वैज्ञानिक ज्ञान-कोष का अभाव है और वे इतनी अविकसित तथा गँवारू हैं कि जब तक उनको बाह्य भण्डार से सम्पन्न नहीं किया जायेगा, तब तक उनसे किसी भी महत्वपूर्ण पुस्तक का सरलता से अनुवाद न हो सकेगा।"।**
- भारतीय भाषाओं की निरर्थकता सिद्ध करने के पश्चात् मैकाले ने अरबी, फारसी तथा संस्कृत की अपेक्षा अंग्रेजी को कहीं अधिक उच्च स्थान देते हुए लिखा–"**एक अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अलमारी का साहित्य भारत और अरब के सम्पूर्ण साहित्य से कम महत्वपूर्ण नहीं है।"**
- अंग्रेजी के "Filtration" शब्द का अर्थ हैं–"निस्यन्दन" अर्थात् "छानने की क्रिया"। व्यापारियों की कम्पनी होने के कारण वह भारतीयों की शिक्षा पर कम-से-कम धन व्यय करना चाहती थी। अत: उसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि शिक्षा का नियोजन केवल उच्च वर्गों के लिए किया जाये, क्योंकि शिक्षा इन वर्गों के व्यक्तियों तक पहुंच जायेगी।
- भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल, लार्ड ऑकलैंड ने "निस्यन्दन-सिद्धान्त" को शिक्षा की सरकारी नीति के रूप में स्वीकार किया और 24 नवम्बर, सन् 1839 के अपने "विवरण-पत्र" द्वारा अग्रांकित घोषणा की–"सरकार के प्रयास, समाज के उन उच्च वर्गों में उच्च शिक्षा का प्रसार करने तक सीमित रहने चाहिए, जिनके पास अध्ययन के लिए अवकाश है और जिनकी संस्कृति छन-छन कर जनसाधारण तक पहुँचेगी।"
- लार्ड विलियम बैंटिंक ने मैकाले के "विवरण-पत्र" में व्यक्त किए गए सभी विचारों का अनुमोदन किया। फिर 7 मार्च, सन् 1835 को एक विज्ञप्ति (Proclamation) द्वारा, उसने सरकार की शिक्षा-नीति को अग्रांकित शब्दों में घोषित किया–"शिक्षा के लिए निर्धारित सम्पूर्ण धन का सर्वोत्कृष्ट प्रयोग केवल अंग्रेजी की शिक्षा के लिए ही किया जा सकता है।"
- ब्रिटिश संसद को यह अनुभूति हो चुकी थी कि भारतीय शिक्षा नीति-में कुछ परिवर्तन किया जाना चाहिए एवं एक स्थायी नीति का निर्माण किया जाना चाहिये। इसलिए ब्रिटिश संसद ने एक संसदीय समिति नियुक्त की तथा इस समिति द्वारा प्रस्तुत कुछ आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर सन् 1854 में शिक्षा सम्बन्धी एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत किया गया जिसे संचालन समिति के अध्यक्ष पर चार्ल्स वुड के नाम पर वुड का घोषणा-पत्र (Wood's Despatch) कहा जाता है।
- 1882 में सरकार ने डब्ल्यू. डब्ल्यू. हन्टर की अध्यक्षता में एक आयोग शिक्षा के क्षेत्र में 1854 के पश्चात् हुई प्रगति की समीक्षा करने के लिये नियुक्त किया। एक कारण यह भी था कि इंग्लैंड में पादरी लोग यह प्रचार कर रहे थे कि भारत में शिक्षा, वुड के पत्र के प्रस्तावों के अनुसार नहीं हो रही है।
- इस आयोग के सुझावों के पश्चात आने वाले 20 वर्षों में माध्यमिक और कॉलेज शिक्षा का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। इस क्षेत्र में दानी लोगों का विशेष सहयोग था।

नोट

- 1882 में पंजाब और 1887 में इलाहबाद विश्वविद्यालय स्थापित किये गये।
- कर्ज़न ने अपने प्रशासन को सुधारने के स्वाभाविक जोश में भारतीय शिक्षा को भी सुधारने का प्रयत्न किया। उसने मैकाले की नीति की आलोचना की और कहा कि उसमें देशी भाषाओं के विरुद्ध पक्षपात था। उसने हीन स्तर के अध्यापक वर्ग और परीक्षाओं पर बल देने वाली शिक्षा पद्धति की भी कटु आलोचना की। परन्तु उसके मुख्य उद्देश्य राजनैतिक थे और केवल आंशिक रूप से शैक्षिक। उसने विश्वविद्यालयों पर सरकारी नियंत्रण बढ़ाया और उसे गुण और दक्षता के नाम पर उचित ठहराया। राष्ट्रवादियों ने इसे साम्राज्यवाद को दृढ़ करने और राष्ट्रीयता की भावना के विकास को समाप्त करने का प्रयत्न कहा।

3.5 शब्दकोश (Keywords)

- **अभूतपूर्व–** बहुत अच्छा, अविश्वसनीय सफलता
- **मैग्नाकार्टा–** महाधिकार पत्र

3.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मैकाले के विवरण पत्र का विश्लेषण कीजिए।
2. मैकाले के विख्यात निस्यंदन सिद्धांत की व्याख्या कीजिए।
3. 1854 ई. के वुड के घोषणापत्र की प्रमुख सिफारिशें क्या थीं? संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. वुड के घोषणा-पत्र को क्या शिक्षा का महाधिकार पत्र कहा जा सकता है? मूल्यांकन कीजिए।
5. हण्टर कमीशन की सिफारिशों का वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (1) (*a*) (2) (*d*) (3) (*b*) (4) (*c*)
(5) (*b*)

3.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–4: स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा (Education in India After Independence)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

4.1 माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) (Secondary Education Commission (1952-53))

4.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग के उद्देश्य (Aims of Secondary Education Commission)

4.3 सारांश (Summary)

4.4 शब्दकोश (Keywords)

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

4.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शैक्षिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करने और माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) की व्याख्या एवं विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने देश की शिक्षा को सुनियोजित और सुसंगठित करने का दृढ़ निश्चय किया। उसने यह कार्य विश्वविद्यालयी शिक्षा से आरम्भ किया। इसका प्रमुख कारण यह था कि स्वाधीनता के युग में प्रवेश करने के समय से भारतीय विश्वविद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही थी।

इन परिस्थिति में समन्वय स्थापित करने के लिए माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। इसलिए सन् 1948 में "केन्द्रीय-शिक्षा-सलाहकार बोर्ड" ने भारत सरकार को एक आयोग नियुक्त करने का सुझाव दिया।

4.1 माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) (Secondary Education Commission (1952-53))

स्वतन्त्र भारत की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों में अत्यन्त द्रुत गति से परिवर्तन हो रहे थे। इन परिस्थितियों में समन्वय की स्थापना करने के लिये माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन करने की आवश्यकता का अनुभव किया गया। इसलिये सन् 1948 में "केन्द्रीय-शिक्षा-सलाहकार बोर्ड" (Central Advisor Board of Education) ने

भारत सरकार को एक आयोग नियुक्त करने का सुझाव दिया। सन् 1951 में उसने अपने सुझाव की यह कहकर पुनरावृत्ति की कि माध्यमिक शिक्षा एकमार्गीय (Unilateral) है, और उसे ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों के समक्ष उच्च शिक्षा प्राप्त करने अथवा नौकरी खोजने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। अत: माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन इस प्रकार किया जाना चाहिये कि विद्यार्थी अपनी अभिरुचियों एवं आवश्यकताओं के अनुसार माध्यमिक शिक्षा से लाभान्वित हो सकें। "बोर्ड" के सुझाव से सन्तुष्ट होकर, भारत सरकार ने 23 सितम्बर, सन् 1952 को मद्रास-विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. ए. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में **"माध्यमिक-शिक्षा आयोग"** की नियुक्ति की घोषणा की। अध्यक्ष के नाम पर इस "आयोग" को "मुदालियर कमीशन" भी कहा जाता है।

आयोग के जाँच के विषय (Terms of Reference of The Commission)

"आयोग" के शब्दों में आयोग के जाँच के विषय थे–"भारत की तत्कालीन माध्यमिक शिक्षा के सभी पक्षों की जाँच करना एवं उनके विषय में रिपोर्ट देना और उसके पुनर्गठन एवं सुधार के सम्बन्ध में सुझाव प्रस्तुत करना।"

माध्यमिक शिक्षा के दोष (Defects of Secondary Education)–"आयोग" के अनुसार, माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं–

(*i*) माध्यमिक शिक्षा एकपक्षीय है। अत: यह छात्रों को केवल उच्च शिक्षा के लिए तैयार करती है।

(*ii*) माध्यमिक शिक्षा नीरस, संकुचित एवं रूढ़िबद्ध है। अत: यह छात्रों के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं करती है।

(*iii*) माध्यमिक शिक्षा छात्रों में नैतिकता, सहयोग, अनुशासन एवं नेतृत्व के गुणों का विकास नहीं करती है। अत: यह उनको उत्तम नागरिक नहीं बनाती है।

(*iv*) माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम संकीर्ण है। अत: यह छात्रों को अपनी रुचियों और मनोवृत्तियों के अनुसार विषयों का चयन करने का अवसर नहीं देती है।

(*v*) माध्यमिक शिक्षा छात्रों के चरित्र-निर्माण के प्रति रंचमात्र भी ध्यान नहीं देती है। अत: यह उनमें अनुशासनहीनता की भावना उत्पन्न करती है।

(*vi*) शिक्षण-विधियाँ परम्परागत होने के कारण छात्रों को प्रभावित नहीं करती हैं और परीक्षा-प्रणाली उनके ज्ञान की वास्तविक परीक्षा नहीं लेती है।

(*vii*) माध्यमिक शिक्षा का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। अत: यह छात्रों को व्यावहारिक जीवन का ज्ञान नहीं देती है।

4.2 माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Secondary Education)

"आयोग" ने भारत की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर माध्यमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं–

(*i*) **व्यावसायिक कुशलता में उन्नति** (Improvement of Vocational Efficiency)–माध्यमिक शिक्षा का पहला उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की उन्नति करना होना चाहिए। अत: माध्यमिक शिक्षा में औद्योगिक एवं व्यावसायिक विषयों को स्थान दिया जाना चाहिये। इन विषयों की शिक्षा से छात्रों और देश दोनों का हित होगा। छात्र अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् किसी व्यवसाय को स्वतन्त्र रूप से ग्रहण कर सकेंगे। अत: उनको नौकरी खोजने के लिए इधर-उधर नहीं भटकना पड़ेगा। देश का हित यह होगा कि उसे अपने विभिन्न उद्योगों तथा व्यवसायों के लिये प्रशिक्षित व्यक्ति सरलता से मिल जायेंगे।

(*ii*) **नेतृत्व का विकास** (Development of Leadership)–माध्यमिक शिक्षा का पहला उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की उन्नति करना होना चाहिए। प्रजातन्त्र तभी सफल हो सकता है, जब इन क्षेत्रों से नेतृत्व का दायित्व ग्रहण करने वाले व्यक्ति उपलब्ध हों।

नोट

(*iii*) **जनतन्त्रीय नागरिकता का विकास** (Development of Democratic Citizenship)—माध्यमिक शिक्षा का तीसरा उद्देश्य छात्रों में जनतन्त्रीय नागरिकता का विकास करना होना चाहिये। अत: माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था इस प्रकार की जानी चाहिये, जिससे छात्रों में अनुशासन, देश-प्रेम, सहयोग, सहिष्णुता, स्पष्ट विचार आदि गुणों का विकास हो। इन गुणों से सम्पन्न होकर छात्र इस देश के योग्य नागरिक बनेंगे तथा भारत में धर्म-निरपेक्ष गणतन्त्र की स्थापना में योगदान देंगे। इसी प्रकार की गणतन्त्र की स्थापना करना भारत का उद्देश्य है।

(*iv*) **व्यक्तित्व का विकास** (Development of Personality)—माध्यमिक शिक्षा का चौथा और अन्तिम उद्देश्य छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना होना चाहिये। अत: माध्यमिक शिक्षा का संगठन इस प्रकार किया जाना चाहिये, जिससे छात्रों का साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं कलात्मक विकास हो। इस विकास के फलस्वरूप छात्र अपनी सांस्कृतिक विरासत के महत्व को समझ सकेंगे और उसकी वृद्धि में योगदान दे सकेंगे।

नोट्स माध्यमिक शिक्षा का आयोजन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे छात्र सामाजिक, सांस्कृतिक, औद्योगिक, व्यावसायिक और राजनीतिक क्षेत्रों में नेतृत्व का दायित्व ग्रहण कर सकें।

माध्यमिक शिक्षा का नवीन संगठित स्वरूप (New Organizational Pattern of Secondary Education)—आयोग ने माध्यामिक शिक्षा के संगठन को देश की नवीन परिस्थितियों के लिए अनुपयुक्त बताकर, उसके पुनर्संगठन पर बल दिया है। इस सम्बन्ध में उसने निम्नांकित सुझाव दिये हैं—

(*i*) माध्यमिक शिक्षा की अवधि 7 वर्ष की होनी चाहिए।

(*ii*) माध्यमिक शिक्षा की अवधि निम्नांकित दो स्तरों में विभक्त की जानी चाहिए (*a*) 3 वर्ष का मिडिल या जूनियर माध्यमिक या सीनियर बेसिक स्तर (Middle or Junior Secondary or Senior Basic Stage)। (*b*) 4 वर्ष का उच्चतर माध्यमिक स्तर (Higher Secondary Stage)।

(*iii*) डिग्री कोर्स की अवधि 3 वर्ष कर दी जानी चाहिए।

(*iv*) माध्यमिक शिक्षा 11 से 17 वर्ष तक की अवस्था के बालकों एवं बालिकाओं के लिए होनी चाहिए।

(*v*) वर्तमान इण्टरमीडिएट कक्षाओं को भंग कर दिया जाना चाहिए। उनकी 11वीं कक्षा को हाईस्कूलों से और 12वीं कक्षा को कॉलेजों से सम्बद्ध कर दिया जाना चाहिए।

(*vi*) ग्रामीण स्कूलों में कृषि-शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार किया जाना चाहिये। अत: इन स्कूलों में उद्यान-विज्ञान (Horticulture), पशु-पालन (Animal Husbandry) एवं कुटीर उद्योग-धन्धों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*vii*) बहुउद्देश्यीय स्कूलों (Multi-purpose Schools) की स्थापना की जानी चाहिए। इन स्कूलों में पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण (Diversification of Course) किया जाना चाहिए, ताकि छात्र अपने विभिन्न उद्देश्यों रुचियों और योग्यताओं के अनुसार पाठ्यक्रम का चयन कर सकें।

(*viii*) औद्योगिक क्षेत्रों में टेक्निकल स्कूलों की बहुत बड़ी संख्या में स्थापना की जानी चाहिए।

(*ix*) सब बालिका-विद्यालयों में बालिकाओं को गृह-विज्ञान (Domestic Science) के अध्ययन की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए।

(*x*) बड़े नगरों में प्रौद्योगिकी संस्थानों (Technological Institute) का निर्माण किया जाना चाहिए।

नोट

भाषाओं का अध्ययन (Study of Language)– **"आयोग"** ने मुख्यत: तीन भाषाओं के स्थान एवं अध्ययन के सम्बन्ध में अपने सुझाव दिए हैं; यथा–

(A) **हिन्दी का स्थान**–"आयोग" ने इस बात पर जोर दिया है कि हिन्दी को विद्यालय-स्तर पर अध्ययन का अनिवार्य विषय बनाया जाना चाहिए।

(B) **अंग्रेजी का स्थान**–"आयोग" का कथन है कि अंग्रेजी लगभग सभी राज्यों में माध्यमिक स्तर पर अध्ययन का अनिवार्य विषय है। "आयोग" का मत है कि भविष्य में भी अंग्रेजी को इसी स्थान पर रखा जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में "आयोग" ने निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये हैं–

1. अंग्रेजी भारत के शिक्षित वर्गों की अत्यन्त लोकप्रिय भाषा है।
2. भारत की अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जो स्थिति है, वह अंग्रेजी के अध्ययन का परिणाम है।

(C) **संस्कृत का स्थान**–"आयोग" ने माध्यमिक विषयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत को स्थान दिए जाने के पक्ष में अनेक अकाट्य तर्क दिए हैं यथा–

(*i*) संस्कृत ने धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से व्यक्तियों को सदैव अपनी ओर आकृष्ट किया है। अत: इसकी उपेक्षा करना विवेक का प्रमाण नहीं है।

(*ii*) संस्कृत भारत की अधिकांश भाषाओं की जननी है, अत: इसका ज्ञान अनिवार्य है।

पाठ्यक्रम (Curriculum)–"आयोग" ने पाठ्यक्रम के दोषों का निराकरण करने के विचार से निम्नलिखित सुझााव दिए हैं–

(*i*) पाठ्यक्रम का निर्माण स्थानीय आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

(*ii*) पाठ्यक्रम के विषयों का एक-दूसरे से एवं जीवन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होना चाहिए।

(*iii*) पाठ्यक्रम में पर्याप्त विविधता एवं लचीलापन होना चाहिए, ताकि वह छात्रों की विभिन्न रुचियों एवं आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके।

(*iv*) पाठ्यक्रम का सामाजिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए और छात्रों को इस जीवन की महत्वपूर्ण क्रियाओं के सम्पर्क में लाया जाना चाहिए।

क्या आप जानते हैं आयोग ने कहा कि संस्कृत का अध्ययन करके ही भारत के प्राचीन ग्रन्थों में विद्यमान ज्ञान की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। अत: इसके अध्ययन को प्रोत्साहित करना आवश्यक है।

पाठ्यक्रम के विषय (Subjects of the Curriculum)–"आयोग" ने माध्यमिक शिक्षा की अवधि को जिन दो स्तरों में विभाजित किया है, उनके पाठ्यक्रमों में निम्नांकित विषयों को स्थान दिया है–

(I) **मिडिल या जूनियर माध्यमिक या सीनियर बेसिक स्कूल**–इन तीनों प्रकार के स्कूलों के पाठ्यक्रमों में निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए–

(*a*) भाषाएँ (Languages), (*b*) सामाजिक अध्ययन (Social Studies), (*c*) सामान्य विज्ञान (General Science), (*d*) गणित (Mathematics), (*e*) कला तथा संगीत (Art and Music), (*f*) शिल्प (Craft), और (*g*) शारीरिक शिक्षा (Physical Education)।

(II) **हाई व हायर सेकण्डरी स्कूल**–"आयोग" ने इस बात की सिफारिश की है कि माध्यमिक शिक्षा के उच्चतर स्तर पर पाठ्यक्रम के विषयों का विभिन्नीकरण (Diversification) किया जाना चाहिए, ताकि वे छात्रों की अभिरुचियों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। इस उद्देश्य से "आयोग" ने पाठ्यक्रम के विषयों का दो

नोट

भागों में विभाजन किया है—(1) आन्तरक विषय (Core Subjects), और (2) वैकल्पिक विषय (Optional Subjects)। "आन्तरक विषयों" का अध्ययन सब छात्रों के लिए अनिवार्य होगा। "वैकल्पिक विषयों" के 7 समूह होंगे, जिनमें से छात्रों का किसी एक समूह के विषयों का अध्ययन करना होगा। इन्हीं विषयों में पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण किया गया है। "आयोग" के अनुसार, "आन्तरक" एवं "वैकल्पिक" विषय इस प्रकार हैं—

(1) आन्तरक विषय (Core Subjects)—आन्तरक विषय सभी बालकों एवं बालिकाओं के लिए अनिवार्य है और इस प्रकार हैं—

(A) (*i*) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा या मातृभाषा और शास्त्रीय भाषा (Mother Tongue or Regional Language or Mother Tongue and Classical Language)।

(*ii*) निम्नलिखित में से चुनी जाने वाली कोई एक और भाषा—

(*a*) हिन्दी (उन छात्रों के लिए, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है)।

(*b*) प्रारम्भिक अंग्रेजी (उन छात्रों के लिए, जिन्होंने जूनियर माध्यमिक स्तर पर इसका अध्ययन नहीं किया है)।

(*c*) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा।

(*d*) एक शास्त्रीय भाषा।

(*e*) उच्च अंग्रेजी (उन छात्रों के लिए, जिन्होंने जूनियर माध्यमिक स्तर पर अंग्रेजी का अध्ययन किया है)।

(*f*) अंग्रेजी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक विदेशी भाषा।

(B) (*i*) गणित और सामान्य विज्ञान—इन विषयों की शिक्षा केवल प्रथम दो वर्षों में दी जायेगी।

(*ii*) सामाजिक अध्ययन के इन विषयों की शिक्षा केवल प्रथम दो वर्षों में दी जायेगी।

(C) निम्नलिखित में से कोई एक शिल्प (Craft)—

(*a*) कताई और बुनाई, (*b*) दर्जी का काम, (*c*) मॉडल बनाना, (*d*) कसीदा एवं क्रोशिया का काम (*e*) धातु का काम, (*f*) लकड़ी का काम, (*g*) मुद्रण का काम (Typography), (*h*) उद्यान-विज्ञान, और (*i*) वर्कशॉप-अभ्यास (Workshop Practice)।

(2) वैकल्पिक विषय (Optional Subjects)—पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण वैकल्पिक विषयों में होगा। वैकल्पिक विषयों के निम्नलिखित 7 समूह होंगे। छात्रों को किसी एक समूह के 3 विषयों का अध्ययन करना होगा।

समूह 1. मानव-विज्ञान (Humanities)—(*i*) एक शास्त्रीय भाषा या A में से न ली गई एक भाषा, (*ii*) अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र, (*iii*) संगीत, (*iv*) इतिहास, (*v*) गृह-विज्ञान, (*vi*) भूगोल, (*vii*) मनोविज्ञान और अर्थशास्त्र, (*viii*) गणित।

समूह 2. विज्ञान (Science)—(*i*) रसायनशास्त्र, (*ii*) गणित, (*iii*) भौतिकशास्त्र, (*iv*) शरीर-विज्ञान और स्वास्थ्य-विज्ञान, (*v*) जीवशास्त्र, (*vi*) भूगोल।

समूह 3. प्राविधिक (Technical)—(*i*) व्यावहारिक विज्ञान, (*ii*) व्यावहारिक गणित (Applied Mathematics) और रैखिकीय ड्राइंग (Geometrical Drawing), (*iii*) विद्युत इंजीनियरिंग, (*iv*) मैकेनिकल इंजीनियरिंग।

समूह 4. वाणिज्यिक (Commercial)—(*i*) वाणिज्य-भूगोल या अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र, (*ii*) वाणिज्यिक प्रयोग (Commercial Practice), (*iii*) शार्टहैंड और टाइपिंग (*iv*) बहीखाता।

समूह 5. कृषि (Agriculture)—(*i*) पशु-पालन, (*ii*) कृषि-रसायन (Agricultural Chemistry) और वनस्पति-विज्ञान, (*iii*) सामान्य कृषि, (*iv*) औद्योगिक (Horticulture) और बागवानी।

समूह 6. ललित कलायें (Fine Arts)—(*i*) ड्राइंग और डिजाइन बनाना, (*ii*) मॉडल बनाना, (*iii*) नृत्य, (*iv*) कला का इतिहास, (*v*) चित्रकला, (*vi*) संगीत।

समूह 7. गृह-विज्ञान (Domestic Science)—(*i*) पोषण और पाक-कला (Nutrition & Cookery), (*ii*) गृह-प्रबन्ध और गृह-उपचारण (Home Nursing) (*iii*) गृह-अर्थशास्त्र, (*iv*) मातृ-कला और शिशु-पालन।

पाठ्य-पुस्तकें (Text-Books)–"आयोग" ने पाठ्य पुस्तकों में सुधार करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) एक विषय में एक पाठ्य-पुस्तक निर्धारित करने के बजाए पाठ्य-पुस्तकों की पर्याप्त संख्या निश्चित की जानी चाहिए। विद्यालयों को इन पाठ्य-पुस्तकों में से किसी एक को चुनने का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए।

(*ii*) पाठ्य-पुस्तकों के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए प्रत्येक राज्य में एक "उच्चस्तरीय पाठ्य-पुस्तक-समिति" (High Power Text-Book Committee) का संगठन किया जाना चाहिए।

शिक्षण की प्रावैगिक विधियाँ (Dynamic Methods of Teaching)–"आयोग" के विचारानुसार, माध्यमिक विद्यालयों में प्रयोग की जाने वाली शिक्षण-विधियाँ नीरस एवं निर्जीव हैं। अत: उनके स्थान पर प्रावैगिक अथवा सक्रिय एवं स्फूर्तिपूर्ण शिक्षण-विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। "आयोग" ने इन विधियों का निम्नलिखित प्रकार से स्पष्टीकरण किया है–

(*i*) शिक्षण में मौलिक बातों और कंठस्थ करने के कार्य का कोई स्थान नहीं होना चाहिये। अत: इन पर बल न देकर, शिक्षण इस प्रकार किया जाना चाहिये कि वह उद्देश्यपूर्ण, वास्तविक और साभिप्रायिक हो। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये शिक्षण-विधियों में "क्रिया-विधि" (Activity Method) एवं "योजना-विधि" (Project Method) को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए।

(*ii*) प्रावैगिक शिक्षण-विधियों को लोकप्रिय बनाने के लिए "प्रयोगात्मक एवं प्रदर्शनात्मक" (Experimental and Demonstration) विद्यालयों की विभिन्न स्थानों पर स्थापना की जानी चाहिए।

धार्मिक शिक्षा (Religious Instruction)–"आयोग" का विचार है कि चरित्र के निर्माण में धार्मिक शिक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत: उसने धार्मिक शिक्षा के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) धार्मिक शिक्षा विद्यालय के शिक्षण के समय से पहले या बाद में दी जानी चाहिए।

(*ii*) धार्मिक शिक्षा विद्यालयों में दी जा सकती है।

(*iii*) धार्मिक शिक्षा छात्रों के अभिभावकों की अनुमति प्राप्त करने के बाद दी जानी चाहिए।

निर्देशन तथा परामर्श (Guidance and Counselling)–"आयोग" ने उच्चतर माध्यमिक स्तर पर "पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण" किया है, जिससे छात्रों को अपनी रुचियों के अनुसार विषयों का अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हो किन्तु अनुभवहीन बालक विधियों का चयन करने में गलती कर सकते हैं। अत: उनको निर्देशन और परामर्श दिए जाने की आवश्यकता है। अपनी इस भाषा के आधार पर "आयोग" के निर्देशन तथा परामर्श के सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिए हैं–

(*i*) विद्यालयों में "निर्देशन-अधिकारियों" (Guidance Officers) और "जीविकोपार्जन शिक्षकों" (Career Masters) की नियुक्ति की जानी चाहिए।

(*ii*) छात्रों को व्यवसायों के विषय में सूचना देने के लिए विद्यालय में समय-समय पर "जीविकोपार्जन सम्मेलनों" (Career Conferences) का आयोजन किया जाना चाहिए।

> *टास्क* शिक्षा की प्रावैगिक विधियों से आप क्या समझते हैं?

चरित्र-निर्माण की शिक्षा (Education of Character)–"आयोग" ने चरित्र-निर्माण की शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया है और इसके विषय में निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) छात्रों में उत्तम अनुशासन की भावना का विकास करने के लिए उनमें और शिक्षकों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किए जाने चाहिए।

(*ii*) विद्यालयों में "अतिरिक्त पाठ्यक्रम-क्रियाओं" (Extra-Curricular Activities) एवं "पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाओं" (Co-Curricular Activities) को स्थान दिया जाना चाहिए।

नोट

(iii) सब विद्यालयों में एन.सी.सी., फर्स्ट-एड, स्काउटिंग, सेण्ट जॉन्स एम्बुलैंस एवं जूनियर रेड-क्रॉस की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iv) विद्यालय विस्तृत समाज के अन्दर लघु समाज है। अत: जिन मूल्यों और दृष्टिकोणों का राष्ट्रीय जीवन के लिए महत्व है, उनके विद्यालय-जीवन में प्रतिबिम्बित किया जाना चाहिए।

(v) विद्यालयों में स्वशासन-प्रणाली (System of Self-Government) को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिये।

(vi) 17 वर्ष से कम आयु के छात्रों को राजनीतिक कार्यों से पृथक् रखने के लिए सरकार द्वारा कानून बना दिया जाना चाहिए।

छात्रों का शारीरिक कल्याण (Physical Welfare of Students)—"आयोग" का मत है कि छात्रों के शारीरिक कल्याण के प्रति विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है, क्योंकि वे भावी नागरिक हैं। स्वस्थ नागरिक ही अपने देश का कल्याण कर सकते हैं। "आयोग" ने छात्रों के शारीरिक कल्याण के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिए हैं—

(i) सभी विद्यालयों के सभी छात्रों की एक वर्ष में कम-से-कम एक बार स्वास्थ्य परीक्षा अवश्य की जानी चाहिए।

(ii) छात्रावासों एवं आवासीय विद्यालयों (Residental Schools) में विद्यार्थियों के लिए पौष्टिक तथा सन्तुलन भोजन का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

(iii) सभी राज्यों में "स्कूल-स्वास्थ्य-सेवा" (School Medical Service) की सुसंगठित योजना क्रियान्वित की जानी चाहिए।

(iv) रोगी छात्रों एवं छात्राओं का "विद्यालय-स्वास्थ्य-अधिकारी" (School Health Officer) द्वारा मुफ्त उपचार किया जाना चाहिए।

परीक्षा तथा मूल्यांकन (Examination & Evaluation)—"आयोग" की धारणा है कि प्रचलित परीक्षा-प्रणाली-छात्राओं के वास्तविक ज्ञान का मूल्यांकन करने में असमर्थ है। अत: "आयोग" ने अधोलिखित सुझावों द्वारा एक नवीन परीक्षा-प्रणाली की रूपरेखा प्रदर्शित की है—

(i) माध्यमिक शिक्षा का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम समाप्त करने के पश्चात् केवल एक "सार्वजनिक परीक्षा" (Public Examination) होनी चाहिए।

(ii) बाह्य परीक्षाओं (External Examinations) की संख्या में कमी की जानी चाहिए।

(iii) परीक्षाओं में पूछे जाने वाले प्रश्न निबन्धात्मक ढंग (Essay Type) के न होकर वस्तुनिष्ठ प्रकार (Objective Type) के होने चाहिएं, ताकि परीक्षाओं के "आत्मगत-तत्वों" (Subjective Elements) का अन्त किया जा सके।

(iv) बाह्य एवं आन्तरिक परीक्षाओं का मूल्यांकन अंकों में न किया जाकर प्रतीकों (Symbols) में किया जाना चाहिए।

(v) छात्रों के कार्य का अन्तिम मूल्यांकन करते समय अग्रलिखित को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए—आन्तरिक परीक्षाएँ (Internal Examinations), नियतकालिक परीक्षाएँ (Petiodical Tests) एवं विद्यालय-अभिलेख (School Records)।

अध्यापकों की स्थिति में सुधार (Improvement of Teacher's Status)—"आयोग" का कथन है—"अध्यापकों की स्थिति, वेतन एवं कार्य करने की दशाएँ बहुत ही असन्तोषजनक हैं।" इस बात को ध्यान में रखकर "आयोग" ने उनकी स्थिति में सुधार करने के लिए अनेक सुझाव दिए हैं—

(i) अध्यापकों को उचित वेतन नहीं मिलता है। अत: विशिष्ट समितियों की नियुक्ति करके, उनसे यह सुझाव माँगा जाना चाहिए कि वर्तमान स्थिति में उनका वेतन कितना होना चाहिए।

(ii) अध्यापकों की विशेष कठिनाइयों का समाधान करने और उनकी शिकायतों को सुनने के लिए, "निर्णायक मण्डल" (Arbitration Board) की नियुक्ति की जानी चाहिए।

नोट

(*iii*) देश के माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापकों के चुनाव एवं नियुक्ति की विधि समान होनी चाहिए।

(*iv*) अध्यापकों को विभिन्न सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिएं–उनके बच्चों को नि:शुल्क शिक्षा, उनके लिए विद्यालयों के समीप निवास-स्थान, उनको स्वास्थ्यवर्द्धक स्थानों व शिक्षा के सम्मेलनों में जाने के लिए अवकाश एवं यात्रा के किराये में कमी और चिकित्सालयों में मुफ्त चिकित्सा।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति ········ को की गई।
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग के अध्यक्ष ········ थे।
3. कोठारी आयोग की नियुक्ति ········ को की गई।
4. कोठारी आयोग के अध्यक्ष ········ थे।
5. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने ········ शिक्षा संरचना का सुझाव दिया।

4.3 सारांश (Summary)

- भारत सरकार ने 23 सितम्बर, सन् 1952 को मद्रास-विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. ए. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में **"माध्यमिक-शिक्षा आयोग"** की नियुक्ति की घोषणा की। अध्यक्ष के नाम पर इस "आयोग" को "मुदालियर कमीशन" भी कहा जाता है।
- **"आयोग"** के शब्दों में आयोग के जाँच के विषय थे–"भारत की तत्कालीन माध्यमिक शिक्षा के सब पक्षों की जाँच करना एवं उनके विषय में रिपोर्ट देना और उसके पुनर्गठन एवं सुधार के सम्बन्ध में सुझाव प्रस्तुत करना।"
- "आयोग" के अनुसार, माध्यमिक शिक्षा के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं–
  (*i*) माध्यमिक शिक्षा एकपक्षीय है। अत: यह छात्रों को केवल उच्च शिक्षा के लिए तैयार करती है।
  (*ii*) माध्यमिक शिक्षा नीरस, पुस्तकीय, संकुचित एवं रूढ़िबद्ध है। अत: यह छात्रों के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं करती है।
  (*iii*) माध्यमिक शिक्षा छात्रों में नैतिकता, सहयोग, अनुशासन एवं नेतृत्व के गुणों का विकास नहीं करती है। अत: यह उनको उत्तम नागरिक नहीं बनाती है।
  (*iv*) माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम संकीर्ण है अत: यह छात्रों को अपनी रुचियों और मनोवृत्तियों के अनुसार विषयों का चयन करने का अवसर नहीं देती है।
  (*v*) माध्यमिक शिक्षा छात्रों के चरित्र-निर्माण के प्रति रंचमात्र भी ध्यान नहीं देती है। अत: यह उनमें अनुशासनहीनता की भावना उत्पन्न करती है।
- "आयोग" ने भारत की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर माध्यमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं–
  (*i*) माध्यमिक शिक्षा का पहला उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की उन्नति करना होना चाहिए। अत: माध्यमिक शिक्षा में औद्योगिक एवं व्यावसायिक विषयों को स्थान दिया जाना चाहिये। इन विषयों की शिक्षा से छात्रों और देश दोनों का हित होगा।
  (*ii*) माध्यमिक शिक्षा का दूसरा उद्देश्य छात्रों में नेतृत्व ग्रहण करने की क्षमता का विकास करना होना चाहिए।
  (*iii*) माध्यमिक शिक्षा का तीसरा उद्देश्य छात्रों में जनतन्त्रीय नागरिकता का विकास करना होना चाहिये। अत: माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था इस प्रकार की जानी चाहिये, जिससे छात्रों में अनुशासन, देश-प्रेम सहयोग, सहिष्णुता, स्पष्ट विचार आदि गुणों का विकास हो।

नोट

(*iv*) माध्यमिक शिक्षा का चौथा और अन्तिम उद्देश्य छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना होना चाहिये। अत: माध्यमिक शिक्षा का संगठन इस प्रकार किया जाना चाहिये, जिससे छात्रों का साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं कलात्मक विकास हो। इस विकास के फलस्वरूप छात्र अपनी सांस्कृतिक विरासत के महत्व को समझ सकेंगे और उसकी वृद्धि में योग दे सकेंगे।

- **"आयोग"** ने मुख्यत: तीन भाषाओं के स्थान एवं अध्ययन के सम्बन्ध में अपने सुझाव दिए हैं; यथा–

(A) "आयोग" ने इस बात पर जोर दिया है कि हिन्दी को विद्यालय-स्तर पर अध्ययन का अनिवार्य विषय बनाया जाना चाहिए।

(B) "आयोग" का कथन है कि अंग्रेजी लगभग सभी राज्यों में माध्यमिक स्तर पर अध्ययन का अनिवार्य विषय है। "आयोग" का मत है कि भविष्य में भी अंग्रेजी को इसी स्थान पर रखा जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में "आयोग" ने निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किये हैं–

1. अंग्रेजी भारत के शिक्षित वर्गों की अत्यन्त लोकप्रिय भाषा है।
2. भारत की अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जो स्थिति है, वह अंग्रेजी के अध्ययन का परिणाम है।

(C) "आयोग" ने माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत को स्थान दिए जाने के पक्ष में अनेक अकाट्य तर्क दिए हैं यथा–

(*i*) संस्कृत ने धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से व्यक्तियों को सदैव अपनी ओर आकृष्ट किया है। अत: इसकी उपेक्षा करना विवेक का प्रमाण नहीं है।

(*ii*) संस्कृत भारत की अधिकांश भाषाओं की जननी है, अत: इसका ज्ञान अनिवार्य है।

(*iii*) संस्कृत का अध्ययन करके ही भारत के प्राचीन ग्रन्थों में विद्यमान ज्ञान की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। अत: इसके अध्ययन को प्रोत्साहित करना आवश्यक है।

(I) **मिडिल या जूनियर माध्यमिक या सीनियर बेसिक स्कूल**–इन तीनों प्रकार के स्कूलों के पाठ्यक्रमों में निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए–

(*a*) भाषाएँ (Languages), (*b*) सामाजिक अध्ययन (Social Studies), (*c*) सामान्य विज्ञान (General Science), (*d*) गणित (Mathematics), (*e*) कला तथा संगीत (Art and Music), (*f*) शिल्प (Craft), और (*g*) शारीरिक शिक्षा (Physical Education)।

- "आयोग" का विचार है कि चरित्र के निर्माण में धार्मिक शिक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत: उसने धार्मिक शिक्षा के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) धार्मिक शिक्षा विद्यालय के शिक्षण के समय से पहले या बाद में दी जानी चाहिए।

(*ii*) धार्मिक शिक्षा विद्यालयों में दी जा सकती है।

(*iii*) धार्मिक शिक्षा छात्रों के अभिभावकों की अनुमति प्राप्त करने के बाद दी जानी चाहिए।

- "आयोग" ने चरित्र-निर्माण की शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया है और इसके विषय में निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) छात्रों में उत्तम अनुशासन की भावना का विकास करने के लिए उनमें और शिक्षकों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किए जाने चाहिए।

(*ii*) विद्यालयों में "अतिरिक्त पाठ्यक्रम-क्रियाओं" (Extra-Curricular Activities) एवं "पाठ्यक्रम-सहगामी क्रियाओं" (Co-Curricular Activities) को स्थान दिया जाना चाहिए।

(*iii*) सभी विद्यालयों में एन.सी.सी., फर्स्ट-एड, स्काउटिंग, सेण्ट जॉन्स एम्बुलैंस एवं जूनियर रेड-क्रॉस की व्यवस्था की जानी चाहिए।

नोट

- "आयोग" की धारणा है कि प्रचलित परीक्षा-प्रणाली-छात्राओं के वास्तविक ज्ञान का मूल्यांकन करने में असमर्थ है। अत: "आयोग" ने अधोलिखित सुझावों द्वारा एक नवीन परीक्षा-प्रणाली की रूपरेखा प्रदर्शित की है–

  (*i*) माध्यमिक शिक्षा का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम समाप्त करने के पश्चात् केवल एक "सार्वजनिक परीक्षा" (Public Examination) होनी चाहिए।

  (*ii*) बाह्य परीक्षाओं (External Examinations) की संख्या में कमी की जानी चाहिए।

  (*iii*) परीक्षाओं में पूछे जाने वाले प्रश्न निबन्धात्मक ढंग (Essay Type) के न होकर वस्तुनिष्ठ प्रकार (Objective Type) के होने चाहिए, ताकि परीक्षाओं के "आत्मगत-तत्वों" (Subjective Elements) का अन्त किया जा सके।

  (*iv*) छात्रों के कार्य का अन्तिम मूल्यांकन करते समय अग्रलिखित को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए–आन्तरिक परीक्षाएँ (Internal Examinations), नियतकालिक परीक्षाएँ (Petiodical Tests) एवं विद्यालय-अभिलेख (School Records)।

4.4 शब्दकोश (Keywords)

- **सर्वांगीण–** सम्पूर्ण
- **आन्तरक–** अनिवार्य

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग अथवा मुदलियार आयोग (1952-53) के उद्देश्यों का विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

(*i*) 1952 (*ii*) ए. लक्ष्मण स्वामी मुदालियार

(*iii*) 1964 (*iv*) डी.एस.कोठारी (*v*) 11 + 3।

4.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–5: भारतीय शिक्षा आयोग (1964–66) (Indian Education Commission (1964 - 66))

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
5.1 भारतीय शिक्षा आयोग अथवा कोठारी आयोग (1964–66) (Indian Education Commission or Kothari Commission (1964-66))
5.2 कोठारी आयोग के उद्देश्य एवं सुझाव (Aims and Recommendations of Kothari Commission)
5.3 सारांश (Summary)
5.4 शब्दकोश (Keywords)
5.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
5.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- भारतीय शिक्षा आयोग अथवा कोठारी आयोग द्वारा शिक्षा में सुधार के सुझावों एवं उद्देश्यों का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने देश की शिक्षा को सुनियोजित और सुसंगठित करने का दृढ़ निश्चय किया। उसने यह कार्य विश्वविद्यालयी शिक्षा से आरम्भ किया। इसका प्रमुख कारण यह था कि स्वाधीनता के युग में प्रवेश करने के समय से भारतीय विश्वविद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही थी।

इन परिस्थितियों में समन्वय स्थापित करने के लिए माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी। इसलिए सन् 1948 में "केन्द्रीय-शिक्षा-सलाहकार बोर्ड" ने भारत सरकार को एक आयोग नियुक्त करने का सुझाव दिया।

5.1 भारतीय शिक्षा आयोग अथवा कोठारी आयोग (1964–66) (Indian Education Commission or Kothari Commission (1964-66))

शिक्षा व राष्ट्रीय लक्ष्य (Education and National Objectives)–"आयोग" का मत है–"शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण तथा आवश्यक सुधार यह है कि इसको इस प्रकार परिवर्तित करने का प्रयास किया जाए कि इसका व्यक्तियों के जीवन, आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं से सम्बन्ध स्थापित हो जाये। इस प्रकार, शिक्षा को उस सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों का शक्तिशाली साधन बनाया जाये, जो राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है।"

शिक्षा द्वारा उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए, "आयोग" ने निम्नांकित "पंचमुखी कार्यक्रम" का विचार प्रकट किया है जिसका विवेचन निम्न प्रकार है–

1. शिक्षा व उत्पादन (Education and Productivity)–"आयोग" ने शिक्षा द्वारा उत्पादन में वृद्धि करने के लिए निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(*i*) विज्ञान को कृषि एवं उत्पादन के कार्यों के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए।

(*ii*) उच्च शिक्षा में कृषि-शिक्षा एवं प्राविधिक शिक्षा पर बल दिया जाना चाहिए।

(*iii*) विज्ञान की शिक्षा को विद्यालय-शिक्षा एवं विश्वविद्यालय-शिक्षा के पाठ्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए।

(*iv*) माध्यमिक शिक्षा को अधिक-से-अधिक व्यावसायिक रूप प्रदान किया जाना चाहिए।

(*v*) कार्य-अनुभव (Work-Experience) को सम्पूर्ण शिक्षा का विशिष्ट अंग बनाया जाना चाहिए।

2. सामाजिक व राष्ट्रीय एकता (Social and National Integration)–"आयोग" ने शिक्षा द्वारा सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता का विकास करने के विचार से अधोलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) शिक्षा के सभी स्तरों पर सामाजिक एवं राष्ट्रीय सेवा (Social and National Service) को सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य बना दिया जाना चाहिए।

(*ii*) प्रत्येक शिक्षा-संस्था में सामाजिक एवं सामुदायिक सेवा के कार्यक्रमों को आरम्भ किया जाना चाहिए और प्रत्येक छात्र द्वारा इन कार्यक्रमों में उचित ढंग से भाग लिया जाना चाहिए।

(*iii*) सार्वजनिक शिक्षा के लिए "सामान्य-विद्यालय-प्रणाली" (Common School System) को राष्ट्रीय लक्ष्य माना जाना चाहिए और इस प्रणाली को 2 वर्ष की अवधि में पूर्ण कर दिया जाना चाहिए।

(*v*) मातृभाषा अर्थात् प्रादेशिक भाषा को सब स्तरों पर शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए और इस कार्यक्रम को 10 वर्ष में पूर्ण कर दिया जाना चाहिए।

(*vi*) जिन क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाएँ प्रयोग की जाती हैं, उन क्षेत्रों में इन भाषाओं को यथाशीघ्र प्रशासन की भाषाओं के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।

(*vii*) विश्व की कुछ महत्त्वपूर्ण भाषाओं की शिक्षा देने के लिए कुछ स्कूलों एवं विश्वविद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए।

(*viii*) सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास को विद्यालय-शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना जाना चाहिए।

(*ix*) प्रत्येक जिले में "श्रम एवं सामाजिक सेवा शिविरों" (Labour and Social Service Camps) की नियमित रूप से व्यवस्था की जानी चाहिए और इनमें प्रत्येक छात्र की उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिए।

(*x*) सभी पाठ्यक्रमों में नागरिकता, संविधान के सिद्धान्तों एवं लोकतन्त्रीय समाजवादी समाज के स्वरूप को विशेष स्थान दिया जाना चाहिये।

(*xi*) सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता के विकास में सहायता देने के लिए सरकार द्वारा उपयुक्त स्वरूप को विशेष स्थान दिया जाना चाहिये।

(*xii*) अखिल भारतीय शिक्षा-संस्थाओं में अंग्रेजी को ही शिक्षा का माध्यम रखना चाहिए। किन्तु कुछ समय के पश्चात् अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए।

(*xiii*) रूसी भाषा एवं अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की अन्य भाषाओं के अध्ययन के प्रति विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(*xiv*) बी.ए. एवं एम.ए. के स्तरों पर छात्रों को दो भारतीय भाषाओं के अध्ययन की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए।

(*xv*) अंग्रेजी के शिक्षण एवं अध्ययन को विद्यालय-स्तर से ही प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(3) शिक्षा व प्रजातन्त्र की सुदृढ़ता (Education and Consolidation of Democracy)–"आयोग" ने शिक्षा द्वारा प्रजातन्त्र को सुदृढ़ बनाने के लिए निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

नोट

(*i*) प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को दो उद्देश्यों को सामने रखकर आयोजित किया जाना चाहिए–(*a*) निरक्षरता का उन्मूलन, एवं (*b*) व्यक्ति को नागरिक एवं राष्ट्रीय कुशलता और सामान्य संस्कृति स्तर का उन्नयन।

(*ii*) सभी व्यक्तियों में वैज्ञानिक विचार एवं दृष्टिकोण का और सहिष्णुता, पहलकदमी, जनहित, समाज-सेवा, आत्म-निर्भरता एवं आत्म-अनुशासन के गुणों का विकास किया जाना चाहिये।

(*iii*) 14 वर्ष की आयु तक के बालकों एवं बालिकाओं को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

(*iv*) धर्म, वर्ण, लिंग, जाति एवं स्थिति का भेदभाव किये बिना सभी बालकों एवं बालिकाओं को शिक्षा के समान अवसर दिये जाने चाहिए।

(4) शिक्षा व आधुनिकीकरण (Education and Modernization)–"आयोग" ने शिक्षा द्वारा भारत का आधुनिकीकरण करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) आधुनिकीकरण करने के लिए शिक्षा को महत्त्वपूर्ण साधन बनाया जाना चाहिए और आधुनिकीकरण की प्रगति एवं शैक्षिक प्रसार की गतियों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।

(*ii*) शिक्षा के द्वारा छात्रों में स्वतन्त्र विचार, स्वतन्त्र निर्णय एवं स्वतन्त्र अध्ययन की आदतों का निर्माण किया जाना चाहिए।

(*iii*) आधुनिकीकरण करने के लिए विज्ञान पर आधारित प्रौद्योगिकी (Technology) का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(*iv*) शिक्षा द्वारा छात्रों में उचित मूल्यों एवं दृष्टिकोणों का विकास किया जाना चाहिए।

(5) सामाजिक, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों का विकास (Development of Social, Moral and Spiritual Values)–"आयोग" ने यह विचार प्रकट किया है कि शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों के सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करके, उनके चरित्र का निर्माण किया जाना चाहिए। इन कार्यों में सफलता प्राप्त करने के लिए, "आयोग" ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) प्राथमिक विद्यालयों में इन मूल्यों की शिक्षा रोचक कहानियों द्वारा दी जानी चाहिए।

(*ii*) सभी प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं में सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। यह शिक्षा "विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग" द्वारा दिये गये सुझावों के अनुसार प्रदान की जानी चाहिए।

(*iii*) माध्यमिक विद्यालयों में इन मूल्यों के सम्बन्ध में अध्यापकों एवं विद्यार्थियों में विचार-विनिमय होना चाहिए।

(*iv*) उपर्युक्त दोनों प्रकार के विद्यालयों के वातावरण को सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों से सुसज्जित किया जाना चाहिए। इस कार्य का दायित्व सब शिक्षकों एवं अधिकारियों पर रखा जाना चाहिए।

(*v*) प्रत्येक विश्वविद्यालय में "तुलनात्मक धर्म" (Comparative Religion) नामक विभाग की सृष्टि की जानी चाहिए। इस विभाग द्वारा यह खोज की जानी चाहिए कि इन मूल्यों की प्रभावशाली ढंग से किस प्रकार शिक्षा दी जा सकती है।

क्या आप जानते हैं कोठारी आयोग ने सुझाव दिया कि शिक्षा का आधुनिकीकरण करने के लिए विज्ञान पर आधारित प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाना चाहिए।

II. शिक्षा की संरचना व स्तर (Education Structure and Standards)–"आयोग" ने शिक्षा की नवीन संरचना अर्थात् ढाँचे और शिक्षा-स्तरों के उन्नयन के सम्बन्ध में जो विचार अभिव्यक्त किये हैं, उनका वर्णन निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत है–

(1) विद्यालय-शिक्षा की नवीन संरचना (New Structure of School Education)–"आयोग" ने विद्यालय-शिक्षा के प्रचलित स्वरूप को ध्यान में रखते हुए, इस शिक्षा की नवीन संरचना को इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

नोट

10 वर्ष की सामान्य शिक्षा

2 अथवा 3 वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा,

2 अथवा 3 वर्ष की निम्न माध्यमिक शिक्षा,

3 वर्ष की उच्च प्राथमिक शिक्षा,

4 अथवा 5 वर्ष की निम्न प्राथमिक शिक्षा,

1 से 3 वर्ष की पूर्व-विद्यालय शिक्षा।

(2) संरचना-सम्बन्धी सुझाव (Suggestions Regarding Structure)–"आयोग" ने विद्यालय-शिक्षा की नवीन संरचना के विषय में निम्न सुझाव दिए हैं–

(*i*) सामान्य शिक्षा आरम्भ करने से पूर्व छात्रों को 1 या 3 वर्ष तक की पूर्व-विद्यालय (Pre-School) या पूर्व-प्राथमिक (Pre-Primary) शिक्षा दी जानी चाहिए।

(*ii*) सामान्य शिक्षा (General Education) की अवधि 10 वर्ष की होनी चाहिए और इसमें प्राथमिक एवं निम्न माध्यमिक शिक्षा को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

(*iii*) प्राथमिक शिक्षा की अवधि 7 से 8 वर्ष की होनी चाहिए और इसको अग्रलिखित दो भागों में विभाजित किया जाना चाहिए–(*a*) 4 या 5 वर्ष की निम्न प्राथमिक शिक्षा (Lower Primary Education) और (*b*) 3 वर्ष की उच्च प्राथमिक शिक्षा (Higher Primary Education)।

(*iv*) निम्न माध्यमिक (Lower Secondary) शिक्षा की अवधि 2 या 3 वर्ष की होनी चाहिए।

(*v*) निम्न माध्यमिक स्तर पर छात्रों को अग्रांकित दो प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए–(*i*) 2 या 3 वर्ष की सामान्य शिक्षा, और (*ii*) 1 से 3 वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)।

(*vi*) उच्चतर-माध्यमिक (Higher Secondary) शिक्षा की अवधि 2 या 3 वर्ष की होनी चाहिए।

(*vii*) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्रों को अग्रांकित दो प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए–(*i*) 2 वर्ष की सामान्य शिक्षा, और (*ii*) 1 से 3 वर्ष की व्यावसायिक शिक्षा।

(*viii*) कक्षा 1 में प्रवेश करने की आयु साधारणतः 6 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए।

(*ix*) प्रथम सार्वजनिक बाह्य परीक्षा (First Public External Examination) 10 वर्ष की विद्यालय-शिक्षा के पश्चात् होनी चाहिए।

(*x*) 9वीं कक्षा से पृथक विद्यालय स्थापित किये जाने की प्रचलित विधि का अन्त कर देना चाहिए।

(*xi*) 10वीं कक्षा तक छात्रों को किसी विषय में विशिष्टीकरण (Specialization) की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

(*xii*) माध्यमिक विद्यालय केवल अग्रांकित दो प्रकार के होने चाहिए–(*a*) हाई-स्कूल और (*b*) हायर सेकेण्डरी स्कूल। हाई स्कूलों में शिक्षा की अवधि 10 वर्ष की और हायर सेकेण्डरी स्कूलों में यह अवधि 12 वर्ष की होनी चाहिए।

(3) उच्च शिक्षा की नवीन संरचना (New Structure of Higher Education)–"आयोग" ने उच्च शिक्षा की नवीन संरचना इस प्रकार प्रस्तुत की है–

2 अथवा 3 वर्ष का अनुसन्धान, 2 अथवा 3 वर्ष की द्वितीय डिग्री-कोर्स, 3 वर्ष का प्रथम डिग्री-कोर्स।

(4) संरचना-सम्बन्धी सुझाव (Suggestions Regarding Structure)–"आयोग" ने उच्च शिक्षा की नवीन संरचना के विषय में निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के पश्चात् प्रथम डिग्री-कोर्स की अवधि कम-से-कम 3 वर्ष की होनी चाहिए।

(*ii*) कुछ विश्वविद्यालयों में "ग्रेजुएट स्कूलों" (Graduate Schools) की सृष्टि की जानी चाहिए, जिनमें कुछ विशेष विषयों में 3 वर्ष के स्नातकोत्तर (Post-Graduate) कोर्स की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*iii*) द्वितीय डिग्री-कोर्स की अवधि 2 या 3 वर्ष की होनी चाहिए।

नोट

(5) स्तरों का उन्नयन (Raising of Standards)–"आयोग" ने शिक्षा के सब स्तरों का उन्नयन करने के लिए अधोलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) 10 वर्ष की अवधि में कक्षा 10 के स्तर का इतना उन्नयन कर दिया जाना चाहिए कि वह वर्तमान हायर सेकेण्डरी के स्तर पर पहुँच जाये।

(*ii*) शिक्षा-स्तरों का उन्नयन करने के लिए शिक्षा के विभिन्न अंगों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।

(*iii*) 10 वर्ष की विद्यालय-शिक्षा में गुणात्मक उन्नति की जानी चाहिए, ताकि इस स्तर पर होने वाले अपव्यय (Wastage) में कमी की जा सके।

(*iv*) "विद्यालय-संकुलों" (School Complexes) का यथाशीघ्र निर्माण किया जाना चाहिए। एक संकुल में एक माध्यमिक स्कूल और उसके निकटवर्ती सभी प्राथमिक स्कूल होने चाहिए। प्रत्येक संकुल के सभी स्कूलों द्वारा सामूहिक रूप से स्तरों के उन्नयन के लिए प्रयत्न किये जाने चाहिए।

(*v*) विश्वविद्यालयों की उपाधियों के स्तरों का उन्नयन करने के लिए, इन उपाधियों के पाठ्यक्रम में अधिक उन्नत विषय-वस्तु को स्थान दिया जाना चाहिए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

1. कोठारी शिक्षा आयोग द्वारा सुझाव दिया गया कि .... के स्तर पर छात्रों को दो भारतीय भाषाओं के अध्ययन की सुविधा प्रदान की जायेगी।
2. .... एवं अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की अन्य भाषाओं के अध्ययन के प्रति विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।
3. .... को अधिक से अधिक व्यावसायिक रूप प्रदान किया जाना चाहिए।
4. उच्च शिक्षा में .... एवं प्राविधिक शिक्षा पर बल दिया जाना चाहिए।
5. शिक्षा के आधुनिकीकरण के लिए विज्ञान पर आधारित .... का प्रयोग किया जाना चाहिए।

5.2 कोठारी आयोग के उद्देश्य एवं सुझाव (Aims and Recommendations of Kothari Commission)

शैक्षिक अवसरों की समानता (Equalization of Educational Opportunities)–"आयोग" के शब्दों में–"शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों में समानता स्थापित करना है, ताकि पिछड़े हुए या कम अधिकारों वाले वर्ग एवं व्यक्ति अपनी दशा सुधारने के लिए शिक्षा को साधन के रूप में प्रयोग कर सकें।"

"आयोग" ने शिक्षा के क्षेत्र में दो प्रमुख प्रकार की व्यापक असमानताएँ बताई हैं–(1) शिक्षा के सभी पक्षों एवं स्तरों पर बालकों एवं बालिकाओं की शिक्षा में व्यापक असमानता, और (2) उन्नयन वर्गों, पिछड़े वर्गों, अछूत जातियों, पहाड़ी जातियों एवं आदिवासियों की शिक्षा में व्यापक असमानता। इन दोनों प्रकार की असमानताओं को दूर करने के लिए "आयोग" ने 4 सुझाव दिये हैं–(*i*) निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था, (*ii*) शिक्षा के खर्चों में कमी, (*iii*) छात्रवृत्तियों की व्यवस्था, और (*iv*) छात्रवृत्तियों की योजना। इन चारों सुझावों से सम्बन्धित "आयोग" के विचार निम्न प्रकार हैं–

(1) निःशुल्क शिक्षा (Free Education)–"आयोग" ने निःशुल्क शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार व्यक्त किये हैं–

(*i*) चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त से प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क कर दिया जाना चाहिए।

(*ii*) पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक या उससे पूर्व निम्न माध्यमिक शिक्षा को निःशुल्क कर दिया जाना चाहिए।

नोट

(*iii*) पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त से 10 वर्ष की अवधि में उच्चतर माध्यमिक एवं विश्वविद्यालय शिक्षा को योग्य एवं निर्धन छात्रों के लिए नि:शुल्क कर दिया जाना चाहिए।

(2) शिक्षा के खर्चों में कमी (Reduction in Costs of Education)–"आयोग" ने शिक्षा के खर्चों में कमी करने के लिये निम्नलिखित विचार प्रकट किये हैं–

(*i*) प्राथमिक विद्यालयों के छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें एवं लेखन-सामग्री मुफ्त दी जानी चाहिए।

(*ii*) माध्यमिक विद्यालयों, कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में "पुस्तक-गृहों" (Book-Banks) की व्यवस्था की जानी चाहिए, जहाँ से छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें दी जानी चाहिए।

(*iii*) योग्य छात्रों को पाठ्य-पुस्तकों एवं अन्य आवश्यक पुस्तकों को खरीदने के लिए आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए।

(*iv*) माध्यमिक विद्यालयों एवं उच्च शिक्षा की संस्थाओं के पुस्तकालयों में पाठ्य-पुस्तकें पर्याप्त संख्या में होनी चाहिए, ताकि छात्र उनका प्रयोग कर सकें।

(3) छात्रवृत्तियों की व्यवस्था (Provision for Scholarship)–"आयोग" ने छात्रवृत्तियों के सम्बन्ध में निम्नांकित विचार लिपिबद्ध किए हैं–

(*i*) जब छात्र शिक्षा के एक स्तर से दूसरे स्तर पर पहुँचे, तब इस बात का पूर्ण ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई निर्धन पर योग्य विद्यार्थी छात्रवृत्ति न मिल सकने के कारण अपनी भावी शिक्षा से वंचित न रह जाये।

(*ii*) माध्यमिक स्तर पर 15 प्रतिशत प्रतिभाशाली छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

(*iii*) स्नातकोत्तर स्तर पर सन् 1975-76 तक 25 प्रतिशत छात्रों को और सन् 1985-86 तक 50 प्रतिशत योग्य छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

(*iv*) निम्न प्राथमिक स्तर के उपरान्त शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रवृत्तियों के कार्यक्रम को संगठित किया जाना चाहिए।

(*v*) पूर्व-स्नातक स्तर पर सन् 1975-76 तक 15 प्रतिशत योग्य छात्रों को सन् 1985-86 तक 25 प्रतिशत योग्य छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

(*vi*) उच्चतर प्राथमिक स्तर पर सन् 1975-76 तक 2.5 प्रतिशत प्रतिभाशाली छात्रों को और सन् 1985-86 तक 5 प्रतिशत योग्य छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

(*vii*) विश्वविद्यालय-स्तर पर दो प्रकार की छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जानी चाहिए–(*a*) छात्रावासों में रहकर कॉलेज या विश्वविद्यालय में अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए। इन छात्रों को छात्रवृत्तियों के रूप में इतना धन दिया जाना चाहिए, जिससे शिक्षा से सम्बन्धित सम्पूर्ण प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यय की पूर्ति हो जाये। (*b*) विश्व-स्तरों पर रहकर अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए। इन छात्रों को केवल इतनी आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए जिससे अधिकांश प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यय की पूर्ति हो जाये।

(4) छात्रवृत्तियों की योजनाएँ (Schemes of Scholarship)–"आयोग" ने छात्रवृत्तियों की अनेक प्रकार की योजनाओं के बारे में अपने विचार अंकित किए हैं, यथा–

(*i*) राष्ट्रीय छात्रवृत्तियों की योजना की पूर्ति करने के लिए "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" द्वारा "विश्वविद्यालय-छात्रवृत्तियों" (University of Scholarship) की योजना आरम्भ की जानी चाहिए।

(*ii*) ऋण-छात्रवृत्तियों (Loan Scholarship) की योजना को कुछ सीमा तक सामान्य शिक्षा प्राप्त करने वाले योग्य छात्रों के लिए क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

(*iii*) राष्ट्रीय छात्रवृत्तियों (National Scholarship) की योजना का विस्तार एवं विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए।

(*iv*) असाधारण प्रतिभा के विद्यार्थियों को विदेशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष 500 छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जानी चाहिए।

(*v*) व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education) ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों से विद्यालय-स्तर पर 30 प्रतिशत को एवं कॉलेज स्तर पर 50 प्रतिशत छात्रों को छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जानी चाहिए।

नोट

(*vi*) छात्रवृत्तियों पर किये जाने वाले व्यय को कम करने के लिए विद्यार्थियों को आवागमन एवं अध्ययन-काल में धनोपार्जन की सुविधाएँ दी जानी चाहिए।

(*vii*) उक्त योजना को विज्ञान एवं व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण करने वाले सभी छात्रों के लिए अनिवार्य रूप से लागू किया जाना चाहिए।

आयोग के सुझाव

विद्यालय-शिक्षा का विस्तार (Expansion of School Education)–"आयोग" की धारणा है कि यद्यपि पिछले समय में विद्यालय-शिक्षा का पर्याप्त विस्तार हुआ है, फिर भी देश की आवश्यकताओं को पूर्ण न कर सकने के कारण, उसको सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता है। अपनी इस धारणा के फलस्वरूप "आयोग" ने विद्यालय-शिक्षा के विभिन्न अंगों के विस्तार के विषय में अपने विचार प्रकट किए हैं और सुझाव भी दिए हैं। जिसका विवरण निम्न प्रकार है–

(1) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Pre-Primary Education)–"आयोग" ने पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) प्रत्येक राज्य के "राज्य-शिक्षा-संस्थान" (State Institute of Education) में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए राज्य-स्तर पर केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए।

(*ii*) व्यक्तिगत प्रबन्धकों को उदार आर्थिक सहायता देकर, पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन करने के लिए प्रेरणा दी जानी चाहिए।

(*iii*) प्रत्येक जिले में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने के लिये एक केन्द्र का निर्माण की जानी चाहिए। इस केन्द्र के मुख्य कार्य अग्रांकित होने चाहिएं–(*i*) पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को प्रशिक्षण देना, (*ii*) इन विद्यालयों में कार्य करने वाले शिक्षकों के अध्यापन का निरीक्षण करना और इन शिक्षकों के लिए, "अभिनव-पाठ्यक्रमों" (Refresher Courses) का संचालन करना।

(*iv*) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा में परीक्षण-कार्य (Experimentation) को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि इस शिक्षा के विस्तार के लिए कम खर्चीले उपायों की खोज की जा सके।

(*v*) शिशुओं के "खेल-केन्द्रों" (Play Centres) को प्राथमिक विद्यालयों से सम्बद्ध किया जाना चाहिए।

(*vi*) पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों के कार्यक्रमों में ज्ञानेन्द्रिय-शिक्षा (Sensorial Education) के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की शारीरिक क्रियाओं को स्थान दिया जाना चाहिए।

(2) प्राथमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Primary Education)–"आयोग" ने प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) सन् 1975-76 तक देश के सब बच्चों के लिए 5 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*ii*) सन् 1985-86 तक देश के सब बच्चों के लिए 7 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा की योजना पूर्ण कर दी जानी चाहिए और भारतीय संविधान द्वारा प्रतिपादित लक्ष्य की प्राप्ति हो जानी चाहिए।

(*iii*) जो बालक कक्षा 7 पास करने के समय 14 वर्ष के न हों और अपनी सामान्य शिक्षा के क्रम को जारी न रखना चाहते हों, उनको इस आयु तक उनकी रुचि के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा दी जानी चाहिए।

(*iv*) जो बालक निम्न प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आगे अध्ययन न करना चाहते हों, उनके लिए अल्पकालीन शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*v*) अपव्यय व अवरोधन (Wastage and Stagnation) को अधिक-से-अधिक कम करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिएं।

(*vi*) प्राथमिक शिक्षा का विस्तार करने के लिए प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना इस प्रकार की जानी चाहिए कि लोवर प्राइमरी स्कूल और अपर प्राइमरी स्कूल किसी बालक के घर से क्रमशः 1 और 3 मील से अधिक दूर न हों।

नोट

(3) माध्यमिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Secondary Education)–"आयोग" का मत है कि धनाभाव के कारण कुछ वर्षों तक माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाया जाना सम्भव नहीं है। अत: माध्यमिक शिक्षा का विस्तार निम्नांकित उपायों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए–

(*i*) माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण (Vocationalization) इस प्रकार किया जाना चाहिए कि निम्न माध्यमिक स्तर पर 20 प्रतिशत छात्रों को एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 50 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जा सके।

(*ii*) बालिकाओं, जनजातियों एवं अछूत जातियों में माध्यमिक शिक्षा का प्रसार करने के लिए विशेष योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।

(*iii*) माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन करने के लिए केवल योग्य छात्रों का ही चयन किया जाना चाहिए।

(*iv*) माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या को शिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता के अनुसार निश्चित किया जाना चाहिए।

(*v*) माध्यमिक शिक्षा के अवसरों की समानता स्थापित की जानी चाहिए।

(*vi*) निम्न एवं उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर छात्रों की पूर्णकालीन एवं अल्पकालीन व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

(*vii*) प्रत्येक जिले में माध्यमिक शिक्षा के प्रसार के लिए योजनाएँ तैयार की जानी चाहिए और उनको 10 वर्ष की अवधि में पूर्ण रूप से क्रियान्वित कर दिया जाना चाहिए।

(*viii*) बालिकाओं की शिक्षा का विस्तार करने के लिए आगामी 20 वर्षों में ठोस कदम उठाए जाने चाहिए।

(4) माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण (Vocationalization Secondary Education)–"आयोग" ने माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर विशेष बल दिया है और इसका कारण बताते हुए लिखा है–"माध्यमिक स्कूल के स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण करके, शिक्षा और उत्पादन में सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।"

"आयोग" ने अपने विचार को ध्यान में रखते हुए पहले व्यावसायिक शिक्षा के विषय में सामान्य सुझाव दिए हैं, और उसके बाद निम्न एवं उच्च माध्यमिक स्तरों पर व्यावसायिक शिक्षा के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की है;

(A) सामान्य सुझाव (General Suggestions)–"आयोग" ने व्यावसायिक शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) माध्यमिक शिक्षा का विशेष रूप से अधिक-से-अधिक व्यावसायीकरण किया जाना चाहिए।

(*ii*) उद्योगों के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की माँग की पूर्ति करने के लिए माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक बनाया जाना चाहिए।

(*iii*) निम्न एवं उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर पूर्णकालीन एवं अल्पकालीन व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*iv*) माध्यमिक विद्यालयों को व्यावसायिक बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य-सरकारों को विशेष अनुदान दिए जाने चाहिए।

(*v*) बालिकाओं को व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त की जानी चाहिए।

(B) निम्न माध्यमिक स्तर (Lower Secondary Level)–"आयोग" ने निम्न माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नांकित सिफारिशें की हैं–

(*i*) औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं (Industrial Training Institues) में प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने वाले छात्र प्रवेश कर सकते हैं। इस समय इन संस्थाओं में प्रवेश करने की आयु 15 वर्ष है। इस प्रवेश आयु को कम करके 14 वर्ष कर दिया जाना चाहिए, ताकि प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने वाले छात्रों को इन संस्थाओं में प्रवेश करने के लिए 1 वर्ष तक प्रतीक्षा न करनी पड़े।

नोट

(ii) कुछ छात्र 7वीं या 8वीं कक्षा के बाद अपने पारिवारिक व्यवसाय में प्रवेश करने के लिए या कोई छोटा-मोटा निजी कारोबार करने के लिए विद्यालयों को छोड़ देते हैं। ऐसे छात्रों के लिए विविध प्रकार की अल्पकालीन शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iii) प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने से पूर्व या कुछ समय पश्चात् अनेक बालिकाओं में विवाह हो जाते हैं। ऐसी बालिकाओं के लिए गृह-विज्ञान एवं सामान्य शिक्षा का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

(iv) निम्न माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की संख्या सन् 1986 तक इस स्तर की सम्पूर्ण छात्र-संख्या की लगभग 20 प्रतिशत कर दी जानी चाहिए।

(v) टेक्निकल स्कूलों में पढ़ाए जाने वाले "अन्तिम पाठ्यक्रमों" (Terminal Courses) में विस्तार किया जाना चाहिए, ताकि छात्रों को विभिन्न उद्योगों के लिए प्रशिक्षण प्राप्त हो सके।

(vi) ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक बालक अपने परिवारों के कृषि-सम्बन्धी कार्यों में सहयोग देने के लिए प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के बाद किसी प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं करते हैं। ऐसे बालकों के लिए कृषि-सम्बन्धी पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(C) उच्चतर माध्यमिक स्तर (Higher Secondary Level)**–**"आयोग" ने उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के विषय में निम्नलिखित सिफारिशें की हैं–

(i) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की संख्या सन् 1986 तक इस स्तर की सम्पूर्ण छात्र-संख्या की लगभग 50 प्रतिशत कर दी जानी चाहिए।

(ii) उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में विभिन्न उद्योगों से सम्बन्धित पूर्णकालीन और अल्पकालीन शिक्षा का आयोजन किया जाना चाहिए।

(iii) कृषि एवं इन्जीनियरिंग के कार्यों में संलग्न उन व्यक्तियों के लिए जो अपने ज्ञान का नवीनीकरण करना चाहते हैं कृषि और इन्जीनियरिंग के पॉलिटेक्निकों में संक्षिप्त सघन-पाठ्यक्रमों (Short Condensed Courses) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iv) पॉलिटेक्निकों (Polytechnics) में विभिन्न विषयों के पूर्णकालीन पाठ्यक्रमों की सुविधाओं में विस्तार किया जाना चाहिये।

(v) स्वास्थ्य, वाणिज्य, प्रशासन, लघु-उद्योगों आदि से सम्बन्धित 6 माह से 3 वर्ष तक के पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(vi) विभिन्न उद्योगों में कार्य करने वाले जो व्यक्ति व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण करना चाहते हैं, उन्हें अवकाश दिया जाना चाहिए और उनके लिए "पत्राचार पाठ्यक्रमों" (Correspondence Courses) का कार्यक्रम आरम्भ किया जाना चाहिए।

(vii) कुछ औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाएँ ऐसी हैं, जिनमें 10वीं कक्षा पास करने के बाद ही बालकों का प्रवेश होता है। इन संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में अति तीव्र गति से विस्तार किया जाना चाहिए।

विद्यालय-पाठ्यक्रम (School Curriculum)**–**"आयोग" का मत है कि विद्यालय-पाठ्यक्रम में अनेक दोषों का समावेश हो गया है। इन दोषों को दूर करने और पाठ्यक्रम में सुधार करने के लिए "आयोग" ने विभिन्न कक्षाओं के लिए जो पाठ्यक्रम निर्धारित किये हैं, उनका वर्णन द्रष्टव्य है–

(1) निम्न प्राथमिक स्तर–(*i*) एक भाषा–मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*ii*) वातावरण का अध्ययन (Study of Environment)–कक्षा 3 और 4 में विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन की शिक्षा, (*iii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा (Work-Experience and Social Service), (*iv*) गणित (Mathematics), (*v*) स्वास्थ्य-शिक्षा (Health Education), (*vi*) सृजनात्मक क्रियाएँ (Creative Activities)।

(2) उच्चतर प्राथमिक स्तर–(*i*) दो भाषाएँ–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) हिन्दी या अंग्रेजी, (*ii*) विज्ञान,

(*iii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा, (*iv*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा (Education in Moral and Spiritual Values), (*v*) सामाजिक अध्ययन (इतिहास, भूगोल एवं नागरिक शास्त्र), (*vi*) गणित, (*vii*) कला (Art), (*viii*) शारीरिक शिक्षा (Physical Education)।

(3) **निम्न माध्यमिक स्तर**–(*i*) तीन भाषाएँ–अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में सामान्य रूप से निम्नांकित भाषाएँ होनी चाहिए–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) उच्च या निम्न स्तर की हिन्दी, (*c*) उच्च या निम्न स्तर की अंग्रेजी। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में सामान्य रूप से निम्नांकित भाषाएँ होनी चाहिए–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) अंग्रेजी (या हिन्दी, यदि अंग्रेजी मातृभाषा के रूप में ली गई है), (*c*) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा। (*ii*) इतिहास, भूगोल तथा नागरिक शास्त्र, (*iii*) शारीरिक शिक्षा, (*iv*) गणित, (*v*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, (*vi*) कला, (*vii*) विज्ञान, (*viii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा।

(4) **उच्चतर माध्यमिक स्तर**–(*i*) कोई दो भाषाएँ–जिसमें कोई आधुनिक भारतीय भाषा, कोई आधुनिक विदेशी भाषा एवं कोई शास्त्रीय भाषा सम्मिलित हों, (*ii*) निम्नलिखित में से कोई तीन विषय–(*a*) एक अतिरिक्त भाषा, (*b*) इतिहास, (*c*) भूगोल, (*d*) अर्थशास्त्र, (*e*) तर्कशास्त्र (logic), (*f*) मनोविज्ञान, (*g*) समाजशास्त्र, (*h*) कला, (*i*) भौतिकशास्त्र, (*j*) रसायनशास्त्र, (*k*) गणित, (*l*) जीव-विज्ञान, (*m*) भूगर्भशास्त्र (Geology), (*n*) गृह-विज्ञान (Home Science), (*iii*) शारीरिक-शिक्षा, (*iv*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, (*v*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा, (*vi*) कला, या शिल्प (Art or Craft)।

(5) **त्रिभाषा-सूत्र में संशोधन** (Amendment in the Three-Language Formula)– यह संशोधन निम्नलिखित सिद्धान्तों के आधार पर किया जाना चाहिए–

(*i*) छात्रों के लिए अंग्रेजी का ज्ञान उपयोगी है।

(*ii*) संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी–मातृभाषा के बाद महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करे।

(*iii*) हिन्दी या अंग्रेजी की शिक्षा उस समय आरम्भ की जाये, जब इनके लिए प्रेरणा या आवश्यकता का अनुभव किया जाये।

(*iv*) तीन भाषाओं की शिक्षा प्राप्त करने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त स्तर निम्नस्तर माध्यमिक है।

(*v*) किसी भी स्तर पर चार भाषाओं के अध्ययन को अनिवार्य न बनाया जाये। "आयोग" ने उपरिअंकित सिद्धान्तों के आधार पर त्रिभाषा-सूत्र का संशोधित रूप इस प्रकार प्रस्तावित किया है–

(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय अथवा प्रादेशिक भाषा।

(*b*) संघ की राजभाषा या सह-राजभाषा (जिस समय तक वह है)।

(*c*) एक आधुनिक भारतीय भाषा या यूरोपीय भाषा, छात्र ने पाठ्यक्रम में से चुनी न हो और जो शिक्षा का माध्यम न हो।

(6) **भाषाओं का अध्ययन** (Study of Languages)–"आयोग" ने शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर भाषाओं के अध्ययन के विषय में निम्न विचार दिये हैं–

(*i*) निम्न प्राथमिक स्तर पर छात्रों को साधारणत: एक भाषा का अध्ययन करना चाहिए। यह भाषा मातृभाषा या क्षेत्रीय अथवा प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए।

(*ii*) उच्चतर प्राथमिक स्तर पर छात्रों को दो भाषाओं का अध्ययन करना चाहिए। ये भाषाएँ मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा और उनके राज्य की राजभाषा यह सह-राजभाषा होनी चाहिए।

(*iii*) निम्न माध्यमिक स्तर पर छात्रों को तीन भाषाओं का अध्ययन करना चाहिए। ये भाषाएँ–मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा, राजभाषा या सह-राजभाषा और एक आधुनिक भारतीय भाषा होनी चाहिए।

(*iv*) प्रत्येक राज्य के कुछ चुने हुए विद्यालयों में अंग्रेजी के अलावा अन्य विदेशी भाषाओं की शिक्षा दी जानी चाहिए और छात्रों को उन्हें अंग्रेजी या हिन्दी के बजाए अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(*v*) अहिन्दी क्षेत्रों के कुछ चुने हुए विद्यालयों में आधुनिक भारतीय भाषाओं की शिक्षा दी जानी चाहिए और छात्रों को उन्हें अंग्रेजी या हिन्दी के बजाए अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

(*vi*) संस्कृत या अरबी के समान शास्त्रीय भाषाओं की शिक्षा 8वीं कक्षा से आरम्भ होनी चाहिए, पर इन भाषाओं को वैकल्पिक विषयों में स्थान दिया जाना चाहिए।

(*vii*) शास्त्रीय भाषाओं के अध्ययन के लिए उच्च शिक्षा के केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए।

नोट्स त्रिभाषा-सूत्र के सम्बन्ध में "आयोग" ने लिखा है–यह फार्मूला सन् 1956 में "केन्द्रीय-शिक्षा-सलाहकार बोर्ड" (Central Advisory Board of Education) के द्वारा प्रतिपादित किया गया था और सन् 1961 में मुख्यमन्त्रियों के सम्मेलन में स्वीकार किया गया था। किन्तु व्यावहारिक रूप में इस फार्मूले को सफलता प्राप्त नहीं हुई है और इसका यह कहकर घोर विरोध किया जा रहा है कि इसने पाठ्यक्रम को भाषाओं की दृष्टि से बहुत बोझिल बना दिया है। अत: इस सूत्र में संशोधन किया जाना अनिवार्य है।

शिक्षण-विधियाँ, निर्देशन तथा मूल्यांकन (Teaching Methods, Guidance and Evaluation)–"आयोग" ने विद्यालयों में शिक्षण-विधियों, पाठ्य-पुस्तकों, निर्देशन एवं मूल्यांकन के विषय में अत्यन्त सारगर्भित विचार दिये हैं–

(1) शिक्षण-विधियों में सुधार (Improvement in Teaching Methods)–"आयोग" के मतानुसार, हमारे विद्यालयों में प्रयोग की जाने वाली शिक्षण-विधियाँ अब भी प्राचीन तथा परम्परागत हैं। अत: वे छात्रों की दृष्टि से तनिक भी लाभप्रद नहीं हैं। उनमें सुधार करने के लिए, "आयोग" ने अनेक उपयोगी सुझाव दिए हैं–

(*i*) शिक्षा-संस्थाओं के प्रधानाचार्यों एवं शिक्षा के अधिकारियों को शिक्षण-विधियों में सुधार करने के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना चाहिए।

(*ii*) नवीन शिक्षण-विधियों का प्रसार करने के लिए प्रदर्शनों, वर्कशॉपों, परीक्षणों, सेमीनारों एवं अभिनव-पाठ्यक्रमों के कार्यक्रम आरम्भ किए जाने चाहिएं।

(*iii*) शिक्षण-विधियों में लचीलेपन एवं गतिशीलता के गुणों का समावेश किया जाना चाहिए। इस कार्य के लिए स्वयं शिक्षकों को व्यक्तिगत रूप से कदम उठाने चाहिए।

(*iv*) शिक्षण-विधियों में अनुसन्धान-कार्य को उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

(*v*) शिक्षण-विधियों में गतिशीलता का समावेश करने के लिए अध्यापकों में परीक्षण, पहलकदमी एवं सृजनात्मकता के गुणों का विकास किया जाना चाहिए।

(2) पाठ्य-पुस्तकों में सुधार (Improvement in Text-Books)–"आयोग" का कथन है–"उत्तम पाठ्य-पुस्तकें शिक्षण-स्तर के उन्नयन में अतिशय योगदान देती हैं।"

"आयोग" ने इस बात पर खेद प्रकट किया है कि हमारे देश के विद्यालयों में प्रयोग की जाने वाली पाठ्य-पुस्तकें अत्यन्त निम्न कोटि की हैं। अत: "आयोग" ने उनमें सुधार करने के लिए निम्न विचार दिये हैं–

(*i*) पाठ्य-पुस्तकों को "राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण-परिषद्" (NCERT) के द्वारा निर्धारित किए गए सिद्धान्त के अनुसार तैयार किया जाना चाहिए।

(*ii*) पाठ्य-पुस्तकों को तैयार करवाने एवं उनका मूल्यांकन करने का उत्तरदायित्व राज्य के शिक्षा-विभाग पर होना चाहिए।

(*iii*) प्रत्येक राज्य के पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिए एक विशेष समिति का गठन किया जाना चाहिए।

(*iv*) शिक्षा-विभाग को आकाशवाणी से सम्पर्क स्थापित करके रेडियो द्वारा विभिन्न पाठों के शिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए।

(*v*) पाठ्य-पुस्तकों को तैयार करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक व्यापक योजना का निर्माण किया जाना चाहिए।

(*vi*) पाठ्य-पुस्तकों को लिखने के लिए देश के प्रतिभाशाली व्यक्तियों को पर्याप्त पारिश्रमिक देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(*vii*) पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण-कार्य को राष्ट्रीय स्तर पर करने के लिए शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा एक "स्वायत्त संगठन" (Autonomous Organization) की स्थापना की जानी चाहिए।

(*viii*) शिक्षा-विभाग को स्वयं पाठ्य-पुस्तकों की बिक्री न करके, इस कार्य को विद्यालयों के सहकारी भण्डारों को सौंप देना चाहिए।

(3) प्राथमिक स्तर पर निर्देशन (Guidance at Primary Stage)–"आयोग" का मत है कि निर्देशन का कार्य, प्राथमिक स्तर से ही प्रारम्भ हो जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में "आयोग" के निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं–

(*i*) प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों को प्रशिक्षण-काल में निर्देशन-सम्बन्धी सब बातों का ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।

(*ii*) आगे की शिक्षा के विषयों का चयन करने के लिए विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों की सहायता की जानी चाहिए।

(*iii*) प्राथमिक विद्यालयों में निम्नतम कक्षा से निर्देशन दिए जाने का कार्य आरम्भ किया जाना चाहिए।

(*iv*) अध्यापकों को निर्देशन-कार्य में सहायता देने के लिए व्यावसायिक साहित्य का निर्माण किया जाना चाहिए।

(4) माध्यमिक स्तर पर निर्देशन (Guidance at the Secondary Stage)–"आयोग" ने माध्यमिक स्तर पर छात्रों को निर्देशन प्रदान करने के लिए निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) सभी माध्यमिक विद्यालयों के लिए न्यूनतम निर्देशन का कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए।

(*ii*) प्रत्येक जिले में कम-से-कम एक माध्यमिक विद्यालय में निर्देशन का सघन कार्यक्रम संचालित किया जाना चाहिए।

(*iii*) माध्यमिक विद्यालयों के सभी शिक्षकों को सेवा-काल या प्रशिक्षण-काल में निर्देशन सम्बन्धी जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।

(*iv*) 10 माध्यमिक विद्यालयों के लिए एक परामर्शदाता (Counsellor) की नियुक्ति की जानी चाहिए।

(5) मूल्यांकन (Evaluation)–"आयोग" के अनुसार मूल्यांकन शिक्षा का अभिन्न अंग है और इसका शिक्षा के उद्देश्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अत: मूल्यांकन की विधियाँ वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय एवं व्यावहारिक होनी चाहिए। किन्तु भारत में प्रचलित परीक्षा-प्रणाली में इन गुणों का सर्वथा अभाव है। इस प्रणाली में सुधार करने और इसे उपयोगी बनाने के लिए, "आयोग" ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं"–

(*i*) छात्रों की जिन उपलब्धियों का मापन, लिखित परीक्षाओं द्वारा किया जाना असम्भव है, उनका मापन करने के लिए अन्य विधियों का विकास किया जाना चाहिए।

(*ii*) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन करने के लिए लिखित परीक्षाओं के अलावा मौखिक एवं निदानात्मक (Diagnostic) परीक्षाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए। छात्रों के संचित अभिलेख पत्रों (Cumulative Record Cards) पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

(*iii*) बाह्य परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों में वस्तुनिष्ठ (Objective) प्रश्न देने की प्रथा प्रचलित की जानी चाहिए।

(*iv*) मूल्यांकन की नवीन विधियों को क्रियान्वित करने के लिए कुछ प्रयोगात्मक विद्यालयों (Experimental Schools) की स्थापना की जानी चाहिए। इन विद्यालयों को कक्षा 10 के अपने छात्रों को स्वयं परीक्षा लेने का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए।

(*v*) मूल्यांकन की नवीन धारणा के अनुसार लिखित परीक्षाओं में सुधार करने के लिए प्रयत्न किये जाने चाहिए, ताकि वे छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों का विश्वसनीय ढंग से माप कर सकें।

नोट

(*vi*) निम्न-प्राथमिक स्तर पर मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य छात्रों की मूलभूत कुशलताओं में सुधार करना और उनमें अच्छी आदतों एवं अभिवृत्तियों का विकास करना होना चाहिए।

(*vii*) प्राथमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने पर जिले के शिक्षा-अधिकारी द्वारा छात्रों की बाह्य परीक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। परीक्षा में उत्तीर्ण होने वाले छात्रों को सर्टिफिकेट दिए जाने चाहिए।

(*viii*) आन्तरिक जाँचों (Internal Assessment) को इतना व्यापक बना दिया जाना चाहिए कि उनकी सहायता से छात्रों के सभी पक्षों का मूल्यांकन किया जा सके। बाह्य परीक्षाओं के साथ-साथ इन जाँचों को भी प्रमाणपत्र प्रदान करने का आधार बनाया जाना चाहिए।

उच्च शिक्षा (Higher Education)–"आयोग" ने उच्च शिक्षा के लगभग सभी अंगों के विषय में महत्त्वपूर्ण विचार अंकित किए हैं–

(1) विश्वविद्यालयों के लक्ष्य (Objectives of Universities)–"आयोग" के मतानुसार, आधुनिक भारतीय विश्वविद्यालयों के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित होने चाहिए–

(*i*) सत्य की खोज के लिए साहस एवं निर्भरता के कार्य करना।

(*ii*) समानता एवं सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करना।

(*iii*) नवीन खोजों एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर प्राचीन ज्ञान का विश्लेषण करना।

(*iv*) प्रतिभाशाली नवयुवकों की खोज करना और उनको अपनी शक्तियों एवं प्रतिभाओं का विकास करने में सहायता देना।

(*v*) नवीन ज्ञान की खोज एवं उसका विकास करना।

(*vi*) जीवन के सभी क्षेत्रों में उचित प्रकार का नेतृत्व करने वाले व्यक्तियों को सहायता प्रदान करना।

(*vii*) सामाजिक एवं सांस्कृतिक विभिन्नताओं को कम करना।

(*viii*) राष्ट्रीय चेतना को विकसित करने के लिए कार्य करना।

(2) नवीन विश्वविद्यालय की स्थापना (Establishment of New Universities)–"आयोग" का मत है कि नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना करने के समय निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाना चाहिए–

(*i*) कोई नवीन विश्वविद्यालय "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" की सहमति के बिना स्थापित नहीं किया जाना चाहिए।

(*ii*) नवीन विश्वविद्यालय की स्थापना तभी की जानी चाहिए जब इस बात का पूरा भरोसा हो कि उससे शिक्षा के स्तर में उन्नति होगी, उसके लिए योग्य शिक्षक उपलब्ध होंगे और उसमें अच्छे स्तर का शिक्षण एवं अनुसन्धान-कार्य किया जायेगा।

(*iii*) नवीन विश्वविद्यालय सामान्य रूप से उस स्थान पर स्थापित नहीं किए जाने चाहिए, जहाँ कुछ समय से कोई विश्वविद्यालय कार्य कर रहा है।

(*iv*) जिन स्थानों पर अनेक स्नातकोत्तर कॉलेज कार्य कर रहे हैं, उनको संगठित करके विश्वविद्यालयों का रूप प्रदान किया जाना चाहिए।

(3) वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास (Development of Major Universities)–वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के विषय में "आयोग" ने अपने विचार इस प्रकार उपस्थित किये हैं–"उच्च शिक्षा में सबसे महत्त्वपूर्ण सुधार कुछ वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास करना है, जिनमें सर्वोत्तम प्रकार का स्नातकोत्तर-कार्य एवं अनुसन्धान सम्भव होगा और जिनके स्तर की संसार के किसी भाग में इस प्रकार की सर्वोत्तम संस्थाओं के स्तर से तुलना की जा सकेगी। "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" को जल्दी-से-जल्दी वर्तमान विश्वविद्यालयों में से लगभग 6 विश्वविद्यालयों को वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के रूप में विकसित करने के लिए चुन लेना चाहिए। इनमें से 1 प्रौद्योगिकी का और 1 कृषि का होना चाहिए। वरिष्ठ विश्वविद्यालयों में असाधारण क्षमता एवं अध्यवसाय के छात्र एवं अध्यापक होने चाहिए।"

"आयोग" के अनुसार वरिष्ठ विश्वविद्यालयों का विकास करने में निम्नलिखित बातों की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए–

नोट

(*i*) वरिष्ठ विश्वविद्यालयों में "उच्च अध्ययन-केन्द्रों के समूहों" (Clusters of Advanced Centres) की स्थापना की जानी चाहिए।

(*ii*) वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के व्यय का भार "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" को वहन करना चाहिए।

(*iii*) वरिष्ठ विश्वविद्यालयों के अध्यापकों की नियुक्ति राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय आधारों पर की जानी चाहिये। यदि आवश्यक हो, तो चुने जाने वाले अध्यापकों को अग्रिम वेतन वृद्धि या विशेष वेतन-क्रम दिये जाने चाहिए। इन अध्यापकों को अनुसन्धान करने के लिए सभी सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

(4) कॉलेजों व विश्वविद्यालयों में सुधार (Improvement in Colleges and Universities)–"आयोग" ने वर्तमान कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में सुधार के लिए निम्नांकित सुझाव दिए हैं–

(*i*) विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध कॉलेजों का उनके कार्य के आधार पर वर्गीकरण किया जाना चाहिए।

(*ii*) वरिष्ठ विश्वविद्यालयों को दूसरे विश्वविद्यालयों एवं उनसे सम्बद्ध कॉलेजों के लिये सुयोग्य अध्यापक प्रदान करने चाहिए।

(*iii*) विश्वविद्यालयों एवं उनसे सम्बद्ध कॉलेजों में समय-समय पर विभिन्न विषयों के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं वैज्ञानिकों को आमन्त्रित करके, सेमिनारों एवं अनुसन्धान कार्यों का आयोजन करना चाहिए।

(*iv*) यदि किसी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कोई असाधारण कॉलेज है, तो उसे "स्वायत्त कॉलेज" (Autonomous College) बना दिया जाना चाहिए।

(*v*) विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग को विश्वविद्यालयों में "उच्च-अध्ययन केन्द्रों" की स्थापना करने के लिए उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता देनी चाहिए।

(*vi*) विश्वविद्यालयों एवं उनसे सम्बद्ध कॉलेजों को पहली बार नियुक्त किये जाने वाले अपने अध्यापकों को कुछ समय के लिए वरिष्ठ विश्वविद्यालयों में भेजना चाहिए ताकि वे वहाँ अपने विषयों से सम्बन्धित नवीनतम तथ्यों एवं विचारों का ज्ञान प्राप्त कर लें।

(5) शिक्षण में सुधार (Improvement in Teaching)–"आयोग" ने विश्वविद्यालयों एवं उनसे सम्बद्ध कॉलेजों में शिक्षण में सुधार करने के विचार से अधोलिखित सुझाव दिए हैं–

(*i*) छात्रों में प्रचलित निष्क्रिय रटने की प्रवृत्ति को निरुत्साहित किया जाना चाहिए और उनमें मौलिक चिन्तन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(*ii*) औपचारिक कक्षा-कार्य और प्रयोगशाला कार्य के घण्टों में कमी की जानी चाहिए। छात्रों द्वारा इस प्रकार बचने वाले समय का प्रयोग एक निर्देशक (Instructor) के मार्गदर्शन में स्वाध्याय, लेखन-कार्य, समस्या-समाधान, अनुसन्धान-कार्य आदि के लिए किया जाना चाहिए।

(*iii*) सत्र (Term) के मध्य में किसी अध्यापक को एक संस्था को छोड़कर दूसरी संस्था में जाने की आज्ञा नहीं दी जानी चाहिए।

(*iv*) शिक्षण-विधियों में सुधार करने के लिए, "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" द्वारा एक विशेष समिति की नियुक्ति की जानी चाहिए।

(*v*) कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में उत्तम पुस्तकालयों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*vi*) व्याख्यान के बाद उसकी सामग्री को याद करने के लिए छात्रों को 45 मिनट का समय दिया जाना चाहिए।

(*vii*) नये अध्यापकों की नियुक्तियाँ गर्मी की छुट्टियों में कर दी जानी चाहिए, ताकि नियुक्त किया जाने वाला प्रत्येक अध्यापक सत्र के आरम्भ से ही शिक्षण-कार्य करने लगे।

(*viii*) किसी भी शिक्षक को एक सत्र में 7 दिन से अधिक का अवकाश नहीं दिया जाना चाहिए।

नोट

(6) मूल्यांकन में सुधार (Improvement in Evaluation)–"आयोग" ने मूल्यांकन में सुधार करने के लिए निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं–

(*i*) शिक्षण विश्वविद्यालयों में बाह्य परीक्षाओं की प्रणाली को समाप्त करके स्वयं अध्यापकों द्वारा "आन्तरिक तथा क्रमिक मूल्यांकन" (Internal and Continuous Evaluation) की प्रणाली का प्रचलन किया जाना चाहिए।

(*ii*) विश्वविद्यालयों के अध्यापकों को सेमिनारों, वर्कशॉपों एवं विचार-सम्मेलनों का आयोजन करके, मूल्यांकन की नवीन एवं उन्नत विधियों की जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।

(*iii*) एक परीक्षक को 1 वर्ष में 500 से अधिक उत्तर-पुस्तिकाएँ जाँचने के लिए नहीं दी जानी चाहिए।

(*iv*) "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" को विश्वविद्यालयों की सहायता से "केन्द्रीय-परीक्षा-सुधार यूनिट" (Central Examination Reform Unit) का निर्माण करना चाहिए।

(*v*) सम्बद्धीकरण विश्वविद्यालयों में बाह्य परीक्षाओं के साथ-साथ आन्तरिक जाँचों (Internal Assessments) का भी प्रयोग किया जाना चाहिए।

(*vi*) परीक्षकों को उत्तर-पुस्तिकाओं की जाँच करने के लिये किसी प्रकार का पारिश्रमिक नहीं दिया जाना चाहिए।

(7) शिक्षा का माध्यम (Medium of Education)–"आयोग" ने कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में शिक्षा के माध्यम के बारे में निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(*i*) क्षेत्रीय अथवा प्रादेशिक भाषाओं (Regional Language) को 10 वर्ष की अवधि में विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम बना दिया जाना चाहिए।

(*ii*) विश्वविद्यालयों एवं सम्बद्ध कॉलेजों में छात्रों को अंग्रेजी का अध्ययन करने के लिए विशेष सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिएं।

(*iii*) पूर्व स्नातक स्तर पर शिक्षा का माध्यम यथासम्भव क्षेत्रीय भाषाएँ और स्नातकोत्तर स्तर पर शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होना चाहिए।

(*iv*) उच्च शिक्षा की संस्थाओं में कार्य करने वाले सभी शिक्षकों को यथासम्भव दो भाषाओं का ज्ञान होना चाहिये।

(8) चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली (System of Selective Admission)–"आयोग" का मत है कि भविष्य में जिस अनुपात में उच्च शिक्षा की माँग में वृद्धि होगी, उस अनुपात में उच्च शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार करना सम्भव नहीं होगा। अत: जनबल की आवश्यकता को ध्यान में रखकर "चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली" का प्रयोग किया जाना अनिवार्य है। इस प्रणाली की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए, **"आयोग"** ने लिखा है–"सामान्य रूप में यह होता है कि श्रेष्ठ क्षमताओं वाले थोड़े-से छात्रों को उच्च शिक्षा की संस्थाओं में प्रवेश नहीं मिल पाता है और उनमें छात्रों की उस विशाल संख्या का प्रवेश हो जाता है, जो उच्च शिक्षा के लिये पूरी तरह से तैयार नहीं रहते हैं।" इस दोष का निवारण करने के लिये, आयोग ने चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली के प्रयोग पर बल दिया है और उसके सम्बन्ध में निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(*i*) विश्वविद्यालयों में प्रवेश चाहने वाले छात्रों में से योग्यतम छात्रों का ही चुनाव किया जाना चाहिये।

(*ii*) जब तक प्रवेश-सम्बन्धी नवीन विधियों की खोज न हो जाये तब तक परीक्षाओं में प्राप्त होने वाले अंकों को प्रवेश का आधार बनाया जाना चाहिए।

(*iii*) विश्वविद्यालयों द्वारा प्रवेश-योग्यता के नियमों का निर्माण किया जाना चाहिये।

(*iv*) उच्च शिक्षा की संस्थाओं में विद्यार्थियों की संख्या का निश्चय इन संस्थाओं में उपलब्ध शिक्षक-संख्या और शिक्षण-सुविधाओं के आधार पर किया जाना चाहिए।

(9) विश्वविद्यालय स्वायत्तता (University Autonomy)–विश्वविद्यालय स्वायत्तता की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए **"आयोग"** ने लिखा है–"यह स्वीकार किया जाना आवश्यक है कि स्वाधीनता के अभाव में विश्वविद्यालय अपने शिक्षण, अनुसन्धान एवं समाज-सेवा के मुख्य कार्यों को कुशलतापूर्वक नहीं कर सकते हैं।"

"आयोग" ने निम्नांकित क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता का समर्थन किया है–छात्रों का चुनाव, शिक्षकों की नियुक्ति एवं पदोन्नति और पाठ्य-विषयों, शिक्षण-विधियों एवं अनुसन्धान-कार्य के क्षेत्रों एवं समस्याओं का निर्धारण। इन क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों की स्वाधीनता को ध्यान में रखते हुए, "आयोग" ने निम्नलिखित विचार प्रकट किए हैं–

(*i*) विश्वविद्यालयों को अपने विभागों को कार्य करने की पर्याप्त स्वतन्त्रता देनी चाहिए।

(*ii*) प्रत्येक विभाग के अध्यक्ष की अधीनता में एक प्रबन्ध समिति का निर्माण किया जाना चाहिए। इस समिति को व्यापक-आर्थिक एवं प्रशासकीय शक्तियों से सम्पन्न किया जाना चाहिए।

(*iii*) विश्वविद्यालयों को कॉलेजों की स्वतन्त्रता का उतना ही आदर करना चाहिए, जितना वे अपनी स्वतन्त्रता से करते हैं।

(*iv*) विश्वविद्यालयों को अपनी स्वाधीनता को बनाये रखने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए उनको अपने बौद्धिक एवं सार्वजनिक कार्यों को सदैव तत्परता से करना चाहिए।

(*v*) प्रत्येक कॉलेज में प्रधानाचार्य की अध्यक्षता में एक केन्द्रीय समिति का संगठन किया जाना चाहिए, जिसके द्वारा कॉलेज की सामान्य समस्याओं एवं कठिनाइयों का अध्ययन किया जाना चाहिए।

(*vi*) सरकार, विश्वविद्यालयों, "विश्वविद्यालय अनुदान आयोग" एवं "अंतर-विश्वविद्यालय-परिषद्" को संयुक्त रूप से अग्रांकित कार्य करने चाहिए–विभिन्न प्रश्नों पर विचार-विमर्श करना, प्रवेश दिये जाने वाले छात्रों की संख्या निश्चित करना एवं प्रयोगात्मक अनुसन्धान की समस्याओं का समाधान करने के लिए उपाय खोजना।

(*vii*) विश्वविद्यालयों को अपने प्रशासन में इस सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए कि श्रेष्ठ विचारों का जन्म साधारणत: निम्न स्तरों में होता है।

(*viii*) विश्वविद्यालयों की "साहित्यिक परिषदों" (Academic Councils) एवं सभाओं (Courts) में छात्र-प्रतिनिधियों की उपयुक्त संख्या को स्थान दिया जाना चाहिए।

(*ix*) प्रत्येक कॉलेज के प्रत्येक विभाग में छात्रों एवं अध्यापकों की संयुक्त समितियों (Joint Committees) का निर्माण किया जाना चाहिए।

(*x*) "विश्वविद्यालय अनुदान आयोग", "अन्तर-विश्वविद्यालय-परिषद्" (Inter University Board) एवं शिक्षित व्यक्तियों द्वारा विश्वविद्यालय-स्वाधीनता के पक्ष में जनमत का निर्माण किया जाना चाहिए।

टास्क विश्वविद्यालयी स्तर पर चयनात्मक प्रवेश प्रणाली से आप क्या समझते हैं?

स्त्री-शिक्षा (Women's Education)–स्त्री-शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए "आयोग" ने लिखा है–"हमारे मानव-साधनों के पूर्ण विकास, परिवारों की उन्नति तथा शैशवावस्था के वर्षों में अत्यधिक सरलता से प्रभावित होने वाले बच्चों के चरित्र का निर्माण करने के लिए, स्त्रियों की शिक्षा का महत्व पुरुषों की शिक्षा से भी अधिक है।" "आयोग" ने स्त्री-शिक्षा के निम्न अंगों के विषय में अपने विचारों को लेखबद्ध किया है।

(1) प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा (Primary and Secondary Education)–"आयोग" ने बालिकाओं की प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के विषय में निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(*i*) माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के विस्तार की गति इतनी तीव्र कर दी जानी चाहिए जिससे 20 वर्ष के अन्त में निम्न माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं और बालकों की संख्या का अनुपात संख्या 1 : 3 और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 1 : 2 हो जाये।

(*ii*) भारतीय संविधान में अंकित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा का अधिक-से-अधिक विस्तार किया जाना चाहिए।

नोट

(iii) बालिकाओं के लिए पृथक विद्यालयों एवं छात्रावासों और छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(2) उच्च शिक्षा (Higher Education)–"आयोग" ने बालिकाओं एवं स्त्रियों की उच्च शिक्षा के विषय में निम्नांकित सिफारिशें की हैं–

(i) स्त्रियों के लिए उचित प्रकार के और मितव्ययी छात्रावासों की स्थापना की जानी चाहिए।

(ii) एक या दो विश्वविद्यालयों में स्त्री-शिक्षा से सम्बन्धित "अनुसन्धान यूनिटों" (Research Units) की सृष्टि की जानी चाहिए।

(iii) जिन स्थानों में माँग है, वहाँ स्त्रियों के लिये पृथक् पूर्व-स्नातक कॉलेजों का निर्माण किया जाना चाहिए।

(iv) स्त्रियों के लिए पर्याप्त छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(v) स्त्रियों के लिए पृथक् स्नातकोत्तर कॉलेजों की स्थापना नहीं की जानी चाहिए।

(vi) शिक्षा, गृह-विज्ञान एवं सामाजिक कार्य (Social Work) के पाठ्य-विषयों का विस्तार करके उनको समुन्नत बनाया जाना चाहिए।

(3) पाठ्यक्रम (Curriculum)–"स्त्री-शिक्षा की राष्ट्रीय समिति" द्वारा श्रीमती हंसा मेहता की अध्यक्षता में नियुक्त की जाने वाली समिति के विचारानुसार बालकों और बालिकाओं के पाठ्यक्रम में अन्तर नहीं होना चाहिए। "शिक्षा-आयोग" हंसा मेहता समिति (Hansa Mehta Committee) के विचारों से सहमत हैं। फिर भी, "आयोग" ने बालिकाओं के लिए विभिन्न पाठ्यक्रम के विषय में निम्नांकित विचार व्यक्त किए हैं–

(i) कक्षा 10 के अन्त तक सब बालकों एवं बालिकाओं के लिए समान पाठ्यक्रम होना चाहिए और उनको केवल कार्य-अनुभव अथवा भाषा में पृथक चुनाव करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

(ii) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं को गृह-विज्ञान की शिक्षा दी जानी चाहिए, पर उनके लिए यह विषय अनिवार्य नहीं बनाया जाना चाहिए।

(iii) माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं को विज्ञान या गणित का अध्ययन करने के लिए विशेष प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

(iv) बालिकाओं को संगीत एवं कलाओं की शिक्षा देने के लिए अधिक उत्तम व्यवस्था की जानी चाहिए।

(4) स्त्री-शिक्षा का विस्तार (Expansion of Women's Education)–**"आयोग"** ने स्त्री-शिक्षा के विस्तार के लिए निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(i) स्त्री-शिक्षा का प्रसार करने के लिए कुछ वर्षों तक इसे शिक्षा के सम्पूर्ण कार्यक्रम का अभिन्न एवं महत्वपूर्ण अंग बनाया जाना चाहिए।

(ii) स्त्रियों और पुरुषों की शिक्षा के मध्य जो विशाल अन्तर उत्पन्न हो गया है, उसे समाप्त करने के लिए विशेष योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।

(iii) विवाहित स्त्रियों के लिए अल्पकालीन और अविवाहित स्त्रियों के लिए पूर्णकालीन रोजगार की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iv) स्त्री-शिक्षा के विस्तार के लिए उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए।

(v) बालिकाओं एवं स्त्रियों के लिए अल्पकालीन व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(vi) स्त्री-शिक्षा के मार्ग से समस्त बाधाओं को हटाने के लिए ठोस एवं निश्चित कदम उठाये जाने चाहिए।

(vii) स्त्री-शिक्षा का सतर्कतापूर्वक निरीक्षण करने के लिए केन्द्र और राज्य दोनों स्तरों पर शक्तिशाली प्रशासकीय संगठनों का निर्माण किया जाना चाहिए।

प्रौढ़ शिक्षा (Adult Education)–"आयोग" ने प्रौढ़ शिक्षा के विषय में जो विचार व्यक्त किए हैं, उनका वर्णन क्रमबद्ध शीर्षकों के अन्तर्गत निम्न प्रकार है–

(1) प्रौढ़ शिक्षा की आवश्यकता (Need of Adult Education)–**"आयोग"** ने प्रौढ़ शिक्षा का विस्तार में वर्णन

नोट

किया है। **"आयोग"** के अनुसारं–"विद्यालय-शिक्षा के बाद शिक्षा का अंत नहीं होता है, क्योंकि शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। आज के वयस्क को तीव्र गति से परिवर्तित होने वाले संसार की और समाज की बढ़ती हुई जटिलताओं की जानकारी आवश्यक है। जिन व्यक्तियों ने सर्वोत्तम प्रकार की शिक्षा प्राप्त की है, उनके लिए भी जीवन में शिक्षा की आवश्यकता है।" अत: वयस्क शिक्षा का संगठन अनिवार्य है।

"आयोग" के अनुसार–"जो देश आर्थिक उन्नति, सामाजिक परिवर्तन एवं राष्ट्रीय सुरक्षा चाहता है, उसे अपने वयस्क नागरिकों को विकास कार्यक्रमों में कुशलता एवं बुद्धिमता से भाग लेने की शिक्षा देनी चाहिए। यह बात भारत के लिए विशेष रूप से सत्य है, क्योंकि यहाँ के विशाल जनसमूहों को विद्यालयों में किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त नहीं हुई है और जिनको शिक्षा प्राप्त भी हुई है, वह विकास-कार्यक्रमों के लिए व्यर्थ है। जो कृषक, भूमि को जोतता है, उसे भूमि की बनावट का ज्ञान होना चाहिए। जो श्रमिक मशीन को चलाता है, उसे मशीन के अंगों का ज्ञान होना चाहिए। कृषकों, श्रमिकों आदि को अपने कार्यों का ज्ञान नहीं है।" अत: उनको ज्ञान प्रदान करने के लिए वयस्क-शिक्षा की व्यवस्था की जानी आवश्यक है।

"आयोग" के अनुसार–"कोई भी राष्ट्र अपनी सुरक्षा के भार को केवल पुलिस तथा सेना को नहीं सौंप सकता है। वस्तुत: राष्ट्रीय सुरक्षा बहुत बड़ी सीमा तक नागरिकों की शिक्षा, विभिन्न कार्यक्रमों के उनके ज्ञान, कुशलतापूर्वक भाग लेने की क्षमता पर आधारित रहती है।" अत: नागरिकों में इन गुणों का विकास करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम आवश्यक है।

"आयोग" ने भारत में प्रौढ़-शिक्षा की आवश्यकता के दो मूलभूत कारण बताये हैं–पहला, भारत के 70 प्रतिशत व्यक्ति निरक्षर हैं, जिनको साक्षर बनाया जाना आवश्यक है, दूसरा, भारत-जनतन्त्रीय गणतन्त्र है। अत: उसका कर्त्तव्य प्रत्येक वयस्क-नागरिक को ऐसी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करना है, जो वह प्राप्त करना चाहता है और जो उसे अपनी व्यक्तिगत उन्नति, व्यावसायिक प्रगति और सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यों में सक्रिय भाग लेने के लिए प्राप्त करनी चाहिए।

(2) प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम (Programme of Adult Education)–"आयोग" ने प्रौढ़ शिक्षा के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यक्रमों को स्थान दिया है–

निरक्षरता का उन्मूलन (Liquidation of Illiteracy)–"आयोग" ने निरक्षरता का उन्मूलन करने के लिए अधोलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) सभी सम्भव विधियों का प्रयोग करके 20 वर्ष की अवधि में निरक्षरता का पूर्ण उन्मूलन कर दिया जाना चाहिए।

(*ii*) निरक्षरता का उन्मूलन करने के लिए विद्यालयों को सामुदायिक जीवन के केन्द्रों का रूप प्रदान किया जाना चाहिए।

(*iii*) साक्षरता को कायम रखने के लिए पुस्तकालयों की स्थापना की जानी चाहिए, पठन-सामग्री का निर्माण किया जाना चाहिए एवं "अनुसरण कार्यक्रम" (Follow-up Programme) क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

(*iv*) ग्रामों में निवास करने वाली स्त्रियों को साक्षर बनाने के लिए "ग्राम-सेविकाएँ" (Village-Sisters) नियुक्त की जानी चाहिए।

(*v*) सामान्य स्त्रियों को साक्षर बनाने के लिए "केन्द्रीय समाज-कल्याण-परिषद्" (Central Social) द्वारा "संक्षिप्त पाठ्यक्रमों" (Condensed Courses) की व्यवस्था होनी चाहिए।

(*vi*) निरक्षरता की वृद्धि को रोकने के लिए निम्नांकित उपायों का प्रयोग किया जाना चाहिए–

(*a*) 6-11 वर्ष-वर्ग के सब बच्चों के लिए 5 वर्ष की सार्वभौमिक शिक्षा की व्यवस्था।

(*b*) 11-14 वर्ष-वर्ग के उन बच्चों के लिए अल्पकालीन शिक्षा की व्यवस्था, जिन्होंने बीच में विद्यालय जाना बन्द कर दिया हो या जिन्होंने विद्यालय जाने की सुविधा से लाभ उठाया हो।

(*c*) 15-30 वर्ष-वर्ग के पुरुषों एवं स्त्रियों के अल्पकालीन एवं व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था।

नोट

अनवरत शिक्षा (Continuation Education)—**"आयोग"** ने साक्षर वयस्कों की साक्षरता को बनाये रखने के लिए निम्नलिखित सुझाव उपस्थित किए हैं–

(*i*) सभी प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं को अपने शिक्षण-समय में पहले या बाद में उन व्यक्तियों को ऐसे पाठ्य-विषयों की शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिनकी शिक्षा वे प्राप्त करना चाहते हैं।

(*ii*) उक्त शिक्षा-संस्थाओं को उक्त समय में इस प्रकार के पाठ्यक्रमों का आयोजन करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए, जिससे वयस्कों को अपनी समस्याओं का समाधान करने और अधिक ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त करने में सहायता मिले।

(*iii*) जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के ज्ञान एवं कुशलता में उन्नति करने, जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण का विस्तार करने और उनमें अपने व्यवसायों के प्रति उत्तरदायित्व की भावना का विकास करने के लिए विशेष प्रकार की अनवरत शिक्षा का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

(*iv*) साक्षर वयस्कों का स्कूलों एवं कॉलेजों के छात्रों के समान डिप्लोमा एवं डिग्री प्राप्त करने का अवसर देने के लिए अल्पकालीन शिक्षा की प्रणाली प्रचलित की जानी चाहिए।

पत्राचार-पाठ्यक्रम (Correspondence Courses)—"आयोग" ने वयस्क-शिक्षा का विस्तार करने के उद्देश्य से पत्राचार-पाठ्यक्रमों का सुझाव दिया है और इनके सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रकट किए हैं–

(*i*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों की व्यवस्था उन व्यक्तियों के लिए की जानी चाहिए, जो अल्पकालीन शिक्षा से लाभ उठाने में असमर्थ हैं।

(*ii*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों की व्यवस्था उन व्यक्तियों के लिए भी की जानी चाहिए, जो सांस्कृतिक एवं सौन्दर्यात्मक विषयों का ज्ञान प्राप्त करके, अपने जीवन को समृद्ध बनाना चाहते हैं।

(*iii*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों की व्यवस्था कृषि, विभिन्न उद्योगों और अन्य क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के लिए भी की जानी चाहिए।

(*iv*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों का रेडियो एवं टेलीविजन के कार्यक्रमों से निकट सम्बन्ध स्थापित किया जाना चाहिए।

(*v*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों की व्यवस्था उन व्यक्तियों के लिए भी की जानी चाहिए, जो देश के "माध्यमिक शिक्षा-बोर्डों" एवं विश्वविद्यालयों की परीक्षाएँ पास करना चाहते हैं।

(*vi*) पत्राचार-पाठ्यक्रमों द्वारा शिक्षा प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को कभी-कभी अपने शिक्षकों से भेंट करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

पुस्तकालय (Libraries)—"आयोग" ने वयस्क-शिक्षा से सम्बन्धित पुस्तकालयों के विषय में नीचे लिखे विचार प्रस्तुत किये हैं–

(*i*) वयस्कों के पुस्तकालय प्रगतिशील होने चाहिए।

(*ii*) उक्त पुस्तकालयों को वयस्कों को शिक्षित एवं आकर्षित करना चाहिए।

(*iii*) "पुस्तकालय-सलाहकार-समिति" (Advisory Committee on Libraries) द्वारा प्रस्तावित सम्पूर्ण देश के पुस्तकालयों की स्थापना की योजना को क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

(*iv*) विद्यालयों के पुस्तकालयों को सार्वजनिक पुस्तकालयों का रूप दिया जाना चाहिए और उनमें बच्चों एवं नव-साक्षरों (New-Literates) की रुचियों को ध्यान में रखकर पुस्तकों का संग्रह किया जाना चाहिए।

प्रौढ़ शिक्षा में विश्वविद्यालयों के कार्य (Role of Universities in Adult Education)—"आयोग" के मतानुसार, विश्वविद्यालयों को प्रौढ़-शिक्षा के प्रसार के लिए निम्नांकित कार्य करने चाहिएं–

(*i*) विश्वविद्यालयों को विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन करके, वयस्कों के आर्थिक, शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में योगदान देना चाहिए।

(*ii*) विश्वविद्यालयों को राजस्थान-विश्वविद्यालय के समान प्रौढ़-शिक्षा के विभाग की स्थापना करनी चाहिए।

(*iii*) विश्वविद्यालयो को वयस्कों को शिक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व ग्रहण करना चाहिए।

(*iv*) विश्वविद्यालयों को अपने प्रौढ़-शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए सरकार से उदार आर्थिक सहायता प्राप्त होनी चाहिए।

(*v*) विश्वविद्यालयों को दिल्ली-विश्वविद्यालय के समान पत्राचार पाठ्यक्रमों की योजना आरम्भ करनी चाहिए।

प्रौढ़ शिक्षा का संगठन व प्रशासन (Organization and Administration of Adult Education)–"आयोग" ने प्रौढ़-शिक्षा के संगठन एवं प्रशासन के विषय में निम्नांकित सुझाव दिये हैं–

(*i*) शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा "राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा-परिषद्" (National Board of Adult Education) की स्थापना की जानी चाहिए।

(*ii*) प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाली व्यक्तिगत संस्थाओं को सरकार द्वारा आर्थिक एवं प्राविधिक सहायता दी जानी चाहिए।

(*iii*) उक्त "परिषद्" पर निम्नलिखित कार्यों को सम्पादित करने का उत्तरदायित्व रखा जाना चाहिए–

(*a*) केन्द्र एवं राज्य सरकारों को अनौपचारिक वयस्क शिक्षा एवं प्रशिक्षण के बारे में परामर्श देना और इनसे सम्बन्धित योजनाओं एवं कार्यक्रमों का निर्माण करना।

(*b*) वयस्कों की शिक्षा के लिये उपयुक्त साहित्य, पाठन-सामग्री एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों के उत्पादन को प्रोत्साहन देना।

(*c*) विभिन्न मन्त्रालयों और सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यों में सामंजस्य स्थापित करना।

(*d*) समय-समय पर प्रौढ़-शिक्षा के प्रसार की जाँच करना और उसमें सुधार एवं परिवर्तन करने के लिए सुझाव देना।

(*e*) प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र में अन्वेषण, अनुसन्धान एवं मूल्यांकन करना।

(*iv*) उक्त "परिषद्" के समान राज्य-स्तर पर परिषदों का और जिला-स्तर पर समितियों का निर्माण किया जाना चाहिए। ग्राम-स्तर पर "परिषद्" के कार्यों के विद्यालयों को सौंपा जाना चाहिए।

विज्ञान की शिक्षा पर शिक्षा आयोग के विचार–"आयोग" का मत है कि विज्ञान की शिक्षा भारत की प्रगति, सुरक्षा एवं कल्याण के लिए परम आवश्यक है। अत: उसने विज्ञान की शिक्षा (जिसमें उसने गणित एवं प्रौद्योगिकी को भी सम्मिलित किया है) के प्रसार के लिए अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं–

(*i*) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा को देश के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास से सम्बन्धित किया जाना चाहिए।

(*ii*) विज्ञान एवं गणित की शिक्षा के लिए उच्च अध्ययन-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए और उनमें योग्य एवं अनुभवी अध्यापकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

(*iii*) विज्ञान के सम्बन्धित विषयों के सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक पक्षों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।

(*iv*) प्रत्येक कॉलेज एवं विश्वविद्यालय में विज्ञान की पूर्णतया सुसज्जित प्रयोगशालायें एवं वर्कशॉप होने चाहियें जिनमें छात्रों को विभिन्न यन्त्रों का प्रयोग भली-भाँति सिखाया जाना चाहिए।

(*v*) "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" को एक अखिल भारतीय समिति का निर्माण करना चाहिए। इस समिति को 2 या 3 वर्ष के इकरारनामे पर विज्ञान के "विजिटिंग प्रोफेसरों" (Visiting Professors) की नियुक्ति करनी चाहिए।

(*vi*) एम.एस.सी. स्तर के बाद वैकल्पिक आधार पर एक नवीन उपाधि प्रदान करने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(*vii*) अन्तिम परीक्षा में प्रयोगात्मक परीक्षा नहीं होनी चाहिए वरन् कक्षा के रिकार्ड के आधार पर प्रयोगात्मक कार्य का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

नोट

(*viii*) आधुनिक युग में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के महत्व को स्वीकार करके, इनको शिक्षा-प्रणाली का अभिन्न-अंग बनाया जाना चाहिए।

(*ix*) विज्ञान एवं गणित के पूर्व-स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तरों के पाठ्यक्रमों में अमूल संशोधन करके, उनको उच्च बनाया जाना चाहिए।

(*x*) विज्ञान की शिक्षा में सुधार करने के लिए विद्यालयों, कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों के अध्यापकों के लिये, "ग्रीष्मकालीन संस्थानों" (Summer Institutes) की योजना संचालित की जानी चाहिए।

(*xi*) देश की औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए विज्ञान के छात्रों की संख्या में वृद्धि की जानी चाहिए।

(*xii*) विदेशी वैज्ञानिकों एवं विदेशों में कार्य करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भारतीय वैज्ञानिकों को भारत में शिक्षण-कार्य करने के लिए आमंत्रित किया जाना चाहिए।

(*xiii*) प्रायोगिक भौतिकशास्त्र एवं रसायनशास्त्र का विकास करने के लिए विशेष प्रयास किए जाने चाहिए।

(*xiv*) वर्तमान वैज्ञानिक, औद्योगिक एवं अन्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए 2 वर्ष के एम.एस.सी. के कोर्स के अतिरिक्त 1 वर्ष या कम अवधि का कोई विशेष कोर्स आरम्भ किया जाना चाहिए।

(*xv*) औद्योगिक कार्यकत्ताओं को पत्र-व्यवहार एवं सायंकालीन कक्षाओं के द्वारा प्रयोगात्मक प्रयोग करने की सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।

कृषि की शिक्षा (Agricultural Education)—कृषि-प्रधान देश, भारत में कृषि की हीन दशा और देश के लिए उसके महत्व को ध्यान में रखते हुए, "आयोग" ने कृषि की शिक्षा में सुधार एवं विस्तार करने के लिए निम्न सुझाव प्रस्तुत किए हैं–

(1) कृषि-विश्वविद्यालय (Agricultural Universities)—"आयोग" ने कृषि-विश्वविद्यालयों की स्थापना, कार्यों आदि के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) प्रत्येक राज्य में कम-से-कम एक कृषि-विश्वविद्यालय की स्थापना की जानी चाहिए।

(*ii*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कक्षा-शिक्षण की अपेक्षा प्रायोगिक एवं प्रयोगशाला-कार्यों पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

(*iii*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कृषि-शिक्षा के अध्यापकों के लिये प्रशिक्षण-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए।

(*iv*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कृषि की शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार-कार्यक्रमों की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।

(*v*) कृषि-विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर-शिक्षा का उन्नयन करने के लिए योग्य एवं प्रतिभाशाली शिक्षकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

(*vi*) कृषि-विश्वविद्यालयों के 25 प्रतिशत छात्रों को छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

(*vii*) प्रत्येक कृषि-विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कम-से-कम 1,000 एकड़ भूमि का फार्म होना चाहिए, जिसमें से 500 एकड़ भूमि कृषि योग्य होनी चाहिए।

(*viii*) प्रथम डिग्री-कोर्स की अवधि 10 वर्ष की विद्यालय-शिक्षा के पश्चात् 5 वर्ष की होनी चाहिए।

(*ix*) उपाधि प्रदान करने से पूर्व प्रत्येक छात्र के लिए फार्म पर 1 वर्ष का कृषि-कार्य अनिवार्य होना चाहिये।

(*x*) केन्द्रीय अनुसन्धान-केन्द्रों एवं कृषि-विश्वविद्यालयों को पारस्परिक सहयोग से स्नातकोत्तर शिक्षा के लिए उत्तम केन्द्रों का निर्माण करना चाहिए।

(*xi*) सभी कृषि-विश्वविद्यालय यथासंभव शिक्षण-विश्वविद्यालय होने चाहिए।

(*xii*) बाह्य परीक्षाओं को समाप्त करने का यथाशक्ति प्रयास किया जाना चाहिए।

(2) कृषि-कॉलेज (Agricultural Colleges)—"आयोग" ने कृषि-कॉलेजों के विषयों में अधोलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) नवीन कृषि-कॉलेजों की स्थापना नहीं की जानी चाहिए, वरन् पुराने कॉलेजों में सुधार करके, उनको सुचारु रूप से संचालित किया जाना चाहिए।

(*ii*) प्रत्येक कृषि-कॉलेज के पास कम-से-कम 200 एकड़ भूमि का सुव्यवस्थिति फार्म होना चाहिए।

(*iii*) कृषि-कॉलेजों का प्रत्येक 5 वर्ष के पश्चात् "विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग" एवं "भारतीय कृषि-अनुसन्धान परिषद्" (Indian Agricultural Research Institute) द्वारा संयुक्त निरीक्षण किया जाना चाहिए।

(*iv*) कुछ कॉलेजों में डिग्री कोर्सों के बजाए उच्च टेक्निशियन (Technician) स्तर के कोर्सों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(3) कृषि-पॉलिटेक्निक (Agricultural Polytechnics)—"आयोग" ने सिफारिश की है कि कृषि-शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार करने के लिए "कृषि-पॉलिटेक्निकों" का शिलान्यास किया जाना चाहिए और उनके सम्बन्ध में आयोग के निम्न विचार हैं–

(*i*) मेट्रीकुलेशन-स्तर के बाद प्रत्येक राज्य में कृषि-पॉलिटेक्निकों की स्थापना को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(*ii*) पॉलिटेक्निकों को कृषि-विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध किया जाना चाहिए।

(*iii*) पॉलिटेक्निकों में अधिकतम छात्र-संख्या 1,000 होनी चाहिए।

(*iv*) पॉलिटेक्निकों में कृषि की ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए, जिसे समाप्त करने के पश्चात् छात्रों को कृषि की उच्च शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश मिल सके।

(*v*) पॉलिटेक्निकों में कृषकों एवं कृषि में विशेष रुचि रखने वाले व्यक्तियों के लिए सघन एवं संक्षिप्त पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(*vi*) कृषि-शिक्षा की तात्कालिक माँग को पूर्ण करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों के निकट स्थित पॉलिटेक्निकों में कुछ समय तक कृषि की शिक्षा प्रदान करने का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

(4) विद्यालयों में कृषि-शिक्षा (Agricultural Educatoin in Schools)—"आयोग" की धारणा है कि कृषि-शिक्षा को विद्यालयों की सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग होना चाहिए। अपनी इस धारणा के अनुसार, "आयोग" ने विद्यालयों में कृषि शिक्षा के बारे में अधोलिखित, सुझाव अंकित किये हैं–

(*i*) ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के सब प्राथमिक विद्यालयों में कृषि-सम्बन्धी जानकारी को सामान्य शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए।

(*ii*) विद्यालय-स्तर पर कृषि को कार्य-अनुभव (Work-Experience) का महत्वपूर्ण अंग बनाया जाना चाहिए।

(*iii*) अध्यापक-शिक्षा के कार्यक्रमों में कृषि एवं ग्रामीण समस्याओं को उपयुक्त स्थान दिया जाना चाहिए।

व्यावसायिक, प्राविधिक व इंजीनियरिंग की शिक्षा (Vocational, Technical and Engineering Education)—"आयोग" का कथन है कि देश के औद्योगीकरण को सफल बनाने के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता है। अत: औद्योगीकरण की योजनाएँ बनाने वालों का यह कर्त्तव्य है कि वे विभिन्न उद्योगों के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियों की संख्या का अनुमान लगाएँ और उनके प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त कार्यक्रमों का निर्माण करें। इस कार्य में हाथ बँटाने के लिए, "आयोग" ने व्यावसायिक, प्राविधिक एवं इंजीनियरिंग की शिक्षा के विषय में कुछ विचार व्यक्त किये हैं, जिनकी चर्चा यथास्थान की जा रही है–

(1) व्यावसायिक व प्राविधिक शिक्षा (Vocational and Technical Education)—"आयोग" ने व्यावसायिक एवं प्राविधिक शिक्षा के विषय में निम्नांकित विचार दिये हैं–

(*i*) विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम अपने आप में सम्पूर्ण होने चाहिए, ताकि छात्रों को उच्च शिक्षा की संस्थाओं में शिक्षा ग्रहण करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव न हो।

(*ii*) औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं (Industrial Training Institution)—में सर्वेक्षण के आधार पर प्रशिक्षण की सुविधाओं का अधिक-से-अधिक विस्तार किया जाना चाहिए।

नोट

(iii) जूनियर टेक्निकल स्कूलों को टेक्निकल हाईस्कूलों की संज्ञा दी जानी चाहिए।

(iv) नवीन पॉलिटेक्निकों की स्थापना औद्योगिक क्षेत्रों में की जानी चाहिए।

(v) पॉलिटेक्निकों के शिक्षकों की साहित्यिक योग्यताओं (Academic Qualifications) में कमी की जानी चाहिए और साधारणत: उन्हीं शिक्षकों को नियुक्त किया जाना चाहिए तो विभिन्न उद्योगों में कार्य करके, औद्योगिक अनुभव प्राप्त कर चुके हों।

(vi) कुछ पॉलिटेक्निकों में डिप्लोमा प्राप्त कर चुकने वाले छात्रों के लिये पोस्ट-डिप्लोमा (Post-Diploma) कोर्सों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(vii) विद्यालय-शिक्षा समाप्त करने वाले छात्रों को व्यावसायिक एवं प्राविधिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए पत्राचार पाठ्यक्रमों, अल्पकालीन पाठ्यक्रमों एवं संक्षिप्त-सघन पाठ्यक्रमों (Short-Intensive) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(viii) टेक्निकल स्कूलों एवं औद्योगिक प्रशिक्षण-संस्थाओं में व्यावहारिक कार्य पर विशेष बल दिया जाना चाहिए एवं उनको उत्पादनोन्मुखी (Production Oriented) बनाया जाना चाहिए।

(ix) पॉलिटेक्निकों में बालिकाओं की विशेष रुचियों को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(x) पॉलिटेक्निकों में होने वाले अपव्यय को समाप्त कर उनको अधिक-से-अधिक उपयोगी बनाने के प्रयास किये जाने चाहिए।

(xi) जो पॉलिटेक्निक ग्रामीण क्षेत्रों में चल रहे हैं, उनमें कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित उद्योगों की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

2. इंजीनियरिंग की शिक्षा (Engineering Education)—"आयोग" ने इंजीनियरिंग की शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नांकित सुझाव दिये हैं—

(i) इंजीनियरिंग के जो कॉलेज उच्च स्तर की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं, उनमें या तो सुधार किया जाना चाहिए या उनको बन्द कर दिया जाना चाहिए।

(ii) इंजीनियरिंग की शिक्षा के पाठ्यक्रमों को वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए विभिन्न प्रकार का बनाया जाना चाहिए।

(iii) इंजीनियरिंग की शिक्षा में अग्रांकित पाठ्य-विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए—विमान विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, रासायनिक-प्रौद्योगिकी (Accronautics, Astronautics, Chemical Technology) आदि।

(iv) इंजीनियरिंग की शिक्षा में सम्बन्धित शिक्षकों को नवीनतम ज्ञान से सम्पन्न करने के लिए ग्रीष्मकालीन संस्थानों (Summer Institutes) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(v) उपकरण एवं विद्युत-अणु (Instrumentation and Electronics) इंजीनियरिंग की शाखाओं का अध्ययन करने के लिए केवल योग्य एवं प्रतिभाशाली बी.एस.सी. पास विद्यार्थियों का ही चुनाव किया जाना चाहिए।

(vi) इंजीनियरिंग की शिक्षा के प्रचलित पाठ्यक्रमों में विशेषज्ञों के परामर्श के अनुसार संशोधन किया जाना चाहिए।

(vii) छात्रों को डिग्री-कोर्स के तृतीय वर्ष में व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए और कार्यशाला-कार्य (Workshop Practice) में उत्पादन-कार्य पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिए।

(viii) प्रतिभाशाली व्यक्तियों को शिक्षण-व्यवसाय के प्रति आकृष्ट करने के लिए शिक्षकों के वेतन-क्रमों में वृद्धि की जानी चाहिए और उनको लागू किया जाना चाहिए।

(ix) टेक्नोलॉजी की संस्थाओं में उच्च अध्ययन-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए।

(x) टेक्नोलॉजी की संस्थाओं को उद्योगों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)–

1. कोठारी आयोग ने शिक्षा में स्नातकोत्तर (एम.एड.) पाठ्यक्रम की अवधि के बारे में सुझाव दिया–
   (*a*) 2 वर्ष (*b*) 1.5 वर्ष (*c*) 1 वर्ष (*d*) इनमें से कोई नहीं
2. "सार्वजनिक शिक्षा के लिए 'कॉमन स्कूल सिस्टम' को राष्ट्रीय लक्ष्य माना जाय।" यह सिफारिश किसने की?
   (*a*) मुदालियार कमीशन (*b*) राधाकृष्णन कमीशन
   (*c*) कोठारी कमीशन (*d*) इनमें से कोई नहीं
3. माध्यमिक शिक्षा के स्तर के उन्नयन के लिए 'विद्यालय संकुलों की स्थापना की जानी चाहिए। यह सुझाव किसका था–
   (*a*) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 (*b*) कार्य योजना, 1986
   (*c*) माध्यमिक शिक्षा आयोग (*d*) शिक्षा आयोग
4. कृषि शिक्षा की सुविधाओं के विस्तार हेतु कृषि पॉलिटेक्निकों की स्थापना की जानी चाहिए। यह सुझाव किसका था–
   (*a*) आचार्य राममूर्ति समिति, 1990 (*b*) राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1979
   (*c*) कोठारी कमीशन, 1964-66 (*d*) इनमें से कोई नहीं
5. प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत कोठारी आयोग ने किन कार्यक्रमों को स्थान दिया–
   (*a*) निरक्षरता (*b*) अनवरत शिक्षा
   (*c*) पत्राचार पाठ्यक्रम (*d*) उपर्युक्त सभी।

5.3 सारांश (Summary)

- "आयोग" का मत है–"शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण तथा आवश्यक सुधार होगा कि इसको इस प्रकार परिवर्तित करने का प्रयास किया जाये कि इसका व्यक्तियों के जीवन, आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं से सम्बन्ध स्थापित हो जाये। इस प्रकार, शिक्षा को उस सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों का शक्तिशाली साधन बनाया जाये, जो राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है।"
- "आयोग" ने शिक्षा द्वारा सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता का विकास करने के विचार से अधोलिखित सुझाव दिये हैं–
  (*i*) शिक्षा के सभी स्तरों पर सामाजिक एवं राष्ट्रीय सेवा (Social and National Service) को सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य बना दिया जाना चाहिए।
  (*ii*) प्रत्येक शिक्षा-संस्था में सामाजिक एवं सामुदायिक सेवा के कार्यक्रमों को आरम्भ किया जाना चाहिए और प्रत्येक छात्र द्वारा इन कार्यक्रमों में उचित ढंग से भाग लिया जाना चाहिए।
  (*iii*) सार्वजनिक शिक्षा के लिए "सामान्य-विद्यालय-प्रणाली" (Common School System) को राष्ट्रीय लक्ष्य माना जाना चाहिए और इस प्रणाली को 2 वर्ष की अवधि में पूर्ण कर दिया जाना चाहिए।
  (*v*) मातृभाषा अर्थात् प्रादेशिक भाषा को सभी स्तरों पर शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए और इस कार्यक्रम को 10 वर्ष में पूर्ण कर दिया जाना चाहिए।
- प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को दो उद्देश्यों को सामने रखकर आयोजित किया जाना चाहिए–(*a*) निरक्षरता का उन्मूलन, एवं (*b*) व्यक्ति को नागरिक एवं राष्ट्रीय कुशलता और सामान्य संस्कृति स्तर का उन्नयन।
- सब व्यक्तियों में वैज्ञानिक विचार एवं दृष्टिकोण का और सहिष्णुता, पहलकदमी, जन-हित, समाज-सेवा, आत्म-निर्भरता एवं आत्म-अनुशासन के गुणों का विकास किया जाना चाहिये।

नोट

- 14 वर्ष की आयु तक के बालकों एवं बालिकाओं को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।
- धर्म, वर्ण, लिंग, जाति एवं स्थिति का भेदभाव किये बिना सब बालकों एवं बालिकाओं को शिक्षा के समान अवसर दिये जाने चाहिए।
- आधुनिकीकरण करने के लिए शिक्षा को महत्त्वपूर्ण साधन बनाया जाना चाहिए और आधुनिकीकरण की प्रगति एवं शैक्षिक प्रसार की गतियों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।
- "आयोग" के शब्दों में–"शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों में समानता स्थापित करना है, ताकि पिछड़े हुए या कम अधिकारों वाले वर्ग एवं व्यक्ति अपनी दशा सुधार करने के लिए शिक्षा को साधन के रूप में प्रयोग कर सकें।"
- "आयोग" ने शिक्षा के क्षेत्र में दो प्रमुख प्रकार की व्यापक असमानताएँ बताई हैं–(1) शिक्षा सभी पक्षों एवं स्तरों पर बालकों एवं बालिकाओं की शिक्षा में व्यापक असमानता, और (2) उच्च वर्गों, पिछड़े वर्गों, अछूत जातियों, पहाड़ी जातियों एवं आदिवासियों की शिक्षा में व्यापक असमानता। इन दोनों प्रकार की असमानताओं को दूर करने के लिए "आयोग" ने 4 सुझाव दिये हैं–(*i*) नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था, (*ii*) शिक्षा के खर्चों में कमी, (*iii*) छात्रवृत्तियों की व्यवस्था, और (*iv*) छात्रवृत्तियों की योजना।
- "आयोग" की धारणा है कि यद्यपि पिछले समय में विद्यालय-शिक्षा का पर्याप्त विस्तार हुआ है, फिर भी देश की आवश्यकताओं को पूर्ण न कर सकने के कारण, उसको सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता है। अपनी इस धारणा के फलस्वरूप "आयोग" ने विद्यालय-शिक्षा के विभिन्न अंगों के विस्तार के विषय में अपने विचार प्रकट किए हैं और सुझाव भी दिए हैं।
- प्रत्येक राज्य के "राज्य-शिक्षा-संस्थान" (State Institute of Education) में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के लिए राज्य-स्तर पर केन्द्र की स्थापना की जानी चाहिए।
- व्यक्तिगत प्रबन्धकों को उदार आर्थिक सहायता देकर, पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन करने के लिए प्रेरणा दी जानी चाहिए।
- पूर्व-प्राथमिक शिक्षा में परीक्षण-कार्य (Experimentation) को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि इस शिक्षा के विस्तार के लिए कम खर्चीले उपायों की खोज की जा सके।
- सन् 1975-76 तक देश के सभी बच्चों के लिए 5 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- सन् 1985-86 तक देश के सब बच्चों के लिए 7 वर्ष की उत्तम प्राथमिक शिक्षा की योजना पूर्ण कर दी जानी चाहिए और भारतीय संविधान द्वारा प्रतिपादित लक्ष्य की प्राप्ति हो जानी चाहिए।
- "आयोग" का मत है कि धनाभाव के कारण कुछ वर्षों में माध्यमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाया जाना सम्भव नहीं है। अत: माध्यमिक शिक्षा का विस्तार निम्नांकित उपायों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए–
    (*i*) माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण (Vocationalization) इस प्रकार किया जाना चाहिए कि निम्न माध्यमिक स्तर पर 20 प्रतिशत छात्रों को एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 50 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जा सके।
    (*ii*) बालिकाओं, जनजातियों एवं अछूत जातियों में माध्यमिक शिक्षा का प्रसार करने के लिए विशेष योजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए।
    (*iii*) माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन करने के लिए केवल योग्य छात्रों का ही चयन किया जाना चाहिए।
- "आयोग" ने माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर विशेष बल दिया है और इसका कारण बताते हुए लिखा है–"माध्यमिक स्कूल के स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण करके, शिक्षा और उत्पादन में सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।"

नोट

- "आयोग" का मत है कि विद्यालय-पाठ्यक्रम में अनेक दोषों का समावेश हो गया है। इन दोषों को दूर करने और पाठ्यक्रम में सुधार करने के लिए "आयोग" ने विभिन्न कक्षाओं के लिए जो पाठ्यक्रम निर्धारित किये हैं।
- निम्न प्राथमिक स्तर–(*i*) एक भाषा–मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*ii*) वातावरण का अध्ययन (Study of Environment)–कक्षा 3 और 4 में विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन की शिक्षा, (*iii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा (Work-Experience and Social Service), (*iv*) गणित (Mathematics), (*v*) स्वास्थ्य-शिक्षा (Health Education), (*vi*) सृजनात्मक क्रियाएँ (Creative Activities)।
- उच्चतर प्राथमिक स्तर–(*i*) दो भाषाएँ–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) हिन्दी या अंग्रेजी, (*ii*) विज्ञान, (*iii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा, (*iv*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा (Education in Moral and Spiritual Values), (*v*) सामाजिक अध्ययन (इतिहास, भूगोल एवं नागरिकशास्त्र), (*vi*) गणित, (*vii*) कला (Art), (*viii*) शारीरिक शिक्षा (Physical Education)।
- निम्न माध्यमिक स्तर–(*i*) तीन भाषाएँ–अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में सामान्य रूप से निम्नांकित भाषाएँ होनी चाहिए–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) उच्च या निम्न स्तर की हिन्दी, (*c*) उच्च या निम्न स्तर की अंग्रेजी। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में सामान्य रूप से निम्नांकित भाषाएँ होनी चाहिए–(*a*) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा, (*b*) अंग्रेजी (या हिन्दी, यदि अंग्रेजी मातृभाषा के रूप में ली गई है), (*c*) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा। (*ii*) इतिहास, भूगोल तथा नागरिक शास्त्र, (*iii*) शारीरिक शिक्षा, (*iv*) गणित, (*v*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, (*vi*) कला, (*vii*) विज्ञान, (*viii*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर–(*i*) कोई दो भाषाएँ–जिसमें कोई आधुनिक भारतीय भाषा, कोई आधुनिक विदेशी भाषा एवं कोई शास्त्रीय भाषा सम्मिलित हों, (*ii*) निम्नलिखित में से कोई तीन विषय–(*a*) एक अतिरिक्त भाषा, (*b*) इतिहास, (*c*) भूगोल, (*d*) अर्थशास्त्र, (*e*) तर्कशास्त्र (logic), (*f*) मनोविज्ञान, (*g*) समाजशास्त्र, (*h*) कला, (*i*) भौतिकशास्त्र, (*j*) रसायनशास्त्र, (*k*) गणित, (*l*) जीव-विज्ञान, (*m*) भूगर्भशास्त्र (Geology), (*n*) गृह-विज्ञान (Home Science), (*iii*) शारीरिक-शिक्षा, (*iv*) नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, (*v*) कार्य-अनुभव एवं समाज-सेवा, (*vi*) कला, या शिल्प (Art or Craft)।
- स्त्री-शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए "आयोग" ने लिखा है–"हमारे मानव-साधनों के पूर्ण विकास, परिवारों की उन्नति तथा शैशवावस्था के वर्षों में अत्यधिक सरलता से प्रभावित होने वाले बच्चों के चरित्र का निर्माण करने के लिए, स्त्रियों की शिक्षा का महत्व पुरुषों की शिक्षा से भी अधिक है।" "आयोग" ने स्त्री-शिक्षा के निम्न अंगों के विषय में अपने विचारों को लेखबद्ध किया है।
- "आयोग" ने बालिकाओं की प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के विषय में निम्नांकित सुझाव दिये हैं–
  (*i*) माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के विस्तार की गति इतनी तीव्र कर दी जानी चाहिए जिससे 20 वर्ष के अन्त में निम्न माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं और बालकों की संख्या का अनुपात 1 : 3 और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 1 : 2 हो जाये।
  (*ii*) भारतीय संविधान में अंकित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा का अधिक-से-अधिक विस्तार किया जाना चाहिए।
  (*iii*) बालिकाओं के लिए पृथक विद्यालयों एवं छात्रावासों और छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- **"आयोग"** ने प्रौढ़ शिक्षा का पर्याप्त विस्तार में वर्णन किया है। **"आयोग"** के अनुसार–"विद्यालय-शिक्षा के बाद शिक्षा का अंत नहीं होता है, क्योंकि शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। आज के वयस्क को तीव्र गति से परिवर्तित होने वाले संसार की और समाज की बढ़ती हुई जटिलताओं की जानकारी होना आवश्यक है। जिन व्यक्तियों ने सर्वोत्तम प्रकार की शिक्षा प्राप्त की है, उनके लिए भी जीवन में शिक्षा की आवश्यकता है।" अत: वयस्क शिक्षा का संगठन अनिवार्य है।
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा को देश के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास से सम्बन्धित किया जाना चाहिए।

नोट

- विज्ञान एवं गणित की शिक्षा के लिए उच्च अध्ययन-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए और उनमें योग्य एवं अनुभवी अध्यापकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
- विज्ञान के सम्बन्धित विषयों के सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक पक्षों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।
- प्रायोगिक भौतिकशास्त्र एवं रसायनशास्त्र का विकास करने के लिए विशेष प्रयास किए जाने चाहिए।
- वर्तमान वैज्ञानिक, औद्योगिक एवं अन्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए 2 वर्ष के एम.एस.सी. के कोर्स के अतिरिक्त 1 वर्ष या कम अवधि का कोई विशेष कोर्स आरम्भ किया जाना चाहिए।
- कृषि-प्रधान देश, भारत में कृषि की हीन दशा और देश के लिए उसके महत्व को ध्यान में रखते हुए, "आयोग" ने कृषि की शिक्षा में सुधार एवं विस्तार करने के लिए सुझाव दिए हैं–
- "आयोग" ने कृषि-विश्वविद्यालयों की स्थापना, कार्यों आदि के विषय में निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

(*i*) प्रत्येक राज्य में कम-से-कम एक कृषि-विश्वविद्यालय की स्थापना की जानी चाहिए।

(*ii*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कक्षा-शिक्षण की अपेक्षा प्रायोगिक एवं प्रयोगशाला-कार्यों पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

(*iii*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कृषि-शिक्षा के अध्यापकों के लिये प्रशिक्षण-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए।

(*iv*) कृषि-विश्वविद्यालयों में कृषि की शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार-कार्यक्रमों की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।

5.4 शब्दकोश (Keywords)

- **प्राविधिक–** तकनीक
- **अग्रांकित–** आगे लिखा हुआ

5.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. भारतीय शिक्षा आयोग अथवा कोठारी आयोग के मुख्य सुझावों का वर्णन कीजिए।
2. कोठारी आयोग (1964-66) के उद्देश्यों का संक्षिप्त विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (1) बी.ए और एम. ए. (2) रूसी भाषा (3) माध्यमिक शिक्षा (4) कृषि-शिक्षा (5) प्रौद्योगिकी

2. (1) (*b*) (2) (*c*) (3) (*d*) (4) (*c*) (5) (*d*)

5.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–6: राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 (National Policy of Education–1986)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

6.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 (National Policy of Education–1986)

6.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्देश्य (Aims of National Education Policy)

6.3 शिक्षा का पुनर्गठन (Reorganization of Education)

6.4 सारांश (Summary)

6.5 शब्दकोश (Keywords)

6.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

6.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 का विश्लेषण करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मानव इतिहास के उदय से लेकर अब तक शिक्षा ने विकास तथा अभिवृद्धि की प्रक्रिया को सातत्य प्रदान किया है। हर देश ने अपनी सामाजिक सांस्कृतिक पहचान बनाने के लिये अपनी शिक्षा प्रणाली विकसित की और समय की चुनौती को स्वीकार किया। इतिहास में ऐसे भी क्षण आये हैं जब परम्परागत प्रक्रिया को नई दिशा दी गयी। ऐसा ही क्षण आज है। देश, आर्थिक, तकनीकी विकास की उस अवस्था पर पहुँच गया है, जहाँ सृजित परिसम्पत्तियों (Assets) का अधिकतम लाभ सभी वर्गों तक पहुँचाने का प्रयास किया जाना है। शिक्षा इस उद्देश्य की प्राप्ति का राजमार्ग है। इस उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुये भारत सरकार ने जनवरी, 1985 में घोषणा की कि देश के लिये एक नई शिक्षा नीति की रचना की जायेगी। विद्यमान शिक्षा की सघन समीक्षा, देश भर में बहस कराकर की गयी। देश के विभिन्न भागों से प्राप्त विचारों तथा सुझावों का अध्ययन सतर्कतापूर्वक किया गया।

6.1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986 (National Policy of Education–1986)

प्राचीन काल में भारत में बालक की शिक्षा का प्रारम्भ 5 वर्ष की आयु से होता था जिसमें ब्राह्मण 6, क्षत्रिय 11 और वैश्य 12 वर्ष की आयु में उपनयन संस्कार के पश्चात् गुरुकुलों में शिक्षा ग्रहण करने जाते थे। शूद्रों को शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था न थी। शिक्षा के दो स्तर होते थे–

(1) प्रारम्भिक; (2) उच्च।

इसी प्रकार बौद्ध युग में भी शिक्षा के दो स्तर होते थे।

नोट

शिक्षा प्रणाली का सर्वप्रथम 1882 में हण्टर कमीशन ने विचार किया। उसने शिक्षा के अनेक चरण प्रस्तावित किये। उस समय दस वर्ष की एन्ट्रेंस, दो वर्ष की अन्तर स्नातक, दो वर्ष की स्नातक और दो वर्ष की परास्नातक स्नातकोत्तर प्रणाली प्रचलित थी। 10 वर्ष की शिक्षा विद्यालयों में, शेष शिक्षा विश्वविद्यालयों में दी जाती थी। 1917-19 में सैडलर कमीशन ने अनुभव किया कि शिक्षा की प्रकृति में परिवर्तन लाना आवश्यक है। अतएव उसने 10 + 2 + 3 शिक्षा प्रणाली प्रस्तावित की तथा विद्यालयी शिक्षा के लिए पृथक् बोर्ड गठित करने की सिफारिश की। 10 वर्ष हाईस्कूल, 2 वर्ष का इण्टरमीडिएट, शिक्षा बोर्ड के अधीन कर 3 वर्ष का स्नातक कार्यक्रम विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत करने का आग्रह किया।

सन् 1952-53 में मुदालियर कमीशन ने 8 + 3 + 3 शिक्षा प्रणाली प्रस्तावित की। 8 वर्ष की प्राथमिक, 3 वर्ष की हाईस्कूल एवं 3 वर्ष की स्नातक व्यवस्था को प्रस्तावित किया। माध्यमिक शिक्षा को समाप्त करने पर बल दिया।

सन् 1960 में योजना आयोग ने 12 वर्ष की विद्यालयी शिक्षा तथा 3 वर्ष की स्नातक शिक्षा पर बल दिया। 1961 में कुलपतियों के अधिवेशन में भी यही तथ्य दोहराया गया। सन् 1962 में केन्द्रीय शिक्षा सलाकर परिषद् ने इसी संकल्प को दोहराया एवं कोठारी कमीशन ने भी यही सिफारिश की और अन्त में सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत सम्पूर्ण देश में 10 + 2 + 3 शिक्षा व्यवस्था लागू कर दी गयी।

शिक्षा की 10 + 2 + 3 प्रणाली का अर्थ

10 + 2 + 3 का अर्थ इस प्रकार समझा जा सकता है कि 10 के अन्तर्गत कक्षा 1 से 10 तक की प्राप्त की जाने वाली शिक्षा। यह शिक्षा 6 से 16 वर्ष की आयु तक प्राप्त की जा सकती है। + 2 के अन्तर्गत कक्षा 11 व 12 तक की प्राप्त की जाने वाली शिक्षा आती है। इन दो वर्षों में सामान्य एवं विशेष दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान की जायेगी। वह शिक्षा 16 से 18 वर्ष की आयु तक चलेगी। + 3 से तात्पर्य है कि 12 वर्ष की शिक्षा के पश्चात् 3 वर्षीय उच्च शिक्षा की प्रथम उपाधि (स्नातक उपाधि) हेतु निर्धारित अवधि होगी। इस अवधि में शिक्षार्थी को सामान्य एवं विशेष दोनों में किसी भी शिक्षा के विषयों की शिक्षा प्रदान की जायेगी। यह शिक्षा 18 से 21 वर्ष की आयु तक प्राप्त की जा सकती है।

सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश में तीन वर्ष का डिग्री (स्नातक) पाठ्यक्रम लागू कर दिया गया है।

क्या आप जानते हैं सन् 1948-49 में राधाकृष्णन कमीशन ने भी 10 + 2 + 3 शिक्षा प्रणाली लागू करने की सिफारिश की तथा माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक शिक्षा के आधार पर गठित करने की सिफारिश की।

6.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्देश्य (Aims of National Education Policy)

1968 की शिक्षा नीति और उसके बाद

स्वतन्त्र भारत में 1968 की शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण कदम रही है। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय प्रगति, सामान्य नागरिकता तथा संस्कृति की भावना और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करना है। इसने शिक्षा प्रणाली के क्रान्तिकारी नव-निर्माण की आवश्यकता पर जोर दिया। सभी स्तरों पर शिक्षा के गुणात्मक सुधार, विज्ञान तथा तकनीकी पर विशेष ध्यान, नैतिक मूल्यों के विकास तथा शिक्षा और जीवन के पारस्परिक सम्बन्धों को घनिष्ठ बनाने पर बल दिया। 1968 की नीति के अनुसार शिक्षा के सभी स्तरों पर शैक्षिक सुविधाओं का प्रसार किया गया। एक वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में ग्राम क्षेत्रों की 90% जनता के लिये विद्यालयी सुविधायें प्राप्त हैं। अन्य स्तरों पर भी वाँछित सुविधाओं में भी प्रगति हुई है। सम्पूर्ण देश में शिक्षा की सामान्य संरचना की स्वीकृति और अधिकांश राज्यों में 10 + 2 + 3 शिक्षा पद्धति का अनुसरण महत्वपूर्ण घटना है। लड़के-लड़कियों के सामान्य पाठ्यक्रम के अतिरिक्त विज्ञान तथा गणित की अनिवार्य शिक्षा, कार्यानुभव को, महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

नोट

उपाधि स्तर पर पाठ्यक्रमों की पुनर्रचना की गयी। स्नातकोत्तर स्तर पर शिक्षा तथा अनुसंधान के लिये **सेन्टर फॉर एडवांस्ड स्टेडीज** खोले गये। जो शिक्षित जनशक्ति की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम हुई।

यों तो उपरोक्त उपलब्धियां प्रभावशाली थीं किन्तु 1968 की शिक्षा नीति सम्मिलित अनेक कार्यों को संगठनात्मक-सहयोग प्राप्त नहीं हो सका। उनकी रणनीति, विनियोग को आर्थिक सहायता न मिल सकी। परिणाम यह हुआ कि आधिक्य, गुण, मात्रा, उपयोग तथा आर्थिक ढाँचे में निरन्तर वृद्धि होती रही और अब इन सभी को प्राथमिकता देकर हल किया जाना आवश्यक है। **भारत में शिक्षा आज चौराहे पर खड़ी है।** सामान्य रेखीय प्रसार और न ही विद्यमान स्थिति और सुधार की प्रकृति इन परिस्थितियों का सामना कर सकती है। भारतीय चिन्तन के अनुसार एक **सकारात्मक एसेट** (Asset) तथा बहुमूल्य राष्ट्रीय स्रोत है जिसका विकास सावधानीपूर्वक गतिशीलता के साथ किया जाना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति की अभिवृद्धि विभिन्न प्रकार की समस्याओं तथा आवश्यकताओं को प्रस्तुत करती है। जन्म से मरण तक चलने वाली शिक्षा की इस जटिल तथा गतिशील प्रक्रिया का नियोजन सुसंबद्ध रूप से किया जाना चाहिये और पूरी निष्ठा के साथ इसका क्रियान्वयन किया जाना चाहिये। भारत का राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन ऐसी अवस्था से गुजर रहा है जहाँ पूर्ण स्वीकृत दीर्घकालीन मूल्यों का विनाश हो रहा है। इसी दबाव में धर्म निरपेक्षता, समाजवाद, जनतन्त्र तथा व्यावसायिक नैतिकता पिस रहे हैं। निर्बल संरचना तथा समाजसेवा के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के प्रशिक्षित युवाओं को लाभ उस समय तक नहीं मिल पायेगा जब तक नगर-ग्राम के भेद समाप्त नहीं होंगे और रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं होगी। आने वाले दशकों में देश की जनसंख्या वृद्धि की गति को धीमा करना होगा। स्त्रियों में शिक्षा प्रसार तथा साक्षरता में वृद्धि इस समस्या को हल करेगी। आने वाले दशक अत्यन्त संघर्ष के होंगे। इनमें अनेक प्रकार के अवसर होंगे। नये वातावरण का लाभ उठाने के लिये मानव विकास के नये प्रतिमानों की रचना करनी होगी। नई पीढ़ी में नव विचार तथा सर्जनात्मकता को ग्रहण करने की क्षमता होनी चाहिये। सामाजिक न्याय तथा मानव मूल्यों के प्रति इसी पीढ़ी में प्रतिबद्धता होनी चाहिये। इन सबका अर्थ है—उत्तम शिक्षा। इनके अतिरिक्त, सरकार के समक्ष देश के लिये नई शिक्षा नीति प्रस्तुत करने की आवश्यकता नवीन चुनौतियों तथा सामाजिक आवश्यकताओं ने उत्पन्न की है। परिस्थिति का सामाना यों ही नहीं हो सकता।

शिक्षा की भूमिका तथा मूल तत्व

राष्ट्रीय सन्दर्भ में शिक्षा सभी के लिये अनिवार्य है। हमारे सर्वांगीण विकास, भौतिक तथा आध्यात्मिक विकास के लिए यह आधारभूत तत्व है। शिक्षा उभय सांस्कृतिक भूमिका प्रस्तुत करती है। यह राष्ट्रीय एकता में योगदान देने वाली संवेदनशीलता तथा प्रतिबन्ध को परिष्कृत कर वैज्ञानिक मनोवृत्ति एवं मानसिक स्वतन्त्रता एवं भावना विकसित कर समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता तथा जनतन्त्र का विकास संविधान के अन्तर्गत करती है। अर्थव्यवस्था के सभी स्तरों पर शिक्षा, जनशक्ति का विकास करती है, राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता की पूरी गारन्टी, शोध एवं विकास के माध्यम से शिक्षा प्रदान करती है। कुल मिलाकर, शिक्षा वर्तमान तथा भविष्य में एक विशेष विनियोग (Investment) है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की यह मूल कुँजी है।

राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली—राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली जिन आधारों पर विकसित हो रही है, उसके मूल सिद्धान्त संविधान द्वारा प्रदान किये गये हैं। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की अवधारणा यह है कि वाँछित स्तर तक, जाति, धर्म, क्षेत्र तथा लिंग के भेदभाव के बिना शिक्षा के अवसर समान रूप से प्रदान किये जाने चाहियें। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये पर्याप्त धन के साथ निश्चित कार्यक्रम सरकार द्वारा चलाये जायेंगे। 1968 की नीति में प्रस्तावित सामान्य शिक्षा प्रणाली (Common School System) को अपनाने के लिये प्रभावशाली कदम उठाने होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली सामान्य शैक्षिक संरचना पर विचार करती है। देश के सभी भागों में 10 + 2 + 3 प्रणाली को स्वीकार कर लिया गया है। 10 वर्षीय व्यवस्था के पुनर्विभाजन—5 वर्षीय आरम्भिक, 3 वर्षीय अपर प्राइमरी एवं 2 वर्षीय हाईस्कूल के प्रयास चल रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का आधार एक सामान्य पाठ्यक्रम की संरचना है, जिसमें सामान्य मूल विषयों के साथ-साथ अन्य विषय लचीले होंगे। सामान्य मूल विषयों में भारतीय स्वाधीनता का इतिहास, संवैधानिक प्रतिबन्ध तथा राष्ट्रीय एकता के अन्य तत्व होंगे। यह तत्व विषय क्षेत्रों से पृथक होंगे और इस प्रकार बनाये जायेंगे, जिससे भारत की सामान्य सांस्कृतिक विरासत, समतावाद, जनतंत्र, धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों का विकास लिंगभेद के

नोट

बिना होगा। वातावरण की रक्षा, सामाजिक बुराईयों को दूर करना, छोटे परिवार के मानकों का निर्माण तथा वैज्ञानिक स्वभाव विकसित हो। सभी प्रकार के शैक्षिक कार्यक्रम इस प्रकार बनाये जायेंगे जो धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को पूरी निष्ठा के साथ विकसित करेंगे। भारत ने विश्व को एक परिवार माना है और इसी आधार पर राष्ट्रों के मध्य शान्ति एवं अवबोध बनाये रखने की आवश्यकता अनुभव की है। इस पुरातन परम्परा का निर्वाह करने के लिए इस विश्व मत को सशक्त बनाने हेतु, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग, शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व को नई पीढ़ी में अभिप्रेरित करें। इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता। समानता के विकास के लिये, समानता के अधिकतम अवसर प्रदान करने के साथ उसमें सफलता प्राप्त करना भी आवश्यक है। आधारभूत पाठ्यक्रम के माध्यम से आन्तरिक समानता को जागृत करना है, जन्म से प्राप्त तथा सामाजिक परिवेश से उत्पन्न पूर्वाग्रहों तथा जटिलताओं को समाप्त करना है। शिक्षा की प्रत्येक अवस्था के लिये अधिगम का न्यूनतम स्तर निर्धारित करना होगा। देश के विभिन्न भागों में रहने वाले व्यक्तियों की संस्कृति तथा सामाजिक व्यवस्थाओं को समझने के लिए, पाठ्यक्रम में व्यवस्था करनी होगी। सम्पर्क भाषा के विकास के लिये विभिन्न भाषाओं में पुस्तकों के अनुवाद करने होंगे तथा बहुभाषी शब्द की रचना करनी होगी। नई पीढ़ी को अपने ढंग से अपने प्रतिबोध तथा प्रतिभा में भारत की पुनर्खोज करने के लिये प्रोत्साहित करना होगा। उच्च शिक्षा में सामान्य रूप से तथा तकनीकी शिक्षा में विशेष रूप से अन्तर्क्षेत्रीय गतिशीलता को विकसित करती है। वांछित योग्यता के द्वारा ऐसे अवसर देने होंगे। विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थाओं का अवमूल्यन हुआ है। अनुसंधान तथा विकास, विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में ऐसा जाल बिछाना होगा कि विभिन्न संस्थानों के स्रोतों का एकत्रीकरण राष्ट्रीय महत्व की परियोजनाओं में भाग लेने हेतु किया जाये। राष्ट्र को सम्पूर्ण रूप से शैक्षिक रूपान्तरण के सभी कार्यक्रमों को, असमानताओं को कम करते हुये, प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण, प्रौढ़ साक्षरता, वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी शिक्षा का दायित्व वहन करना होगा। शैक्षिक प्रक्रिया का चिरसंचित उद्देश्य जीवनपर्यन्त शिक्षा है। सार्वभौम साक्षरता की यह उपेक्षा है। युवकों, गृहणियों, कृषकों, श्रमिकों तथा अन्य व्यवसायों में लगे लोगों को अपनी रुचि की शिक्षा, जो समय के साथ विकसित हो जायेगी। मुक्त तथा सुदूर अधिगम इस दिशा में भावी प्रयास है। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को आकार देने तथा सशक्त बनाने में सहयोग देने वाली संस्थायें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद, अखिल भारतीय कृषि शिक्षा परिषद् तथा अखिल भारतीय चिकित्सा परिषद् हैं। इन संस्थाओं के मध्य सम्मिलित योजना बनायी जायेगी जिससे कार्यात्मक संपर्क के द्वारा कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया जाये। यह NCERT, इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशनल प्लानिंग एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन, इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशनल टैक्नोलॉजी के सहयोग से होगा। शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में इनको सम्मिलित किया जायेगा।

एक सार्थक साझेदारी

1976 के संविधान संशोधन के अनुसार शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा गया। इसके अनुसार केन्द्र तथा राज्य सरकारों का दायित्व महत्वपूर्ण है। यह दायित्व, आर्थिक, प्रशासनिक रूप से सातत्यपूर्ण है। राज्यों के शैक्षिक दायित्वों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। केन्द्र सरकार राष्ट्रीय एवं सम्मिलित विशेषता वाली शिक्षा को लागू करने का दायित्व वहन करेगी। शिक्षा के गुणात्मक (शिक्षण व्यवसाय सभी स्तरों पर) स्तर, देश की शैक्षिक आवश्यकता के अध्ययन एवं नियन्त्रण, कुल मिलाकर विकास के लिये जनशक्ति, शिक्षा, संस्कृति, मानव संसाधन विकास के अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को आना होगा। शिक्षा के पिरामिड की सार्थकता सम्पूर्ण देश में फैलानी होगी। यह समेकित, साझेदारी के महत्व को प्रदर्शित करती है। यह सार्थक भी है और चुनौतीपूर्ण भी। राष्ट्रीय नीति सही मायनों में प्रभावशाली ढंग से चालू की जायेगी।

समानता के लिये शिक्षा

असमानतायें

1. नई नीति असमानता को दूर करने तथा उन लोगों को शैक्षिक अवसरों की समानता प्रदान करने पर बल देगी जिन्हें समानता से दूर रखा गया है।
2. शिक्षा प्रयोग नारी के स्तर में परिवर्तन के अभिकरण (Agency) के रूप में किया जायेगा। भूतकाल की विसंगतियों को समाप्त कर, नारी के पक्ष में सुविचारित शस्त्र तैयार किया जायेगा। नारी शक्ति के जागरण हेतु नई शिक्षा प्रणाली में इसकी भूमिका सकारात्मक हस्तक्षेप की होगी। पुनरीक्षित पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तकों

शिक्षाओं से प्रशिक्षण तथा अभिनव, निर्णय लेने की क्षमता तथा शिक्षा संस्थाओं के सक्रिय सहयोग द्वारा उनमें नवीन मूल्यों का विकास होगा। यह सामाजिक क्षेत्र में विकास का कार्य है। नारी अध्ययन का विकास अनेक शिक्षण संस्थाओं तथा पाठ्यक्रमों को प्रोत्साहित करके किया जायेगा।

3. नारी-निरक्षरता, निरक्षरता वृद्धि को दूर करने, प्राथमिक शिक्षा में अनुसंधान को समाप्त करने की दिशा में, सहयोगी (Support) सेवा, काल तथा लक्ष्य विभिन्न स्तरों पर व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा। अविभेदीकरण की नीति का पालन करके लिंग भेद को समाप्त कर अपारम्परिक व्यवसायों का, पेशों का प्रशिक्षण दिया जायेगा। यह कार्य विद्यमान विकासशील प्रौद्योगिकी में भी होगा।
4. अनुसूचित जातियों के शैक्षिक विकास का केन्द्रीय तत्व अनुसूचित जातियों के समान शिक्षा के सभी स्तरों पर सभी क्षेत्रों में चार आयामों–ग्रामीण पुरुष, ग्रामीण स्त्री, नगरीय पुरुष तथा नगरीय स्त्रियों–में है।
5. इन उद्देश्यों के लिए इन उपायों का ध्यान रखना आवश्यक है–
   (*i*) निर्धन तथा दरिद्र परिवारों को, अपने बच्चों के 14 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक निरन्तर विद्यालयों में भेजने हेतु प्रोत्साहन देना।
   (*ii*) प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति कक्षा 1 से ही उन परिवारों, के बच्चों के लिये, जो पशुओं की खाल उतारते, रंगते तथा साफ करते हैं, दी जायेगी, आय के विचार के बिना ऐसे सभी परिवारों के बच्चों को दी जायेगी।
   (*iii*) इस बात पर भी निरन्तर ध्यान रखा जायेगा कि अनुसूचित जातियों के बालकों के प्रवेश, अवरोधन तथा सफलता में, सभी स्तरों पर गिरावट न आये। वह कार्य सूक्ष्म नियोजन द्वारा वैज्ञानिक पाठ्यक्रमों तथा रोजगार के अवसर प्रदान करके किया जायेगा।
   (*iv*) अनुसूचित जातियों में से शिक्षकों का चयन किया जायेगा।
   (*v*) प्रावस्थित कार्यक्रम (Phased Programme) के माध्यम से जिला स्तर पर अनुसूचित छात्रावास में प्रवेश की सुविधायें प्रदान की जायेंगी।
   (*vi*) अनुसूचित जातियों में शैक्षिक जागरण के लिये विद्यालय भवनों के निर्माण, बालवाड़ी तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जायेगी।
   (*vii*) अनुसूचित जातियों में शैक्षिक सुविधाओं के लिये एन. आर. ई. पी., आर. एल. ई. जी. पी. के स्रोतों का उपयोग करना होगा।
   (*viii*) शैक्षिक प्रक्रिया में अनुसूचित जातियों की निरंतर भागिता के लिये नये-नये उपायों को खोजा जायेगा।

अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा

अनुसूचित जनजातियों को अन्य लोगों के सामानान्तर लाने के लिये निम्नलिखित उपाय किये जायेंगे–

(*i*) जनजातिय क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय खोलने हेतु प्राथमिकता दी जायेगी। इन क्षेत्रों में एन. आर. ई. पी., आर. एल. ई. जी. पी. के साथ-साथ शिक्षा के सामान्य कोष से भी भवन निर्माण हेतु सहायता ली जायेगी।

(*ii*) अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण की अपनी ही विशेषता है उनमें उनकी अपनी बोलचाल अधिकांश है। इससे यह आवश्यकता अनुभव की जाती है कि आरम्भिक स्तर पर पाठ्यक्रम तथा निर्देशात्मक सामग्री का निर्माण स्थानीय बोली के आधार पर किया जाये। यह भी ध्यान रखा जाये कि क्षेत्रीय भाषा में परिवर्तन करने में इससे कठिनाई न हो।

(*iii*) अनुसूचित जनजातीय शिक्षित तथा प्रतिभाशाली युवकों को अनुसूचित क्षेत्रों में शिक्षण के लिये प्रोत्साहित तथा प्रशिक्षित किया जायेगा।

(*iv*) विस्तृत पैमाने पर आश्रम तथा आवासीय विद्यालयों की स्थापना की जायेगी।

(*v*) अनुसूचित जनजातियों की जीवन शैली तथा विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये प्रोत्साहन योजनायें आरम्भ की जायेंगी। उच्च शिक्षा हेतु तकनीकी, व्यावसायिक तथा अर्द्ध व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिये

नोट

छात्रवृत्तियाँ दी जायेंगी, विभिन्न पाठ्यक्रमों में उपलब्धि में सुधार के लिये मानक-सामाजिक उपाय अपनाकर निदान किया जायेगा।

(vi) अनुसूचित जनजातीय बहुल क्षेत्रों में प्राथमिकता के आधार पर आंगनवाड़ी, अनौपचारिक तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की स्थापना की जायेगी।

(vii) शिक्षा के सभी स्तरों पर पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार किया जायेगा जिससे उनमें अपनी सांस्कृतिक पहचान, सर्जनात्मक प्रतिभा के प्रति चेतना उत्पन्न हो।

अन्य शैक्षिक पिछड़े वर्ग तथा क्षेत्रों की शिक्षा

समाज के सभी शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में वांछित प्रोत्साहन दिये जायेंगे। पहाड़ी तथा रेगिस्तानी क्षेत्र, दुर्गम क्षेत्रों तथा टापुओं में आवश्यक शैक्षिक संरचना प्रदान की जायेगी।

अल्पसंख्यक

कुछ अल्पसंख्यक समुदाय शैक्षिक रूप से पिछड़े हुये हैं। सामाजिक न्याय तथा समानता के लिये इन समूहों में भी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। अपनी भाषा, संस्कृति के संरक्षण के लिये उन्हें अपने विद्यालयों को स्थापित करने के लिये अवसर देकर संविधान की गारन्टी का पालन किया जायेगा। मूल पाठ्यक्रम के साथ-साथ पाठ्य पुस्तकें, विद्यालयी गतिविधियों को सामान्य राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु समेकित आधार प्रदान किया जायेगा।

विकलांगों की शिक्षा

विकलांगों के सामान्य विकास के लिये उन्हें समानता के आधार पर जीवन का सामना करने, आत्म-विश्वास जागृत करने, साहस उत्पन्न करने हेतु शारीरिक तथा मानसिक रूप से विकलांगों के लिये वांछित शिक्षा व्यवस्था की जायेगी। इस दिशा में किये जाने वाले कार्य इस प्रकार हैं–

(i) जहां तक संभव हो अति विकलांगों, कम विकलांगों को सामान्य शिक्षा अन्य छात्रों के साथ दी जायेगी।

(ii) जिला मुख्यालयों पर अनेक प्रकार के विकलांगों के लिये विशेष विद्यालय तथा छात्रावास खोले जायेंगे।

(iii) विकलांगों को व्यावसायिक शिक्षा देने हेतु वांछित प्रबन्ध किये जायेंगे।

(iv) विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिये प्राथमिक स्तर पर विशेष शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया जायेगा।

(v) विकलांगों की शिक्षा के लिये स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा दिया जायेगा।

प्रौढ़ शिक्षा

हमारे धर्म-ग्रन्थों में शिक्षा की परिभाषा दी गयी है, जिसका मूल सार मुक्ति है। इसका अभिप्राय है, अज्ञान तथा अत्याचार से मुक्ति। आधुनिक युग में इसमें पढ़ने तथा लिखने की योग्यता निहित है। यही अधिगम का मूल साधन है, प्रौढ़ शिक्षा का महत्व, साक्षरता के साथ निर्णायक है।

विकास का जटिल युद्ध आज कौशल की उन्नति है जिसकी मानवशक्ति के रूप में समाज को आवश्यकता है। लाभ प्राप्तकर्त्ताओं के सहयोग से ऐसे निर्णायक महत्व के कार्यक्रम प्रौढ़ शिक्षा द्वारा चलाये जायेंगे जिनका सीधा सम्बन्ध राष्ट्रीय एकता, वातावरण संरक्षण, लोगों की सांस्कृतिक सर्जनात्मकता को शक्तिदायी बनाना, छोटे परिवार के मानकों का निर्धारण, नारी समानता आदि के वर्तमान कार्यों की समीक्षा करके उन्हें शक्तिशाली बनाना।

सम्पूर्ण राष्ट्र को यह संकल्प देना होगा कि 15-35 आयु वर्ग के लोगों से निरक्षरता समाप्त करनी होगी, केन्द्र तथा राज्य सरकारें, उनके राजनीतिक दल उनके जनसंगठन, जनसंचार, शिक्षा संस्थाओं आदि विभिन्न प्रकृति के साक्षरता कार्यक्रम अपनाने होंगें। अधिकांश संख्या में शिक्षकों, विद्यार्थियों, युवकों, स्वैच्छिक संस्थाओं, नियोजकों को इस कार्यक्रम के प्रति निष्ठा रखनी होगी। साक्षरता के साथ-साथ जन-साक्षरता अभियान में कार्यात्मक ज्ञान तथा कौशल, सामाजिक-आर्थिक यथार्थ का ज्ञान एवं उनमें परिवर्तन की सम्भावनाएँ देखनी होंगी।

प्रौढ़ एवं सतत् शिक्षा के लिये अनेक तरीकों तथा साधनों से विस्तृत कार्यक्रम इन साधनों को सम्मिलित कर चलाना होगा।

नोट

(*i*) ग्रामीण क्षेत्रों में सतत् शिक्षा के केन्द्रों की स्थापना।
(*ii*) नियोजकों, श्रमिक संघों तथा सरकार से सम्बन्धित एजेन्सियों द्वारा कार्मिकों की शिक्षा।
(*iii*) उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संस्थान।
(*iv*) पुस्तकों, पुस्तकालयों, रीडिंग रूम का विस्तार।
(*v*) रेडियो, टी. वी. फिल्म का जन तथा समूह अधिगम के साधन के रूप में।
(*vi*) सीखने वालों के समूह तथा संगठनों का निर्माण।
(*vii*) सुदूर शिक्षा कार्यक्रम।
(*viii*) स्व-अधिगम हेतु संगठनों को सहायता।
(*ix*) आवश्यकता तथा रुचि पर आधारित व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाना।

नोट्स हमारे धर्म-ग्रन्थों में शिक्षा की परिभाषा दी गयी है, जिसके अनुसार मुक्ति मिलती है। इसका अभिप्राय है, अज्ञान तथा अत्याचार से मुक्ति।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

1. **निम्नलिखित वाक्यों में सत्य/असत्य की पहचान करें (State whether the following statements 'True' or 'False')—**

"राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अनुसार"

1. भारत में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के मूल सिद्धांत संविधान प्रदत्त हैं।
2. संविधान संशोधन-1976 के अनुसार शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा गया।
3. प्री मैट्रिक छात्रवृत्ति कक्षा-6 से ही उन परिवारों के बच्चों को, जो पशुओं के खाल उतारने, रंगते एवं साफ करते हैं।
4. अनुसूचित जनजातीय शिक्षित तथा प्रतिभाशाली युवकों को अनुसूचित क्षेत्रों में शिक्षण के लिए प्रोत्साहित तथा प्रशिक्षित किया जायेगा।
5. प्रौढ़ एवं सतत् शिक्षा के लिए ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में सतत् शिक्षा केन्द्रों की स्थापना करना।

6.3 शिक्षा का पुनर्गठन (Re-organization of Education)

पूर्व बाल्यावस्था की देखभाल की शिक्षा

बालकों की राष्ट्रीय नीति, छोटे बच्चों की शिक्षा को निवेश मानना विशेष रूप से उन बच्चों को जो ऐसी जनसंख्या से आते हैं, जिनमें पहली पीढ़ी के छात्रों की संख्या अधिकतम होती है। बाल विकास की महत्वपूर्ण प्रकृति को पहचानते हुये पोषण, स्वास्थ्य, सामाजिक, मानसिक, शारीरिक, नैतिक एवं संवेगात्मक आदि, अर्थात् पूर्व बाल्यावस्था की देखभाल एवं शिक्षा को बाल विकास सेवा कार्यक्रम में उच्च स्थान दिया जायेगा। दिवस-सेवा केन्द्रों (Day Care Centre) को सहयोगी सेवा के रूप में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु आरम्भ किया जायेगा। इससे निर्धन परिवारों की लड़कियों—जिन्हें अपने भाई-बहनों को सम्भालना पड़ता है—को विद्यालय जाने के अवसर प्राप्त होंगे। ई. सी. सी. ई. के कार्यक्रम बाल, अभिभावित (Child Oriented) होंगे। ये खेल तथा बालकों की वैयक्तिकता पर केन्द्रित होंगे। इस अवस्था में पढ़ने, लिखने तथा गिनने (3 R's) तथा औपचारिक शिक्षा को आरम्भ नहीं किया जायेगा। इस कार्यक्रम में स्थानीय समुदाय का पूरा सहयोग लिया जायेगा। बाल पोषण तथा पूर्व प्राथमिक शिक्षा को समेकित

नोट

किया जायेगा। यह एक ओर बालकों को विकसित करेगा तो दूसरी ओर प्राथमिक शिक्षा के लिये उन्हें तैयार करना होगा। यह तैयारी सामान्य रूप से मानव संसाधन विकास के लिये होगी। इस अवस्था में सातत्य में विद्यालयी स्वास्थ्य कार्यक्रम को भी शक्तिशाली बनाया जायेगा।

प्राथमिक शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा में इस नवीन दखल से दो बातों पर बल दिया जायेगा–

(*i*) सार्वभौम प्रवेश एवं सार्वभौम प्रतिधारण (Retention) (14 वर्ष की आयु तक)।

(*ii*) शिक्षा में वांछित मात्रा में गुणात्मक सुधार।

बाल केन्द्रित अधिगमन

बालक की आवश्यकताओं पर सभी पक्षों का ध्यान केन्द्रित करने वाला प्रोत्साहित, स्वागत योग्य एवं तरोताजा अधिगम यह है कि बालकों को विद्यालय में जाने और सीखने के लिये अभिप्रेरित किया जाये। प्राथमिक स्तर पर बाल केन्द्रित, क्रिया आधारित कार्यक्रम, शिक्षा हेतु अपनाना चाहिये। पहली पीढ़ी के सीखने वालों को अपनी गति का निर्धारण सहायक निदानात्मकसामग्री द्वारा स्वयं करना है। बालक के विकास के साथ-साथ ज्ञानात्मक अधिगम में वृद्धि की जायेगी और अभ्यास के द्वारा कौशलों का संगठन किया जायेगा। प्राथमिक स्तर पर अनुत्तीर्ण करने की नीति नहीं अपनाई जायेगी। मूल्यांकन को यथासम्भव औसत पर आधारित नहीं रखा जायेगा। शिक्षा प्रणाली के शारीरिक दण्ड पूर्णतः समाप्त किया जायेगा। बालकों को सुविधा के अनुसार अवकाश तथा विद्यालय समय का समायोजन किया जायेगा।

विद्यालयी सुविधायें

दो बड़े कमरों (सभी मौसम में उपयोगी), खिलौने, श्यामपट, नक्शे, चार्ट्स तथा अन्य शैक्षिक-सामग्री एवं आवश्यक सुविधायें प्राथमिक विद्यालयों में दी जायेंगी। यथासम्भव एक विद्यालय में दो शिक्षक होंगे, जिनमें एक महिला होगी, छात्रों की संख्या बढ़ने पर प्रत्येक कक्षा के लिये एक शिक्षक की व्यवस्था की जायेगी। **'ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड-** नामक एक प्रतीकात्मक आन्दोलन देश के सभी प्राथमिक विद्यालयों के विकास हेतु चलाया जायेगा। इसमें सरकार, स्थानीय निकाय, स्वैच्छिक संस्थायें तथा व्यक्ति पूरी तरह से संलग्न होंगे। एन. आर. ई. पी. तथा आर. एल. ई. जी. फण्ड का प्राथमिक उपयोग विद्यालय भवनों का निर्माण करना है।

अनौपचारिक शिक्षा

अनुत्तीर्ण बालकों, विद्यालय न जाने वाले बालकों, कार्यशील बालक-बालिकायें जो पूरे दिन विद्यालय नहीं जा सकते, उनके लिये वृहद् एवं व्यवस्थित अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी।

अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के शैक्षिक वातावरण को विकसित करने के लिये आधुनिक तकनीकी सहायता का प्रयोग किया जायेगा। समुदाय में से योग्य तथा प्रतिभाशाली व्यक्तियों का चयन शिक्षक के रूप में किया जायेगा। उनके प्रशिक्षण पर पूरा ध्यान केन्द्रित किया जायेगा। योग्यताओं की अनौपचारिकता को शिक्षा के प्रवाह में लाया जायेगा। इस बात का ध्यान रखा जायेगा कि अनौपचारिक तथा औपचारिक शिक्षा में गुणात्मक अन्तर न हो।

राष्ट्रीय आधारभूत पाठ्यक्रम को अनौपचारिक शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाया जायेगा। यह पाठ्यक्रम छात्र की आवश्यकता तथा स्थानीय वातावरण के अनुसार होगा। उच्च कोटि की शिक्षण-सामग्री का निर्माण किया जायेगा और उसे छात्रों को निःशुल्क दिया जायेगा। अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम सहभागी अधिगम वातावरण जैसे खेल-कूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, भ्रमण आदि प्रदान करेंगे।

अनौपचारिक शिक्षा का अधिकांश कार्यक्रम स्वैच्छिक संस्थाओं तथा पंचायत राज संस्थाओं द्वारा किया जायेगा। इन संस्थाओं को पर्याप्त धन समय पर उपलब्ध कराया जायेगा। सरकार इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के लिये सम्पूर्ण दायित्व वहन करेगी।

नोट

एक प्रस्ताव

नई शिक्षा नीति, समय से पूर्व विद्यालय छोड़ देने वाले बालकों की समस्याओं के समाधान को प्राथमिकता देगी, सरकार इस कार्य को युद्ध स्तर पर सूक्ष्म नियोजन द्वारा पूरे देश में मूल आधार से आरम्भ करेगी और यह देखेगी कि विद्यालय में बालक रहें। यह कार्य अनौपचारिक शिक्षा के तन्त्र द्वारा समेकित होगा। यह ध्यान रखा जायेगा कि 1990 तक जो बालक 17 वर्ष की आयु प्राप्त करेंगे, उन्हें पाँच वर्ष की विद्यालयी शिक्षा या उसके समानान्तर अनौपचारिक प्रवाह में शिक्षा प्रदान की जाये। 1995 तक 14 वर्ष की आयु के सभी बालकों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जायेगी।

माध्यमिक शिक्षा

माध्यमिक शिक्षा, विज्ञान, मानविकी तथा सामाजिक विज्ञानों में छात्रों की विभिन्न भूमिकाओं को अभिव्यक्त करती है। यही वह उचित अवस्था है जिसमें इतिहास को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में पढ़ाया जाये, नागरिक के रूप में संवैधानिक अधिकार तथा कर्त्तव्यों को समझने के अवसर प्रदान किये जायें। आन्तरिक स्वस्थ कार्यों के सचेतन प्रयास, लोकाचार, मूल्य, संगुणित संस्कृति को उचित पाठ्यक्रम के अन्तर्गत लाया जायेगा। विशेष संस्थाओं के द्वारा व्यावसायीकरण करके माध्यमिक शिक्षा का पुनर्नवीनीकरण किया जायेगा जिससे आर्थिक विकास के लिये मानव शक्ति प्राप्त हो सके। माध्यमिक शिक्षा का विस्तार अछूते क्षेत्रों में किया जायेगा। अन्य क्षेत्रों में मुख्य बल एकीकरण पर दिया जायेगा।

प्रगति मूलक विद्यालय

सार्वभौम रूप से यह स्वीकार किया गया है कि विशेष प्रतिभा या रूझान वाले बालकों को तीव्र प्रगति के लिये उत्तम शिक्षा, बिना आर्थिक भार के प्रदान की जाये। प्रगतिमूलक विद्यालय, जो इस उद्देश्य की पूर्ति करेंगे, की स्थापना, निश्चित ढाँचे के अनुसार देश भर में स्थापित किये जायेंगे। इनमें आविष्कार तथा प्रयोगों की पूरी सुविधा होगी। इनका मुख्य उद्देश्य समानता तथा सामाजिक न्याय के आधार पर उत्तमता को विकसित करना होगा। (इसमें अनुसूचित जाति तथा जनजाति के संरक्षण भी है।) इससे देश के भिन्न-भिन्न ग्राम क्षेत्रों के प्रतिभावान बालक एक साथ रहेंगे और राष्ट्रीय एकता का विकास करेंगे। वे विद्यालय सुधार में राष्ट्रीय कार्यक्रम के महत्वपूर्ण अंग होंगे। ये विद्यालय आवासीय तथा निःशुल्क होंगे।

व्यावसायीकरण–प्रस्तावित शिक्षा संगठन में व्यवस्थित, सुनियोजित तथा कठोर कदम व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम के लिये उठाने होंगे। ये कदम व्यक्ति को रोजगारपरक बनाने के लिये हैं, कुशल जनशक्ति की माँग और पूर्ति में सन्तुलन बनाये रखना होगा और उन लोगों को विकल्प प्रदान करना होगा जो बिना किसी लक्ष्य शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

व्यावसायिक शिक्षा एक विशेष प्रवाह है जिसके द्वारा प्रवृत्तियों (Activity) से विस्तृत क्षेत्र में छात्रों को अपने व्यवसाय की पहचान बनानी है। ये पाठ्यक्रम माध्यमिक स्तर पर दिये जायेंगे, किन्तु इसमें इतना लचीलापन अवश्य रखा गया है कि उन्हें आठवीं कक्षा में भी लिया जा सके। समेकित व्यावसायिक शिक्षा को उत्तम बनाने के लिये औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं का विकास व्यवसाय-प्रतिमान के आधार पर किया जायेगा।

स्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के माध्यमों से, शिक्षा एवं सेवा को समेकित करना होगा। स्वास्थ्य शिक्षा, जो प्राथमिक तथा मिडिल स्तर पर दी जायेगी, वह व्यक्ति तथा परिवार और फिर सामुदायिक स्वास्थ्य का रूप लेगी और माध्यमिक स्तर पर + 2 में स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यावसायिक पाठ्यक्रम का रूप लेंगे। कृषि विपणन (Marketing), समाज सेवा के क्षेत्र में भी ऐसे ही पाठ्यक्रम अपनाये जायेंगे। व्यावसायिक शिक्षा द्वारा मनोवृत्ति, ज्ञान, कौशल उद्यम एवं स्वरोजगार की भावना विकसित की जायेगी।

व्यावसायिक पाठ्यक्रम संस्थान की स्थापना का दायित्व सरकार एवं नियोजक, दोनों का ही सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में हैं। सरकार नगरों, ग्राम तथा जनजातीय क्षेत्रों के छात्रों, समाज के वंचित वर्गों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान देगी। विकलांगों के लिये वांछित कार्यक्रम चलाये जायेंगे।

व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के स्नातकों को, कतिपय शर्तों के साथ, सम्पर्क पाठ्यक्रमों (Bridge Courses) के द्वारा व्यावसायिक विकास, संवाहक (Career) विकास फिर सामान्य, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा में पार्शिवक (Laternal) प्रवेश दिया जायेगा।

नोट

अनौपचारिक नमनीय (Flexible) तथा आवश्यकता आधारित व्यावसायिक पाठ्यक्रम, प्राथमिक शिक्षा प्राप्त, स्कूल छोड़े हुये, कार्यरत् व्यक्तियों, बेरोजगारों तथा आंशिक रूप से बेरोजगारों के लिये उपलब्ध होंगे। नारियों पर इस दिशा में विशेष ध्यान दिया जायेगा।

वैकल्पिक पाठ्यक्रम ऐसे स्नातकों के लिये बनाये जायेंगे जिन्होंने बौद्धिक (Academic) प्रवाह द्वारा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा प्राप्त की है और वे व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं।

यह भी प्रस्तावित है कि 1990 तक 10% एवं 1995 तक 25% छात्र हायर सेकेण्डरी स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम लेंगे। ऐसे कदम उठाये जायेंगे कि व्यावसायिक पाठ्यक्रम लेने वालों को रोजगार मिले या स्वरोजगार में लगें। प्रस्तावित पाठ्यक्रमों की नियमित समीक्षा की जायेगी। सरकार भी अपनी चयन नीति (Recruitment) की समीक्षा माध्यमिक स्तर पर विभिन्नीकरण को प्रोत्साहित करने हेतु करेगी।

उच्च शिक्षा

उच्च शिक्षा, जनता को प्रतिक्रिया व्यक्त करने के ऐसे अवसर प्रदान करती है, मानवता जिनका मुकाबला कर रही है। वह सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विषयों पर तार्किकता से विचार करती है। अस्तित्व के लिये यह महत्वपूर्ण कारक है। शिक्षा के पिरामिड के शीर्ष होने के नाते, शिक्षा प्रणाली के लिये शिक्षकों का निर्माण करना एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

ज्ञान के असीम विस्फोट के सन्दर्भ में भूतकाल की तुलना में अछूते क्षेत्रों में प्रवेश के कारण निरन्तर गतिशील रही है।

भारत में 1986 में लगभग 150 विश्वविद्यालय और 5000 कॉलेज थे। इन संस्थानों में सर्वांगीण विकास की आवश्यकता को देखते हुये यह प्रस्तावित किया गया कि निकट भविष्य में विद्यमान संस्थानों में एकीकरण तथा सुविधाओं के प्रसार किये जायें। विश्वविद्यालयी प्रणाली में गिरावट से रक्षा के लिये शीघ्र उपाय किये जायें।

कॉलेजों की सम्बद्धता के मिश्रित अनुभवों को ध्यान में रखते हुये स्वायत्तशासी महाविद्यालय इस प्रणाली के विकास में सहायक होंगे। जब तक कि सम्बद्धता प्रणाली को मुक्ति एवं अधिक सर्जनात्मक रूप से परिवर्तित किया जाये। इसके लिये विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में सम्बन्ध रखा जाये। इसी के समानान्तर विश्वविद्यालयों के विभागों को चयन के आधार पर स्वायत्तशासी बनाया जाये। स्वायत्तता तथा स्वतन्त्रता को प्रतिबद्धता (Accountability) के साथ जोड़ना होगा।

विशेषीकरण को उत्तम बनाने के लिये पाठ्यक्रमों की पुनर्रचना करनी होगी। भाषा की सक्षमता पर विशेष ध्यान देना होगा। पाठ्यक्रमों के संयोगों में नमनीयता में वृद्धि की जायेगी।

प्रदेशों में उच्च शिक्षा परिषद् के माध्यम से राज्य स्तर पर नियोजन एवं समन्वय किया जायेगा। यू. जी. सी. एवं ये परिषद् (Councils) समन्वय विधियों का स्तर निर्माण में सहायता करेंगे।

क्षमता के अनुरूप प्रत्येक महाविद्यालय में प्रवेश एवं न्यून सुविधायें प्रदान की जायेंगी। शिक्षण विधियों में सुधार पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। दृश्य-श्रव्य सामग्री एवं विद्युत उपकरणों को आरम्भ किया जायेगा। विज्ञान तथा तकनीकी के पाठ्यक्रम, सामग्री, अनुसन्धान, शिक्षक अभिनवन को प्राथमिकता दी जायेगी। यह शिक्षकों को सेवा आरम्भ में तथा सेवाकालीन प्रशिक्षण के माध्यम से किया जायेगा। शिक्षकों की निष्पत्ति का विधिपूर्वक मूल्यांकन किया जायेगा। सभी पदों को योग्यता के आधार पर भरा जायेगा।

विश्वविद्यालयों में किये जाने वाले अनुसन्धान की गुणात्मकता में वृद्धि करने के अवसर प्रदान किये जायें। अछूते क्षेत्रों में अनुसन्धान के लिये विश्वविद्यालय में यू. जी. सी. समन्वय करेगी। यह समन्वय अन्य संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले अनुसन्धान में होगा। स्वायत्त व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर अनुसन्धान को प्रोत्साहित किया जायेगा।

भारतीय विद्या, मानविकी, समाज विज्ञान को पर्याप्त सहायता दी जायेगी। ज्ञान समेकन के लिये अन्तर विद्या अधिगमन को बढ़ावा दिया जायेगा। समकालीन यथार्थ से प्राचीन ज्ञान को जोड़ा जायेगा। यह प्रयास संस्कृत तथा अन्य शास्त्रीय भाषाओं के विकास की सुविधायें प्रदान करेगा।

नीति में अधिक मात्रा में समन्वय तथा सातत्यता बनाये रखने के लिये अन्तर विद्या अधिगमन के क्षेत्र में अनुसन्धान को प्राथमिकता दी जायेगी। राष्ट्रीय स्तर पर एक समिति का गठन कृषि, चिकित्सा, तकनीकी, विधि तथा अन्य व्यावसायिक क्षेत्रों में अनुसन्धान के लिये किया जायेगा।

नोट

शिक्षा नीति 1986—उपलब्धियाँ एक मूल्यांकन

स्वाधीनता-प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि राष्ट्रीय शिक्षा के स्वरूप तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकता चौथे दशक की समाप्ति पर तीव्रतर हुई। इस दिशा में देश के पहले राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) ने पहली बार विचार किया और 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रस्तावित की। संयोगों तथा विद्यमान सामाजिक संघर्षों ने जनता सरकार का गठन किया और उसने भी लक्ष्यों का निर्धारण कर 1979 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का भारतीय विकल्प प्रस्तुत किया। काल की परिवर्तित धारा ने पुन: कांग्रेस सरकार की स्थापना की और वर्तमान सरकार ने इसके महत्व को समझा। शिक्षा की चुनौती-नीति परिप्रेक्ष्य पर दस्तावेज जारी कर राष्ट्रव्यापी बहस कराई गई। इस बहस का परिणाम है नई शिक्षा नीति।

भारत सरकार ने 1986 में नई शिक्षा नीति, राष्ट्र विकास के व्यापक एवं महत्वपूर्ण संकल्प की पूर्ति के लिये प्रकाशित की। गुजरात के तत्कालीन राज्यपाल **माननीय रामकृष्ण त्रिवेदी** ने नई शिक्षा नीति की सार्थकता पर प्रकाश डालते हुये कहा—देश के सर्वोन्मुखी विकास का उद्देश्य रखकर नई शिक्षा नीति का ढाँचा तैयार किया गया है। शिक्षण केवल चार दीवारों के बीच की एक जड़ प्रक्रिया न रहकर देश के सर्वांगीण विकास को गतिशील और ठोस बनाये और राष्ट्रीय एकता, अपनी पुरातन सभ्यता और भारतीय संस्कारों के अनुसार इस देश के विद्यार्थियों को आधुनिक शिक्षा प्रवाह से इस तरह अवगत कराया जाये ताकि वे सब इस देश के आदर्श नागरिक बन सकें, यह नई शिक्षा नीति का परम ध्येय है, यही है इसका मुख्य लक्ष्य।

शिक्षा का दायित्व किस पर है, समाज पर, सरकार पर; कौन इससे लाभ उठाता है, कौन किस पर खर्च करता है; आदि ऐसे प्रश्न हैं, जिन पर पुनर्विचार आवश्यक है। इस प्रश्न की गंभीरता तथा नई शिक्षा नीति की आवश्यकता तथा प्रतिबद्धता के विषय में हरियाणा प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री माननीय देवीलाल का कथन है—आज हमारी शिक्षा दिनों-दिन महँगी होती जा रही है, एक तरफ इस प्रकार के पब्लिक स्कूल हैं और दून स्कूल हैं जहाँ प्रति विद्यार्थी, प्रति मास हजारों रुपया खर्च होता है और दूसरी तरफ ऐसे स्कूल हैं, जहाँ विद्यार्थियों को बैठने तक को टाट पट्टी भी नसीब नहीं है। शिक्षा के दोहरे मानदण्डों को जब तक समाप्त नहीं किया जाता, अमीर और गरीब, दोनों के बच्चों को जब तक एक ही बैंच पर बैठाकर शिक्षा देने की व्यवस्था नहीं की जाती, तब तक हम उन मानव मूल्यों और नैतिक गुणों तथा भारतीय आदर्शों को प्राप्त नहीं कर सकते जो हमारी शिक्षा का मुख्य आधार होने चाहियें। इसलिये नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सर्वांग स्वरूप पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मुद्दे

शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देती है। भारत में प्रत्येक शासन काल में शासकों ने अपने आदर्शों तथा दर्शन के सन्दर्भ में शिक्षा नीति का निर्माण किया। इसका प्रमुख कारण रहा है कि शिक्षा सदा से मानव इतिहास को विकसित करती रही है, इसने काल की चेतावनी तथा सामाजिक, सांस्कृतिक चुनौती का सामना किया है। आदि काल से चली आ रही शिक्षा की, प्रक्रिया आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति की घोषणा की। इस नीति में निम्नलिखित तथ्य अपनाये गये—

शिक्षा की भूमिका और तत्व—राष्ट्रीय सन्दर्भ में शिक्षा सभी के लिये आवश्यक है, सर्वांगीण विकास का यह आधार है। शिक्षा सांस्कृतिक सम्मिश्रण की भूमिका प्रस्तुत करती है। इसमें संविधान में प्रदत्त जनतन्त्र और धर्म निरपेक्षता के लक्ष्य को प्राप्त करने की शक्ति है। बौद्धिक स्वतन्त्रता, वैज्ञानिक स्वभाव और राष्ट्रीय समग्रता की दृष्टि से यह संवेदना का विकास करती है, सभी आर्थिक स्तरों पर यह जनशक्ति का निर्माण करती है। राष्ट्र में आत्म-निर्भरता के लिये अनुसंधान द्वारा नये क्षेत्रों का पता लगाती है और इन सबसे परे शिक्षा वर्तमान तथा भविष्य में विनियोग है और राष्ट्रीय शिक्षा नीति का यह महत्वपूर्ण बिन्दु है।

शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली—नई शिक्षा नीति में पूरे देश में एक समान शिक्षा प्रणाली लागू करने पर बल दिया गया है। शिक्षा के सभी स्तरों पर एक जैसी शिक्षा प्रणाली राष्ट्र के शैक्षिक विकास के लिये होनी चाहिए।

शिक्षा और समानता—समाज के विभिन्न वर्गों में शिक्षा की भिन्नताएँ पाई जाती हैं। इन असमानताओं को दूर करने के लिये अनेक उपाय इन क्षेत्रों में किये गये हैं।

नोट

नारी समानता के लिये शिक्षा—नयी शिक्षा नीति में कहा गया है कि शिक्षा नारियों के आधारभूत स्तर में परिवर्तन लाने का एक सशक्त साधन है। नारी शिक्षा के क्षेत्र में अनेक भिन्नताएँ पायी जाती हैं, इन भिन्नताओं को दूर करने के लिये विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जाना आवश्यक है। निरक्षरता उन्मूलन, व्यावसायिक शिक्षा, पोषण और कल्याण, गृहकला और प्रबन्ध आदि पाठ्यक्रमों के साथ-साथ विभिन्न गैर पारस्परिक पाठ्यक्रमों के निर्माण पर भी बल दिया गया है।

अनुसूचित जातियों की शिक्षा—नई शिक्षा नीति में गाँव और शहर के अनुसूचित जाति के स्त्री और पुरुषों की शिक्षा के लिये विशेष व्यवस्था पर बल दिया गया है। अनेक पारस्परिक पाठ्यक्रम, छात्रवृत्ति अध्यापन, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम आदि के द्वारा अनुसूचित जाति में शैक्षिक समानता के अवसर प्रदान करने पर बल दिया गया है।

जनजातियों की शिक्षा—जनजातीय कल्याण के लिये जनजातीय भाषाओं के आधार पर आवासीय आश्रम, विद्यालयों की स्थापना, विभिन्न प्रकार के तकनीकी पाठ्यक्रम, उच्च शिक्षा के लिये छात्रवृत्तियों आदि की व्यवस्था की गयी है।

अन्य पिछड़े वर्गों की शिक्षा—अन्य पिछड़े वर्गों में अल्पसंख्यकों, विकलांगों तथा सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों की शिक्षा की व्यवस्था के लिये छात्रवृत्ति, विशेष विद्यालयों, विशेष तकनीकी तथा प्राविधिक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की गयी है।

प्रौढ़ शिक्षा—भारत की बहुत बड़ी जनसंख्या निरक्षर है, इसलिये ग्राम तथा नगर क्षेत्रों में सतत् शिक्षा, श्रमिक शिक्षा, प्रौढ़ साहित्य तथा पुस्तकालय, जन संचार, सुदूर शिक्षा, स्वयं शिक्षा तथा अन्य प्रकार के पाठ्यक्रमों को लागू करने का प्रयास किया जायेगा।

शिक्षा का पुनर्गठन

पूर्व बाल्यावस्था—पूर्व बाल्यावस्था बालक की शिक्षा का महत्वपूर्ण वर्ष है। इस अवस्था में बालकों को उचित पोषण, स्वास्थ्य, सामाजिक, मानसिक, शारीरिक, नैतिक तथा संवेगात्मक विकास की आवश्यकता है। इसलिये पूर्व प्राथमिक स्तर पर सुसंगठित पाठ्यक्रम का निर्माण आवश्यक है।

प्राथमिक शिक्षा—प्राथमिक शिक्षा 14 वर्ष तक की आयु के बालकों के लिये गुणात्मक रूप से आवश्यक है। इस स्तर पर शिक्षा का संगठन निम्न प्रकार किया गया है—

(क) शिक्षा का केन्द्र बालक को माना गया है—बिना भय और आतंक के बालक की आवश्यकताओं को आधार मानकर शिक्षा दी जाये।

(ख) प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम से कम ऐसे दो कमरे होंगे जिन्हें हर मौसमों में इस्तेमाल किया जायेगा। प्रत्येक शिक्षा प्रणाली में कम से कम एक दिन आदर्श रूप में निर्मित कराया जायेगा।

(ग) प्राथमिक स्तर पर अनौपचारिक शिक्षा पर भी बल दिया जायेगा। यह शिक्षा उन लोगों के लिये होगा जो अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं।

(घ) पाठ्यक्रम का निर्माण बालकों और समुदाय की आवश्यकताओं के अनुरूप होगा और यह शिक्षा 14 वर्ष तक की आयु के बालकों के लिये अनिवार्य रूप से नि:शुल्क दी जायेगी।

माध्यमिक शिक्षा—नई शिक्षा नीति में माध्यमिक स्तर पर शिक्षा तथा मानविकी, मानव विकास के लिये नई भूमिकाओं का अध्ययन करता है। स्वस्थ, चेतन और कर्त्तव्यनिष्ठ नागरिकों के निर्माण के लिये माध्यमिक शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है। इस स्तर पर जो पीढ़ी तैयार होती है, वह समाज में सेतु का निर्माण करती है। इसलिये माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के विभिन्न पक्षों का आधार पर शिक्षा का व्यावसायिकीकरण करने पर बल दिया गया। स्वास्थ्य योजनायें और सेवायें लागू की जायेंगी। शिक्षा के इस स्तर पर अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी।

उच्च शिक्षा—उच्च शिक्षा व्यक्ति में तार्किक दृष्टिकोण विकसित करती है। शिक्षा का चरम बिन्दु होने के कारण इस स्तर पर शिक्षकों का महत्व बढ़ जाता है। इस समय भारत में लगभग 222 से अधिक विश्वविद्यालय है और 8000 से अधिक महाविद्यालय हैं। महाविद्यालय विश्वविद्यालय के साथ सम्बद्ध हैं। उच्च स्तर पर शोध को बढ़ावा देना आवश्यक है इसलिये देश के 500 महाविद्यालयों को स्वायत्तता प्रदान करने का संकल्प किया है, यह स्वायत्तता

नोट

महाविद्यालय के सर्वांगीण विकास के लिये आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अन्तर विद्याध्ययन, कृषि चिकित्सा, तकनीकी, विधि (Law) तथा अन्य व्यावसायिक क्षेत्रों में नवीन पाठ्यक्रमों को लागू किया जायेगा।

खुले विश्वविद्यालय और सुदूर शिक्षा—ऐसे व्यक्ति जो किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाये हैं या अपनी कारोबारी जिन्दगी के साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं, ऐसे लोगों के लिये खुले विश्वविद्यालय की स्थापना की जाती है। देश का पहला राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय इन्दिरा गाँधी विश्वविद्यालय नयी दिल्ली में स्थापित किया गया है।

डिग्री का रोजगार से सम्बन्ध समापन—नई शिक्षा में डिग्री तथा रोजगार के सम्बन्ध को समाप्त करने की दिशा में प्रयास किया गया है। ऐसा सम्बन्ध समापन उन व्यावसायों के लिये होगा जिनके लिये विश्वविद्यालयी ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। यह बात चिकित्सा, इन्जीनियरिंग, कानून शिक्षण तथा ऐसे अन्य व्यवसायों पर लागू नहीं होगी जिनके लिये विज्ञान का उच्च शैक्षिक ज्ञान आवश्यक है।

ग्रामीण विश्वविद्यालय—नई शिक्षा नीति में महात्मा गाँधी के क्रान्तिकारी विचारों के आधार पर नये ग्रामीण विश्वविद्यालयों की स्थापना और पुराने विश्वविद्यालयों के पुनर्गठन पर बल दिया जायेगा।

तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा—यद्यपि तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा दो अलग-अलग धाराओं में चल रही है, इसका समन्वय करना आवश्यक है, इसलिये तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा को आर्थिक, सामाजिक वातावरण, उत्पादन तथा प्रबन्ध प्रक्रिया के सम्बन्ध में पुनर्गठित करना होगा। ग्राम, नगर उद्योग और व्यवसाय सभी को प्रबन्ध शिक्षा के अन्तर्गत लाना होगा। कम्प्यूटर की शिक्षा विद्यालय स्तर से करनी होगी। सतत् शिक्षा के अन्तर्गत इन सबको लाना होगा। देश में चल रहे पॉलिटैक्निक को भी इसी आधार पर पुनर्गठित करना होगा।

नवीनीकरण अनुसंधान तथा विकास—तकनीकी शिक्षा के उच्च स्तरों पर नवीनीकरण आवश्यक है। इस दृष्टि से अनुसंधान तथा विकास पर विशेष बल दिया जायेगा। शिक्षा के सभी स्तरों पर कुशलता तथा प्रभावशीलता के विकास के लिये प्रयास करने होंगे। देश, काल और परिस्थिति के अनुसार पाठ्यक्रमों का पुनर्निर्माण करना होगा। इस दृष्टि से अनेक स्वायत्त संस्थाओं का गठन किया जायेगा।

व्यवस्था कार्य का निर्माण—नई शिक्षा नीति के विभिन्न कार्यक्रमों को सम्पन्न करने के लिये व्यवस्था विकसित की जायेगी। जिसके अधीन शिक्षकों, छात्रों, शिक्षण संस्थाओं और उनकी उपलब्धियों को राष्ट्रीय स्तर पर विकसित किया जायेगा।

शिक्षा की प्रक्रिया का अभिनव—वर्तमान शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन करने के लिये इसके दोषों को दूर करना होगा, जिसके लिये मानविकी, सामाजविज्ञान तथा शिक्षा का उचित शिक्षण आवश्यक है। विशेष विषयों जैसे ललित कला, संग्रहालय विज्ञान, लोक साहित्य के शिक्षण तथा अनुसंधान की व्यवस्था करनी होगी। मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय मूल्यों का विकास करने की दिशा में कदम उठाये जायेंगे। 1964 की भाषानीति को अपनाया जायेगा। पुस्तकालयों का विकास करना होगा और शैक्षिक तकनीकी के द्वारा नवीन शिक्षण विधियों को विकसित कर वांछित उपलब्धियाँ संचित की जायेंगी। कार्यानुभव, पर्यावरण, गणित, विज्ञान, खेलकूद तथा शारीरिक शिक्षा के द्वारा सर्वांगीण विकास पर बल दिया जायेगा।

मूल्यांकन प्रणाली—आन्तरिक मूल्यांकन शिक्षा का अनिवार्य अंग होगा। छात्रों की उपलब्धि के मूल्यांकन के लिये ठोस उपाय अपनाये जायेंगे।

शिक्षक—शिक्षकों के स्तर को ऊँचा रखने के लिये विशेष प्रयास किये जायेंगे जिसमें शिक्षकों के चयन पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। शिक्षक परिषदों को मान्यता दी जायेगी और शिक्षक शिक्षा के लिये विशेष उपाय किये जायेंगे।

शिक्षा की व्यवस्था—शिक्षा को पुनर्गठित करने के लिये आमूल परिवर्तन किया जायेगा। जिसके अधीन दीर्घकालीन योजना का निर्माण, विकेन्द्रीकरण, शिक्षण संस्थाओं की स्वायत्तता, नारी शिक्षा पर विशेष बल दिया जायेगा। राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय शिक्षा सेवा का गठन होगा और राज्य स्तर पर शिक्षा सलाहकार परिषदों का गठन होगा, जिला स्तर पर जिला बोर्ड सेकेण्ड्री शिक्षा तक शिक्षा का गठन करेंगे। इस दिशा में विशेष रूप से प्रशिक्षित व्यक्तियों का सहयोग लिया जायेगा।

नोट

साधन—कोठारी कमीशन तथा 1968 की शिक्षा नीति ने शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधनों के निर्माण पर विशेष बल दिया है। इस दृष्टि से दान, अनुदान, फीस, उद्योग- आदि के द्वारा धन एकत्र किया जायेगा। प्रत्येक पाँच वर्ष में शिक्षा की प्रगति का सिंघावलोकन होगा।

भविष्य—भावी शिक्षा का क्या स्वरूप होगा, यह कहना कठिन है; फिर भी परम्परा से प्राप्त उच्चतम बौद्धिक स्तर को बनाये रखने के प्रयास किये जायेंगे। बीसवीं सदी की समाप्ति तक यह आशा की जाती है कि जीवन की विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह करने में भारतीय शिक्षा विश्व में उच्चतम स्थान बना लेगी।

टास्क भारत सरकार ने नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति कब प्रकाशित की?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. सन् ········· में हन्टर कमीशन ने शिक्षा प्रणाली पर सर्वप्रथम विचार किया।
2. नई शिक्षा प्रणाली विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या ········· कर सकेगी।
3. विद्यार्थियों को जब रोजगार की प्राप्ति नहीं होती तभी वे ········· रूप से प्रवेश लेते हैं।
4. नई शिक्षा-प्रणाली में समस्त विषय इस प्रकार के हैं जिनका शिक्षा का स्तर ········· है।
5. नई शिक्षा-प्रणाली ने ········· शिक्षा को अधिक प्रधानता दी है।
6. नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य शिक्षा के स्तर को ········· बनाना है।

6.4 सारांश (Summary)

- प्राचीन काल में भारत में बालक की शिक्षा का प्रारम्भ 5 वर्ष की आयु से होता था जिसमें ब्राह्मण 6, क्षत्रिय 11 और वैश्य 12 वर्ष की आयु में उपनयन संस्कार के पश्चात् गुरुकुलों में शिक्षा ग्रहण करने जाते थे। शूद्रों को शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था न थी। शिक्षा के दो स्तर होते थे— (1) प्रारम्भिक (2) उच्च।
- शिक्षा प्रणाली का सर्वप्रथम 1882 में हण्टर कमीशन ने विचार किया। उसने शिक्षा के अनेक चरण प्रस्तावित किये। उस समय दस वर्ष की एन्ट्रेंस, दो वर्ष की अन्तर स्नातक दो वर्ष की स्नातक और दो वर्ष की परास्नातक स्नातकोत्तर प्रणाली प्रचलित थी।
- 1917-19 में सैडलर कमीशन ने अनुभव किया कि शिक्षा की प्रकृति में परिवर्तन लाना आवश्यक है। अतएव उसने 10 + 2 + 3 शिक्षा प्रणाली प्रस्तावित की तथा विद्यालयी शिक्षा के लिए पृथक् बोर्ड गठित करने की सिफारिश की।
- 10 + 2 + 3 का अर्थ इस प्रकार समझा जा सकता है कि 10 के अन्तर्गत कक्षा 1 से 10 तक की प्राप्त की जाने वाली शिक्षा। यह शिक्षा 6 से 16 वर्ष की आयु तक प्राप्त की जा सकती है। + 2 के अन्तर्गत कक्षा 11 व 12 तक की प्राप्त की जाने वाली शिक्षा आती है। इन दो वर्षों में सामान्य एवं विशेष दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान की जायेगी। वह शिक्षा 16 से 18 वर्ष की आयु तक चलेगी। + 3 से तात्पर्य है कि 12 वर्ष की शिक्षा के पश्चात् 3 वर्षीय उच्च शिक्षा की प्रथम उपाधि (स्नातक उपाधि) हेतु निर्धारित अवधि होगी। इस अवधि में शिक्षार्थी को सामान्य एवं विशेष दोनों में किसी भी शिक्षा के विषयों की शिक्षा प्रदान की जायेगी। यह शिक्षा 18 से 21 वर्ष की आयु तक प्राप्त की जा सकती है।
- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली सामान्य शैक्षिक संरचना पर विचार करती है। देश के सभी भागों में 10 + 2 + 3 प्रणाली को स्वीकार कर लिया गया है। 10 वर्षीय व्यवस्था के पुनर्विभाजन—5 वर्षीय आरम्भिक, 3 वर्षीय अपर प्राइमरी एवं 2 वर्षीय हाईस्कूल के प्रयास चल रहे हैं।

नोट

- समानता के विकास के लिये, समानता के अधिकतम अवसर प्रदान करने के साथ उसमें सफलता प्राप्त करना भी आवश्यक है। आधारभूत पाठ्यक्रम के माध्यम से आन्तरिक समानता को जागृत करना है, जन्म से प्राप्त तथा सामाजिक परिवेश से उत्पन्न पूर्वाग्रहों तथा जटिलताओं को समाप्त करना है।
- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को आकार देने तथा सशक्त बनाने में सहयोग देने वाली संस्थायें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद, अखिल भारतीय कृषि शिक्षा परिषद् तथा अखिल भारतीय चिकित्सा परिषद् हैं। इन संस्थाओं के मध्य सम्मिलित योजना बनायी जायेगी जिससे कार्यात्मक संपर्क के द्वारा कार्यक्रमों को क्रियान्वयन किया जाये।
- 1976 के संविधान संशोधन के अनुसार शिक्षा को समवर्ती सूची में रखा गया। इसके अनुसार केन्द्र तथा राज्य सरकारों का दायित्व महत्वपूर्ण है। यह दायित्व, आर्थिक, प्रशासनिक रूप से सातत्यपूर्ण है। राज्यों के शैक्षिक दायित्वों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। केन्द्र सरकार राष्ट्रीय एवं सम्मिलित विशेषता वाली शिक्षा को लागू करने का दायित्व वहन करेगी।
- नई नीति असमानता को दूर करने तथा उन लोगों को शैक्षिक अवसरों की समानता प्रदान करने पर बल देगी जिन्हें समानता से दूर रखा गया है।
- शिक्षा का प्रयोग नारी के स्तर में परिवर्तन के अभिकरण (Agency) के रूप में किया जायेगा। भूतकाल की विसंगतियों को समाप्त कर, नारी के पक्ष में सुविचारित शस्त्र तैयार किया जायेगा। नारी शक्ति के जागरण हेतु नई शिक्षा प्रणाली में इसकी भूमिका सकारात्मक हस्तक्षेप की होगी। पुनरीक्षित पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तकों शिक्षाओं से प्रशिक्षण तथा अभिनवन, निर्णय लेने की क्षमता तथा शिक्षा संस्थाओं के सक्रिय सहयोग द्वारा उनमें नवीन मूल्यों का विकास होगा।
- नारी-निरक्षरता, निरक्षरता वृद्धि को दूर करने, प्राथमिक शिक्षा में अनुसंधान को समाप्त करने की दिशा में, सहयोगी (Support) सेवा, काल तथा लक्ष्य विभिन्न स्तरों पर व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जायेगा। अविभेदीकरण की नीति का पालन करके लिंग भेद को समाप्त कर अपारम्परिक व्यवसायों का, पेशों का प्रशिक्षण दिया जायेगा। यह कार्य विद्यमान विकासशील प्रौद्योगिकी में भी होगा।
- अनुसूचित जातियों के शैक्षिक विकास का केन्द्रीय तत्व अनुसूचित जातियों के समान शिक्षा के सभी स्तरों पर सभी क्षेत्रों में चार आयामों—ग्रामीण पुरुष, ग्रामीण स्त्री, नगरीय पुरुष तथा नगरीय स्त्रियों—में है।
- अनुसूचित जनजातियों को अन्य लोगों के सामानान्तर लाने के लिये ये उपाय किये जायेंगे।
- जनजातिय क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय खोलने हेतु प्राथमिकता दी जायेगी। इन क्षेत्रों में एन. आर. ई. पी., आर. एल. ई. जी. पी. के साथ-साथ शिक्षा के सामान्य कोष से भी भवन निर्माण हेतु सहायता ली जायेगी।
- अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण की अपनी ही विशेषताएँ हैं उनमें से उनकी आँचलिक भाषा है। इससे यह आवश्यकता अनुभव की जाती है कि आरम्भिक स्तर पर पाठ्यक्रम तथा निर्देशात्मक सामग्री का निर्माण स्थानीय भाषा के आधार पर किया जाये। यह भी ध्यान रखा जाये कि क्षेत्रीय भाषा में परिवर्तन करने में इससे कठिनाई न हो।
- विस्तृत पैमाने पर आश्रम तथा आवासीय विद्यालयों की स्थापना की जायेगी।
- स्वाधीनता-प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि राष्ट्रीय शिक्षा के स्वरूप तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति की आवश्यकता चौथे दशक की समाप्ति पर तीव्रतर हुई; इस दिशा में देश के पहले राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) ने पहली बार विचार किया और 1968 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रस्तावित की।
- भारत सरकार ने 1986 में नई शिक्षा नीति, राष्ट्र विकास के व्यापक एवं महत्वपूर्ण संकल्प की पूर्ति के लिये प्रकाशित की। गुजरात के राज्यपाल **माननीय रामकृष्ण त्रिवेदी** ने नई शिक्ष नीति की सार्थकता पर प्रकाश डालते हुये कहा—देश के सर्वोन्मुखी विकास का उद्देश्य रखकर नई शिक्षा नीति का ढाँचा तैयार किया गया है। शिक्षण केवल चार दीवारों के बीच की एक जड़ प्रक्रिया न रहकर देश के सर्वांगीण विकास को गतिशील

नोट

और ठोस बनाये और राष्ट्रीय एकता, अपनी पुरातन सभ्यता और भारतीय संस्कारों के अनुसार इस देश के विद्यार्थियों को आधुनिक शिक्षा प्रवाह से इस तरह अवगत कराया जाये ताकि वे सब इस देश के आदर्श नागरिक बन सकें, यह नई शिक्षा नीति का परम ध्येय है, यही है इसका मुख्य लक्ष्य।

- शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योग देती है। भारत में प्रत्येक शासन काल में शासकों ने अपने आदर्शों तथा दर्शन के सन्दर्भ में शिक्षा नीति का निर्माण किया। इसका प्रमुख कारण रहा है कि शिक्षा सदा से मानव इतिहास को विकसित करती रही है, इसने काल की चेतावनी तथा सामाजिक, सांस्कृतिक चुनौती का सामना किया है। आदि काल से चली आ रही शिक्षा की, प्रक्रिया आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है।
- तकनीकी शिक्षा के उच्च स्तरों पर नवीनीकरण आवश्यक है। इस दृष्टि से अनुसंधान तथा विकास पर विशेष बल दिया जायेगा। शिक्षा के सभी स्तरों पर कुशलता तथा प्रभावशीलता के विकास के लिये प्रयास करने होंगे। देश, काल और परिस्थिति के अनुसार पाठ्यक्रमों का पुनर्निर्माण करना होगा।

6.5 शब्दकोश (Keywords)

- **आंचलिक–** क्षेत्रीय
- **विनियोग–** निवेश

6.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति से आप क्या समझते हैं? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
3. विभिन्न स्तरों पर शिक्षा के पुनर्गठन की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self-Assessment)

1.	1. सत्य	2. सत्य	3. असत्य	4. सत्य	5. असत्य
2.	1. 1882	2. सीमित	3. अवांछनीय	4. उन्नत	5. व्यावसायिक
	6. उन्नतिशील।				

6.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—7: कार्य योजना (1992) (Programme of Action (1992))

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

7.1 शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986-92 (Modified National Education Policy-1986-92)

7.2 कार्य योजना-1992 (Programme of Action-1992)

7.3 सारांश (Summary)

7.4 शब्दकोश (Keywords)

7.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

7.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986-92 और कार्य योजना-1992 की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

सन् 1986 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा कर दी गयी और उसी वर्ष इसकी कार्य योजना भी प्रकाशित कर दी गयी तथा 1987 से इसका क्रियान्वयन प्रारम्भ हो गया। परन्तु उसी बीच 1989 में केन्द्र में राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार सत्ता में आई। सरकार के बदलते ही शिक्षा नीति में परिवर्तन पर विचार किया गया। तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने 3 वर्ष बाद ही मई, 1990 में इसकी समीक्षा के लिये राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इसे राममूर्ति समीक्षा समिति 1990 कहा जाता है। प्रबुद्ध एवं मानवीय समाज की ओर (Towards an Enlightened and Human Society) शीर्षक से 26 दिसम्बर, 1990 में प्रस्तुत की गई। इस समिति की रिपोर्ट के प्रारम्भ में ही यह स्वीकार किया गया है कि 1986 के बाद देश की स्थिति और अधिक खराब हुई है, सांस्कृतिक मूल्यों में और अधिक ह्रास हुआ है, सामाजिक समता के स्थान पर वर्ग भेद बढ़ा है धार्मिक सहिष्णुता के स्थान पर धार्मिक उन्माद बढ़ा है और शैक्षिक अवसरों की समानता के स्थान पर शैक्षिक अवसरों में असमानता बढ़ी है। इसके बाद समिति ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के क्रियान्वयन की समीक्षा प्रस्तुत की और फिर अपने सुझाव दिए हैं जिनको निम्न प्रकार क्रमबद्ध किया गया है—

नोट

7.1 शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986–92 (Modified National Education Policy-1986-92)

पूर्व प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तहत शिशुओं की देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) की व्यवस्था की गति बहुत मन्द है। उसने सुझाव दिया कि समाज के सुविधाविहीन शिशुओं की देखभाल एवं शिक्षा के लिए आँगनबाड़ी व्यवस्था का विस्तार किया जाए और साथ ही आँगनबाड़ी के कार्य को समुन्नत किया जाए।

शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत गठित

समिति ने स्पष्ट किया कि प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के कार्य को गम्भीरता से नहीं लिया जा रहा है। उसने यह स्पष्ट किया कि ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत 1990–91 तक 50% प्राथमिक विद्यालयों को इसका लाभ पहुँचाया जाना था परन्तु अब तक केवल 30% प्राथमिक विद्यालयों को ही इसका लाभ पहुँचाया जा सका है और इन 30% के भी जो भवन बनाए गए हैं वे अच्छे नहीं हैं, एकदम घटिया किस्म के हैं और इनमें जो सामग्री भेजी गई है वह भी अच्छी किस्म की नहीं है। उसने सुझाव दिया कि प्राथमिक स्तर पर शत प्रतिशत नामांकन, शत प्रतिशत उपस्थिति और शत प्रतिशत सफलता के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ और ब्लैकबोर्ड योजना का क्रियान्वयन उचित ढंग और सही गति से किया जाए। उसने प्राथमिक शिक्षा को मूल्यपरक बनाने पर बल दिया।

माध्यमिक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1886 के अनुसार पूरे देश में 10 + 2 + 3 शिक्षा संरचना लागू होनी थी, अभी तक नहीं हो पाई। देश में अभी तक जो 261 नवोदय विद्यालय खोले गए हैं उनसे कोई लाभ नहीं हुआ है। + 2 पर 1995 तक 25% छात्र–छात्राओं को व्यावसायिक धारा में लाने का लक्ष्य है परन्तु अभी (1990) तक केवल 2.5% छात्रों को ही इस धारा में लाया जा सका है। इस सन्दर्भ में समिति ने पहला सुझाव तो यह दिया कि इस स्तर पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ईमानदारी से क्रियान्वयन किया जाए और दूसरा सुझाव यह दिया कि सार्वजनिक स्कूल प्रणाली (Common School System) को ईमानदारी से लागू किया जाए। उसने यह भी सुझाव दिया कि शिक्षा मूल्यपरक होना आवश्यक है।

उच्च शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में उच्च शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने हेतु विश्वविद्यालयों की स्थापना की बात कही गई थी और 1986 में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना भी की गई है और इसमें अनेक पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किए गए हैं परन्तु इससे उच्च शिक्षा के स्तर में गिरावट आयी है। उच्च शिक्षा के स्तर को उठाने के लिए प्रवेश पर नियन्त्रण की बात कही गई थी, वह नहीं किया गया। शिक्षकों के कार्यों का मूल्यांकन करने की बात कही गई थी, वह भी केवल औपचारिकताओं की पूर्ति तक ही सीमित रहा। उच्च शिक्षा संस्थानों को अधिक आर्थिक सहायता देने का वायदा किया गया था, वह भी झूठा सिद्ध हुआ। परिणाम यह है कि उच्च शिक्षा का प्रसार अनियोजित ढंग से हुआ है और उसका स्तर गिरा है। सबसे अधिक चिन्ता का विषय यह है कि उच्च शिक्षा में अंग्रेजी का वर्चस्व अभी तक बना हुआ है। समिति ने उच्च शिक्षा के स्तर को उन्नत बनाने के लिए महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों पर कठोर नियन्त्रण और प्रवेश के लिए चयन प्रणाली के पालन का सुझाव दिया।

व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा की उचित व्यवस्था की बात कहीं गई थी, कम्प्यूटर शिक्षा बल दिया गया था और निम्न स्तर की तकनीकी शिक्षण संस्थाओं को बन्द करने की बात कही गई थी। इस बीच कम्प्यूटर शिक्षा में तो काफी सुधार हुआ है, शेष सब यथावत चल रहा है, कोई सुधार नहीं हुआ है। इस सन्दर्भ में समिति ने शिक्षा को रोजगार परक बनाने पर बल दिया और साथ ही रोजगारपरक शिक्षा की व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा संस्थाओं के स्तर को उन्नत बनाने की बात कही। उसने सुझाव दिया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद

(AICTE) को संवैधानिक दर्जा दिया जाए और उसके क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित किए जाएँ जो तकनीकी शिक्षा के उन्नत बनाने के लिए उत्तरदायी हों।

प्रौढ़ शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने स्पष्ट किया कि प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम उचित ढंग से नहीं चलाए जा रहे हैं। उसने सुझाव दिया कि प्रौढ़ शिक्षा का उत्तरदायित्व मानव संसाधन मन्त्रालय के शिक्षा विभाग, ग्रामीण विकास मन्त्रालय और श्रम मन्त्रालय, तीनों के ऊपर होना चाहिए।

शिक्षक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि शिक्षक शिक्षा सैद्धान्तिक अधिक है। उसने सुझाव दिया कि यह दक्षतापरक होनी चाहिए।

इस समिति की समीक्षा एवं सिफारिशों का क्रमबद्ध विवरण निम्न प्रकार है—

पूर्व प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि शिशु कल्याण योजनाओं को पूर्ण उत्तेजना के साथ नहीं चलाया जा रहा था। उसने सुझाव दिया कि शिशुओं की देखभाल, परिवार कल्याण, पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाओं में गति लाई जाए, आँगनबाड़ी में कार्यरत व्यक्तियों का कार्य-क्षेत्र विस्तृत किया जाए और इनके प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए।

प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए जा रहे प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। उसने 20वीं शताब्दी के अन्त तक 14 वर्ष तक के बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था के लिए पहला सुझाव यह दिया कि 8वीं योजना के दौरान सभी बच्चों को 1 किमी क्षेत्र के अन्दर प्राथमिक स्कूल उपलब्ध कराए जाएँ, सभी बच्चों का नामांकन सुनिश्चित किया जाए और अपव्यय एवं अवरोधन को कम किया जाए। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के बच्चों की शिक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध किए जाएँ, जो बच्चे किसी कारण स्कूली शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं उनके लिए अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था की जाए। पर यह अनौपचारिक शिक्षा औपचारिक शिक्षा के स्तर की ही होनी चाहिए। समिति ने देखा कि उस समय प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों का अनुपात 4 : 1 था, उसने इसे 2 : 1 अनुपात में लाने का सुझाव दिया। उसने यह भी सुझाव दिया कि ब्लैक बोर्ड योजना उच्च प्राथमिक स्कूलों में भी लागू की जाए। उसने प्राथमिक स्तर के लिए न्यूनतम अधिगत स्तर की प्राप्ति पर भी बल दिया।

> *नोट्स* राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में राममूर्ति समिति ने अपनी रिपोर्ट सितम्बर, 1990 में प्रस्तुत की। 1992 में सरकार ने इस नीति के क्रियान्वयन की समीक्षा करने हेतु श्री जनार्दन रेड्डी की अध्यक्षता में एक नई समिति का गठन किया।

माध्यमिक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि उस समय माध्यमिक शिक्षा परिषदें अपने कार्य का सम्पादन ठीक ढंग से नहीं कर पा रही थीं। उसने सुझाव दिया कि इनको पुनर्गठित किया जाए और इन्हें स्वायत्तशासी बनाया जाए। उसने प्रधानाचार्यों को प्रशासनिक एवं वित्तीय अधिकार देने का सुझाव भी दिया। उसने माध्यमिक स्तर पर खुली शिक्षा के विस्तार की बात भी कही। माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को लागू करने और इस स्तर पर कम्प्यूटर शिक्षा की व्यवस्था करने पर इसने विशेष बल दिया। + 2 पर व्यावसायिक धारा को सुदृढ़ किया जाए, इसके लिए उच्च माध्यमिक विद्यालयों को साधन सम्पन्न किया जाए। समिति ने नवोदय विद्यालय योजना को चालू रखने का सुझाव दिया और शेष जिलों में उन्हें शीघ्रातिशीघ्र स्थापित करने की बात कही, पर साथ ही इनकी प्रवेश परीक्षा एवं कार्य प्रणाली में सुधार का

नोट

सुझाव दिया। समिति के सम्मति में इस स्तर पर भी न्यूनतम अधिगम स्तर (MILL) की प्राप्ति के लिए प्रयास किये जाने चाहियें।

उच्च शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने अनुभव किया कि उच्च शिक्षा का स्तर सही नहीं है। इस सम्बन्ध में उसने पहला सुझाव यह दिया कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के क्षेत्रीय कार्यालय अतिशीघ्र स्थापित किए जाएँ। दूसरा सुझाव यह दिया कि पाठ्यक्रम विकास केन्द्र योजना जारी रखी जाए। तीसरा सुझाव यह दिया कि नए-नए पाठ्यक्रम लागू किए जाएँ। चौथा सुझाव यह दिया कि उच्च शिक्षा शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए एकेडेमिक स्टाफ कॉलेज योजना का विस्तार किया जाए और पाँचवा सुझाव यह दिया कि निम्न स्तर की उच्च शिक्षा संस्थाएँ बन्द कर दी जाएँ।

प्रौढ़ शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने सुझाव दिया कि केन्द्र और प्रान्तीय सरकारें प्रौढ़ शिक्षा को प्राथमिकता दें और उसकी उचित व्यवस्था के लिए वित्त की व्यवस्था करें। उसने यह भी सुझाव दिया कि नव साक्षरों के लिए उत्तर साक्षरता कार्यक्रम व सतत् शिक्षा की व्यवस्था की जाए।

व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि उस समय तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था सही नहीं थी। उसने सुझाव दिया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (AICTE) की क्षेत्रीय समितियाँ गठित की जाएँ जो नए तकनीकी शिक्षा संस्थान खोलने, नए पाठ्यक्रम लागू करने और तकनीकी शिक्षा का स्तर मान बनाए रखने के लिए उत्तरदायी हों।

शिक्षक शिक्षा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

शिक्षक शिक्षा के सम्बन्ध में समिति ने पहला सुझाव यह दिया कि किसी भी स्तर के शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम में प्रवेश की प्रणाली में सुधार किया जाए। दूसरा सुझाव यह दिया कि प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों (DIETS) में की जाए।

भाषा सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने इस सन्दर्भ में पहला सुझाव यह दिया कि केन्द्रीय भाषा संस्थान को स्वायत्तशासी निगम का दर्जा दिया जाए जिससे वह भारतीय भाषाओं के विकास के लिए स्वतन्त्र रूप से कार्य कर सके। दूसरा सुझाव यह दिया कि माध्यमिक शिक्षा स्तर पर पूरे देश में त्रिभाषा सूत्र को समान रूप से लागू किया जाए और तीसरा सुझाव यह दिया कि उच्च शिक्षा स्तर पर भारतीय भाषाओं के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाए।

प्रशासन एवं वित्त सम्बन्धी समीक्षा एवं सुझाव

समिति ने देखा कि सरकार न तो शिक्षा का प्रशासन उचित ढंग से कर पा रही है और न उसकी वित्त व्यवस्था सही ढंग से कर पा रही है। उसने सुझाव दिया कि जिला शिक्षा परिषदों की शीघ्रतिशीघ्र स्थापना की जाए। वित्त के सम्बन्ध में उसने पहला सुझाव यह दिया कि राज्य प्राथमिक शिक्षा को प्रथम वरीयता दे और अपने संसाधनों का सर्वाधिक प्रयोग इसकी व्यवस्था पर करे और उच्च एवं तकनीकी शिक्षा को धीरे-धीरे स्ववित्तपोषित बनाए।

क्या आप जानते हैं शिक्षा सम्बन्धी केन्द्रीय परामर्श बोर्ड का गठन, 1935 में, स्वाधीनता से पूर्व किया गया था और यह अब भी शिक्षा की नीतियाँ और कार्यक्रम तैयार करने और उनकी प्रगति पर निगाह रखने में प्रमुख भूमिका निभा रहा है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण हैं—राष्ट्रीय शिक्षा नीति—1986, कार्य-योजना 1986 और संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति और कार्य योजना 1992।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये (Fill in the blanks)—

1. .... के अन्तर्गत स्कूलों में भवन, चार्ट खेल सामग्री आदि की उपलब्धता सुनिश्चित की जाएगी।
2. योग्य बालकों के लिए एक-एक नवोदय विद्यालय प्रत्येक .... में खोला जाएगा।
3. कार्य योजना 1992 के द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति योजना से 9 व 10 की शिक्षा के साथ .... और जोड़ दिया जायेगा।
4. जनार्दन कमीशन का गठन .... में किया गया था।

7.2 कार्य योजना-1992 (Programme of Action-1992)

शिक्षा प्रबन्ध और नीति 1992—नीति निर्धारण के साथ-साथ, शिक्षा विभाग राज्यों से मिलकर शैक्षिक नियोजन का दायित्व भी निभाता है। शिक्षा को छठी योजना तक विकास प्रक्रिया के संसाधन की जगह सामाजिक सेवा मात्र समझा जाता था, लेकिन अब शिक्षा को मानव संसाधनों के द्वारा देश के सामाजिक और आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण कारक माना जाने लगा है। यह बात सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा बजट में संसाधनों के आवंटन में प्रतिबिम्बित होती है। आठवीं योजना में केन्द्र तथा राज्यों के लिए शिक्षा पर 19,5999.7 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया, जो सातवीं योजना के व्यय 7,633.1 करोड़ रुपये यानि 2.6 गुना अधिक था। इस वृद्धि के साथ-साथ शिक्षा के लिए केन्द्रीय नियोजन आवंटन 1994-95 के 1,541 करोड़ रुपये से बढ़कर 1995-96 के 1,925 करोड़ रुपये कर दिया गया। शिक्षा के क्षेत्र के भीतर ही संसाधनों के आवंटन का रूझान उच्चतर शिक्षा में प्राथमिक शिक्षा परिव्यय 1995-96 में 24.5 प्रतिशत बढ़कर 65.04 करोड़ रुपये कर दिया गया।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति देश के शैक्षिक विकास में मील का पत्थर है। 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समिति ने इसकी समीक्षा की। इसकी सिफारिशों पर शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने विचार किया और आन्ध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री एन. जनार्दन की अध्यक्षता में 22 जनवरी, 1992 को नीति समिति ने अपनी रिपोर्ट पेश की। शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने इस रिपोर्ट पर विचार करके इसमें कुछ परिवर्तनों का सुझाव दिया था। परिणाम-स्वरूप संसद के समक्ष 7 मई, 1992 को शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड द्वारा अनुमोदित एवं संशोधित नीतियाँ कुछ सूत्रों के साथ रखी गयीं। साथ ही साथ नीति को लागू करने की संशोधित कार्य योजना तैयार की गयी और 19 अगस्त, 1992 को संशोधित कार्य नीति 1992 संसद के समक्ष रखी गयीं।

संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 (1992) का दस्तावेज

भारत सरकार ने 1992 में राष्ट्रीय शिक्षा-नीति, 1986 में जो संशोधन किए उनका विवरण निम्न प्रकार है—

भाग एक—भूमिका और **भाग दो—**शिक्षा का सार और उसकी भूमिका में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है।

भाग तीन—राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में केवल एक संशोधन किया गया है—

(*i*) पूरे देश में + 2 को स्कूली शिक्षा का अंग बनाया जाएगा।

भाग चार—समानता के लिए शिक्षा में चार संशोधन किए गए हैं—

(*i*) समग्र साक्षरता अभियान पर और अधिक बल दिया जाएगा।

(*i*) राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (NLM) को निर्धनता निवारण, राष्ट्रीय एकता, पर्यावरण, संरक्षण, छोटा परिवार, नारी समानता को प्रोत्साहन, प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण और प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या से जोड़ा जाएगा।

(*iii*) रोजगार/स्वरोजगार केन्द्रित एवं आवश्यकता एवं रुचि पर आधारित व्यावसायिक व कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल दिया जाएगा।

(*iv*) नव साक्षरों के लिए साक्षरता उपरान्त सतत् शिक्षा के व्यापक कार्यक्रम उपलब्ध कराए जाएँगे।

भाग पाँच—विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन-शिशुओं की देखभाल और शिक्षा में सात संशोधन किए गए हैं—

(*i*) ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम से कम तीन बड़े कमरों और तीन शिक्षकों की व्यवस्था की जाएगी।

(*ii*) भविष्य में प्राथमिक स्कूलों में नियुक्त होने वाले शिक्षकों में 50% महिलाएँ होंगी।

(*iii*) ब्लैक बोर्ड योजना को उच्च प्राथमिक विद्यालयों में भी लागू किया जाएगा।

(*iv*) अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा के लक्ष्य को 2000 तक प्राप्त करने हेतु एक राष्ट्रीय मिशन चलाया जाएगा।

(*v*) माध्यमिक शिक्षा में लड़कियों, अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के बच्चों के नामांकन पर बल दिया जाएगा।

(*vi*) मुक्त अधिगम प्रणाली को सुदृढ़ किया जाएगा।

(*vii*) परीक्षा एवं मूल्यांकन में सुधार हेतु 'राष्ट्रीय मूल्यांकन संगठन' गठित किया जाएगा।

भाग छः—तकनीकी तथा प्रबन्ध शिक्षा में केवल एक संशोधन किया गया है—

(*i*) अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (ACTE) को और सुदृढ़ किया जाएगा।

भाग सात—शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाने में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

भाग आठ—शिक्षा की विषयवस्तु और प्रक्रिया को नया मोड़ देने में दो संशोधन किए गए हैं—

(*i*) प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में जनसंख्या शिक्षा पर विशेष बल दिया जाएगा।

(*ii*) परीक्षा संस्थाओं के दिशा में निर्देशन हेतु परीक्षा सुधार प्रारूप तैयार किया जाएगा।

भाग नौ—शिक्षक में कोई संशोधन नहीं किया गया है—

भाग दस—शिक्षा का प्रबन्ध में केवल एक संशोधन किया गया है—

(*i*) शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का 6% से अधिक व्यय किया जाएगा।

भाग ग्यारह—संशोधन और समीक्षा और भाग बारह—भविष्य में कोई संशोधन नहीं किया गया है।

टास्क जनार्दन रेड्डी समिति-1992 के अध्यक्ष श्री एन. जनार्दन किस प्रदेश के मुख्यमंत्री थे?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य कथन का चयन कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')—

1. कार्यान्वयन कार्यक्रम में प्रस्तुत रूप रेखाएँ आलोचनीय हैं।
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वजनिकीकरण को विशेष प्राथमिकता दी जाएगी।
3. कार्य योजना 1986 में ब्लैक बोर्ड योजना की सीमा में उच्च प्राथमिक स्कूलों को भी लाया गया।
4. यू. जी. सी. महाविद्यालयों को मान्यता प्रदान करती है।
5. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय सन् 1985 में स्थापित किया गया था।

7.3 सारांश (Summary)

- समिति ने देखा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तहत शिशुओं की देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) की व्यवस्था की गति बहुत मन्द है। उसने सुझाव दिया कि समाज के सुविधाविहीन शिशुओं की देखभाल एवं शिक्षा के लिए आँगनबाड़ी व्यवस्था का विस्तार किया जाए और साथ ही आँगनबाड़ी के कार्य को समुन्नत किया जाए।
- समिति ने स्पष्ट किया कि प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के कार्य को गम्भीरता से नहीं लिया जा रहा है। उसने यह स्पष्ट किया कि ब्लैक बोर्ड योजना के अन्तर्गत 1990-91 तक 50% प्राथमिक विद्यालयों को

नोट

इसका लाभ पहुँचाया जाना था परन्तु अब तक केवल 30% प्राथमिक विद्यालयों को ही इसका लाभ पहुँचाया जा सका है और इन 30% के भी जो भवन बनाए गए हैं वे अच्छे नहीं हैं, एकदम घटिया किस्म के हैं और इनमें जो सामग्री भेजी गई है वह भी अच्छी किस्म की नहीं है। उसने सुझाव दिया कि प्राथमिक स्तर पर शत प्रतिशत नामांकन, शत प्रतिशत उपस्थित और शत प्रतिशत सफलता के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ और ब्लैकबोर्ड योजना का क्रियान्वयन उचित ढंग और सही गति से किया जाए।

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1886 के अनुसार पूरे देश में 10 + 2 + 3 शिक्षा संरचना लागू होनी थी, अभी तक नहीं हो पाई। देश में अभी तक जो 261 नवोदय विद्यालय खोले गए हैं उनसे कोई लाभ नहीं हुआ है। + 2 पर 1995 तक 25% छात्र-छात्राओं को व्यावसायिक धारा में लाने का लक्ष्य है परन्तु अभी (1990) तक केवल 2.5% छात्रों को ही इस धारा में लाया जा सका है। इस सन्दर्भ में समिति ने पहला सुझाव तो यह दिया कि इस स्तर पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ईमानदारी से क्रियान्वयन किया जाए और दूसरा सुझाव यह दिया कि सार्वजनिक स्कूल प्रणाली (Common School System) को ईमानदारी से लागू किया जाए।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में उच्च शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने हेतु विश्वविद्यालयों की स्थापना की बात कही गई थी और 1986 में इन्द्रा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना भी की गई है और इसमें अनेक पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किए गए हैं परन्तु इससे उच्च शिक्षा के स्तर में गिरावट आयी है।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा की उचित व्यवस्था की बात कहीं गई थी, कम्प्यूटर शिक्षा बल दिया गया था और निम्न स्तर की तकनीकी शिक्षा संस्थाओं को बन्द करने की बात कही गई थी। इस बीच कम्प्यूटर शिक्षा में तो काफी सुधार हुआ है, शेष सब यथावत चल रहा है, कोई सुधार नहीं हुआ है। इस सन्दर्भ में समिति ने शिक्षा को रोजगार परक बनाने पर बल दिया और साथ ही रोजगारपरक शिक्षा की व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा संस्थाओं के स्तर को उन्नत बनाने की बात कही।
- समिति ने स्पष्ट किया कि प्रौढ़ शिक्षा कार्य-क्रम उचित ढंग से नहीं चलाए जा रहे हैं। उसने सुझाव दिया कि प्रौढ़ शिक्षा का उत्तरदायित्व मानव संसाधन मन्त्रालय के शिक्षा विभाग, ग्रामीण विकास मन्त्रालय और श्रम मन्त्रालय, तीनों के ऊपर होना चाहिए।
- समिति ने देखा कि प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए किए जा रहे प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। उसने 20वीं शताब्दी के अन्त तक 14 वर्ष तक के बच्चों की अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था के लिए पहला सुझाव यह दिया कि 8वीं योजना के दौरान सभी बच्चों को 1 किमी क्षेत्र के अन्दर प्राथमिक स्कूल उपलब्ध कराए जाएँ, सभी बच्चों का नामांकन सुनिश्चित किया जाए और अपव्यय एवं अवरोधन को कम किया जाए।
- समिति ने देखा कि उस समय प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों का अनुपात 4 : 1 था, उसने इसे 2 : 1 अनुपात में लाने का सुझाव दिया। उसने यह भी सुझाव दिया कि ब्लैक बोर्ड योजना उच्च प्राथमिक स्कूलों में भी लागू की जाए। उसने प्राथमिक स्तर के लिए न्यूनतम अधिगत स्तर की प्राप्ति पर भी बल दिया।
- समिति ने देखा कि उस समय माध्यमिक शिक्षा परिषदें अपने कार्य का सम्पादन ठीक ढंग से नहीं कर पा रही थीं।
- उसने माध्यमिक स्तर पर खुली शिक्षा के विस्तार की बात भी कही। माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को लागू करने और इस स्तर पर कम्प्यूटर शिक्षा की व्यवस्था करने पर इसने विशेष बल दिया। + 2 पर व्यावसायिक धारा को सुदृढ़ किया जाए, इसके लिए उच्च माध्यमिक विद्यालयों को साधन सम्पन्न किया जाए।
- समिति ने अनुभव किया कि उच्च शिक्षा का स्तर सही नहीं है। इस सम्बन्ध में उसने पहला सुझाव यह दिया कि विश्वविद्यालयों अनुदान आयोग के क्षेत्रीय कार्यालय अतिशीघ्र स्थापित किए जाएँ। दूसरा सुझाव यह दिया कि पाठ्य-क्रम विकास केन्द्र योजना जारी रखी जाए। तीसरा सुझाव यह दिया कि नए-नए पाठ्यक्रम लागू किए जाएँ। चौथा सुझाव यह दिये कि उच्च शिक्षा शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए एकेडेमिक स्टाफ कॉलेज योजना का विस्तार किया जाए और पाँचवा सुझाव यह दिया कि निम्न स्तर की उच्च शिक्षा संस्थाएँ बन्द कर दी जाएँ।

नोट

- समिति ने देखा कि उस समय तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था सही नहीं थी। उसने सुझाव दिया कि अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (AICTE) की क्षेत्रीय समितियाँ गठित की जाएँ जो नए तकनीकी शिक्षा संस्थान खोलने, नए पाठ्यक्रम लागू करने और तकनीकी शिक्षा का स्तर मान बनाए रखने के लिए उत्तरदायी हों।
- नीति निर्धारण के साथ-साथ, शिक्षा विभाग राज्यों से मिलकर शैक्षिक नियोजन का दायित्व भी निभाता है। शिक्षा को छठी योजना तक विकास प्रक्रिया के संसाधन की जगह सामाजिक सेवा मात्र समझा जाता था, लेकिन अब शिक्षा को मानव संसाधनों के द्वारा देश के सामाजिक और आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण कारक माना जाने लगा है। यह बात सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा बजट में संसाधनों के आवंटन में प्रतिबिम्बित होती है।
- 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति देश के शैक्षिक विकास में मील का पत्थर है। 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समिति ने इसकी समीक्षा की। इसकी सिफारिशों पर शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने विचार किया और आन्ध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री एन. जनार्दन की अध्यक्षता में 22 जनवरी, 1992 को समिति ने अपनी रिपोर्ट पेश की। शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ने इस रिपोर्ट पर विचार करके इसमें कुछ परिवर्तनों का सुझाव दिया था। परिणामस्वरूप संसद के समक्ष 7 मई, 1992 को शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड द्वारा अनुमोदित एवं संशोधित नीतियाँ कुछ सूत्रों के साथ रखी गयीं। साथ ही साथ नीति को लागू करने की संशोधित कार्य योजना तैयार की गयी और 19 अगस्त, 1992 को संशोधित कार्य नीति 1992 संसद के समक्ष रखी गयीं।

7.4 शब्दकोश (Keywords)

- **स्ववित्तपोषित–**निजी वित्त से संचालित संस्था।
- **धार्मिक उन्माद–**धार्मिक कट्टरता की चरम स्थिति।

7.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. शिक्षा की संशोधित राष्ट्रीय नीति–1986–92 की समीक्षात्मक व्याख्या कीजिए।
2. कार्य योजना–1992 से आप क्या समझते हैं? वर्णन कीजिए।
3. संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1992 की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.	(1) ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड	(2) जिले	(3) + 2	(4) 1992
2.	(1) सत्य	(2) असत्य	(3) असत्य	(4) असत्य
	(5) सत्य।			

7.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–8: शिक्षा की गुणवत्ता: डेलर्स कमीशन रिपोर्ट (Quality of Education: Delor's Commission Report)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
8.1 डेलर्स कमीशन रिपोर्ट (Delor's Commission Report)
8.2 शिक्षा में गुणवत्ता की अवधारणा (Concept of Quality in Education)
8.3 शिक्षा में गुणवत्ता के मानदण्ड (Parameters of Quality in Education)
8.4 शिक्षा में गुणवत्ता का स्तर (Status of Quality in Education)
8.5 शिक्षा में गुणवत्ता का महत्त्व (Perspectives of Quality in Education)
8.6 सारांश (Summary)
8.7 शब्दकोश (Keywords)
8.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
8.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- शिक्षा से संबंधित डेलर कमीशन रिपोर्ट को समझने में।
- शिक्षा में गुणवत्ता की अवधारणा को विवेचित करने में।
- शिक्षा में गुणवत्ता के मानदण्ड की जानकारी प्राप्त करने में।
- शिक्षा में गुणवत्ता के स्तर को परखने में।
- शिक्षा में गुणवत्ता के महत्त्व को रेखांकित करने में

प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा का अर्थ प्राचीन तथा परम्परागत है। शिक्षण संस्थाओं में ज्ञान प्रदान किया जाता है, जिससे बालकों का विकास होता है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जो बालक को भविष्य की चुनौतियों के लिए तैयार करती है। शिक्षा द्वारा नये समाज का निर्माण होता है। डेलर कमीशन की रिपोर्ट इक्कीसवीं शताब्दी में वैश्विक शिक्षा के प्रारूप तथा भविष्य में शिक्षा में सुधार को व्यक्त करती है, वर्तमान शिक्षा प्रणाली व्याप्त कमियों को उजागर करती है। इस अध्याय में हम डेलर कमीशन की रिपोर्ट के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

नोट

8.1 डेलर्स कमीशन रिपोर्ट (Delor's Commission Report)

सन् 1994 तथा 1995 में आयोजित की गई, बैठकों में 'जेक्वस डेलर' की अध्यक्षता में डेलर्स कमीशन रिपोर्ट पेश की गई। जेक्वस डेलर ने '21वीं शताब्दी में शिक्षा' विषय पर बने अन्तर्राष्ट्रीय आयोग की अध्यक्षता की। यह रिपोर्ट यूनेस्को में राष्ट्रमंडल देशों के शिक्षा मंत्रियों तथा राष्ट्रमंडल प्रमुखों द्वारा प्रस्तुत की गई। इस रिपोर्ट के माध्यम से सहस्राब्दि में शिक्षा की स्थिति तथा तात्कालिक व ज्वलन्त समस्याओं को उजागर किया गया। यह रिपोर्ट 'लर्निंग द ट्रेजर विद इन' के नाम से जानी जाती है। इस रिपोर्ट में शिक्षा प्रणाली के साथ शिक्षा में अध्यापक के महत्त्व को भी बहुत अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया गया है। कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में प्रत्येक राष्ट्र को शिक्षा पर GNP का 6%: खर्च करने पर जोर दिया। केवल प्रारम्भिक शिक्षा ही नहीं बल्कि उच्च शिक्षा के लिए भी राज्य तथा केन्द्र सरकारों को मिल जुल कर काम करना चाहिए। कमीशन ने शिक्षा में विज्ञान की भूमिका तथा महत्त्व का भी उल्लेख किया है। रिपोर्ट के अनुसार विज्ञान केवल किताबों तथा कक्षाओं तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के दैनिक जीवन में शामिल होना चाहिए।

अत: शिक्षा का प्रारूप ऐसा होना चाहिए जिसका उपयोग व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में भी कर सके। डेलर कमीशन रिपोर्ट शिक्षा के आर्थिक, सांस्कृतिक तथा तकनीकी परिवर्तनों के विषय में भी बताती है।

> *नोट्स* कमीशन द्वारा रिपोर्ट में बताया गया है, शिक्षा सतत् तथा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है तथा भविष्य में उपयोग होने वाली शिक्षा चार स्तम्भों पर खड़ी होगी– जानकर सीखना, कार्य करके सीखना, बन करके सीखना तथा मिलजुल कर सीखना।

8.2 शिक्षा में गुणवत्ता की अवधारणा (Concept of Quality in Education)

शिक्षा की गुणवत्ता का अर्थ है कि व्यक्ति का बहुमुखी विकास तथा सामाजिक परिवेश में उद्देश्यों की पूर्ति करना। इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा द्वारा ही किसी राष्ट्र तथा उसके नागरिकों का सम्पूर्ण विकास संभव है, किन्तु अधिकतर देशों, विशेषकर विकासशील देशों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने की बहुत आवश्यकता है। शिक्षा की वैधता, सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति तथा इसका प्रभाव व कुशलता शिक्षा प्रणाली के मूल मापक हैं। राष्ट्रीय गुणवत्ता तथ मूल्यांकन परिषद् के पूर्व निदेशक प्रोफेसर वी. एन. राजशेखर पिल्लै ने उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय के जलगाँव के दीक्षांत समारोह में शिक्षा की गुणवता पर ध्यान देने पर जोर दिया। उन्होंने गुणवत्ता नियंत्रण एवं तथ्यों पर विचार करने पर बल दिया है।

शिक्षा में प्रत्येक स्तर पर जवाबदेही होनी चाहिए। सभी शिक्षण संस्थानों की तीन समूहों के प्रति विशेष जवाबदेही होनी चाहिए। समाज (सरकार), क्लाइंट्स (छात्र, उद्यमी) तथा विषय (व्यवसाय, सहयोगी)। नागरिक टैक्स जमा करने वाले हैं, अत: सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा तथा उसकी गुणवत्ता पर बल दे। वह विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, माध्यमिक विद्यालयों को सीधे रूप से अनुदान देती है, जिससे शिक्षण संस्थानों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सके और छात्रों को अनुदान तथा कर मुक्त ऋण देकर अप्रत्यक्ष रूप से उनकी सहायता भी करती है।

8.3 शिक्षा में गुणवत्ता के मानदण्ड (Parameters of Quality in Education)

हार्वे तथा ग्रीन ने गुणवत्ता को पाँच प्रकार से वर्गीकृत किया है।

(i) गुणवत्ता की विशिष्टता;

(ii) गुणवत्ता एक प्रकार की सम्पूर्णता है;

नोट

(*iii*) उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला;

(*iv*) धन के मूल्य की गुणवत्ता, तथा

(*v*) गुणवत्ता परिवर्तन के रूप में।

(*i*) गुणवत्ता के विशिष्टीकरण दृष्टिकोण का अर्थ है विशेष गुणवत्ता, शिक्षा के परिवेश में गुणवत्ता का अर्थ है उच्च गुणवत्ता तथा उसमें बेहतर सुधार करना।

(*ii*) शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे उसकी उत्पादकता अर्थात् (शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र) शिक्षा के मानदण्डों पर खरा उतर सकें, तथा हर प्रकार से मूल्यांकन करने पर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हो सके।

(*iii*) शिक्षा की गुणवत्ता का महत्त्व उद्देश्यों की पूर्ति के लिए है। इसका अर्थ है किसी जरूरतमंदों की जरूरतों तथा इच्छाओं की पूर्ति करना। शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में इसका अर्थ शिक्षण संस्थानों में दी जाने वाली शिक्षा से है, इसका तात्पर्य है कि शिक्षण संस्थानों में दी जाने वाली शिक्षा छात्रों के लक्ष्य तथा उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कितनी कारगर है, तथा सबसे अच्छी शिक्षा प्रदान करना इसका लक्ष्य होता है।

(*iv*) कम से कम धन व्यय करके उच्च गुणवत्ता की शिक्षा प्राप्त हो, इसके लिए सरकार को विशेष प्रयास करना चाहिए। परिवर्तन के रूप में गुणवत्ता का अर्थ है चाहे शिक्षा किसी भी अवस्था अथवा रूप में हो, शिक्षा की गुणवत्ता बनी रहनी चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में इसका अर्थ है, नवीन ज्ञान तथा तकनीकी के विकास के लिए छात्रों का सशक्तिकरण करना। गुणवत्ता के उपरोक्त सभी परिप्रेक्ष्यों से यह ज्ञात होता है कि शिक्षा में गुणवत्ता का अर्थ शिक्षा के विभिन्न मानकों की पूर्ति करना तथा सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति करना है।

शिक्षा की गुणवत्ता को सही ढंग से समझने के लिए कुछ सूचक बनाये गये हैं।

(*i*) **प्रदर्शन सूचक:** प्रदर्शन सूचक शैक्षिक प्रणाली के मानदण्ड हैं जो उच्च शिक्षा संस्थानों तथा कार्यक्रमों का मापन करते हैं। यह परिमाणात्मक तथा गुणात्मक विश्लेषण करता है। प्रदर्शन सूचक प्रभावी रूप से केवल तभी कार्य कर सकता है, जब इसका उपयोग इनपुट प्रक्रिया तथा आउटपुट सूचकों की तरह करें।

उच्च शिक्षण संस्थान विविध प्रकार की गतिविधियों में शामिल होते हैं, अत: यह आवश्यक है कि विभिन्न प्रक्रियाओं तथा गतिविधियों की आवश्यकता को पहचान कर, सूचकों का उचित प्रयोग करें।

(*ii*) **सांख्यिकी सूचक:** सांख्यिकी सूचक सरकार द्वारा एकत्रित किये जा सकते हैं, विशेषकर उन शिक्षण संस्थानों द्वारा जो जनता द्वारा प्राप्त धनराशि से संचालित किये जा रहे हैं। सांख्यिकी सूचक पूर्णत: विस्तृत होते हैं, कभी-कभी ये प्रदर्शन सूचक की तरह कार्य करते हैं।

गुणवत्ता मानदण्ड: राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन समिति (NAAC-2008) ने मानदण्डों की एक सूची दी है, जिसमें निम्नलिखित मानदण्ड दिये गये हैं।

(1) पाठ्यक्रम आस्पेक्ट; (2) शिक्षण अधिगम तथा मूल्यांकन; (3) अनुसंधान, परामर्श तथा विस्तार; (4) इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा अधिगम संस्थान; (5) छात्र समर्थन तथा प्रगति (6) प्रशासन तथा नेतृत्व तथा (7) नवीन अभ्यास तथा तरीके।

शिक्षकों की शिक्षा तथा योग्यता पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। हाल ही में विश्वविद्यालय परिषद् ने अध्यापकों तथा अन्य शैक्षणिक स्टॉफ की न्यूनतम शैक्षिक योग्यता, चयन, प्रोन्नति तथा उच्च शिक्षण संस्थानों में शैक्षणिक मानको ंको बनाये रखने के संदर्भ में विशेष अध्यादेश जारी किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये (Fill in the blanks)

1. डेलर्स कमीशन की रिपोर्ट .... में प्रस्तुत की गई।
2. कमीशन के अनुसार GNP का .... शिक्षा पर व्यय होना चाहिए।
3. कमीशन ने .... पर विशेष बल देने को कहा है।

नोट

8.4 शिक्षा में गुणवत्ता का स्तर (Status of Quality in Education)

भारत में शिक्षण प्रणाली में सुधार एवं गुणवत्ता की बहुत आवश्यकता है, क्योंकि जिस भारी संख्या में स्कूल, कॉलेज तथा शिक्षण संस्थानों की वृद्धि हुई है, उसकी तुलना में शिक्षा में बहुत सी कमियाँ हैं, जिससे छात्र व्यावसायीकरण के क्षेत्र में पिछड़ रहे हैं। देश में रोजगार होते हुए भी असंख्य नवयुवक बेरोजगार हैं। गुणवत्ता का स्तर जाँचने तथा मापने के लिए विभिन्न आनुपातिक आँकड़े ज्ञात किये गये हैं, इनका विवरण निम्न प्रकार से है।

8.4.1 वर्तमान में नामांकन तथा विद्यालय छोड़ने का अनुपात

भारतीय शिक्षा प्रणाली राष्ट्रमंडल देशों में सबसे बड़ी प्रणाली है तथा विश्व में दूसरे स्थान पर है, किन्तु देश में शिक्षा के स्तर में कई कमियाँ हैं। शिक्षा में व्यापक सुधार होने के बाद भी वर्तमान में शैक्षिक संस्थानों में शिक्षा तथा छात्रों की गुणवत्ता में बहुत सुधार की आवश्यकता है। शिक्षण संस्थानों में छात्रों की नामांकन संख्या तथा विद्यालय छोड़ने के आँकड़े निम्नलिखित हैं–

सकल नामांकन अनुपात

कक्षा (I-V) (6–11 वर्ष)	109.4%
कक्षा (VI-VIII) (11–14 वर्ष)	71.15%
कक्षा (I-VIII) (6–14 वर्ष)	94.92%
कक्षा (IX-X) (14–16 वर्ष)	52.26%
कक्षा (XI-XII) (16–18 वर्ष)	28.54%
उच्च शिक्षा (18–24 वर्ष)	11.61%

विद्यालय छोड़ने की दर

कक्षा (I-V) (6–11 वर्ष)	25.47%
कक्षा (I-VIII) (6–14 वर्ष)	48.71%
कक्षा (I-XX) (6–16 वर्ष)	61.59%

- 6–14 वर्ष के 211 मिलियन बच्चे (84-91%) विद्यालय में नामांकित होते हैं।
- 6–14 वर्ष के 35 मिलियन से अधिक बच्चे विद्यालय नहीं जा पाते हैं।
- वर्तमान प्राथमिक विद्यालय की नामांकन/उपस्थिति दर 77% है।
- 2016 तक 500 मिलियन लोग भारत में ऐसे होंगे जिन्होंने केवल 5 वर्ष तक विद्यालयी शिक्षा ग्रहण की है।
- 300 मिलियन लोग ऐसे होंगे जिन्होंने दसवीं कक्षा तक भी पढ़ाई नहीं है।
- 60 मिलियन बच्चे बाल मजदूर हैं।
- 35% जनसंख्या अभी भी निरक्षर है।

8.4.2 व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा स्वरोजगार के तथ्य

व्यावसायिक शिक्षा स्कूली शिक्षा के बाद का सबसे महत्त्वपूर्ण कदम है, इसमें भी अभी तक हमारी शिक्षा प्रणाली में काफी सुधार की आवश्यकता है। संबंधित आँकड़ों से व्यावसायिक शिक्षा के प्रारूप की जानकारी प्राप्त होती है जो निम्नलिखित है–

- प्रतिवर्ष 5.5 मिलियन छात्र कक्षा 10 में पास होते हैं, उनमें से 3.3 मिलियन छात्र कक्षा XI में प्रवेश करते हैं, तथा 2.2 मिलियन शिक्षा प्रणाली से बाहर चले जाते हैं, अर्थात् पढ़ाई छोड़ देते हैं।

नोट

- कक्षा VIII के बाद विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों की संख्या लगभग 20-21 मिलियन है।
- देश की प्रशिक्षण क्षमता केवल 2.3 मिलियन छात्रों की है।
- केवल 40% निर्देशकों के पास पूर्ण प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की डिग्री है, अधिक कुशल अध्यापकों तथा निर्देशकों की आवश्यकता है।
- पूरे विश्व में 15-35 वर्ष की आयु के 95% लोग अपनी पसंद के 3000 व्यावसायिक शिक्षा धाराओं में प्रवेश लेते हैं, किन्तु भारत में 170 प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा धाराओं में केवल 15-29 वर्ष के 2 से 3% तक लोग प्रवेश ले पाते हैं।
- भारत में 15-29 वर्ष के बेरोजगार लोगों की संख्या सबसे अधिक है।

8.4.3 विभिन्न क्षेत्रों में कौशल की कमी

शिक्षा की गुणवत्ता कौशल से मापी जाती है। छात्र बहुत उच्च शिक्षा ग्रहण करते हैं, किन्तु वे विश्वस्तरीय मानदण्डों पर व्यावसायिक कुशलता प्राप्त नहीं कर पाते हैं। विभिन्न क्षेत्रों में कुशल व योग्य लोगों की कमी है, इनका विवरण निम्न प्रकार है—

- उद्योग क्षेत्र में कुशल मजदूर तथा कारीगरों की कमी है।
- इंजीनियरिंग क्षेत्र में भी कुशल लोगों की भारी माँग है, किन्तु जो छात्र इंजीनियरिंग की डिग्री प्राप्त कर लेते हैं, उनके पास विश्वस्तरीय कुशलता नहीं होती।
- खाद्य तकनीकी क्षेत्र में कुशल खाद्य वैज्ञानिकों तथा तकनीकी व्यक्तियों की बहुत आवश्यकता है। 65% रेफ्रिजरेटर मैकेनिक की कमी है।
- जैव तकनीकी क्षेत्रों में डॉक्टरों तथा पराडॉक्टरेट वैज्ञानिकों की 80% कमी है, 70% इलैक्ट्रीशियन तथा अन्य प्रोफेशनलों की आवश्यकता है।
- IT तथा BPO क्षेत्र में 9 लाख प्रोफेनल्स की आवश्यकता है।
- रिटेल क्षेत्र में केवल उत्तर भारत में 3-5 लाख लोगों की आवश्यकता है।
- लेदर इंडस्ट्री में 2022 तक 3 लाख लोगों की आवश्यकता पड़ेगी।
- निर्माण संबंधी कार्यों की मांग बढ़ने के कारण 30 मिलियन से अधिक लोगों की आवश्यकता पड़ेगी।
- स्वास्थ्य क्षेत्र में 5 से 10 लाख नर्सों की आवश्यकता है।
- ऑटोमोबाइल क्षेत्र में भी तेजी से वृद्धि होने के कारण 2015-16 तक 25 लाख लोगों की मांग होने वाली है।
- उड्डयन क्षेत्र में पायलटों तथा अन्य अधिकारियों की बहुत आवश्यकता है।
- बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में भी 50-80 प्रतिशत लोगों की कमी है।
- कपड़ा उद्योग में 35 मिलियन लोगों को रोजगार मिला हुआ है, तथा 55 मिलियन लोग इससे जुड़े हुए क्षेत्रों में लगे हुए हैं। अभी भी 14 मिलियन अतिरिक्त लोगों की आवश्यकता पड़ेगी।
- **फार्मा क्षेत्र:** पिछले चार वर्षों में फार्मा क्षेत्र में चौगुनी वृद्धि हुई है, जिसके कारण फार्मेसी वैज्ञानिकों की भारी मांग होने लगी है।
- प्रबंधन क्षेत्र में भी कुशल पेशेवरों की आवश्यकता है।
- शिक्षा के क्षेत्र में भी कुशल अध्यापकों तथा फैकल्टी की आवश्यकता है। उपरोक्त आँकड़ों से प्राप्त सूचना के आधार पर यह ज्ञात होता है कि शिक्षा तथा विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में कुशल तथा योग्य लोगों की भारी माँग है, किन्तु वर्तमान शिक्षा प्रणाली में ऐसी कई कमियाँ हैं, जिसके कारण योग्य लोगों का अभाव है।

नोट

8.5 शिक्षा में गुणवत्ता का महत्त्व (Perspectives of Quality in Education)

भारत में शिक्षा की गुणवत्ता के सुधार के लिए अनेक प्रयत्न किये गये जो कि बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। सरकार को इसमें सुधार हेतु विद्यालयी तथा व्यावसायिक शिक्षा में सुधार तथा मजबूती लानी चाहिए। माँग तथा आपूर्ति के बीच की दूरी समाप्त करने के लिए उद्योगों तथा शैक्षिक वातावरण के बीच सामंजस्य स्थापित करना चाहिए तथा कुशल लोगों को रोजगार के पर्याप्त अवसर प्रदान करने चाहिए। इसके अतिरिक्त पुरानी मशीनरी, औजारों तथा तकनीकों को अपडेट करना चाहिए।

> *क्या आप जानते हैं* NASSCOM के अनुसार प्रतिवर्ष 3 मिलियन स्नातक तथा स्नातकोत्तर उपाधियाँ ग्रहण करके छात्र कॉलेजों से बाहर निकलते हैं, किन्तु केवल 25% ही रोजगार प्राप्त कर पाते हैं, इसके लिए सरकार को ठोस कदम उठाने चाहिए।

8.5.1 सिफारिशें

- **विशाल पैमाने पर कुशलता के विकास संबंधी अवसरों की आवश्यकता–**

  (*i*) प्राइवेट उद्यमों तथा सेवा क्षेत्रों में कुशल लोगों की आपूर्ति के लिए;

  (*ii*) बढ़ती अर्थव्यवस्था को बढ़ाने तथा बनाये रखने के लिए;

  (*iii*) तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या को उचित रोजगार दिलाने के लिए।

- **विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को सम्मिलित करना–**

  (*i*) विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों के लिए विशेष शिक्षा आयोजन

  (*ii*) पेशेवर व्यावसायिक निर्देशन की आवश्यकता

  (*iii*) कुशलता प्रशिक्षण में ICT का उपयोग

- **कुशलता मापन तथा लचीलापन–**

  (*i*) अकादमिक शिक्षा को अधिक लचीला तथा अनुशासित करना

  (*ii*) शिक्षा की विभिन्न धाराओं में क्षैतिज तथा उर्ध्वाधर चालकता

  (*iii*) कुशलता प्रशिक्षण में ICT तकनीक का व्यापक उपयोग

- **प्राइवेट सेक्टर सहभागिता (PPP)**

  (*i*) ITI स्तर के कुशलता विकास तथा व्यावसायिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण में निजी क्षेत्र की सहभागिता

  (*ii*) निजी क्षेत्र तथा सरकारी संस्थानों के बीच संस्थागत सामंजस्य स्थापित करना आदि।

8.5.2 छात्रों के लिए विशिष्ट उपाय तथा विधियाँ

- **कोर्स तथा पाठ्यक्रम विकास**

  (*i*) विशिष्ट अन्तराल पर पाठ्यक्रम की पुनरावृत्ति

  (*ii*) कोर्स तथा पाठ्यक्रम विकास के लिए उपागम

  (*iii*) विश्वविद्यालय तथा उच्च शिक्षा स्तर पर विशिष्ट व्यावसायिक पाठ्यक्रम सम्मिलित करना।

नोट

- **उपलब्ध स्त्रोतों का अधिकतम उपयोग**

  (*i*) प्रशिक्षुओं को केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा कोर्स की समाप्ति पर प्रमाण-पत्र प्रदान करना

  (*ii*) अध्यापकों तथा निर्देशनकर्ताओं को बदलते परिवेश के अनुसार प्रशिक्षित करना ताकि वे प्रशिक्षणार्थियों को वर्तमान परिवेश के अनुसार शिक्षा प्रदान कर सकें।

टास्क डेलर्स कमीशन कब और क्यों गठित किया गया?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. **निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य कथन का चयन कीजिए–** (State whether the following statements are 'True' or 'False')

   1. भारतीय शिक्षा प्रणाली राष्ट्रमंडल देशों में सबसे छोटी शिक्षण प्रणाली है।
   2. भारत में बाल मजदूर नहीं हैं।
   3. प्रतिवर्ष 5.5 मिलियन छात्र कक्षा 10 में पास होते हैं।
   4. विद्यालय में छात्र नामांकन संख्या से अधिक विद्यालय छोड़ने की दर है।

8.6 सारांश (Summary)

- सन् 1994 तथा 1995 में आयोजित की गई, बैठकों में 'जेक्वस डेलर' की अध्यक्षता में डेलर्स कमीशन रिपोर्ट पेश की गई। जेक्वस डेलर ने '21वीं शताब्दी में शिक्षा' विषय पर बने अन्तर्राष्ट्रीय आयोग की अध्यक्षता की। यह रिपोर्ट यूनेस्को में राष्ट्रमंडल देशों के शिक्षा मंत्रियों तथा राष्ट्रमंडल प्रमुखों द्वारा प्रस्तुत की गई। इस रिपोर्ट के माध्यम से सहस्त्राब्दि में शिक्षा की वर्तमान स्थिति तथा क्रान्तिक व ज्वलन्त समस्याओं को उजागर किया गया। यह रिपोर्ट 'लर्निंग द ट्रेजर विद इन' के नाम से जानी जाती है। इस रिपोर्ट में शिक्षा प्रणाली के साथ शिक्षा में अध्यापक के महत्त्व को भी बहुत अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया गया है। कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में प्रत्येक राष्ट्र को शिक्षा पर GNP के 6%: खर्च करने पर जोर दिया।
- अत: शिक्षा का प्रारूप ऐसा होना चाहिए जिसका उपयोग व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में भी कर सके। डेलर्स कमीशन रिपोर्ट शिक्षा के आर्थिक, सांस्कृतिक तथा तकनीकी परिवर्तनों के विषय में भी बताती है।
- शिक्षा की गुणवत्ता का अर्थ है कि व्यक्ति का बहुमुखी विकास तथा सामाजिक परिवेश में उद्देश्यों की पूर्ति करना। इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा द्वारा ही किसी राष्ट्र तथा उसके नागरिकों का सम्पूर्ण विकास संभव है, किन्तु अधिकतर देशों, विशेषकर विकासशील देशों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने की बहुत आवश्यकता है। शिक्षा की वैधता, सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति तथा इसका प्रभाव व कुशलता शिक्षा प्रणाली के मूल मापक हैं।
- शिक्षा में प्रत्येक स्तर पर जवाबदेही होनी चाहिए। सभी शिक्षण संस्थानों की तीन समूहों के प्रति विशेष जवाबदेही होनी चाहिए। समाज (सरकार), क्लाइंट्स (छात्र, उद्यमी) तथा विषय (व्यवसाय, सहयोगी)। नागरिक टैक्स जमा करने वाले हैं, अत: सरकार का यह कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा तथा उसकी गुणवत्ता पर बल दे। सरकार भी शिक्षा की गुणवत्ता पर बल देती है। वह विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, माध्यमिक विद्यालयों को सीधे रूप से अनुदान देती है, जिससे शिक्षण संस्थानों में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सके तथा छात्रों को अनुदान तथा कर मुक्त ऋण देकर अप्रत्यक्ष रूप से उनकी सहायता करती है।

नोट

- शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे उसकी उत्पादकता अर्थात् (शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र) शिक्षा के मानदण्डों पर खरा उतर सकें, तथा हर प्रकार से मूल्यांकन करने पर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हो सके।
- शिक्षा की गुणवत्ता का महत्त्व उद्देश्यों की पूर्ति के लिए है, इसका अर्थ है किसी जरूरतमंदों की जरूरतों तथा इच्छाओं की पूर्ति करना। शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में इसका अर्थ शिक्षण संस्थानों में दी जाने वाली शिक्षा से है, इसका तात्पर्य है कि शिक्षण संस्थानों में दी जाने वाली शिक्षा छात्रों के लक्ष्य तथा उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कितनी कारगर है, तथा सबसे अच्छी शिक्षा प्रदान करना इसका लक्ष्य है।
- प्रदर्शन सूचक शैक्षिक प्रणाली के मानदण्ड हैं जो उच्च शिक्षा संस्थानों तथा कार्यक्रमों का मापन करते हैं। यह परिमाणात्मक तथा गुणात्मक विश्लेषण करता है। प्रदर्शन सूचक प्रभावी रूप से केवल तभी कार्य कर सकता है, जब इसका उपयोग इनपुट प्रक्रिया तथा आउटपुट सूचकों की तरह करें।
- उच्च शिक्षण संस्थान विविध प्रकार की गतिविधियों में शामिल होते हैं, अत: यह आवश्यक है कि विभिन्न प्रक्रियाओं तथा गतिविधियों की आवश्यकता को पहचान कर, सूचकों का उचित प्रयोग करें।
- राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन समिति (NAAC-2008) ने मानदण्डों की एक सूची दी है, जिसमें निम्नलिखित मानदण्ड दिये गये हैं। (1) पाठ्यक्रम आस्पेक्ट; (2) शिक्षण, अधिगम तथा मूल्यांकन; (3) अनुसंधान, परामर्श तथा विस्तार; (4) इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा अधिगम संस्थान; (5) छात्र समर्थन तथा प्रगति (6) प्रशासन तथा नेतृत्व तथा (7) नवीन अभ्यास तथा तरीके।
- भारत में शिक्षण प्रणाली में सुधार एवं गुणवत्ता की बहुत आवश्यकता है, क्योंकि जिस भारी संख्या में स्कूल, कॉलेज तथा शिक्षण संस्थानों की वृद्धि हुई है, उसकी तुलना में शिक्षा में बहुत सी कमियाँ हैं, जिससे वे व्यावसायीकरण के क्षेत्र में पिछड़ रहे हैं। देश में रोजगार होते हुए भी असंख्य नवयुवक बेरोजगार हैं। गुणवत्ता का स्तर जाँचने तथा मापने के लिए विभिन्न आनुपातिक आँकड़े ज्ञात किये गये हैं।
- भारतीय शिक्षा प्रणाली राष्ट्रमंडल देशों में सबसे बड़ी प्रणाली है तथा विश्व में दूसरे स्थान पर है, किन्तु देश में शिक्षा के स्तर में कई कमियाँ हैं, शिक्षा में व्यापक सुधार होने के बाद भी शैक्षिक संस्थानों में शिक्षा तथा छात्रों की गुणवत्ता में बहुत सुधार की आवश्यकता है।
- व्यावसायिक शिक्षा स्कूली शिक्षा के बाद का सबसे महत्त्वपूर्ण कदम है, इसमें भी अभी सुधार की आवश्यकता है।
- शिक्षा की गुणवत्ता कौशल से मापी जाती है। छात्र बहुत उच्च शिक्षा ग्रहण करते हैं, किन्तु वे विश्वस्तरीय मानदण्डों पर व्यावसायिक कुशलता प्राप्त नहीं कर पाते हैं। विभिन्न क्षेत्रों में कुशल व योग्य लोगों की कमी है, इनका विवरण निम्न प्रकार है–
- उद्योग क्षेत्र में कुशल मजदूर तथा कारीगरों की कमी है।
- इंजीनियरिंग क्षेत्र में भी कुशल लोगों की भारी माँग है, किन्तु जो छात्र इंजीनियरिंग की डिग्री प्राप्त कर लेते हैं, उनके पास विश्वस्तरीय कुशलता नहीं होती।
- खाद्य तकनीकी क्षेत्र में कुशल खाद्य वैज्ञानिकों तथा तकनीकी व्यक्तियों की बहुत आवश्यकता है। 65% रेफ्रिजरेटर मैकेनिक की कमी है।
- जैव तकनीकी क्षेत्रों में डॉक्टरों तथा पराडॉक्टरेट वैज्ञानिकों की 80% कमी है, 70% इलैक्ट्रीशियन तथा अन्य प्रोफेशनलों की आवश्यकता है।
- IT तथा BPO क्षेत्र में 9 लाख प्रोफेशनल्स की आवश्यकता है।
- रिटेल क्षेत्र में केवल उत्तर भारत में 3-5 लाख लोगों की आवश्यकता है।
- लेदर इंडस्ट्री में 2022 तक 3 लाख लोगों की आवश्यकता पड़ेगी।

नोट

- निर्माण संबंधी कार्यों की मांग बढ़ने के कारण 30 मिलियन से अधिक लोगों की आवश्यकता पड़ेगी।
- स्वास्थ्य क्षेत्र में 5 से 10 लाख नर्सों की आवश्यकता है।
- ऑटोमोबाइल क्षेत्र में भी तेजी से वृद्धि होने के कारण 2015-16 तक 25 लाख लोगों की माँग होने वाली है।
- उड्डयन क्षेत्र में पायलटों तथा अन्य अधिकारियों की बहुत आवश्यकता है।
- बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में भी 50–80 प्रतिशत लोगों की कमी है।
- शिक्षा के क्षेत्र में भी कुशल अध्यापकों तथा फैकल्टी की आवश्यकता है। उपरोक्त आँकड़ों से प्राप्त सूचना के आधार पर यह ज्ञात होता है कि शिक्षा तथा विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में कुशल तथा योग्य लोगों की भारी माँग है, किन्तु वर्तमान शिक्षा प्रणाली में ऐसी कई कमियाँ हैं, जिसके कारण योग्य लोगों का अभाव है।
- भारत में शिक्षा की गुणवत्ता के सुधार के लिए अनेक प्रयत्न किये गये जो कि बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। सरकार को इसमें सुधार हेतु विद्यालयी तथा व्यावसायिक शिक्षा में सुधार तथा मजबूती लानी चाहिए। माँग तथा आपूर्ति के बीच की दूरी समाप्त करने के लिए उद्योगों तथा शैक्षिक वातावरण के बीच सामंजस्य स्थापित करना चाहिए तथा कुशल लोगों को रोजगार के पर्याप्त अवसर प्रदान करने चाहिए।

8.7 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रयोजन**–कार्य।
- **उर्ध्वाधर**–उदग्र।

8.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. डेलर्स कमीशन की रिपोर्ट का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2. शिक्षा की गुणवत्ता की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
3. भारत में शिक्षा की गुणवत्ता के स्तर की व्याख्या कीजिए।
4. शिक्षा की गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रयासों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.	(1) यूनेस्को	(2) 6%	(3) विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा	
2.	(1) असत्य	(2) असत्य	(3) सत्य	(4) सत्य

8.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–9: राष्ट्रीय ज्ञान आयोग–2009 (National Knowledge Commission—2009)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

9.1 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग–2009 (National Knowledge Commission—2009)

9.2 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की अवधारणा (Concept of National Knowledge Commission)

9.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के उद्देश्य (Objectives of National Knowledge Commission)

9.4 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के कार्य (Functions of National Knowledge Commission)

9.5 सारांश (Summary)

9.6 शब्दकोश (Keywords)

9.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

9.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग–2009 की अवधारणा, उद्देश्य एवं कार्यों की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

21वीं शताब्दी में ज्ञान को शिक्षा का सबसे प्रमुख अंग माना गया है। भारत में शिक्षा के विस्तार का अर्थ केवल यह नहीं है कि शिक्षा प्राप्त की जाए बल्कि उस शिक्षा से ऐसा ज्ञानार्जन किया जा सके जिससे न सिर्फ व्यक्ति विशेष का अपितु पूरे भारत वर्ष का विकास किया जा सके, इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (National Knowledge Commission—2009) का आधार रखा गया। इस इकाई में हम राष्ट्रीय ज्ञान आयोग तथा उससे संबंधित तथ्यों तथा परिवेशों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

9.1 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग–2009 (National Knowledge Commission—2009)

भारतीय शिक्षा प्रणाली के तहत छात्रों के ज्ञानार्जन तथा शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए श्री सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा जून, 2009 में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन किया गया। पित्रोदा ने ज्ञान संबंधी सभी संस्थानों के सुधार हेतु एक प्रारूप (Blueprint) तैयार किया।

9.2 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की अवधारणा (Concept of National Knowledge Commission)

शिक्षा तथा ज्ञान द्वारा ही देश की नागरिकों को इस योग्य बनाया जा सकता है कि जिससे देश की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का निदान किया जा सके है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग शिक्षा सैक्टर के पुनरुत्थान के लिए कार्य करता है। यह विद्यालयी शिक्षा, उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा आदि क्षेत्रों में शिक्षा के विकास के लिए कार्य करता है।

नोट्स भारत में उच्च शिक्षा केवल 7 प्रतिशत है जो पूरे विश्व की उच्च शिक्षा का बहुत छोटा अंश है।

9.3 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के उद्देश्य (Objectives of National Knowledge Commission)

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

- 21वीं शताब्दी में ज्ञान से सम्बन्धित चुनौतियों के लिए शिक्षा प्रणाली में गुणवत्ता लाना तथा ज्ञान के क्षेत्र में भारत को प्रतिस्पर्द्धात्मक रूप से भागीदार बनाना।
- विज्ञान तथा तकनीकी प्रयोगशालाओं में ज्ञान को प्रोन्नत करना।
- बौद्धिक संपत्ति अधिकार के अन्तर्गत शिक्षण संस्थानों के प्रबंधन में सुधार लाना।
- कृषि तथा उद्योग के उपयोगों में ज्ञान को प्रोन्नत करना।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने शिक्षा के अधिकार, भाषा, अनुवाद, पुस्तकालयों तथा राष्ट्रीय ज्ञान कार्यक्रमों के क्षेत्र में विभिन्न सिफारिशें की हैं।

9.4 राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के कार्य (Functions of National Knowledge Commission)

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान की गुणवत्ता तथा तकनीकी परिवर्तनों का विकास करता है। इसके कार्य विविध क्षेत्रों में निम्नलिखित हैं—

1. विद्यालयी शिक्षा—राष्ट्रीय ज्ञान आयोग विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए बहुत-सी कार्यशालाओं का आयोजन करता है तथा शिक्षा की गुणवत्ता, मात्रा तथा उसकी विद्यालयी शिक्षा की उपलब्धता में समाज की भागीदारी का पूर्ण उपयोग करता है।

क्या आप जानते हैं राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने शिक्षा के अधिकार को केन्द्रीय कानून बनाने, वित्तीय नियमों में लचीलापन लाने, स्थानीय स्वायत्तता का विकेन्द्रीकरण करने, साक्षरता का विस्तार तथा विद्यालय की योजना बनाने का कार्य करता है।

2. गुणवत्ता तथा संसाधन—(*i*) राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने शिक्षा के अधिकार को कानूनी रूप से पूरे देश में लागू करने का कार्य किया, तथा कक्षा X तक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कार्यबद्ध है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग सरकारी विद्यालय प्रणाली में अच्छी गुणवत्ता तथा शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए भी कार्य करता है।

(*ii*) किसी भी स्कूल के लिए भूमि एक आवश्यक अंग है। शहरीकरण के कारण आज विद्यालयों के लिए जमीन की आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पा रही है। जनसंख्या वृद्धि के कारण जमीन की कमी हो गई है जिससे न तो विद्यालयों का निर्माण हो पा रहा है, तथा न ही पहले से स्थापित विद्यालयों में खेल के मैदानों तथा अन्य स्कूली गतिविधियों के लिए भूमि पर्याप्त रूप से प्राप्त हो रही है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग इसके लिए भी प्रयासरत् है।

(*iii*) शिक्षा की वर्तमान प्रणाली में शिक्षा के वित्त तथा वाणिज्यिक नियम बहुत कमजोर हैं, जिससे कि वित्तीय संचालन ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। इससे सम्बन्धित कुछ समस्यायें निम्नलिखित हैं–

(*a*) स्कूली इमारत संबंधी व्यवस्था ठीक नहीं हैं विशेषत: उन राज्यों तथा नगरों में जहाँ शिक्षा का स्वरूप बहुत निम्न स्तर का है।

(*b*) निर्माण सम्बन्धी देखरेख तथा मरम्मत के लिए अपर्याप्त प्रयास।

3. गुणवत्ता तथा प्रबन्धन–इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (NKC) ने कुछ नियम बनाये हैं–

(*i*) विद्यालय शिक्षा वर्तमान कई वर्गों में वर्गीकृत की गई है। यह शिक्षा प्रणाली सभी बच्चों तक शिक्षा पहुँचाने में सहायता करती है।

(*ii*) स्कूल की योजना आसपास की जलवायु तथा पारिस्थितिकीय तंत्र को ध्यान में रखकर बनानी चाहिए।

(*iii*) स्कूल प्रबंधन को जितना हो सके विकेन्द्रीकृत होना चाहिए।

(*iv*) स्कूल प्रबंधन प्रारूप तथा सरकारी विभागों की विविधता तंत्र के कारण विद्यालयों के प्रशासन तथा उसकी रणनीतियों में व्यवधान तथा उलझन उत्पन्न होती है। इसलिए इनके बीच तालमेल का होना आवश्यक है तथा प्रतिदिन प्रबंधन में स्थानीय समुदायों की भागीदारी होना भी आवश्यक है।

4. उच्च शिक्षा–स्वतंत्र भारत के आर्थिक विकास, सामाजिक प्रगति तथा राजनीतिक प्रजातंत्र में उच्च शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है किन्तु इसमें चिंता का विषय यह है कि उच्च शिक्षा का प्रतिशत भारत में केवल 7 प्रतिशत है जो कि विश्व की उच्चशिक्षा का बहुत छोटा अंश है। उच्च शिक्षा हमारी जनसंख्या पहुँच से काफी दूर है तथा उच्च शिक्षा का स्तर भी इतना अच्छा नहीं है कि विश्व में शिक्षा के मानदंड़ों पर खरी उतरे। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का प्रयास है कि देश के प्रत्येक बच्चे तक उच्च शिक्षा पहुँचाया जाये जिससे शिक्षा का विस्तार उचित ढंग से हो।

राष्ट्रीय ज्ञान आयोग इस विषय पर विश्व की उच्च शिक्षा से संबंधित लोगों को इसमें सम्मिलित करती है। इसके साथ ही यह संसद, सरकार, समाज तथा उद्योग से सम्बन्धित लोगों को शिक्षा सम्बंधी परामर्श भी देती है।

टास्क राष्ट्रीय ज्ञान आयोग –2009 के अध्यक्ष कौन थे?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)

1. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन जून 2005 में श्री .... की अध्यक्षता में प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने किया।
2. .... कृषि तथा उद्योग के क्षेत्र में ज्ञान को प्रोन्नत करता है।
3. .... देश के नागरिकों के विकास का एकमात्र साधन है जिससे देश की आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं का निदान संभव है।

9.5 सारांश (Summary)

- भारत में शिक्षा के विस्तार का अर्थ केवल यह नहीं है कि शिक्षा प्राप्त की जाए बल्कि उस शिक्षा से ऐसा ज्ञानार्जन किया जा सके जिससे न सिर्फ व्यक्ति विशेष का अपितु पूरे भारत वर्ष का विकास किया जा सके।

नोट

- भारतीय शिक्षा प्रणाली के तहत छात्रों के ज्ञानार्जन तथा शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए श्री सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा जून, 2009 में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन किया।
- शिक्षा तथा ज्ञान द्वारा ही देश के नागरिकों को इस योग्य बनाया जा सकता है, जिससे देश की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का निदान किया जा सकता है।
- शिक्षा तथा ज्ञान द्वारा ही देश के नागरिकों को इस योग्य बनाया जा सकता है जिससे देश की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का निदान किया जा सके। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग शिक्षा क्षेत्र के पुनरुत्थान के लिए कार्य करता है। यह विद्यालयी शिक्षा, उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा आदि क्षेत्रों में शिक्षा के विकास के लिए कार्य करता है।
- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए बहुत-सी कार्यशालाओं का आयोजन करता है तथा शिक्षा की गुणवत्ता, मात्रा तथा उसकी विद्यालयी शिक्षा की उपलब्धता में समाज की भागीदारी का पूर्ण उपयोग करता है।
- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने शिक्षा के अधिकार को कानूनी रूप से पूरे देश में लागू करने का कार्य किया तथा कक्षा X तक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कार्यबद्ध है।
- जनसंख्या वृद्धि के कारण जमीन की कमी हो गई है जिससे न तो विद्यालयों का निर्माण हो पा रहा है, तथा न ही पहले से स्थापित विद्यालयों में खेल के मैदानों तथा अन्य स्कूली गतिविधियों के लिए भूमि पर्याप्त रूप से प्राप्त हो रही है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग इसके लिए प्रयासरत है।

9.6 शब्दकोश (Keywords)

- **पुनरुत्थान**—पुन: उठाने का कार्य—पतन अथवा गिरावट के बाद फिर से किसी भी वस्तु अथवा घटना का उत्कर्ष पुनरुत्थान कहलाता है।
- **परामर्श**—सलाह।

9.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग क्या है? समझाइये।
2. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के उद्देश्य क्या हैं?
3. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के विभिन्न कार्यों का उल्लेख कीजिए।
4. राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के संदर्भ में शिक्षा की गुणवत्ता तथा प्रबंधन के विषय में समझाइये।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

(*i*) सैम पित्रोदा (*ii*) राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (*iii*) शिक्षा

9.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. अध्यापक शिक्षा—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. पर्यावरण अध्ययन—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. भारत में शिक्षा का विकास—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–10: राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (2005) (National Curriculum Framework-2005)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
10.1 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (2005) (National Curriculum Framework-2005)
10.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की विशेषताएँ (Salient features of National Curriculum Framework)
10.3 सारांश (Summary)
10.4 शब्दकोश (Keywords)
10.5 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
10.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे-

- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा एवं उसकी विशेषताओं की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

फ्रेमवर्क बनाने तथा उसे प्रोन्नत करने में एनसीईआरटी का प्रमुख योगदान है। इसके लिए जुलाई 2004 में कार्यकारी समिति में पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) बनाने का निर्णय लिया गया। इस समिति में शिक्षा सचिव से लेकर एनसीईआरटी के निदेशक तक सम्मिलित थे।

एनसीईआरटी ने बहुत बड़े पैमाने पर परामर्श तथा पूर्व पाठ्यक्रमों में परिवर्तन करके राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) बनाया है। इसे 6 सितम्बर 2005 में केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड द्वारा मान्यता प्राप्त हुई थी, इसलिए इस पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) कहा जाता है। इस फ्रेमवर्क में, पाठ्यपुस्तक, सिलेबस, विद्यालय में समय प्रबंधन, मूल्यांकन, शैक्षणिक कार्यक्रमों की निगरानी, प्रभावी नेतृत्व, कला, क्रॉफ्ट, कार्य, शान्ति, स्वास्थ्य, सूचना तथा जनसंचार तकनीक सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम (2005) में परीक्षा तथा अध्यापक शिक्षा से संबंधित सुझाव भी दिये गये हैं।

10.1 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) (National Curriculum Framework -2005)

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ-2005) चार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 1975, 1988, 2000, और 2005 में भारत में शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण (एनसीईआरटी) की राष्ट्रीय परिषद द्वारा प्रकाशित प्रारूप है, यह दस्तावेज भारत में स्कूल शिक्षा कार्यक्रमों के भीतर, पाठ्यक्रम पुस्तकें और शिक्षण पद्धति बनाने के लिए रूपरेखा प्रदान करता है। एन.सी.एफ. 2005 दस्तावेज पहले शिक्षा पर 'बोझ के बिना सीखने' की नीति पर बल देता है। 1986-1992 शिक्षा की

नोट

राष्ट्रीय नीति और फोकस समूह चर्चा। व्यापक विचार - विमर्श के बाद 21 राष्ट्रीय फोकस समूह स्थिति एनसीएफ-2005 के तहत विकसित किया गया है। इसमें एनसीएफ-2005 के निर्माण के लिए जानकारी प्रदान की गई है तथा दस्तावेज और उसके शाखा पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा अलग-अलग रूपों में प्रेस में आ गए हैं। इसका मसौदा दस्तावेज केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (केब) से आलोचना के तहत आया है। फरवरी 2008 में निदेशक के एक साक्षात्कार में भी चुनौतियों पर चर्चा की है।

एनसीएफ-2005 के दृष्टिकोण एवं सिफारिशों को पूरी शिक्षा प्रणाली के लिए लागू करने का प्रयास कर रहे हैं, इसकी सिफारिशों के लिए ग्रामीण स्कूलों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। सभी सीबीएसई स्कूलों के पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के आधार पर यह प्रयोग किया जा रहा है, लेकिन एनसीएफ आधारित सामग्री भी कई राज्य के स्कूलों में प्रयोग किया जा रहा है।

एनसीएफ-2005 का 22 भाषाओं में अनुवाद किया गया है। 17 राज्यों में प्रस्तावित एनसीईआरटी को राज्य की भाषा में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा को बढ़ावा देने और प्रस्तावित पाठ्यक्रम के साथ अपने वर्तमान पाठ्यक्रम की तुलना करने के लिए प्रत्येक राज्य को 10 लाख रुपये का अनुदान दिया गया है।

एनसीएफ-2005: पृष्ठभूमि

वर्तमान में 21 राष्ट्रीय फोकस समूह एक राष्ट्रीय संचालन समिति की देखरेख, जाने-माने वैज्ञानिक और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रमुख प्रो. यशपाल (पूर्व अध्यक्ष) की अध्यक्षता में दस महीनों में किये गए श्रम का परिणाम है। स्टीयरिंग समिति में 35 उच्च सम्मानित शिक्षाविद् एवं प्रोफेसरों, गैर सरकारी संगठन के नेताओं, स्कूल के शिक्षकों, देश भर से बुद्धिजीवियों, संपादक आदि की सिफारिशों को एनसीएफ-2005 में शामिल किया गया है।

एनसीएफ-2005: शिक्षा के लक्ष्य

हमारे संविधान के विजन के आधार पर एन. सी. एफ. के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

(*i*) कार्रवाई की स्वतंत्रता।

(*ii*) सीखना तथा नई स्थितियों के लिए लचीलापन और रचनात्मक जवाब देना।

(*iii*) लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं एवं सामाजिक परिवर्तन में भागीदारी के लिए पूर्व जनमत तैयार करना।

(*iv*) सभी बच्चों को जागरूक करना,

एनसीएफ-2005: राष्ट्रीय फोकस समूह

(*i*) परिप्रेक्ष्य

(*ii*) अधिगम और ज्ञान

(*iii*) पाठ्यचर्या क्षेत्रों में मूल्यांकन

(*iv*) सिस्टमैटिक सुधार

परिप्रेक्ष्य–पाठ्यचर्या विकास के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत

(*i*) स्कूल में बाहरी जीवन के ज्ञान को जोड़ना

(*ii*) सीखना और दुहराव से दूर परिवर्तन

(*iii*) पाठ्यचर्या संवर्धन जो पाठ्य पुस्तकों से परे जा रहा है

(*iv*) जीवनोपयोगी शिक्षा प्रदान करना तथा परीक्षा पद्धति को लचीला बनाना।

(*v*) देखभाल, पहचान तथा पोषण।

नोट

सीखना और ज्ञान

स्थानीय ज्ञान सभी बच्चों के लिए शिक्षा का समृद्ध श्रोत है। एक सक्रिय शिक्षार्थी के रूप में बच्चे को स्कूल से बाहर की दुनिया एवं सांस्कृतिक वातावरण का ज्ञान आवश्यक है।

बच्चे निम्नलिखित परिवेशों तथा स्त्रोतों से अधिक सीखते हैं–

- पर्यावरण, अपने मित्रों और पुराने लोगों से। सीखने का कार्य करने के लिए बच्चों को पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य साइटों से ज्ञान प्राप्त करने के लिए तैयार किया जाना चाहिए।
- शिक्षक तथा अविभावक यह ध्यान रखें कि बच्चे क्या सीख रहे हैं।

पाठ्यचर्या क्षेत्र और आकलन

पारंपरिक अन्य क्षेत्रों, भाषा, कला, शिक्षा, गणित, स्वास्थ्य और शारीरिक शांति के लिए विज्ञान, शिक्षा सामाजिक विज्ञान, पर्यावास और लर्निंग।

तीन भाषा सूत्र की पुष्टि: शिक्षा के एक माध्यम के रूप में प्रत्येक छात्र को हिन्दी, अंग्रेजी के साथ-साथ एक क्षेत्रीय भाषा का ज्ञान देना आवश्यक है। शिक्षा के सार्वत्रीकरण के 8 साल के अंतर्गत प्राथमिक शिक्षा के दौरान अंग्रेजी में दक्षता पाना।

कला शिक्षा

संगीत के चार प्रमुख क्षेत्रों, नृत्य, दृश्य कला और थिएटर कवर जागरूकता को बढ़ावा देने के लिए और बच्चों को खुद को संगीत के अलग-अलग क्षेत्रों में अपनी अभिव्यक्ति के लिए सक्षम बनाना।

शारीरिक शिक्षा

शारीरिक शिक्षा छात्रों के भावी जीवन की बुनियाद है, इसके अन्तर्गत संतुलित पोषण एवं शारीरिक गतिविधियों पर ध्यान देना आवश्यक है।

क्या आप जानते हैं परीक्षा सुधार ग्रेडिंग प्रणाली दसवीं और बारहवीं कक्षा में बच्चों पर विशेष रूप से मनोवैज्ञानिक दबाव कम करने के लिए अपनायी गई है।

10.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की विशेषताएँ (Salient Features of National Curriculum Framework)

नेशनल पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) में अधिगम तथा ज्ञान 'बच्चों' को प्राकृतिक ज्ञानार्जन कराने वाला माना गया है। बाल्यावस्था से ही शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं को विकसित किया जाता है जिससे वे विकसित होकर पूर्ण रूप से अपनी परिपक्वता तक पहुँच सकें।

लर्नर की प्राथमिकता

संशोधित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

अध्याय 1: परिप्रेक्ष्य

यहाँ पाठ्यचर्या एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा की समीक्षा करने के लिए तर्क प्रदान करता है। यह गांधीजी के अन्याय, हिंसा, असमानता और सामाजिक व्यवस्था में सुधारों के लिए बनाये गए सिद्धांतों को पूर्ण करने का एक साधन है। यह राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा तैयार करने के संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा पर राष्ट्रीय आयोग, 1952-53 (मुदलियार आयोग) और शिक्षा आयोग, 1964-1966 (कोठरी आयोग) और पाठ्यचर्या की रूपरेखा-1975 के सिफारिशों को संदर्भित करता है।

नोट

अध्याय 2: शिक्षा और ज्ञान

यह इकाई सीखने की प्रधानता पर केन्द्रित है। बाल केन्द्रित शिक्षणशास्त्र बच्चों के अनुभव, उनकी आवाज और उनकी सक्रिय भागीदारी को प्रधानता देता है। यह ज्ञान की प्रकृति और वयस्कों की जरूरत के लिए ज्ञान के एक रिसीवर के रूप में बच्चे की अपनी धारणा बदलने का प्रारूप है। बच्चे के सवाल पूछने के लिए कि वे क्या सीख रहे हैं यह ज्ञान के निर्माण में सक्रिय भागीदार हो सकता है। यह एक अच्छे पर्यावरण के विकास के लिए जरूरी है। स्वस्थ शारीरिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि वे पोषण से लाभ, शारीरिक व्यायाम आदि के विषय में जानकारी प्राप्त करें। किशोरावस्था के वर्षों में स्वयं की पहचान के विकास, विशेष रूप से लड़कियों के लिए जो सामाजिक भेदभाव का शिकार है के मामले में एक महत्वपूर्ण घटक है। शिक्षा और ज्ञान लिंग, जाति, वर्ग, धर्म और अल्पसंख्यक दर्जे पर जोर नहीं देता है तथा स्कूल में विकलांग बच्चों की पूर्ण शिक्षा को प्रोत्साहन देता है।

नोट्स शिक्षकों को परम्परागत विधि के अतिरिक्त अन्य तरीकों से भी कक्षा में छात्रों को ज्ञान देने की आवश्यकता है, जिससे छात्र कक्षा के अंदर सीखने के साथ ही अपने वातावरण तथा उनके साथ हो रहे विभिन्न अनुभवों से भी ज्ञान अर्जन कर सकें।

अध्याय 3: पाठ्यचर्या क्षेत्र, स्कूल और आकलन

इस पाठ्यचर्या में भाषा एवं गणित में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन और तनाव को कम करने और शिक्षा को बच्चों की जरूरतों के लिए प्रासंगिक बनाने के लिए विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की सिफारिश की गई है। भाषा में, माध्यम के रूप में मातृभाषा पर जोर देने के साथ तीन भाषा फार्मूला लागू करने का प्रयास करता है। भारत एक बहुभाषी देश है और हर बच्चे को पाठ्यक्रम में अंग्रेजी में प्रवीणता को बढ़ावा देना चाहिए। यह विषय के एक अभिन्न अंग के रूप में भाषा पर केन्द्रित है, पढ़ना-लिखना, सुनना और भाषण आदि सभी पाठ्यचर्या क्षेत्रों में एक बच्चे की प्रगति में योगदान और सीखने के बुनियादी गठन को प्रोत्साहित करता है। समस्याओं का समाधान करने की क्षमता को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है। विज्ञान के शिक्षण के लिए बच्चों को अनुभवों का विश्लेषण करने में सक्षम बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए। पर्यावरण शिक्षा हर विषय का हिस्सा होना चाहिए। सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के लिए एक प्रगतिशील बदलाव की सिफारिश की है जैसे यह सिफारिश की है जैसे लैंगिक न्याय, आदिवासी, दलित मुद्दों और अल्पसंख्यक संवेदनशीलता आदि चार अन्य क्षेत्रों, अर्थात् कला शिक्षा, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा तथा शांति के लिए शिक्षा की ओर ध्यान खींचता है। कार्य ज्ञान को नए निर्माण के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए और लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए आवश्यक मूल्यों को बढ़ावा देना चाहिए। कार्य शिक्षा को शिल्प विरासत के साथ जोड़ने की जरूरत है जो शिल्प क्षेत्रों में विशेष रूप से आवश्यक है इसलिए कि शिक्षा के साथ सांस्कृतिक और आर्थिक प्रगति भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

अध्याय 4: स्कूल और कक्षा का वातावरण

स्कूल और कक्षा के वातावरण में उपयुक्त परिवर्तन के बारे में एक अनुकूल माहौल को बढ़ावा देना आवश्यक होता है। यह अनुशासन की परंपरागत धारणाओं को देखता है और माता-पिता तथा समुदाय के लिए सम्मानजनक स्थिति उपलब्ध कराने के लिए आवश्यकता की चर्चा करता है। यह पाठ्यक्रम साइटों, ग्रंथों, पुस्तकों, पुस्तकालयों, शिक्षा, प्रौद्योगिकी, उपकरण और प्रयोगशालाओं सहित अन्य संसाधनों से सीखने पर अधिक जोर देता है।

अध्याय 5: प्रणालीगत सुधार

इसमें गुणवत्ता, गुणवत्ता की निगरानी और शैक्षिक योजना बनाने के लिए आवश्यक मुद्दों को शामिल किया गया है। यह पंचायती राज में विश्वास की पुष्टि करता है और पंचायतों के प्रासंगिक स्तर पर व्यवस्थित गतिविधि मानचित्रण के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं के सुदृढ़ीकरण पर विशेष बल देता है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में स्कूल स्तर पर शैक्षिक योजना और नेतृत्व के मुद्दों तथा गुणवत्ता में सुधार पर जोर दिया गया है।

नोट

पाठ्यक्रम के नवीनीकरण के लिए अध्यापक शिक्षा, सेवा में शिक्षा और शिक्षकों के प्रशिक्षण की पेशेवर पहचान को विकसित करने पर ध्यान केन्द्रित करता है। अंत में, यह पाठ्यपुस्तकों की बहुलता और प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से विचारों और व्यवहार में नवाचार को प्रोत्साहित करता है और स्कूल प्रणाली व अन्य नागरिक समाज समूहों के बीच भागीदारी की सिफारिश करता है।

टास्क राष्ट्रीय पाठ्यचर्या-2005 में संगीत के चार क्षेत्र कौन-कौन से हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

(*i*) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) .... द्वारा तैयार की गई।

(*ii*) एन.सी.एफ. 2005 का .... में अनुवाद किया गया है।

(*iii*) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (2005) में मातृभाषा हिन्दी को प्रोन्नत करने के लिए .... को और बेहतर ढंग से क्रियान्वित करने का प्रयास किया।

10.3 सारांश (Summary)

एनसीईआरटी ने बहुत बड़े पैमाने पर पूर्व पाठ्यक्रमों में परिवर्तन करके परामर्श के माध्यम से राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) बनाया है। इसे 6 सितम्बर 2005 में केन्द्रीय शिक्षा परामर्श बोर्ड द्वारा मान्यता प्राप्त हुई थी, इसलिए इस पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2005) कहा जाता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ 2005) चार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 1975, 1988, 2000, और 2005 में भारत में शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण (एनसीईआरटी) की राष्ट्रीय परिषद द्वारा प्रकाशित प्रारूप है। यह दस्तावेज भारत में स्कूल शिक्षा कार्यक्रमों के भीतर, पाठ्यक्रम की पुस्तकें और शिक्षण पद्धति बनाने के लिए रूपरेखा प्रदान करता है।

यह 21 राष्ट्रीय फोकस समूह एक राष्ट्रीय संचालन समिति की देखरेख, जाने-माने वैज्ञानिक और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रमुख प्रो. यशपाल (पूर्व अध्यक्ष) की अध्यक्षता में दस महीनों में किये गए श्रम का परिणाम है।

एनसीएफ 2005-शिक्षा के लक्ष्य- हमारे संविधान के लक्ष्य के आधार पर एन. सी. एफ. के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

(*i*) कार्रवाई की स्वतंत्रता।

(*ii*) सीखने की प्रक्रिया तथा नई स्थितियों के लिए लचीलापन और रचनात्मक प्रक्रिया।

(*iii*) लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं एवं सामाजिक परिवर्तन में भागीदारी के लिए पूर्व सम्भावना को तैयार करना।

(*iv*) सभी बच्चों को जानने के लिए सशक्त करना।

परिप्रेक्ष्य-पाठ्यचर्या विकास के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत

(*i*) स्कूल से बाहरी जीवन के ज्ञान को जोड़ना

(*ii*) सीखना एवं दुहराव में दूरदर्शी परिवर्तन

(*iii*) पाठ्यचर्या संवर्धन जो पाठ्य पुस्तकों से परे जा रहा है।

पाठ्यचर्या क्षेत्र और आकलन- पारंपरिक अन्य क्षेत्रों, भाषा, कला, शिक्षा, गणित, स्वास्थ्य और विज्ञान शिक्षा, सामाजिक विज्ञान, पर्यावास और लर्निंग।

परिप्रेक्ष्य- पाठ्यचर्या एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा की समीक्षा करने के लिए तर्क प्रदान करता है, यह अन्याय, हिंसा, असमानता और सामाजिक व्यवस्था में सुधारों के लिए गांधीजी के बनाये गए सिद्धांतों को पूर्ण करने का एक साधन है।

नोट

एक धर्मनिरपेक्ष, समतावादी और बहुलवादी समाज के रूप में सामाजिक न्याय और समानता के मूल्यों पर आधारित भारत की संवैधानिक दृष्टि की पुष्टि करता है। यह पाठ्यक्रम विकास के लिए चार मार्गदर्शक सिद्धांत, अर्थात् (क) परीक्षाओं के स्कूल के बाहर जीवन के लिए ज्ञान को जोड़ने, (ख) सीखने रटना के तरीकों, (ग) पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तक में सामांजस्य, (घ) पाठ्यक्रम का प्रस्ताव अधिक लचीला, का अनुसरण करता है।

शिक्षा और ज्ञान– बाल केन्द्रित शिक्षणशास्त्र बच्चों के अनुभव, उनकी आवाज और उनकी सक्रिय भागीदारी को प्रधानता देता है। यह न केवल ज्ञान की प्रकृति और वयस्कों की जरूरत के लिए ज्ञान के एक रिसीवर के रूप में अपनी धारणा बदलने का प्रारूप है, बल्कि बच्चे के सवाल पूछने के लिए, ज्ञान के निर्माण में सक्रिय भागीदार भी हो सकता है।

पाठ्यचर्या क्षेत्र, स्कूल और आकलन– इस पाठ्यचर्या में भाषा एवं गणित में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन और तनाव को कम करने और शिक्षा को बच्चों की जरूरतों के लिए प्रासंगिक बनाने के लिए विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की सिफारिश की गई है।

स्कूल और कक्षा का वातावरण– स्कूल और कक्षा के वातावरण में उपयुक्त परिवर्तन के बारे में एक अनुकूल माहौल का होना अतिआवश्यक होता है। यह अनुशासन की परंपरागत धारणाओं को देखता है और माता-पिता एवं समुदाय के लिए सम्मानजनक स्थिति की जरूरत की चर्चा करता है।

प्रणालीगत सुधार– इसमें गुणवत्ता, गुणवत्ता की निगरानी और शैक्षिक योजना बनाने के लिए आवश्यक मुद्दों को शामिल किया गया है।

10.4 शब्दकोश (Keywords)

- **घटक**–भाग।
- **बहुलता**–प्रचुर मात्रा में।

10.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

(*i*) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क (2005) के विषय में समझाइये।

(*ii*) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क (2005) के उद्देश्य बताइये।

(*iii*) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क (2005) की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

(*i*) एन.सी.ई.आर.टी (*ii*) 22 (*iii*) त्रिभाषा फार्मूला

10.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–11: शिक्षा के शीर्षस्थ अंगों के कार्यः एन.सी.ई.आर.टी. तथा एस.सी.ई.आर.टी. (Functions of Apex Bodies of Education: NCERT, SCERT)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

11.1 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (NCERT)

11.2 एन.सी.ई.आर.टी. : कार्यकारी इकाइयाँ (NCERT : Constituent Units)

11.3 एन.सी.ई.आर.टी. के कार्य (Functions of NCERT)

11.4 राज्य शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (SCERT)

11.5 एस.सी.ई.आर.टी. के कार्य (Functions of SCERT)

11.6 सारांश (Summary)

11.7 शब्दकोश (Keywords)

11.8 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

11.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- एन.सी.ई.आर.टी. और एस.सी.ई.आर.टी. को समझने एवं इनके कार्यों की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) एक स्वायत्त संस्था है जिसका गठन 1961 में विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता तथा सुधार से संबंधित विषयों पर केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा नीतियाँ बनाने में सहयोग तथा परामर्श देने के लिए किया गया। राज्य शैक्षिक तथा अनुसंधान परिषद् का गठन 15 जनवरी 1990 में राज्यों में विद्यालयी शिक्षा से संबंधित सुधार तथा नीति निर्माण में मदद के लिए किया गया। इस इकाई में हम इन दोनों परिषदों तथा उसके कार्यो के विषय में अध्ययन करेंगे।

11.1 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (NCERT)

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद भारत सरकार द्वारा 1961 में गठित की गई एक स्वायत्त संस्था है। यह भारत में विद्यालयी शिक्षा के संबंध में बनाई गई नीतियों के निर्माण में केन्द्र तथा राज्य सरकारों को परामर्श देती है तथा शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए कई कार्यक्रम आयोजित करती है।

नोट

11.2 एन.सी.ई.आर.टी.: कार्यकारी इकाइयाँ (NCERT : Constituent Units)

एन.सी.ई.आर.टी. की कार्यकारी इकाइयाँ निम्नलिखित हैं-

(*i*) नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (NIE), नई दिल्ली
(*ii*) सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलोजी (CIET), नई दिल्ली
(*iii*) पंडित सुंदरलाल शर्मा इन्स्टीट्यूट ऑफ वोकेशनल एजुकेशन (PSSCIVE), भोपाल
(*iv*) रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE), अजमेर
(*v*) रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE), भोपाल
(*vi*) रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE), भुवनेश्वर
(*vii*) रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE), मैसूर
(*viii*) नॉर्थ ईस्ट रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (NE-RIE), शिलाँग

1. नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (NIE)

नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा उससे संबंधित अन्य अध्ययन सामग्री पर अनुसंधान तथा विकास करता है। यह प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर शिक्षा से संबंधित आँकड़े उपलब्ध कराता है, जिससे छात्रों को बेहतर ढंग से शिक्षा लेने तथा उसका उपयोग करने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो।

2. सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन टेक्नोलॉजी (CIET)

शैक्षिक तकनीकों (विशेषकर जनसंचार माध्यम) का विकास करता है, जिससे शिक्षा प्रणाली तथा इसकी गुणवत्ता को सुधार करने में तकनीकी सहयोग प्राप्त हो सके। सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन टेक्नोलॉजी मीडिया सॉफ्टवेयर तैयार करता है, तथा रेडियो और टेलीविजन कार्यक्रम भी बनाता है जिससे शिक्षकों द्वारा दी जा रही शिक्षा को बेहतर तथा मनोरंजक ढंग से समझा जा सके।

3. पंडित सुंदरलाल शर्मा सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ वोकेशनल एजुकेशन (PSSCIVE)

PSSCIVE कार्यशिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा संबंधी अनुसंधान, विकास, प्रशिक्षण तथा विस्तार गतिविधियों का संचालन करता है। इसके अतिरिक्त यह व्यावसायिक पाठ्यक्रम, अध्ययन सामग्री से संबंधित गाइडलाईन, डाटाबेस का निर्माण, तथा व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रमों का विकास भी करता है। यह UNESCO के फोरम का सदस्य है तथा UNESCO के तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के प्रोजेक्ट में भी सम्मिलित है।

4. रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE)

रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर तथा मैसूर में स्थित है जो कि राज्य तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में प्रीसर्विस तथा इनसर्विस अध्यापक शिक्षा को प्रोन्नत करता है। अध्यापकों को प्रीसर्विस प्रशिक्षण विज्ञान, गणित तथा अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए दिया जाता है। रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन अजमेर, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू तथा कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल तथा केन्द्रशासित प्रदेश चंडीगढ़ में अध्यापक शिक्षा की देख-रेख का कार्य करता है। रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE) भोपाल, छत्तीसगढ़, गोआ, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र तथा दादरा और नगर हवेली तथा दमन दीव क्षेत्रों में अध्यापक शिक्षा का संचालन करता है। रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE) मैसूर, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरला और तमिलनाडु, पाँडिचेरी तथा लक्षद्वीप में अध्यापक शिक्षा का संचालन करता है। (नार्थ ईस्ट-RIE) शिलाँग में स्थापित किया गया है।

क्या आप जानते हैं अरुणाचल प्रदेश, असम, बिहार, झारखंड, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, उड़ीसा, सिक्किम, त्रिपुरा, पश्चिमी बंगाल तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE), भुवनेश्वर के अन्तर्गत आते हैं।

नोट

11.3 एन.सी.ई.आर.टी. के कार्य (Functions of NCERT)

एन.सी.ई.आर.टी. के निम्नलिखित कार्य हैं—

(1) अनुसंधानः नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन के विभिन्न विभाग एन.सी.ई.आर.टी., रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIES), सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी एन.सी.ई.आर.टी., तथा पंडित सुदरलाल शर्मा सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ वोकेशनल एजुकेशन विद्यालय शिक्षा तथा अध्यापक शिक्षा के विभिन्न सोपान पर अनुसंधान कार्यक्रम संचालित करते हैं। एन.सी.ई.आर.टी. स्कॉलरों को अपने शोधन कार्यों के लिए वित्तीय सहायता भी देता है।

(2) विकासः विद्यालय शिक्षा में विकासीय क्रियाकलापों का संचालन NCERT का एक अन्य प्रमुख कार्य है। यह पाठ्यक्रम में नवीनीकरण, अध्ययन सामग्री का विकास भी करता है जिससे छात्रों को समय-समय पर शिक्षा में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी हो सके तथा वह शिक्षा को बेहतर समझ सकें।

(3) प्रशिक्षणः एन.सी.ई.आर.टी., प्री प्राईमरी, एलिमेंटरी, सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्ड्री शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, शिक्षण तकनीकें, निर्देशन तथा परामर्श तथा विशिष्ट शिक्षा आदि क्षेत्रों में अध्यापकों को प्रशिक्षण देता है।

(4) प्रकाशनः एन.सी.ई.आर.टी. कक्षा I से XII तक की विद्यालयी शिक्षा की पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करता है। इसके अतिरिक्त यह वर्कबुक, अध्यापक निर्देशक पुस्तिका, पूरक पाठ्यपुस्तकें, अनुसंधान रिपोर्ट तथा अध्यापक शिक्षकों के लिए निर्देशन सामग्री भी प्रकाशित करता है। यह पाठ्यपुस्तक हिन्दी, अंग्रेजी तथा उर्दू में प्रकाशित करता है।

एक्सचेंज कार्यक्रम- एन.सी.ई.आर.टी अन्तर्राष्ट्रीय संगठन जैसे UNESCO, UNICEF, UNDP, NFPA तथा विश्व बैंक आदि के साथ विशेष शैक्षिक समस्याओं, उनके निदान से संबंधित प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए आपसी आचार विचार करता है। फैकल्टी के सदस्य अन्य देशों में अन्तर्राष्ट्रीय बैठकों, सेमिनार, वर्कशॉप आदि में नियुक्त किये जाते हैं, तथा अन्य देशों के शैक्षिक कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण भी देता है।

> *नोट्स* शिक्षा सूचना के विस्तार के लिए एन.सी.ई.आर.टी छः जर्नल्स भी प्रकाशित करता है, प्राइमरी अध्यापक, भारतीय शिक्षा जर्नल, भारतीय शैक्षिक समीक्षा तथा भारतीय आधुनिक शिक्षा आदि जर्नल शिक्षा की समस्याओं तथा निदान के विषय में विस्तारपूर्वक जानकारी देते हैं।

11.4 राज्य शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (SCERT)

एस.सी.ई.आर.टी. तथा अध्यापक शिक्षा निदेशालय 15 जनवरी, 1990 में अस्तित्व में आए। 1964 में यह राज्य शैक्षिक संस्थान के रूप में जाना जाता था।

एस.सी.ई.आर.टी. का प्रारूप (Structure of SCERT)

एस.सी.ई.आर.टी. के प्रमुख विभाग तथा इकाईयाँ हैं।

(*i*) पाठ्यक्रम विकास का विभाग
(*ii*) अध्यापक शिक्षा तथा सेवारत शिक्षा विभाग
(*iii*) शिक्षा अनुसंधान विभाग
(*iv*) विज्ञान तथा गणित शिक्षा विभाग
(*v*) शिक्षा तकनीकी विभाग
(*vi*) मूल्यांकन तथा परीक्षा सुधार विभाग
(*vii*) जनसंख्या शिक्षा विभाग
(*viii*) प्रारंभिक विद्यालय तथा प्रारंभिक शिक्षा विभाग

नोट

(ix) प्रौढ़ शिक्षा तथा कमजोर वर्ग शिक्षा विभाग

(x) विस्तृत सेवा तथा विद्यालय प्रबंधन विभाग

(xi) प्रकाशन इकाई

(xii) पुस्तकालय इकाई

(xiii) प्रशासकीय इकाई

एस.सी.ई.आर.टी. शिक्षा विभाग का शैक्षणिक अंग है, जो विद्यालय शिक्षा तथा अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता सुधार के लिए प्रयासरत रहता है।

11.5 एस.सी.ई.आर.टी. के कार्य (Functions of SCERT)

राज्य शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् NCERT के प्रारूप के अनुसार प्रत्येक राज्य में गठित की गई है। SCERT में कार्यक्रम परामर्श समिति होती है जिसका प्रमुख राज्य शिक्षा मंत्री होता है।

एस.सी.ई.आर.टी. के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

- यह राज्य में अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों, सेकेण्डरी प्रशिक्षण विद्यालय तथा प्रारंभिक प्रशिक्षण विद्यालय की कार्य प्रणाली की देखरेख करता है।
- यह राज्य में सेवापरक अध्यापक शिक्षा का प्रबंध करता है तथा प्री स्कूल, प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लिए अधिकारी नियुक्त करता है।
- यह अध्यापक प्रशिक्षण केन्द्रों में सेवापरक अध्यापक शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करता है।
- अध्यापकों तथा अध्यापक शिक्षकों के सर्वत्र विकास के लिए दूरस्थ शिक्षा तथा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन करता है।
- यह प्रीस्कूल, प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लिए अध्यापक शिक्षण संस्थानों में पाठ्यपुस्तकों, निर्देशन सामग्री का निर्माण तथा पाठ्यक्रम का निर्माण करता है।
- यह UNICEF, NCERT अन्य एजेन्सियों द्वारा चालित विभिन्न विशिष्ट शैक्षिक प्रोजेक्ट कार्यान्वित करता है जिससे स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हो सके।

टास्क एससीईआरटी कार्यक्रम परामर्श समिति का प्रमुख कौन होता है?

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the banks)**

(i) राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण केन्द्र का गठन .... में किया गया।

(ii) शैक्षिक तकनीक केन्द्र संस्थान (CIET) .... से सम्बद्ध है।

(iii) एन.सी.ई.आर.टी. .... कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने वाली एक महत्वपूर्ण एजेन्सी है।

(iv) एस.सी.ई.आर.टी. का गठन .... में हुआ।

(v) एस.सी.ई.आर.टी. में .... होती है जिसका प्रमुख राज्य मंत्री होता है।

(vi) एस.सी.ई.आर.टी. राज्य के अध्यापक शिक्षकों के लिए .... कर निर्माण करता है।

नोट

11.6 सारांश (Summary)

- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण केन्द्र भारत सरकार द्वारा 1961 में गठित की गई एक स्वायत्त संस्था है। यह भारत में विद्यालयी शिक्षा के संबंध में बनाई गई नीतियों के निर्माण में केन्द्र तथा राज्य सरकारों को परामर्श देती है।
- नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम तथा उससे संबंधित अन्य अध्ययन सामग्री पर अनुसंधान तथा विकास करता है। प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर शिक्षा से संबंधित आँकड़े उपलब्ध कराता है, जिससे छात्रों को बेहतर ढंग से शिक्षा लेने तथा उसका उपयोग करने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो।
- CIET शैक्षिक तकनीकों (विशेषकर जनसंचार माध्यम) का विकास करता है, जिससे शिक्षा प्रणाली तथा इसकी गुणवत्ता को सुधार करने में तकनीकी सहयोग प्राप्त हो सके। CIET मीडिया Software तैयार करता है, तथा रेडियो और टेलीविजन कार्यक्रम भी बनाता है जिससे शिक्षकों को बेहतर तथा मनोरंजक ढंग से समझा जा सके।
- PSSCIVE कार्यशिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा संबंधी अनुसंधान, विकास, प्रशिक्षण तथा विस्तार गतिविधियों का संचालन करता है। इसके अतिरिक्त यह व्यावसायिक पाठ्यक्रम, अध्ययन सामग्री से संबंधित गाइडलाईन, डाटाबेस का निर्माण तथा व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रमों का विकास भी करता है।
- रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन, अजमेर, भोपाल, भुवनेश्वर तथा मैसूर में स्थित है जो कि राज्य तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में प्रीसर्विस तथा इनसर्विस अध्यापक शिक्षा को प्रोन्नत करता है। अध्यापकों को प्रीसर्विस प्रशिक्षण विज्ञान, गणित तथा अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए दिया जाता है। (RIE) अजमेर, दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू तथा कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल तथा केन्द्रशासित प्रदेश चंडीगढ़ में अध्यापक शिक्षा की देख-रेख का कार्य करता है। रीजनल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (RIE) भोपाल, छत्तीसगढ़, गोआ, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र तथा दादरा और नगर हवेली तथा दमन दीव क्षेत्रों में अध्यापक शिक्षा का संचालन करता है।
- राज्य शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद् (SCERT) के प्रारूप के अनुसार प्रत्येक राज्य में गठित की गई है।
- यह राज्य में अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों, सेकेण्डरी प्रशिक्षण विद्यालय तथा प्रारंभिक प्रशिक्षण विद्यालय की कार्यप्रणाली की देखरेख करता है।
- यह राज्य में सेवापरक अध्यापक शिक्षा का प्रबंध करता है तथा प्री स्कूल, प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लिए अधिकारी नियुक्त करता है।
- यह अध्यापक प्रशिक्षण केन्द्रों में सेवापरक अध्यापक शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करता है।
- अध्यापकों तथा अध्यापक शिक्षकों के सर्वत्र विकास के लिए दूरस्थ शिक्षा तथा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन करता है।

11.7 शब्दकोश (Keywords)

- **एससीईआरटी**—राज्य शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद्।
- **सोपान**—सीढ़ी, पदक्रम व्यवस्था

11.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. एन.सी.ई.आर.टी. तथा इसकी कार्यकारी इकाइयों को समझाइये।
2. एन.सी.ई.आर.टी. के प्रमुख कार्य क्या हैं ?

3. एन.सी.ई.आर.टी. के संगठनात्मक प्रारूप के विषय में बताइये।
4. एस.सी.ई.आर.टी. का गठन कब हुआ ? इसके कार्य बताइये।
5. एस.सी.ई.आर.टी. के प्रारूप की व्याख्या कीजिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (*i*) 1961 (*ii*) शिक्षण अवसरों के विकास (*iii*) विद्यालय शिक्षा
(*iv*) 15 जनवरी, 1990 (*v*) कार्यक्रम परामर्श समिति (*vi*) निर्देशन सामग्री

11.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–12: सी.बी.एस.ई. बोर्ड तथा राज्य शैक्षिक बोर्ड के कार्य (Functions of CBSE and State Board of Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

12.1 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (Central Board of Secondary Education)

12.2 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के कार्य (Functions of CBSE)

12.3 राज्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (State Board of Secondary Education)

12.4 राज्य बोर्ड के कार्य (Functions of State Board)

12.5 सारांश (Summary)

12.6 शब्दकोश (Keywords)

12.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

12.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा इसके कार्यों का विश्लेषण करने में।
- राज्य बोर्डों तथा उनके कार्यों की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

सी.बी.एस.ई. भारत के दो प्रमुख बोर्डों में से एक है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में अब तक बहुत से परिवर्तन हुए हैं जिससे कि न सिर्फ शिक्षा के नवीनीकरण में सहायता मिली है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ है। प्रत्येक राज्य में सी.बी.एस.ई. का एक शिक्षा बोर्ड होता है जोकि उच्चशिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा संचालित किया जाता है। प्रत्येक बोर्ड अपने राज्य में माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर बच्चों की शिक्षा के विकास के लिए कार्य करता है।

12.1 केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (Central Board of Secondary Education)

सी.बी.एस.ई. बोर्ड भारतीय शिक्षा प्रणाली के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि यह विभिन्न संस्कृतियों तथा धरोहरों की शिक्षा उपलब्ध कराता है। यह बोर्ड शिक्षा की दुनिया के नये तौर तरीकों तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता सदैव उच्च तथा प्रतिस्पर्धक रही है।

नोट

सी.बी.एस.ई. बोर्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि—उत्तर प्रदेश बोर्ड उच्चतर तथा माध्यमिक शिक्षा भारत का पहला बोर्ड था, जो 1921 में, राजपूताना, केन्द्रीय भारत और ग्वालियर के अन्तर्गत आता था। बाद में भारत सरकार ने 1929 में एक संयुक्त बोर्ड के गठन का सुझाव दिया, जिसका नाम बोर्ड ऑफ हाईस्कूल तथा इण्टरमीडिएट, शिक्षा राजपूताना रखा गया। इसमें अजमेर, मेवाड़, केन्द्रीय भारत तथा ग्वालियर सम्मिलित थे। इसके गठन से लेकर अब तक इसमें बहुत से विकासोन्मुखी परिवर्तन हो चुके हैं।

उद्देश्य—सी.बी.एस.ई. बोर्ड का प्रमुख उद्देश्य शिक्षण संस्थाओं को बेहतर ढंग से संचालित करना है तथा केन्द्रीय प्रशासन में कार्यान्वित लोगों के बच्चों की शिक्षा की आवश्यकताओं को बेहतर व प्रभावी ढंग से पूरा करना है।

क्या आप जानते हैं वर्तमान में सी.बी.एस.ई. बोर्ड से 9000 स्कूल तथा 21 राष्ट्रों सहित लगभग 1 करोड़ 20 लाख छात्र सम्बद्ध हैं।

12.2 सी.बी.एस.ई. के कार्य (Functions of CBSE)

(*i*) सी.बी.एस.ई. बोर्ड मान्यता प्राप्त विद्यालयों के कक्षा 9 से 12 तक का पाठ्यक्रम तैयार करता है तथा प्रतिवर्ष दो बड़ी परीक्षाओं का आयोजन करता है। एक कक्षा 10 की अखिल भारतीय परीक्षा माध्यमिक विद्यालय (AISSE) तथा कक्षा 12 की, अखिल भारतीय सीनियर स्कूल प्रमाण परीक्षा (AISSCE)।

(*ii*) इन परीक्षाओं के लिए बोर्ड पाठ्यक्रम तैयार करता है। इन दोनों परीक्षाओं में प्राप्त अच्छे अंकों द्वारा उच्चशिक्षा में प्रवेश मिलता है। AISSCE परीक्षा के अंक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्वविद्यालय के स्नातक कोर्स में प्रवेश के लिए आवश्यक है। अध्यापन तथा परीक्षा का आयोजन हिन्दी अथा अंग्रेज़ी भाषा में किया जाता है।

(*iii*) यह बोर्ड AIEEE परीक्षा जोकि पूरे भारत में इंजीनियरिंग तथा आर्कीटेक्चर पाठ्यक्रमों के लिए प्रवेश परीक्षा है, का आयोजन करता है। यह मेडिकल कॉलेज की प्रवेश परीक्षा AIPMT का भी आयोजन करता है।

सी.बी.एस.ई. द्वारा ग्रेडिंग प्रणाली का प्रयोग—सी.बी.एस.ई. बोर्ड ने सन् 2009-10 से सभी कक्षाओं के लिए ग्रेडिंग प्रणाली आरंभ की है। यह घोषणा सी.बी.एस.ई. के सचिव द्वारा, भोपाल में आयोजित प्रधानाध्यापकों की राष्ट्रीय सहोदय बैठक में की गई। जो छात्र मार्च 2010 की 10वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में पास हुए उन्हें अंकों के स्थान पर ग्रेड दिए गए। यह प्रणाली कक्षा 7, 8, 9, 11 तथा 12 के लिए भी लागू हो चुकी है।

नोट्स केन्द्रीय विद्यालय संगठन पिछले कुछ वर्षों से प्राथमिक कक्षाओं में अंकों के स्थान पर ग्रेड देता आ रहा है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

(*i*) सी.बी.एस.ई. से सम्बद्ध लगभग .... स्कूल हैं।

(*ii*) 1921 में .... भारत का प्रथम बोर्ड बना।

(*iii*) सी.बी.एस.ई. बोर्ड सम्बद्ध विद्यालयों में .... का पाठ्यक्रम तैयार करता है।

(*iv*) सी.बी.एस.ई. ने आधिकारिक तौर पर शैक्षणिक वर्ष .... में ग्रेडिंग प्रणाली की घोषणा की।

नोट

12.3 राज्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (State Board of Secondary Education)

भारत में शिक्षा के तीन स्तर हैं। स्कूल शिक्षा, महाविद्यालय, तथा उच्च शिक्षा। इन तीनों स्तरों पर सरकार छात्रों की सहायता करने का उत्तरदायित्व संभालती है।

दिल्ली बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन, केन्द्रीय बोर्ड में सम्मिलित कर लिया गया है तथा सभी शिक्षण संस्थान दिल्ली बोर्ड से मान्यता प्राप्त कर केन्द्रीय बोर्ड का एक भाग बन गए। इसी प्रकार केन्द्रशासित प्रदेश (चंडीगढ़, अंडमान निकोबार द्वीपसमूह, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, झारखंड, उत्तराखण्ड तथा छत्तीसगढ़) भी केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड से संबद्ध हैं। सी.बी.एस.ई. बोर्ड में 1962 में जहाँ 309 स्कूल थे वहीं 2012 में 8979 स्कूल हैं जिनमें 21 देशों के 141 स्कूल भी सम्मिलित हैं। 897 केन्द्रीय विद्यालय, 1761 सरकारी विद्यालय, 5827 स्वतंत्र स्कूल तथा 480 जवाहर नवोदय विद्यालय तथा 14 केन्द्रीय तिब्बत स्कूल हैं।

स्कूलिंग तथा स्टेट बोर्ड—भारत में K-12 शिक्षा पद्धति का प्रचलन है। अर्थात् प्रत्येक बच्चे को किण्डरगार्टन से 12वीं कक्षा तक की शिक्षा ग्रहण करके ही वह महाविद्यालय में जा सकता है। स्कूली शिक्षा प्राथमिक उच्चतर तथा उच्चतर माध्यमिक में वर्गीकृत की गई है। I से VII तक प्राथमिक, VIII से X उच्चतर तथा XI to XII उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के नाम से जानी जाती है।

12.4 राज्य बोर्ड के कार्य (Functions of State Board)

- राज्य सरकार को शिक्षा संबंधी नीतियों के विषय में परामर्श देना।
- केन्द्र सरकार द्वारा शिक्षण नीतियों के कार्यान्वयन को देखना।
- सम्पूर्ण राज्य में शिक्षा के स्तर को समान रूप से बढ़ाना।
- पाठ्यक्रम तथा सिलेबस के सिद्धांतों की रूपरेखा राज्य बोर्ड द्वारा ही बनाया जाता है।
- सम्बद्ध विद्यालयों में पाठ्यपुस्तकों के लिए आवश्यक निर्देश देना।
- सफ़ल छात्रों को प्रमाण पत्र प्रदान करना।
- नियमित तथा प्राइवेट छात्रों के लिए प्रवेश से संबंधित शर्तें बनाना।

इसके अतिरिक्त बोर्ड राज्य में पिछड़े व कमज़ोर वर्ग के बच्चों को छात्रवृत्तियाँ, यूनिफॉर्म तथा अन्य सहायता देकर शिक्षा प्राप्त करने में उनका सहयोग करता है।

टास्क सी.बी.एस.ई. की ग्रेडिंग प्रणाली क्या है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. **निम्नलिखित कथनों में 'सही' तथा 'गलत' का चुनाव कीजिए (State whether the following statements are 'True' or 'False')—**

(*i*) भारत में शिक्षा प्राप्ति के दो चरण या स्तर हैं।

(*ii*) K-12 शिक्षा पद्धति का अर्थ किन्डरगार्टन से लेकर कक्षा 12 तक की शिक्षा है।

(*iii*) राज्य शिक्षा बोर्ड का मुख्य कार्य केन्द्र सरकार को शिक्षण नीतियों के सम्बंध में परामर्श देना है।

(*iv*) राज्य बोर्ड कमज़ोर व पिछड़े वर्ग के बच्चों को छात्रवृत्ति आदि प्रदान करता है।

राज्य बोर्ड का संक्षिप्त विवरण—भारत में शिक्षा से संबंधित 30 से अधिक बोर्ड हैं। प्रत्येक राज्य का अपना एक बोर्ड है जो निम्नलिखित हैं–

नोट

1. **आंध्र प्रदेश बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—आंध्र प्रदेश बोर्ड राज्य माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं का आयोजन करता है।
2. **असम बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—असम बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन असम सरकार की एक स्वायत्त संस्था है, जो 1962 में स्थापित की गई। यह असम के छात्रों के लिए हाई स्कूल तथा इन्टरमीडिएट परीक्षाओं का आयोजन करता है।
3. **बिहार विद्यालय शिक्षा बोर्ड**—बिहार विद्यालय परीक्षा बोर्ड साल में दो बार दो प्रकार की परीक्षाएँ आयोजित करता है।

   (*i*) वार्षिक परीक्षा (*ii*) पूरक परीक्षा

   वार्षिक परीक्षा फरवरी/मार्च के महीने में आयोजित की जाती है तथा पूरक परीक्षा जुलाई/अगस्त में आयोजित की जाती है। परीक्षा में छात्रों की दो श्रेणियाँ होती हैं, A तथा C। 'A' का अर्थ है सभी विषयों से संबंधित परीक्षा तथा 'C' का अर्थ है पूरक परीक्षा। जो छात्र नियमित परीक्षा में जिस विषय में अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। वे पूरक परीक्षा में भाग लेकर उस विषय की परीक्षा को उत्तीर्ण करने के लिए परीक्षा में सम्मिलित हो सकते हैं।
4. **छत्तीसगढ़ बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एण्ड हायर सेकेण्डरी एजुकेशन**—छत्तीसगढ़ बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी (10 + 2) एजुकेशन छत्तीसगढ़ सरकार के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया। यह बोर्ड स्ववित्तपोषित संस्था है। यह राज्य में सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी एजुकेशन परीक्षाओं का आयोजन करता है। बोर्ड, सरकार को शिक्षा संबंधी नीतियों में भी परामर्श देता है। इसके प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं—

   (*i*) सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी शिक्षा स्तर को बनाये रखना।

   (*ii*) सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी शिक्षा से सम्बंधित राष्ट्रीय नीतियों तथा राज्य नीतियों के बीच तालमेल बनाये रखना।

   (*iii*) प्राइमरी, सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी तथा विश्वविद्यालय शिक्षा के बीच तालमेल बनाये रखना।
5. **गुजरात सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी बोर्ड**—प्रतिवर्ष मुख्य तथा पूरक परीक्षा में कक्षा 10 तथा कक्षा 12 की परीक्षाओं का आयोजन करता है। यह परीक्षा प्रतिवर्ष मार्च तथा अक्टूबर में होती है।

   गुजरात में प्रतिवर्ष 7 लाख छात्र, 350 केन्द्रों में परीक्षा देते हैं। परीक्षा गुजराती, हिन्दी, अंग्रेज़ी, मराठी, सिन्धी तथा तमिल आदि 6 भाषाओं में आयोजित की जाती है।
6. **हरियाणा बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन**—हरियाणा बोर्ड सितंबर 1969 में चंडीगढ़ में स्थापित हुआ। यह प्रतिवर्ष दो बार मैट्रिक तथा सीनियर सेकेण्डरी स्कूल स्तर की परीक्षाओं का आयोजन करता है। इसका मुख्यालय अब भिवानी में हैं।
7. **हिमाचल प्रदेश बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन**—हिमाचल प्रदेश बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन आठवीं, दसवीं, ग्यारहवीं तथा बारहवीं परीक्षाओं का आयोजन करता है। विभागीय परीक्षाएँ जैसे जे.बी.टी., टी.टी.ई., तथा पी.वी.टी.ई. बोर्ड द्वारा आयोजित की जाती हैं।

   यह बोर्ड 1969 में अस्तित्व में आया। यह बोर्ड परीक्षाओं के आयोजन के अतिरिक्त पाठ्यक्रम बनाना, पाठ्यपुस्तकों तथा निर्देश पुस्तिकाओं का भी निर्माण करता है।

   1982 तक बोर्ड का मुख्यालय शिमला में था जो अब 1983 से काँगड़ा ज़िले के धर्मशाला में स्थापित हो चुका है।
8. **जम्मू तथा कश्मीर बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन**—जम्मू तथा कश्मीर राज्य सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी परीक्षाओं का आयोजन करता है।

   बोर्ड द्वारा संचालित परीक्षाएँ निम्न हैं—

   (*i*) हायर सेकेण्डरी - (पार्ट II) द्विवर्षीय (प्रा.)

   (*ii*) मैट्रिक द्विवर्षीय - श्रीनगर

नोट

(*iii*) जम्मू - एक वर्षीय प्राइवेट (कक्षा)
(*iv*) हायर सेकेण्डरी (पार्ट टू) - जम्मू
(*v*) जम्मू - एकवर्षीय नियमित कक्षा-X
(*vi*) हायर सेकेण्डरी पार्ट टू (वार्षिक) - जम्मू
(*vii*) श्रीनगर - वार्षिक प्राइवेट कक्षा-X

9. **उत्तर प्रदेश बोर्ड ऑफ़ हाईस्कूल तथा इण्टरमीडिएट एजुकेशन**—उत्तर प्रदेश हाई स्कूल तथा इण्टरमीडिएट शिक्षा बोर्ड विश्व का सबसे बड़ा परीक्षा आयोजक है। यह 1992 में स्थापित किया गया। उत्तर प्रदेश में कुछ सेकेण्डरी स्कूल आई.सी.एस.ई. बोर्ड तथा सी.बी.एस.ई. बोर्ड से सम्बद्ध हैं, किन्तु अधिकतर विद्यालय यू.पी. बोर्ड से ही संबद्ध हैं। यू.पी. बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी एजुकेशन से इस समय 9121 सेकेण्डरी विद्यालय सम्बद्ध हैं। यह हाई स्कूल (X) तथा इण्टरमीडिएट (XII) परीक्षाओं का आयोजन करता है तथा हाई स्कूल व इण्टरमीडिएट की पाठ्य पुस्तकों का निर्माण भी करता है।

10. **महाराष्ट्र राज्य बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी एजुकेशन**—महाराष्ट्र स्टेट बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन राज्य में सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी बोर्ड प्रतिवर्ष मार्च तथा अक्टूबर में कक्षा X तथा कक्षा XII की परीक्षा आयोजित करता है।

    यह बोर्ड मराठी, हिन्दी तथा अंग्रेज़ी के अतिरिक्त 27 भाषाओं में परीक्षाओं का आयोजन करता है। छात्र अपनी क्षेत्रीय भाषा या विदेशी भाषा में भी परीक्षा दे सकते हैं।

11. **मध्य प्रदेश बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—मध्य प्रदेश बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन मध्य प्रदेश सरकार का एक स्वायत्त अंग है जो 1959 से कार्य कर रहा है। यह हायर सेकेण्डरी तथा हायर सीनियर सेकेण्डरी परीक्षाओं का आयोजन करता है।

12. **मणिपुर बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—मणिपुर बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन मणिपुर सरकार का एक स्वायत्त अंग है, तथा 1972 से कक्षा X तथा कक्षा XII की परीक्षाओं का आयोजन करता है।

13. **मेघालय बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन**—मेघालय बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन 1973 में स्थापित किया गया एक स्वायत्त अंग है। यह कक्षा X तथा XII की कक्षाओं का आयोजन करता है।

14. **मिज़ोरम बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन**—मिज़ोरम बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन एक स्वायत्त अंग है जो 1975 में स्थापित किया गया। यह मिज़ोरम में हायर तथा हायर सेकेण्डरी परीक्षाओं का नियमित रूप से आयोजन करता है तथा स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता पर नियंत्रण रखता है।

15. **नागालैंड बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन**—नागालैंड बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन 1974 में आरंभ हुआ तथा यह राज्य में सेकेण्डरी स्कूल लीविंग सर्टिफ़िकेट परीक्षा (SSLC-X) तथा हायर सेकेण्डरी स्कूल लीविंग सर्टिफ़िकेट (SSLC-XII) परीक्षाओं का आयोजन करता है।

16. **पंजाब स्कूल एजुकेशन बोर्ड**—पंजाब स्कूल एजुकेशन बोर्ड 1969 एक्ट 1987, 2000 तथा 2005 के संशोधनों के फलस्वरूप अस्तित्व में आया।

    - यह कक्षा X तथा कक्षा XII की बोर्ड परीक्षा का आयोजन करता है। यह परीक्षाफल प्रकाशित करता है तथा बोर्ड सर्टिफिकेट, प्रमाण पत्र, अंक पत्र आदि का वितरण भी करता है।

17. **राजस्थान बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—राजस्थान बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन राज्य में कक्षा X तथा कक्षा XII की परीक्षाओं का आयोजन करता है, इसमें 32 विद्यालयों के 6000 स्कूलों के 8.5 लाख छात्र भाग लेते हैं।

18. **पश्चिमी बंगाल बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन**—पश्चिमी बंगाल सरकार का स्वायत्त अंग है जो राज्य में कक्षा 10 तथा कक्षा 12 की परीक्षाओं का आयोजन करता है। 7,50,000 परीक्षार्थी प्रतिवर्ष इन परीक्षाओं में बैठते हैं।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

3. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)–

(*i*) भारत में .... से भी अधिक शिक्षा बोर्ड हैं।

(*a*) 30 (*b*) 40 (*c*) 50 (*d*) 60

(*ii*) हरियाणा बोर्ड ऑफ़ स्कूल एजुकेशन .... में स्थापित किया गया।

(*a*) सितम्बर 1950 (*b*) सितम्बर 1969 (*c*) सितम्बर 1975 (*d*) सितम्बर 1980

(*iii*) .... विश्व का सबसे बड़ा परीक्षा आयोजक बोर्ड है।

(*a*) पश्चिमी बंगाल (*b*) छत्तीसगढ़ (*c*) उत्तर प्रदेश (*d*) तमिलनाडु

(*iv*) महाराष्ट्र स्टेट बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी एजुकेशन .... भाषाओं में परीक्षा आयोजित करता है।

(*a*) 10 (*b*) 20 (*c*) 25 (*d*) 27

12.5 सारांश (Summary)

- सी.बी.एस.ई. बोर्ड भारतीय शिक्षा प्रणाली के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि यह विभिन्न संस्कृतियों तथा धरोहरों की शिक्षा उपलब्ध कराता है। यह बोर्ड शिक्षा की दुनिया के नये तौर तरीकों तथा आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता सदैव उच्च तथा प्रतिस्पर्धक रही है।
- उत्तर प्रदेश बोर्ड उच्चतर तथा माध्यमिक शिक्षा भारत का पहला बोर्ड था, जो 1921 में, राजपूताना, केन्द्रीय भारत और ग्वालियर के अन्तर्गत आता था। बाद में भारत सरकार ने 1929 में एक संयुक्त बोर्ड के गठन का सुझाव दिया, जिसका नाम बोर्ड ऑफ हाईस्कूल तथा इण्टरमीडिएट शिक्षा, राजपूताना रखा गया। इसमें अजमेर, मेवाड़, केन्द्रीय भारत तथा ग्वालियर सम्मिलित थे। इसके गठन से लेकर अब तक इसमें बहुत से विकासोन्मुखी परिवर्तन हो चुके हैं।
- सी.बी.एस.ई. बोर्ड का प्रमुख उद्देश्य शिक्षण संस्थाओं को बेहतर ढंग से संचालित करना है तथा केन्द्रीय प्रशासन में कार्यान्वित लोगों के बच्चों की शिक्षा की आवश्यकताओं को बेहतर व प्रभावी ढंग से पूरा करना है।
- सी.बी.एस.ई. बोर्ड मान्यता प्राप्त विद्यालयों की कक्षा 9 से 12 का पाठ्यक्रम तैयार करता है तथा प्रतिवर्ष दो बड़ी परीक्षाओं का आयोजन करता है एक कक्षा 10 की अखिल भारतीय परीक्षा माध्यमिक विद्यालय (AISSE) तथा कक्षा 12 की, अखिल भारतीय सीनियर स्कूल प्रमाण परीक्षा (AISSCE)।
- इन परीक्षाओं के लिए बोर्ड पाठ्यक्रम तैयार करता है। इन दोनों परीक्षाओं में प्राप्त अच्छे अंकों द्वारा उच्चशिक्षा में प्रवेश मिलता है। AISSCE परीक्षा के अंक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्वविद्यालय के स्नातक कोर्स में प्रवेश के लिए आवश्यक है। अध्यापन तथा परीक्षा का आयोजन हिन्दी अथा अंग्रेज़ी भाषा में किया जाता है।
- यह बोर्ड AIEEE परीक्षा जोकि पूरे भारत में इंजीनियरिंग तथा आर्किटेक्चर पाठ्यक्रमों के लिए प्रवेश परीक्षा है, का आयोजन करता है। यह मेडिकल कॉलेज की प्रवेश परीक्षा AIPMT का भी आयोजन करता है।
- सी.बी.एस.ई. बोर्ड ने सन् 2009-10 से सभी कक्षाओं के लिए ग्रेडिंग प्रणाली आरंभ की है। यह घोषणा सी.बी.एस.ई. के सचिव द्वारा, भोपाल में आयोजित प्रधानाध्यापकों की राष्ट्रीय सहोदय बैठक में की गई। जो छात्र मार्च 2010 की 10वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में पास हुए उन्हें अंकों के स्थान पर ग्रेड दिए गए। यह प्रणाली कक्षा 7, 8, 9, 11 तथा 12 के लिए भी लागू हो चुकी है।

भारत में शिक्षा के तीन स्तर हैं। स्कूल शिक्षा, महाविद्यालय, तथा उच्च शिक्षा। इन तीनों स्तरों पर सरकार छात्रों की सहायता करने का उत्तरदायित्व संभालती है।

नोट

दिल्ली बोर्ड ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन, केन्द्रीय बोर्ड में सम्मिलित कर लिया गया है तथा सभी शिक्षण संस्थान दिल्ली बोर्ड से मान्यता प्राप्त कर केन्द्रीय बोर्ड का एक भाग बन गए। इसी प्रकार केन्द्रशासित प्रदेश (चंडीगढ़, अंडमान निकोबार द्वीपसमूह, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, झारखंड, उत्तराखण्ड तथा छत्तीसगढ़) भी केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड से संबद्ध हैं। सी.बी.एस.ई. बोर्ड में 1962 में जहाँ 309 स्कूल थे वहीं 2012 में 8979 स्कूल हैं जिनमें 21 देशों के 141 स्कूल भी सम्मिलित हैं। 897 केन्द्रीय विद्यालय, 1761 सरकारी विद्यालय, 5827 स्वतंत्र स्कूल तथा 480 जवाहर नवोदय विद्यालय तथा 14 केन्द्रीय तिब्बत स्कूल हैं।

भारत में शिक्षा से संबंधित 30 से अधिक बोर्ड हैं। प्रत्येक राज्य का अपना एक बोर्ड है। उनका विवरण निम्नलिखित है–

उत्तर प्रदेश हाई स्कूल तथा इण्टरमीडिएट शिक्षा बोर्ड विश्व का सबसे बड़ा परीक्षा आयोजक है। उत्तर प्रदेश में कुछ सेकेण्डरी स्कूल आई.सी.एस.ई. बोर्ड तथा सी.बी.एस.ई. बोर्ड से सम्बद्ध है, किन्तु अधिकतर विद्यालय यू.पी. बोर्ड से ही सम्बद्ध हैं। यू.पी. बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी तथा हायर सेकेण्डरी एजुकेशन से इस समय 9121 सेकेण्डरी विद्यालय सम्बद्ध हैं। यह हाई स्कूल (X) तथा इण्टरमीडिएट (XII) परीक्षाओं का आयोजन करता है तथा हाई स्कूल व इण्टरमीडिएट की पाठ्यपुस्तकों का निर्माण भी करता है।

12.6 शब्दकोश (Keywords)

- **छात्रवृत्ति**–शिक्षा बोर्ड अथवा सरकार द्वारा छात्र को दी जाने वाली वित्तीय सहायता।
- **प्रतिस्पर्धक**–प्रतियोगी।

12.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सी.बी.एस.ई. के कार्यों का उल्लेख कीजिए।
2. सी.बी.एस.ई. बोर्ड के प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?
3. सी.बी.एस.ई. बोर्ड की ग्रेडिंग प्रणाली के विषय में समझाइये।
4. राज्य बोर्ड के कार्य क्या हैं?
5. किन्हीं पाँच राज्य बोर्ड पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (*i*) 9000 (*ii*) उत्तर प्रदेश बोर्ड ऑफ़ हाई स्कूल और इण्टरमीडिएट एजुकेशन
(*iii*) 9 से 12 (*iv*) 2008

2. (*i*) असत्य (*ii*) सत्य (*iii*) असत्य (*iv*) सत्य

3. (*i*) (*a*) (*ii*) (*b*) (*iii*) (*c*) (*iv*) (*d*)

12.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।

नोट

इकाई—13 : यू.जी.सी., एन.ए.ए.सी. तथा एन.सी.टी.ई. के कार्य (FUNCTIONS OF UGC, NAAC AND NCTE)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

13.1 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (University Grants Commission)

13.2 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के कार्य (Functions of University Grants Commission)

13.3 राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (National Assessment and Accredition Committee (NAAC))

13.4 एन.ए.ए.सी. के कार्य (Functions of NAAC)

13.5 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (National Teacher Education Council)

13.6 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के कार्य (Functions of National Teacher Education Council)

13.7 सारांश (Summary)

13.8 शब्दकोश (Keywords)

13.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

13.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे-

- यू.जी.सी, एन.ए.ए.सी तथा एन.सी.टी.ई के कार्यों की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पार्लियामेन्ट एक्ट के तहत बनने वाली एक स्वायत्त संस्था है जो विश्वविद्यालयी शिक्षा के स्तर को बनाये रखने का कार्य करती है। राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) 1944 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित की गई स्वायत संस्था है जो उच्च शिक्षण संस्थानों में उच्च शिक्षा का मूल्यांकन करती है। मई 1973 में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् का गठन किया गया। यह अध्यापक शिक्षा संबंधी सभी पक्षों को परामर्श देती है। इस इकाई में हम उपरोक्त समितियों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

13.1 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC)

प्राचीन काल से भारत शिक्षा तथा शिक्षण का केन्द्र रहा है। नालन्दा, तक्षशिला तथा विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों में न सिर्फ भारत के विभिन्न क्षेत्रों से बल्कि पूरे विश्व से छात्र शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे। भारत में उच्च शिक्षा के विकास के लिए प्रथम प्रयास 1944 में आरंभ किया गया। केन्द्रीय परामर्श बोर्ड ऑफ एजुकेशन ने 1944

नोट

में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के गठन के लिए सुझाव दिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग 1945 में स्थापित हुआ तथा सबसे पहले बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, दिल्ली तथा अलीगढ़ विश्वविद्यालय का उत्तरदायित्व संभाला, तथा 1947 तक आते-आते देश के सभी विश्वविद्यालयों का कार्यभार संभाला।

नोट्स विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत सरकार का एक स्वायत्त अंग है, जो कि भारत में उच्च शिक्षा के उचित विकास की देखरेख करता है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, 1952 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग यूनाइटेड किंगडम के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के तर्ज पर बनाया जाये जिसमें एक चेयरमैन तथा कमीशन के अन्य सदस्य हों जो कि वरिष्ठ शिक्षाविदों में से चुने जाएँ।

आयोग ने निर्णय लिया कि विश्वविद्यालयों से संबंधित तथा उच्च शिक्षण संस्थानों के फंड्स तथा सभी मामलों की देख-रेख विश्वविद्यालय अनुदान आयोग करेगा और इसके द्वारा लिया गया निर्णय अंतिम होगा। 28 दिसम्बर 1953 में उस समय के शिक्षा मंत्री, मौलाना अबुल कलाम आजाद ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का पुनरुद्धार किया।

यू.जी.सी. नवंबर 1956 में संसद के एक्ट द्वारा भारत सरकार का एक स्वायत्त अंग बन गया। आयोग को भारत में विश्वविद्यालय तथा शिक्षा के स्तर को बनाये रखने का उत्तरदायित्व सौंपा। आयोग को प्रभावी ढ़ंग से काम करने के लिए इसके कार्य को छः क्षेत्रीय केन्द्रों में बाँटा गया है जो कि पुणे, हैदराबाद, कोलकाता, भोपाल, गुवहाटी तथा बैंगलुरू में हैं। यू.जी.सी. का कार्यालय बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली में स्थापित है।

यू.जी.सी. द्वारा उठाये गए कदमः

यू.जी.सी. के क्षेत्रीय कार्यालय हैदराबाद, पुणे, भोपाल, कोलकाता तथा बैंगलुरू में हैं। इसका उत्तरी क्षेत्र का कार्यालय जो कि पहले गाजियाबाद में था, अब वह उत्तरी क्षेत्र महाविद्यालय ब्यूरो (NRCB) के रूप में UGC मुख्यालय से ही संचालित किया जा रहा है। यू.जी.सी. द्वारा चलाये गये नए कार्यक्रम निम्नलिखित हैं।

(*i*) विदेशों में भारतीय उच्च शिक्षा की प्रोन्नति
(*ii*) बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार की सुरक्षा
(*iii*) शिक्षण प्रशासकों को प्रशिक्षण तथा विकास
(*iv*) कम्प्यूटरीकृत शैक्षिक कार्यक्रम

13.2 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के कार्य (Functions of UGC)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं-

(*i*) यह विभिन्न उच्च शैक्षिक संस्थानों को वित्तीय सहायता प्रदान करता है।
(*ii*) यह उच्च शिक्षण संस्थानों में सामंजस्य तथा शिक्षा के स्तर को बनाये रखने का कार्य करता है।
(*iii*) यह विश्वविद्यालयी शिक्षा को प्रोन्नत तथा कार्यान्वित करता है।
(*iv*) यह विश्वविद्यालयों में, शिक्षण, परीक्षा तथा अनुसंधान के स्तर को बनाये रखने का कार्य करता है।
(*v*) यह केन्द्र, राज्य सरकारों तथा उच्च शिक्षण संस्थानों के बीच की कड़ी का काम करता है।
(*vi*) यह विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए आवश्यक मानकों को लागू करने के लिए राज्य तथा केन्द्र सरकार को परामर्श देता है।

नोट

13.3 राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC)

राष्ट्रीय असेसमेन्ट तथा एक्रीडिशन समिति एक स्वचालित स्वायत्त संस्था है जो कि नेशनल शिक्षा की राष्ट्रीय नीति 1986 तथा POA 1992 की सिफारिशों के आधार पर 1994 में यू.जी.सी. द्वारा गठित की गई। इसका प्रमुख कार्य उच्च शिक्षा संस्थानों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों तथा उनकी इकाईयों (स्कूल, संस्थान, कार्यक्रम आदि) का मूल्यांकन तथा मापन करना है। राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) अपनी जनरल समिति और कार्यकारी समिति के द्वारा कार्यों को संचालित करती है।

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) के नई विधि के अनुसार 1 अप्रैल, 2007 से उच्च शिक्षण संस्थानों को द्विचरल विधि द्वारा मूल्यांकित तथा एक्रीडिट किया जा रहा है। पहले चरण में संस्थानों को इन्स्टीट्यूशनल एलिजिबिलिटी फॉर क्वालिटी एश्योरेन्स (IEQA) द्वारा मूल्यांकित किया जाएगा तथा दूसरे चरण में इन्हें A, B, C ग्रेडों के द्वारा मूल्यांकित किया जाएगा। जिन्हें एक्रेडिट नहीं किया गया है, उन्हें 'D' ग्रेड दिया जाएगा।

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) ने सात मापक माने हैं–

(*i*) पाठ्यक्रम आस्पेक्ट
(*ii*) शिक्षण-अधिगम तथा मूल्यांकन
(*iii*) अनुसंधान, कन्सल्टेन्सी तथा विस्तार
(*iv*) इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा अधिगम स्त्रोत
(*v*) छात्र सहयोग तथा प्रगति
(*vi*) गवर्नेन्स तथा लीडरशिप
(*vii*) मूल्यांकन के तरीकों के लिए इन्नोवेटिव कार्य

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) की संरचना तथा कार्य प्रणाली

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) अपने समस्त कार्य अपनी जनरल समिति (GC) तथा कार्यकारी समिति के द्वारा करती है। GC तथा EC दोनों में शैक्षिक प्रशासक, नीति निर्माता तथा वरिष्ठ शिक्षाविद् होते हैं। GC का अध्यक्ष UGC का चेयर पर्सन होता है तथा EC का चेयर-पर्सन एक प्रख्यात शिक्षाविद् होता है।

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) का निदेशक इसका शैक्षिक तथा प्रशासनिक प्रमुख होता है तथा यह GC और EC दोनों का सदस्य सचिव होता है। समिति में बहुत सी परामर्शदात्री तथा कन्सल्टेटिव समितियाँ होती हैं जो इसके कार्यों के देखरेख का कार्य करती हैं। राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) का एक मुख्य स्टाफ तथा कन्सल्टेंट्स होता है जो कि इसकी गतिविधियों में सहायता करता है।

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) के उद्देश्य

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(*i*) स्व तथा बाहरी गुणवत्ता मूल्यांकन द्वारा भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को एक प्रमुख तत्व बनाना।

(*ii*) उच्च शिक्षण संस्थानों के लिए आवर्ती मूल्यांकन की व्याख्या करना।

(*iii*) विशेष शैक्षिक कार्यक्रम तथा प्रोजेक्ट बनाना।

- शिक्षण अधिगम तथा अनुसंधान की प्रोन्नति के लिए उच्च शिक्षण संस्थानों में शैक्षिक वातावरण तैयार करना।
- स्वमूल्यांकन, अकाउंटेबिलिटी, स्वचालन को उच्च शिक्षा में प्रोत्साहित करना।
- गुणवत्ता से संबंधित अनुसंधान का विकास करना।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।

नोट

योग्यता

जो संस्थान राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) द्वारा मूल्यांकित होना चाहते हैं उन्हे पहले अपने संस्थान के विषय में सूचना राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) को देनी होती है। जब राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) संस्थान की ओर से लेटर ऑफ इन्टेनशन प्राप्त करता है तो यह संस्थान की योग्यता तथा पात्रता की जाँच करती है। इसकी पात्रता निम्नलिखित है–

- संस्थान स्नातक स्तर या इससे अधिक स्तर का होना चाहिए।
- भारतीय विधि के अनुसार संस्थान किसी विश्वविद्यालय से अनुग्रहीक तथा मान्यता प्राप्त होना चाहिए।

विधि प्रणाली

किसी संस्थान के मूल्यांकन का तरीका तीन चरणों में होता है। ये चरण निम्नलिखित हैं–

- मूल्यांकन इकाई द्वारा एक स्वअध्ययन रिपोर्ट तैयार करके राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) कार्यालय में जमा करनी होती है।
- राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) की ओर से एक विशेष टीम संस्थान द्वारा जमा की गई रिपोर्ट की सत्यता जाँचने के लिए संस्थान आती है तथा मूल्यांकन करती है।
- इस मूल्यांकन के बाद राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति (NAAC) संस्थान के विषय में अपना निर्णय देती है।

> *क्या आप जानते हैं* राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा प्रत्यायन समिति अपने कार्यों को जनरल समिति और कार्यकारी समिति द्वारा सम्पन्न करती है।

13.4 एन.ए.ए.सी. के कार्य (Functions of NAAC)

राष्ट्रीय मूल्यांकन तथा एक्रीडिशन समिति के कार्य निम्नलिखित हैं–

- उच्च शिक्षा के संस्थानों में आवृर्ति मूल्यांकन का आयोजन करता है।
- उच्च शिक्षण संस्थानों की गुणवत्ता जाँचने का कार्य करता है।
- स्व तथा बाहरी गुणवत्ता मूल्यांकन द्वारा भारत में उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को एक प्रमुख तत्व बनाना।
- उच्च शिक्षण संस्थानों के लिए पीरियोडिक मूल्यांकन की व्याख्या करना।
- विशेष शैक्षिक कार्यक्रम तथा प्रोजेक्ट बनाना।
- शिक्षण अधिगम तथा अनुसंधान की प्रोन्नति के लिए उच्च शिक्षण संस्थानों में शैक्षिक वातावरण तैयार करना।
- स्वमूल्यांकन, एकाउंटेबिलिटी, स्वचालन को उच्च शिक्षा में प्रोत्साहित करना।
- गुणवत्ता से संबंधित अनुसंधान का विकास करना।
- प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।
- स्कूल प्रोफाइल प्राप्त करता है।
- प्रशासनिक प्रोफाइल प्राप्त करता है।
- लेटर ऑफ इन्टेन्शन जमा होता है।

13.5 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (National Teacher Education Council)

मई 1973 ई. में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय अध्यापक-शिक्षा परिषद् (NCTE) की स्थापना की गई। यह अध्यापक-शिक्षा सम्बन्धी सभी पक्षों पर परामर्श देती है। मार्च 1976 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा इस परिषद् की बैठक हुई। इस प्रकार एक बैठक मई 1976 को शिमला में और दूसरी नवम्बर 1976 में मद्रास में हुई। बाद में राष्ट्रीय सम्मेलन में विशेषज्ञों की एक समिति गठित की गई जिन्होंने मिलकर अध्यापक-शिक्षा के विकास एवं सुधार हेतु एक योजना प्रपत्र (An Approach Paper) तैयार किया। इस प्रपत्र को अध्यापक-शिक्षा संस्थाओं में प्रवक्ताओं तथा विशेषज्ञों की राय के लिये भेजा गया था। इसके बाद फरवरी सन् 1977 में नई दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ जिसमें समिति को 'योजना प्रपत्र' प्रारूप तैयार करने का अधिकार दे दिया गया। इस प्रपत्र में समुदाय के अनुरूप कार्य प्रणाली (Working with Community) का विवेचन किया गया। अध्यापक-शिक्षा के लिये समितियों की बैठक में निम्नलिखित सुझाव दिये गये-

(1) विशिष्ट संस्तुतियाँ (Salient Recommendations),
(2) अध्यापक-शिक्षा के सामान्य उद्देश्य,
(3) स्तरों के अनुसार उद्देश्य एवं पाठ्यक्रम का प्रारूप,
(4) अध्यापक-शिक्षा हेतु शिक्षण विधियाँ,
(5) मूल्यांकन प्रक्रिया,
(6) अध्यापकों तथा प्रवक्ताओं हेतु सतत् शिक्षा,
(7) अनौपचारिक शिक्षा हेतु अभिविन्यास प्रशिक्षण,
(8) प्रशासन का स्वरूप।

पाठ्यक्रम की सार्थकता

(*i*) समाज में परिवर्तन के लिये एक महत्वपूर्ण यन्त्र के रूप में शिक्षा का प्रारूप ऐसा होना चाहिए जो छात्रों, विद्यालयों, समाज तथा व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। अध्यापक-शिक्षा पाठ्यक्रम को इसी दृष्टि से विकसित करना चाहिए ताकि वह जनतान्त्रिक मूल्यों, राष्ट्रीय एकता तथा धर्मनिरपेक्ष समाज के निर्माण में सहायक हो सके। समाज की समस्याओं और राष्ट्र के आदर्शों को दृष्टि में रखकर पाठ्यक्रम का प्रारूप तैयार किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम की शिक्षण विधियाँ भारतीय परिस्थिति के अनुरूप होनी चाहिये। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत सामाजिक वातावरण के साथ पर्यावरण, कार्य-अनुभव, शारीरिक तथा मनोरंजन की पाठ्यवस्तु को सम्मिलित किया जाना चाहिये। व्यावसायिक शिक्षा के लिए स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए।

(*ii*) राष्ट्रीय मूल्य तथा लक्ष्य बदलने के साथ-साथ पाठ्यक्रम का प्रारूप भी बदलता रहना चाहिए जिससे नए राष्ट्रीय मूल्यों तथा लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके।

(*iii*) दस वर्ष के बाद प्रत्येक अध्यापक-शिक्षा के पाठ्यक्रम का प्रारूप बदलना चाहिए क्योंकि आज दस वर्ष में मानवीय ज्ञान लगभग दोगुना हो जाता है।

(*iv*) सेवारत अध्यापकों को नवीन पाठ्यवस्तु तथा शिक्षण-विधियों से अवगत कराया जाना चाहिए। इसके लिये ऐसे कार्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिये जिनसे सेवारत अध्यापक नवीन परिवर्तनों से अवगत हो सकें। इसके लिए सतत् शिक्षा के कार्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिए। शिक्षा के विभिन्न स्तरों को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम के प्रारूप में लचीलेपन की आवश्यकता है।

(*v*) उच्च स्तर पर अन्य विषय के प्रवक्ताओं तथा विशेषज्ञों की भी सहायता लेनी चाहिए। उदाहरण के लिये मनोविज्ञान, दर्शन, सांख्यिकी आदि विषयों की शिक्षा हेतु इन सभी विषयों के प्रवक्ताओं की सहायता लेनी चाहिए। शिक्षा के शोध कार्य अन्त:अनुशासनीय विधि से किये जाने चाहिये।

नोट

(*vi*) अध्यापक-प्रशिक्षण की प्रक्रिया होने के साथ-साथ शिक्षा एक अध्ययन का क्षेत्र भी है। इसके विकास का क्षेत्र वृहद् है। कोठारी आयोग ने इसे एक विषय के रूप में विकसित करने का सुझाव दिया है। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के नये पाठ्यक्रमों को विकसित किया जाना चाहिए। इसमें मात्र शिक्षण-विधियों तथा शिक्षण-कला के प्रशिक्षण को ही महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए बल्कि अनुशासन की दृष्टि से शिक्षण-सिद्धान्तों का विशेष महत्त्व है।

(*vii*) शिक्षण-अभ्यास अथवा छात्र-शिक्षण के लिए इन्टर्नशिप (Internship) की व्यवस्था की जानी चाहिए। विद्यालय में रहकर छात्र-अध्यापक को सभी प्रकार के कार्यों में भाग लेना चाहिए। उन्हें कक्षा-अध्यापक का पूरा उत्तरादायित्व दिया जाना चाहिए।

(*viii*) अध्यापक-शिक्षा की व्यवस्था हेतु सम-प्रणाली प्रयोग करना अधिक प्रभावशाली हो सकता है। इससे कार्यभार दो सत्रों में बँट जाता है जिससे छात्र-अध्यापक प्रकरणों एवं क्रियाओं को सरलता से समझ सकते हैं।

(*ix*) वर्ष में केवल एक बार की जाने वाली मूल्यांकन परीक्षा प्रणाली है प्रशिक्षण की दृष्टि से दोषपूर्ण है और इसमें सुधार की आवश्यकता है। सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक शिक्षण के लिए परीक्षा प्रणाली वैध तथा विश्वसनीय होनी चाहिए। इसके द्वारा ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों के मूल्यांकन के साथ भावात्मक गुणों का भी मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इसमें आन्तरिक तथा बाह्य मूल्यांकन की व्यवस्था की जानी चाहिए साथ ही परीक्षण उद्देश्य-केन्द्रित होना चाहिए। इसमें विभिन्न प्रकार की प्रविधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(*x*) वर्तमान शिक्षा में सबसे बड़ा दोष यह है कि जो शोधकार्य किये जाते हैं उनका शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अनुदेशन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता इसलिए उनकी कोई उपयोगिता नहीं होती। अस्तु, शोध समस्याओं को आवश्यकतानुसार प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पूर्व-प्राथमिक विद्यालय के अध्यापकों के प्रशिक्षण के प्रारूप को विकसित किया जाना चाहिये। राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय आवश्यकताओं एवं समस्याओं के समाधान हेतु शोध कार्यों की व्याख्या की जानी चाहिए।

13.6 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् के कार्य (Functions of National Teacher Education Council)

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के निम्नलिखित कार्य हैं–

(1) गाँधी जी के मूल्यों एवं सिद्धांतों–अहिंसा, सत्य, स्व-अनुशासन, आत्म-विश्वास तथा कार्य के प्रति सम्मान का शिक्षा द्वारा विकास करना।

(2) सामाजिक परिवर्तन की भूमिका का प्रत्यक्षीकरण करना।

(3) छात्रों के लिए एक निर्देशक तथा नेता की भूमिका का निर्वाह करना।

(4) विद्यालय एवं समाज में समन्वय स्थापित करना।

(5) ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक श्रोतों का संचय करना तथा बालकों के विकास हेतु प्रयोग करना।

(6) छात्रों की सामाजिक, शैक्षिक तथा कौशल सम्बन्धी समस्याओं के प्रति सही दृष्टिकोण रखना और समुचित निर्देशन और परामर्श देना।

(7) भारतीय परिप्रेक्ष में विद्यालयी शिक्षा के उद्देश्यों को समझना और अपनी भूमिका-निर्वाह के प्रति जागरूक रहना।

(8) बालकों के अभिरुचि, अभिवृत्ति तथा कौशल को समझना और उसके सम्पूर्ण विकास का प्रयास करना।

(9) शिक्षण तथा अधिगम सिद्धान्तों को स्वीकार करते हुए शिक्षण-प्रवणता का विकास करना।

(10) छात्रों के अधिगम को कक्षा-शिक्षण में प्रभावी बनाने के लिये अध्यापकों में सम्प्रेषण की क्षमता का विकास करना।

(11) अध्यापकों को विषय-वस्तु सम्बन्धी और शिक्षण की विधियों, प्रविधियों की आधुनिकतम जानकारी देना।

(12) कक्षा-शिक्षण तथा विद्यालयी समस्याओं के समाधान हेतु क्रियात्मक प्रविधि का प्रयोग करना।

3. स्तर के अनुसार अध्यापक-शिक्षा के उद्देश्य तथा पाठ्यक्रमों का प्रारूप

शिक्षा के माध्यम से बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना अध्यापकों का लक्ष्य होता है जिससे वह राष्ट्र और समाज के विकास में सहयोग दे सके। अतः अध्यापक-शिक्षा के विभिन्न स्तरों के उद्देश्य तथा पाठ्यक्रम पृथक् होने के बावजूद उनमें एकीकरण होना आवश्यक है। इस प्रकार अध्यापक-शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों को तीन सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक क्षेत्रों में बाँट सकते हैं- (*i*) शिक्षण कला सिद्धान्त, (*ii*) समाज के साथ कार्य प्रणाली तथा (*iii*) पाठ्यवस्तु तथा शिक्षण-विधियाँ सम्बन्धी पाठ्यक्रमों का आधार।

(1) शिक्षण-कला-सिद्धान्त- विभिन्न स्तरों के लिये अलग-अलग मूल तथा विशिष्ट पाठ्यक्रम विकसित किये जाने चाहिये। ग्रामीण, शहरी तथा स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर छात्रों को जानकारी मुहैया करनी चाहिए। इसमें राष्ट्रीय लक्ष्य, सामाजिक स्वरूप, मानसिक स्तर तथा सामाजिक विकास को भी महत्त्व दिया जाना चाहिए। मूल पाठ्यवस्तु में ''अध्यापक-शिक्षा में भारतीय समाज की नवीन प्रवृत्तियाँ'' सम्मिलित होनी चाहियें। इसके अलावा ''मूल प्रशिक्षण पैकेज कार्यक्रम'' का भी बहुत महत्त्व है।

(2) समाज के साथ कार्य प्रणाली-सैद्धान्तिक पाठ्यक्रमों का प्रारूप इस प्रकार का हो जिससे अध्यापक-शिक्षा का कार्यक्रम समाज के अनुरूप बन सके। इससे अध्यापक-शिक्षा से समाज का अलगाव न रहेगा तथा छात्रों में सही दृष्टिकोण तथा अभिवृत्तियों का विकास होगा। ऐसी सम्प्रेषण प्रणाली का विकास किया जाए जिसका सभी व्यक्तियों के विकास में उपयोग किया जा सके।

अध्यापक-शिक्षा के कार्यक्रम की योजना इस प्रकार तैयार करनी चाहिए जिससे उद्देश्यों का विशिष्टीकरण किया जा सकें तथा स्तर के अनुसार कार्यों का विभाजन किया जा सके। सूक्ष्म-शिक्षण तथा अनुकरणीय प्रशिक्षण द्वारा शिक्षण का गहन अभ्यास किया जाना चाहिए। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम लचीला, सार्थक तथा समन्वित होना चाहिए। कार्य अनुभवों, नैतिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा हेतु समुचित वातावरण बनाने की आवश्यकता है।

(3) पाठ्यवस्तु एवं शिक्षण-विधियों सम्बन्धी पाठ्यक्रमों का आधार- अध्यापक-शिक्षा के अन्तर्गत अनेक शिक्षण-विधियों को बताया जाता है, परन्तु उनका अभ्यास नहीं कराया जाता। शिक्षा-तकनीकी शिक्षण-विधियों में परिवर्तन चाहती है। शिक्षण-विधियाँ तभी सार्थक हो सकती हैं जब उन्हें पाठ्यवस्तु से सम्बद्ध करते हुए पढ़ाया जाए। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कार्य अनुभव, शारीरिक, मनोरंजन तथा व्यावसायिक पाठ्यवस्तु के लिये शिक्षण विधियों को विकसित किया जाना चाहिये। पाठ्यवस्तु शिक्षण-विधि के स्वरूप को सुनिश्चित करती है। विषय के शिक्षण हेतु कुछ सामान्य तथा विशिष्ट कौशल का प्रारूप विकसित करना चाहिए। सामाजिक तथा भाषा विज्ञान जैसे विषयों के शिक्षण हेतु शिक्षण-कौशलों की पहचान करनी चाहिए। शिक्षा स्तर के अनुसार भी शिक्षण-कौशलों की पहचान करना आवश्यक है।

टास्क राष्ट्रीय अध्यापक-शिक्षा परिषद् की स्थापना कब की गई?

नोट

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

(i) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग .... में गठित की गई।

(ii) यू.जी.सी. का मुख्यालय .... में स्थित है।

(iii) यू.जी.सी. केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों को विश्वविद्यालय संबंधी मामलों में .... देता है।

(iv) एन.ए.ए.सी. .... द्वारा गठित की गई एक स्वायत्त संस्था है।

(v) एन.सी.टी.ई. का मुख्यालय .... में स्थित है।

(vi) एन.सी.टी.ई. मुख्यालय .... के द्वारा संचालित होता है।

(vii) एन.सी.टी.ई. की .... क्षेत्रीय समितियाँ हैं।

13.7 सारांश (Summary)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पार्लियामेन्ट एक्ट के तहत बनने वाली एक स्वायत्त संस्था है जो विश्वविद्यालय शिक्षा के स्तर को बनाये रखने का कार्य करती है।

भारत में उच्च शिक्षा के विकास के लिए प्रथम प्रयास 1944 में आरंभ किया गया। केन्द्रीय परामर्श बोर्ड ऑफ एजुकेशन ने 1944 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के गठन के लिए सुझाव दिए।

आयोग ने निर्णय लिया कि विश्वविद्यालयों से संबंधित तथा उच्च शिक्षण संस्थानों के फंड्स तथा सभी मामलों की देख-रेख विश्वविद्यालय अनुदान आयोग करेगा और इसके द्वारा लिया गया निर्णय अंतिम होगा।

राष्ट्रीय असेसमेन्ट तथा एक्रीडिटेन समिति एक स्वचालित स्वायत्त संस्था है जो कि नेशनल शिक्षा की राष्ट्रीय नीति 1986 तथा POA 1992 की सिफारिशों के आधार पर 1994 में यू.जी.सी. द्वारा गठित की गई। इसका प्रमुख कार्य उच्च शिक्षा संस्थानों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों तथा उनकी इकाईयों (स्कूल, संस्थान, कार्यक्रम आदि) का मूल्यांकन तथा मापन करना है।

मई 1973 ई. में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय अध्यापक-शिक्षा परिषद् (NCTE) की स्थापना की गई। यह अध्यापक-शिक्षा सम्बन्धी सभी पक्षों पर परामर्श देती है।

समाज की समस्याओं और राष्ट्र के आदर्शों को दृष्टि में रखकर पाठ्यक्रम का प्रारूप तैयार किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम की शिक्षण विधियाँ भारतीय परिस्थिति के अनुरूप होनी चाहिये। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत सामाजिक वातावरण के साथ पर्यावरण, कार्य-अनुभव, शारीरिक तथा मनोरंजन की पाठ्यवस्तु को सम्मिलित किया जाना चाहिये।

शिक्षा के माध्यम से बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना अध्यापकों का लक्ष्य होता है जिससे वह राष्ट्र और समाज के विकास में सहयोग दे सके। अत: अध्यापक-शिक्षा के विभिन्न स्तरों के उद्देश्य तथा पाठ्यक्रम पृथक् होने के बावजूद उनमें एकीकरण होना आवश्यक है।

विभिन्न स्तरों के लिये अलग-अलग विशिष्ट पाठ्यक्रम विकसित किये जाने चाहिये। ग्रामीण, शहरी तथा स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर छात्रों को जानकारी मुहैया करानी चाहिए। इसमें राष्ट्रीय लक्ष्य, सामाजिक स्वरूप, मानसिक स्तर तथा सामाजिक विकास को भी महत्त्व दिया जाना चाहिए।

अध्यापक-शिक्षा के अन्तर्गत अनेक शिक्षण-विधियों को बताया जाता है, परन्तु उनका अभ्यास नहीं कराया जाता। शिक्षा-तकनीकी शिक्षण-विधियों में परिवर्तन चाहती है।

नोट

13.8 शब्दकोश (Keywords)

- **प्रवक्ता**–वक्तव्य देने वाला।
- **सम्प्रेषण**–कथन का संचरित होना।

13.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
2. यू.जी.सी. के प्रमुख कार्य क्या हैं?
3. एन.ए.ए.सी. के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये।
4. एन.सी.टी.ई. के प्रमुख कार्य बताइये।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

(*i*) 1956 (*ii*) नई दिल्ली (iii) परामर्श (*iv*) अनुदान आयोग

(*v*) नई दिल्ली (*vi*) प्रमुख (*vii*) चार

13.10 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—14: भारत में शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Special Reference to Education in India)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
14.1 शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Special Reference to Education)
14.2 संघीय सूची में शिक्षा संबंधी प्रविष्टियाँ (Entries for Education in Union List)
14.3 शैक्षिक आरक्षण (Reservation in Education)
14.4 सारांश (Summary)
14.5 शब्दकोश (Keywords)
14.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
14.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों एवं शैक्षिक आरक्षण व्यवस्था की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय संविधान 26 जनवरी, 1950 ई. को लागू किया गया। इसमें शिक्षा, धर्म, जाति, प्रशासन आदि से संबंधित प्रावधान हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम भी इसका एक प्रमुख प्रावधान है। भारत में शिक्षा को लेकर बहुत से अन्य प्रावधानों व संशोधनों का उल्लेख किया गया है जोकि शिक्षा के विकास में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इस इकाई में हम शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

14.1 शिक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions with Special Reference to Education)

शिक्षा से सम्बंधित प्रावधानों को संक्षिप्त रूप से निम्नलिखित संवैधानिक अनुच्छेदों के माध्यम से समझा जा सकता है।

अनुच्छेद 28 : संविधान का अनुच्छेद– 28 शैक्षिक संस्थानों में धार्मिक निर्देशों का पालन करने या धार्मिक प्रार्थना तथा पूजा करने की स्वतंत्रता देता है।

नोट

अनुच्छेद 29 : यह अनुच्छेद शैक्षिक संस्थानों में समान अवसर उपलब्ध कराता है।

अनुच्छेद 30 : यह अल्पसंख्यक समुदाय को शैक्षिक संस्थानों को स्थापित करने का अधिकार देता है।

अनुच्छेद 45 : अनुच्छेद-45 के अनुसार "संविधान 6 से 14 वर्ष के बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा देने का अधिकार देता है।"

अनुच्छेद 46 : यह अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा समाज के पिछड़े वर्ग के शैक्षिक तथा आर्थिक अधिकारों की रक्षा करता है।

अनुच्छेद 337 : यह एंग्लो इंडियन समुदाय की शिक्षा के लिए विशेष प्रावधान करता है।

अनुच्छेद 350 : इसमें प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा की सुविधा का प्रावधान है।

अनुच्छेद 350 : यह भाषिक अल्पसंख्यकों को शिक्षा का विशेष अधिकार देता है।

अनुच्छेद 351 : यह अनुच्छेद हिन्दी भाषा की प्रोन्नति के लिए बनाया गया प्रावधान है।

भारतीय संविधान में शिक्षा से संबंधित कानून तीन अनुसूचियों के अन्तर्गत आते हैं। राज्य सूची, समवर्ती सूची तथा संघीय सूची।

14.2 संघीय सूची में शिक्षा संबंधी प्रविष्टियाँ (Entries for Education in Union List)

इस सूची में 97 प्रविष्टियाँ हैं। यहाँ शिक्षा से संबंधित कुछ प्रविष्टियाँ निम्नलिखित हैं।

प्रविष्टि 13 : अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शैक्षिक तथा सांस्कृतिक संबंधों पर विशेष बल देती है।

प्रविष्टि 63 : इस प्रविष्टि के अनुसार बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय तथा दिल्ली विश्वविद्यालय को राष्ट्रीय महत्त्व के संस्थान माना गया है।

प्रविष्टि 64 : वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा से संबंधित संस्थान जैसे IIT तथा IIM आदि को प्रविष्टि-64 के अन्तर्गत राष्ट्रीय महत्त्व का संस्थान माना गया है।

प्रविष्टि 65 : संघीय एजेन्सियाँ तथा संस्थान।

(*i*) पुलिस अधिकारियों की व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान।

(*ii*) विशेष अध्ययन तथा अनुसंधान की प्रोन्नति।

(*iii*) अपराध की जाँच के लिए वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा के संस्थानों को संघीय एजेन्सियाँ तथा संस्थान माना गया है।

प्रविष्टि 66 : यह उच्च शिक्षा, वैज्ञानिक तथा तकनीकी संस्थान के स्तर का निर्धारण करने तथा उनमें सामंजस्य बनाये रखने का आदेश देती है।

राज्य अनुसूची

राज्य अनुसूची में 66 प्रविष्टियाँ हैं जिसमें शिक्षा संबंधी प्रविष्टि निम्नलिखित हैं–

प्रविष्टि 12 : इस प्रविष्टि के अनुसार सभी पुस्तकालय, संग्रहालय तथा राज्य द्वारा सभी संबंधित तथा संसद द्वारा पारित कानून द्वारा प्राचीन तथा ऐतिहासिक संग्रहालय तथा रिकॉर्ड को राष्ट्रीय महत्त्व की धरोहर माना गया है।

समवर्ती सूची

इस अनुसूची में 47 प्रविष्टियाँ हैं। शिक्षा से संबंधित प्रविष्टियाँ निम्न हैं

प्रविष्टि 20 : आर्थिक तथा सामाजिक योजना।

प्रविष्टि 25 : 63, 64, 65, 66 प्रविष्टियों में तकनीकी तथा चिकित्सा संस्थानों का समावेश।

प्रविष्टि 34 : समाचार पत्र, पुस्तकें तथा प्रिंटिंग प्रेस।

नोट

टास्क अल्पसंख्यकों की शिक्षा के बारे में संविधान में क्या प्रावधान हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–**

(*i*) अनुच्छेद ········ शिक्षण संस्थानों में शिक्षा के समान अवसरों का संवैधानिक अधिकार प्रदान करता है।

(*ii*) अनुच्छेद-46 ········, ········ तथा समाज के कमज़ोर वर्गों शैक्षिक तथा आर्थिक हितों की प्रगति का अधिकार देता है।

(*iii*) अनुच्छेद-350A प्राथमिक स्तर पर ········ भाषा में निर्देश की सुविधा प्रदान करता है।

(*iv*) ········ विदेशों के साथ शैक्षिक तथा सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत बनाने पर विशेष बल देता है।

(*v*) राज्य सूची में ········ प्रविष्टियाँ हैं।

14.3 शैक्षिक आरक्षण (Reservation in Education)

शिक्षा तथा अल्पसंख्यक समुदाय

संविधान के अनुच्छेद-28 के अनुसार अल्पसंख्यक समुदायों के लिए विशेष शैक्षणिक प्रावधान रखे गए हैं जो निम्न हैं–

(*i*) यदि कोई संस्थान किसी ट्रस्ट द्वारा स्थापित किया जाता है, तो वहाँ धार्मिक शिक्षा दी जा सकती है चाहे वह संस्थान राज्य द्वारा प्रशासित किया जाता हो।

(*ii*) किसी भी व्यक्ति को संस्थान में होने वाली धार्मिक गतिविधियों (चाहे वह राज्य द्वारा शासित क्यों न हो) में सम्मिलित होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।, वह अपनी तथा अपने अभिभावक की सहमति से इसमें भाग ले सकता है।

क्या आप जानते हैं किसी भी शैक्षणिक संस्थान में किसी व्यक्ति को धार्मिक गतिविधियों में उसकी इच्छा के विरुद्ध भाग लेने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

सांस्कृतिक तथा शैक्षिक अधिकार

(*i*) अनुच्छेद 29 (*i*) : कोई भी व्यक्ति जो भारत का नागरिक है, तथा भारत के किसी भी क्षेत्र में रहता हो, उसकी भाषा अथवा लिपि कोई भी हो उसे शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है।

(*ii*) अनुच्छेद 30 (*i*) : सभी अल्पसंख्यक समुदायों चाहे वे किसी भी धर्म या भाषा से संबंधित हों उन्हें अपनी इच्छानुसार शैक्षिक संस्थान स्थापित करने तथा उन्हें संचालित करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है।

(*iii*) अनुच्छेद 30 (*ii*) : यदि कोई शैक्षिक संस्थान किसी अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा चलाया जाता है तथा वह किसी विशेष धर्म तथा भाषा से संबंधित है तो राज्य उसमें किसी प्रकार का वित्तीय सहयोग नहीं करेगा।

प्रवेश

(*i*) अनुच्छेद 29 (II) : धर्म, जाति, सम्प्रदाय तथा भाषा के आधार पर किसी व्यक्ति को किसी भी शिक्षण संस्थान में प्रवेश लेने से नहीं रोका जा सकता है। यह अनुच्छेद कानूनी रूप से प्रत्येक प्रवेशार्थी को यह अधिकार प्रदान करता है।

(*ii*) **अनुच्छेद 15 (III) :** अनुच्छेद 15 III के अनुसार महिलाओं को शिक्षा संबंधी विशेष अधिकार दिये गए हैं।

मातृभाषा

मातृभाषा हिन्दी की प्रोन्नति के लिए भारतीय संविधान में कुछ निम्नलिखित प्रावधान दिये गये हैं—

(*i*) **अनुच्छेद 350 (A) :** प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में अध्ययन की सुविधा दी गई है, यह कानून भारतीय शिक्षा में मातृभाषा के स्तर को सुधारने तथा उसे प्रोन्नत करने के लिए बनाया गया है।

(*ii*) **अनुच्छेद 15 (III) : अनुच्छेद 351 :** हिन्दी भाषा के विकास को प्रोन्नत करने के लिए भारत सरकार ने यह कानून बनाया है।

कमजोर वर्गों की शिक्षा

कमजोर व पिछड़े वर्गों की शिक्षा के लिए संवैधानिक अधिकार दिये गए हैं—

अनुच्छेद 45 : इस कानून के अनुसार 14 वर्ष तक के सभी बच्चों, चाहे वे किसी भी धर्म, जाति, वर्ग के हों को शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार है।

अनुच्छेद 46 : यह अनुच्छेद कमजोर व पिछड़े वर्ग के आर्थिक तथा सामाजिक हितों की रक्षा करता है तथा अनुसूचित जाति व जनजाति को सामाजिक अन्याय व शोषण से लड़ने का अधिकार देता है।

नोट्स उच्चतम न्यायालय ने कमजोर व पिछड़े वर्ग के लोगों की शिक्षा के लिए विभिन्न अधिकार प्रदान किये हैं, जैसे—शिक्षा को प्रभावी बनाने के लिए राज्य कार्यकारी कदम उठाएगा, अल्पसंख्यक समुदाय के शैक्षिक संस्थानों में कॉन्ट्रेक्ट कानून, लेबर कानून तथा औद्योगिक कानून आदि का समावेश किया जाएगा तथा उन्हें इसका पालन करना होगा, यदि शिक्षण संस्थान में किसी भी शिक्षक के साथ किसी प्रकार का अन्याय या शोषण होता है तो उसे आरबिटरेशन ट्रिब्यूनल में जाने तथा शिकायत दर्ज करने का अधिकार प्राप्त है।

स्व-मूल्यांकन (Self- Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सही' तथा 'गलत' का चुनाव कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')—

(*i*) अनुच्छेद 29 तथा 30 में अल्पसंख्यक समुदाय के शैक्षिक हितों की रक्षा का प्रावधान है।

(*ii*) महिलाओं के लिए अलग शैक्षिक संस्थान बनाने संबंधी कोई प्रावधान नहीं हैं।

(*iii*) शिक्षा का अधिकार अधिनियम 10 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा का अधिकार देता है।

14.4 सारांश (Summary)

भारतीय संविधान 26 जनवरी, 1950 ई. को लागू किया गया। इसमें शिक्षा, धर्म, जाति आदि से संबंधित प्रावधान हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम भी इसका एक प्रमुख प्रावधान है।

यदि कोई शैक्षिक संस्थान किसी अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा चलाया जाता है तथा वह किसी विशेष धर्म तथा भाषा से संबंधित है तो राज्य उसमें किसी प्रकार का वित्तीय सहयोग नहीं करेगा।

धर्म, जाति, सम्प्रदाय तथा भाषा के आधार पर किसी व्यक्ति को किसी भी शिक्षण संस्थान में प्रवेश लेने से नहीं रोका जा सकता है। यह अनुच्छेद कानूनी रूप से प्रत्येक प्रवेशार्थी को यह अधिकार प्रदान करता है।

नोट

14.5 शब्दकोश (Keywords)

- **फोकट**—निस्सार, मुफ्त का सामान
- **सामंजस्य**—तालमेल।

14.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अनुच्छेद 350 A तथा B, अनुच्छेद 28 तथा 46 के संवैधानिक उपयोगों के बारे में समझाइये।
2. अल्पसंख्यक समुदाय की शिक्षा से संबंधित संवैधानिक अधिकारों के बारे में चर्चा कीजिए।
3. सांस्कृतिक तथा शैक्षिक अधिकार क्या हैं?
4. कमज़ोर वर्ग की शिक्षा संबंधी विशेष प्रावधान क्या हैं?
5. राज्य अनुसूची में कितनी प्रविष्टियाँ हैं? उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (*i*) 29 (*ii*) अनुसूचित जाति, जनजाति (*iii*) मातृभाषा
(*iv*) प्रविष्टि 13 (*v*) 66।

2. (*i*) सत्य (*ii*) असत्य (*iii*) असत्य

14.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–15: प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण : अवधारणा तथा समस्याएँ (Universalization of Elementary Education : Concept and Problems)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
15.1 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की अवधारणा (Concept of Universalization of Elementary Education)
15.2 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की समस्याएँ (Problems of Universalization of Elementary Education)
15.3 सारांश (Summary)
15.4 शब्दकोश (Keywords)
15.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
15.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण, अवधारणा, और उसकी समस्याओं का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

14 वर्ष तक के बच्चों की मुफ्त अनिवार्य शिक्षा भारतीय संवैधानिक निर्देश है। 1950 ई. में संविधान में इसे सम्मिलित किया गया। शिक्षा के सार्वत्रीकरण का लक्ष्य पूरा करने के लिए भारत सरकार ने बहुत से कार्यक्रम चलाये हैं, तथा आगे भी इसके लिए प्रयासरत है। 1950 ई. से लेकर आज तक इस कार्यक्रम को पूर्ण करने के लिए शिक्षा तथा उसके प्रारूप में बहुत परिवर्तन किये गए हैं। इस इकाई में हम प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की अवधारणा तथा समस्याओं पर विचार करेंगे।

15.1 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की अवधारणा (Concept of Universalization of Elementary Education)

शिक्षा प्रत्येक राष्ट्र के प्रजातंत्र तथा प्रगति की सफलता का आधार है अत: शिक्षा का सार्वत्रीकरण होना बहुत आवश्यक है। शिक्षा के सार्वत्रीकरण का अर्थ देश के सभी बच्चों चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, अथवा लिंग के हों, उन्हें मुफ्त प्रारंभिक शिक्षा उपलब्ध कराना है। शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए विभिन्न कदम उठाये गए हैं। भारत सरकार शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कर्त्तव्यबद्ध है।

नोट

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण बिल्कुल नई अवधारणा है। बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक इस ओर कोई ठोस प्रयास नहीं किये गए। सबसे पहले ब्रिटिश राज्य में 1838 ई. में विलियम एडम ने प्रारंभिक शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। 1852 ई. में कैप्टन विन्टेज जोकि मुम्बई में राजस्व सर्वेक्षण उच्चायुक्त थे ने किसानों के बच्चों की शिक्षा का प्रस्ताव रखा। यही प्रस्ताव बाद में गुजरात के लिए भी अपनाया गया लेकिन 1870 ई. में इंग्लैंड में प्रारंभिक शिक्षा की अनिवार्यता सम्बंधित कानून बनने के बाद भारत में इस पर पूरी तरह से ज़ोर दिया गया। बहुत से भारतीय नेताओं ने प्रारंभिक शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। 1906 ई. में मुम्बई में एक समिति गठित की जिसमें इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि भारत में दी जाने वाली प्रारंभिक शिक्षा मानदंडों को पूरा नहीं करती। 1950 ई. में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को अनुच्छेद-45 के रूप में भारतीय संविधान में सम्मिलित किया गया। इसके अनुसार संविधान बनने के 10 वर्षों के अंदर 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराई जाएगी।

1950 ई. में संविधान बनने के 10 वर्षों बाद अर्थात् 1960 में यह लक्ष्य पूरा करना था, परंतु विभिन्न कठिन परिस्थितियों जैसे कि पर्याप्त संसाधनों की कमी, लोगों की निर्धनता, बहुत बड़े पिछड़े वर्ग का अशिक्षित होना, निरक्षर अभिभावकों की शिक्षा के प्रति उदासीनता बढ़ती जनसंख्या में इस लक्ष्य को असफल बना दिया।

अत: प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण अब भी एक राष्ट्रीय समस्या है। चार दशक से भी अधिक समय बीत जाने तथा कई पंचवर्षीय योजनाओं के बाद भी प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का स्वप्न अभी पूर्ण नहीं हुआ है।

भारत में प्रारंभिक शिक्षा की स्थिति

1950 ई. से पिछले 60 वर्षों में शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए विभिन्न प्रयास किये गए हैं। 1950-51 ई. में दो लाख दस हज़ार प्रारंभिक स्कूल तथा 14 हज़ार उच्च प्रारंभिक स्कूल थे, वहीं अब यह संख्या बढ़कर क्रमश: 627 हज़ार हो गई है। यह आंकड़ा 2.30 तथा 5.58 प्रतिशत की दर से वार्षिक औसत दिखाता है। प्रारंभिक तथा उच्च प्रारंभिक विद्यालयों में गाँवों की जनसंख्या का क्रमश: 94 तथा 85 प्रतिशत भाग पहुँचता है।

1950-51 ई. में जहाँ 538 हज़ार प्रारंभिक अध्यापक थे वहीं अब यह संख्या बढ़कर 1,904 हज़ार हो गई है। वहीं उच्च प्रारंभिक विद्यालयों में अध्यापकों की संख्या 86 हज़ार से बढ़कर 1,278 हज़ार हो गई है।

छात्र अध्यापक औसत प्रारंभिक विद्यालयों में 42:1 तथा उच्च प्रारंभिक विद्यालयों में 37:1 है। अध्यापकों के इतने महत्त्वपूर्ण सुधारों के बाद भी महिला अध्यापकों की संख्या अब भी बहुत कम है। यह प्रारंभिक स्कूल तथा उच्चतर प्रारंभिक स्कूल में क्रमश: 35 तथा 36 प्रतिशत है। छात्रों की प्रवेश संख्या में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हुई है। प्रारंभिक स्कूल 1950-51 में जहाँ यह संख्या 19 मिलियन थी वहीं अब बढ़कर 111 मिलियन हो गई तथा उच्च प्रारंभिक विद्यालयों में 3 मिलियन से बढ़कर 40 मिलियन हो गई।

वर्तमान में प्रवेश औसत प्रारंभिक स्कूलों तथा उच्च प्रारंभिक स्कूलों में क्रमश: 92 तथा 58 प्रतिशत है। लड़कियों के प्रवेश संख्या में भी वृद्धि हुई है। इनकी प्रवेश औसत प्राइमरी तथा अपर प्राइमरी में क्रमश: 40 तथा 41 प्रतिशत था। छात्र संख्या में वृद्धि के बावजूद, स्कूल छोड़ने वाले छात्रों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। यह संख्या प्राइमरी तथा अपर प्राइमरी स्कूल में 40 तथा 57 प्रतिशत है। इन सभी आँकड़ों के बाद भी भारत में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का लक्ष्य अभी अधूरा है। भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बहुत से कार्यक्रम बनाये हैं, किन्तु विभिन्न कठिन परिस्थितियों के चलते यह लक्ष्य अभी काफ़ी दूर है।

विद्यालय प्रारूप

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण भारतीय संविधान में सम्मिलित किया गया है। 1993 ई. में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए प्रारंभिक शिक्षा को मूलभूत अधिकार के रूप में अनिवार्य किया है। पूरी विद्यालयी शिक्षा को चार वर्गों में विभाजित किया गया है, प्रारंभिक, उच्च प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक। 1968 तथा 1986 में बनाई गई शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा उसके कार्यक्रम (1992) ने भारतीय स्कूली शिक्षा को पूरे राष्ट्र

नोट

में (10+2 पैटर्न) लागू किया है। राज्य तथा केन्द्रशासित प्रदेश स्कूली शिक्षा का अपना पैटर्न लागू करने के लिए स्वतंत्र हैं। प्रारंभिक शिक्षा के आठ वर्षों को दो भागों में विभाजित कर दिया गया है : जूनियर अवस्था जिसमें– प्रारंभिक शिक्षा के पाँच वर्ष आते हैं तथा सीनियर अवस्था जिसमें प्रारंभिक शिक्षा के तीन वर्ष माने जाते हैं। इस प्रकार प्रारंभिक शिक्षा भारतीय शिक्षा का एक प्रमुख अंग बन गई है।

कक्षा I में प्रवेश की आधिकारिक आयु 6 वर्ष है, परंतु राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में 5 वर्ष पर भी प्रवेश प्राप्त किया जा सकता है।

क्या आप जानते हैं शिक्षा की राष्ट्रीय नीति में कार्यक्रम को मज़बूत करने पर बल दिया गया है तथा मानव विकास तथा प्रारंभिक शिक्षा को सार्वत्रीकरण का प्रमुख अंग माना है।

15.2 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की समस्याएँ (Problems of Universalization of Elementary Education)

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण एक संवैधानिक निर्देश है। शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है। प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को पूर्णतः लागू करने में बहुत सी कठिनाइयाँ हैं जो निम्नलिखित हैं–

(1) **सरकार की दोषपूर्ण नीतियाँ**–संवैधानिक निर्देश के अनुसार राज्य 14 वर्ष तक की आयु वर्ग के सभी बच्चों को मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराएगा। परन्तु दुख यह है इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका, इसकी उत्तरदायी बहुत-सी दोषपूर्ण सरकारी नीतियाँ हैं।

मूलभूत शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा के रूप में स्वीकार किया गया है। किन्तु फिर भी लक्ष्य तक न पहुँच पाने का कारण है सरकारी नीति आइडियलिज़्म पर आधारित हैं। भारत एक बहुत बड़ी जनसंख्या वाला देश है, इतने अधिक प्रारंभिक विद्यालयों में इन योजनाओं को लागू करने के लिए ठीक प्रकार से नीतियों का कार्यान्वयन नहीं हो पा रहा है।

(2) **राजनीतिक कठिनाइयाँ**–शिक्षा प्रजातंत्र का आधार है। प्रजातंत्र को सफल रूप से चलाने के लिए उसके नागरिकों का शिक्षित होना भी बहुत आवश्यक है, किन्तु सरकार के शिक्षा की ओर किए गए प्रयास पर्याप्त नहीं हैं, जिसका मुख्य कारण है कि भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् से लेकर अब तक भारत विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं से घिरा रहा है जिनमें प्रमुख हैं, खाद्य समस्या, पड़ोसी शत्रु देशों से युद्ध, कश्मीर की समस्या, क्षेत्रीय एवं भाषीय विविधता वाले प्रदेश आदि।

इन समस्याओं को सुलझाने में इतना धन एवं समय व्यय होता है कि, सरकार अपना पूरा ध्यान प्रारंभिक शिक्षा को सर्वत्र करने में केन्द्रित नहीं कर पा रही है।

(3) **शिक्षा का दोषपूर्ण प्रशासन**–बहुत-से राज्यों में प्रारंभिक शिक्षा का उत्तरदायित्व, ब्लॉक्स, म्यूनिसिपिलिटीज़ तथा शैक्षिक जनपदों पर होता है। प्राइमरी शिक्षा के सार्वत्रीकरण से संबंधित योजनाएँ इनके मतभेदों तथा असक्षमताओं में फँसकर दम तोड़ देती हैं।

(4) **वित्त का अभाव**–धन का अभाव शिक्षा के सार्वत्रीकरण की दिशा में एक गंभीर समस्या है। प्रारंभिक शिक्षा के खर्च का उत्तरदायित्व स्थानीय संस्थानों पर होता है, किन्तु उनकी आय इतनी सीमित होती है कि वह अनिवार्य शिक्षा के खर्चों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती।

मूलशिक्षा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 269.5 करोड़ का वार्षिक बजट बनाया गया किन्तु प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह केवल 93 करोड़ रुपये था जोकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में घटकर 89 करोड़ रह गया। अब तक इस संबंध में कोई ठोस कदम नहीं उठाये गए हैं।

नोट

(5) **प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी**—देश में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है। आजकल अध्यापक गाँवों में शिक्षण कार्य नहीं करना चाहते हैं, किन्तु सत्य यह है कि सबसे अधिक प्रारंभिक विद्यालय गाँवों में ही हैं। युवाओं का शिक्षण कार्य में रुचि न लेने का मुख्य कारण प्रारंभिक शिक्षकों के वेतन कम होना है। अनुसूचित जाति तथा जनजाति क्षेत्रों में यह स्थिति और भी कष्टप्रद है। पहाड़ी तथा जंगल के क्षेत्रों में न तो उचित यातायात के साधन हैं और न ही जनसंचार सुविधाएँ हैं। आजकल के युवा इस ओर से उदासीन हैं तथा शिक्षण कार्य में रुचि नहीं लेते हैं। सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए तथा ऐसे क्षेत्रों में शिक्षकों के लिए आवासीय सुविधाएँ मुहैया करायी जानी चाहिए।

(6) **विद्यालय बिल्डिंगों का निर्माण**—तीसरा तथा चौथा भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण दर्शाता है कि अभी भी लाखों गाँवों तथा क्षेत्रों में विद्यालय नहीं हैं। भारत में चार लाख से अधिक गाँवों में विद्यालय नहीं हैं। इतने स्कूलों तथा आवश्यक सामानों के लिए धन की व्यवस्था करना एक कठिन कार्य है। इस समस्या से निपटने के लिए, घरों, मंदिरों, धनी व्यक्तियों के आँगन, शिक्षकों के घरों में स्कूल चलाये जा सकते हैं, तथा कम कीमत के स्थानीय सामग्री, जैसे बाँस आदि से भी स्कूल की बिल्डिंग का निर्माण करके उसमें शिक्षण कार्य किया जा सकता है तथा जो स्कूल पहले से बने हैं उनमें शिफ्टिंग प्रणाली के द्वारा अधिक से अधिक बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराई जा सकती है।

(7) **अनुचित पाठ्यक्रम**—प्रारंभिक विद्यालयों का पाठ्यक्रम बहुत संकीर्ण है। वह वर्तमान में होने वाले विभिन्न घटनाक्रमों तथा समसामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाता है। किताबी शिक्षा की अपेक्षा प्रयोगात्मक ढंग से शिक्षा सिखाई जानी चाहिए। स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार बच्चों को क्राफ़्ट से संबंधित शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

> *नोट्स* देश में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण में सबसे महत्वपूर्ण बाधा प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है।

(8) **छात्रों का शिक्षा छोड़ना**—यह प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की दिशा में एक अन्य समस्या है, यदि कक्षा I में 100 छात्र प्रवेश लेते हैं तो उनमें से आधे कक्षा V तक आते-आते विद्यालय छोड़ देते हैं। केवल 32 छात्र कक्षा V तक, कक्षा VIII तक केवल 26 छात्र ही पहुँच पाते हैं। इसका प्रमुख कारण उन छात्रों के घरों में शैक्षिक माहौल का न होना तथा अभिभावकों की आर्थिक समस्याएँ हैं। अभिभावक अपनी आर्थिक तंगी के कारण बच्चों की शिक्षा बीच में ही छोड़ देते हैं। इस समस्या से निबटने के लिए शिक्षा प्रणाली तथा पाठ्यक्रम में सुधार करने चाहिए, स्कूलों में मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराई जानी चाहिए, अभिभावकों को शिक्षा तथा उसके उपयोगों से अवगत कराना चाहिए।

(9) **प्राकृतिक बाधाएँ**—अनिवार्य शिक्षा के सार्वत्रीकरण में प्राकृतिक बाधाएँ बहुत अधिक समस्या उत्पन्न करती हैं। हिमालय क्षेत्र, कश्मीर, गढ़वाल, अल्मोड़ा तथा अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में जनसंख्या बहुत कम है तथा जो है वह बहुत दूर रहते हैं। ऐसे क्षेत्रों में स्कूल का प्रबंध एक मुख्य समस्या है। इसी प्रकार राजस्थान के मरुस्थलीय क्षेत्रों, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, असम के जंगली क्षेत्रों में भी शिक्षा की उपलब्धता तथा व्यवस्था एक कठिन चुनौती है। इन क्षेत्रों में बच्चों के स्कूलों तक आने-जाने के लिए यातायात सुविधाओं का भी अभाव है।

(10) **भाषा संबंधी समस्या**—भारत के संविधान के अनुसार भारत में 22 भाषाएँ हैं जोकि शिक्षा का माध्यम हैं। कई क्षेत्रों में शिक्षा अभी तक नहीं पहुँच पाई हैं, इसका एक कारण भाषा संबंधी समस्या है। पंचवर्षीय योजनाओं में भी इस समस्या का समाधान नहीं हो सका है। अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की शिक्षा भाषा के कारण संभव नहीं हो पाई है, जिस कारण ये लोग देश की प्रगति तथा विकास में कोई भूमिका नहीं निभा पा रहे हैं तथा देश के प्रमुख विकास तथा प्रगति से कटे हुए हैं।

नोट

टास्क शिक्षा के सार्वत्रीकरण में प्राकृतिक बाधाएँ किस प्रकार समस्या उत्पन्न करती हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)–

(*i*) प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को भारतीय संविधान के अनुच्छेद-45 में .... में सम्मिलित किया गया।

(*a*) 1940 (*b*) 1950 (*c*) 1960 (*d*) 1970

(*ii*) कक्षा I में प्रवेश की आधिकारिक आयु .... वर्ष है।

(*a*) 2 वर्ष (*b*) 4 वर्ष (*c*) 6 वर्ष (*d*) 8 वर्ष

(*iii*) संवैधानिक निर्देश के अनुसार अनिवार्य मुफ़्त शिक्षा .... तक के बच्चों के लिए है।

(*a*) 14 वर्ष (*b*) 15 वर्ष (*c*) 16 वर्ष (*d*) 17 वर्ष

(*iv*) 1950 में संविधान के अनुसार, ... भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाया गया है।

(*a*) 10 (*b*) 12 (*c*) 14 (*d*) 16

(*v*) शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1986) तथा इसके कार्यक्रम (1992) ने विद्यालय शिक्षा के .... पैटर्न को मान्यता दी है।

(*a*) 10 + 2 (*b*) 11 + 1 (*c*) 9 + 2 (*d*) 8 + 4

(*vi*) प्रारंभिक शिक्षा को .... के रूप में स्वीकार किया गया है।

(*a*) राष्ट्रीय शिक्षा (*b*) व्यावसायिक शिक्षा (*c*) राज्य शिक्षा (*d*) सरकारी शिक्षा।

15.3 सारांश (Summary)

- शिक्षा प्रत्येक राष्ट्र के प्रजातंत्र तथा प्रगति की सफलता का आधार है। अत: शिक्षा का सार्वत्रीकरण होना बहुत आवश्यक है।
- शिक्षा के सार्वत्रीकरण का अर्थ देश के सभी बच्चों चाहे वे किसी भी जाति, धर्म, अथवा लिंग के हों, को मुफ़्त प्रारंभिक शिक्षा उपलब्ध कराना है। शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए विभिन्न कदम उठाये गए हैं। भारत सरकार शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कटिबद्ध है।
- प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण बिल्कुल नई अवधारणा है। बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक इस ओर कोई ठोस प्रयास नहीं किये गए। सबसे पहले ब्रिटिश राज्य में 1838 ई. में विलियम एडम ने प्रारंभिक शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। 1852 ई. में कैप्टन विन्टेज जोकि मुम्बई में राजस्व सर्वेक्षण उच्चायुक्त थे ने किसानों के बच्चों की शिक्षा का प्रस्ताव रखा।
- 1906 में मुम्बई में एक समिति गठित की गई जिसकी बैठक में इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि भारत में दी जाने वाली प्रारंभिक शिक्षा मानदंडों को पूरा नहीं करती। 1950 में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को अनुच्छेद-45 के रूप में भारतीय संविधान में सम्मिलित किया गया। इसके अनुसार संविधान बनने के 10 वर्षों के अंदर 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराई जाएगी।
- 1950 में संविधान बनने के 10 वर्षों बाद अर्थात् 1960 ई. में यह लक्ष्य पूरा करना था, परंतु विभिन्न कठिन परिस्थितियों जैसे कि पर्याप्त संसाधनों की कमी, लोगों की निर्धनता, बहुत बड़े पिछड़े वर्ग का अशिक्षित होना, निरक्षर अभिभावकों की शिक्षा के प्रति उदासीनता और बढ़ती जनसंख्या ने इस लक्ष्य को असफल बना दिया।

नोट

- 1950 से लेकर आज पिछले 60 वर्षों में शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए विभिन्न प्रयास किये गए हैं। 1950–51 में दो लाख दस हज़ार प्रारंभिक स्कूल तथा 14 हज़ार उच्च प्रारंभिक स्कूल थे, वहीं अब यह संख्या बढ़कर क्रमशः 627 हज़ार हो गई है। यह आंकड़ा 2.30 तथा 5.58 प्रतिशत की दर से वार्षिक औसत दिखाता है। प्रारंभिक तथा उच्च प्रारंभिक विद्यालयों में गाँवों की जनसंख्या का क्रमशः 94 तथा 85 प्रतिशत भाग पहुँचता है।
- वर्तमान में प्रवेश औसत प्रारंभिक स्कूलों तथा उच्च प्रारंभिक स्कूलों में क्रमशः 92 तथा 58 प्रतिशत है। लड़कियों के प्रवेश संख्या में भी वृद्धि हुई है। इनकी प्रवेश औसत प्राइमरी तथा अपर प्राइमरी में क्रमशः 40 तथा 41 प्रतिशत था।
- प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण भारतीय संविधान में सम्मिलित किया गया है। 1993 ई. में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए प्रारंभिक शिक्षा को मूलभूत अधिकार के रूप में अनिवार्य किया है। पूरी विद्यालयी शिक्षा को चार वर्गों में विभाजित किया गया है, प्रारंभिक, उच्च प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक। 1968 तथा 1986 में बनाई गई शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा उसके कार्यक्रम (1992) ने भारतीय स्कूली शिक्षा को पूरे राष्ट्र में (10 + 2 पैटर्न) लागू किया है।
- संवैधानिक निर्देश के अनुसार राज्य 14 वर्ष तक की आयु वर्ग के सभी बच्चों को मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराएगा परन्तु दुख यह है इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी यह लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका, इसकी उत्तरदायी बहुत-सी दोषपूर्ण सरकारी नीतियाँ हैं।
- शिक्षा प्रजातंत्र का आधार है। प्रजातंत्र को सफल रूप से चलाने के लिए उसके नागरिकों का शिक्षित होना भी बहुत आवश्यक है, किन्तु सरकार के शिक्षा की ओर किए गए प्रयास पर्याप्त नहीं हैं, जिसका मुख्य कारण है कि भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् से लेकर अब तक भारत विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं से घिरा रहा है जिनमें प्रमुख खाद्य समस्या, पड़ोसी शत्रु देशों से युद्ध, कश्मीर की समस्या, क्षेत्रीय भाषीय विविधता आदि हैं।
- बहुत-से राज्यों में प्रारंभिक शिक्षा का उत्तरदायित्व, ब्लॉक्स, म्यूनिसिपिलिटीज़ तथा शैक्षिक जनपदों पर होता है, प्राइमरी शिक्षा के सार्वत्रीकरण से संबंधित योजनाएँ इनके मतभेदों तथा असक्षमताओं में फँसकर दम तोड़ देती हैं।
- धन का अभाव शिक्षा के सार्वत्रीकरण की दिशा में एक गंभीर समस्या है। प्रारंभिक शिक्षा के खर्च का उत्तरदायित्व स्थानीय संस्थानों पर होता है, किन्तु उनकी आय इतनी सीमित होती है कि वह अनिवार्य शिक्षा के खर्चों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती।
- प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की दिशा में एक अन्य समस्या है, यदि कक्षा I में 100 छात्र प्रवेश लेते हैं तो उनमें से आधे कक्षा V तक आते-आते विद्यालय छोड़ देते हैं। केवल 32 छात्र कक्षा V तक, कक्षा VIII तक केवल 26 छात्र ही पहुँच पाते हैं। इसका प्रमुख कारण उन छात्रों के घरों में शैक्षिक माहौल, का न होना तथा अभिभावकों की आर्थिक समस्याएँ हैं।

15.4 शब्दकोश (Keywords)

- **कर्त्तव्यबद्ध**–कर्त्तव्य का नियमपूर्वक पालन।
- **संकीर्ण**–संकुचित।

15.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. "प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण" को समझाइये।

नोट

2. प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समझाइये।
3. भारत में विद्यालय के प्रारूप के बारे में बताइये।
4. भारत में प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की समस्याओं का सविस्तार वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

(*i*) (*b*) (*ii*) (*c*) (*iii*) (*a*) (*iv*) (*c*)

(*v*) (*a*) (*vi*) (*a*)।

15.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–16: यू.ई.ई. के कार्यक्रम (Programmes of UEE)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

16.1 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का अर्थ (Meaning of Universalization of Elementary Education)

16.2 यू.ई.ई. का महत्व (Significance of UEE)

16.3 यू.ई.ई. का कार्यक्रम (Programmes of UEE)

16.4 भारत में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के प्रयास (Efforts for Universalization of Elementary Education in India)

16.5 सारांश (Summary)

16.6 शब्दकोश (Keywords)

16.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

16.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण और यू.ई.ई. के विभिन्न कार्यक्रमों को समझने एवं व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

1950 से लेकर अब तक भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बहुत से कार्यक्रम आयोजित किये हैं। ये न सिर्फ 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए बल्कि शिक्षा को पूर्णरूपेण ग्रहण करके उसे आत्मसात करने के लिए बनाये गए हैं।

16.1 प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का अर्थ (Meaning of Universalization of Elementary Education)

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का तात्पर्य है, 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा मुफ़्त उपलब्ध कराना, चाहे वे किसी धर्म, जाति, लिंग तथा क्षेत्र के हों।

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण में तीन अवस्थाएँ हैं–

(*i*) **प्रोविजन का सार्वत्रीकरण**–इसका अर्थ है 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को मुफ़्त अनिवार्य स्कूली शिक्षा उपलब्ध कराना।

(*ii*) **प्रवेश का सार्वत्रीकरण**–इसका अर्थ है 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों का स्कूल में प्रवेश कराना, इसके लिए संविधान में प्रावधान है। जिसके अनुसार जो अभिभावक अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते हैं उन पर जुर्माना लगाया जाये।

(*iii*) **रिटेन्शन का सार्वत्रीकरण**–इसका अर्थ है जब कोई बच्चा कक्षा एक में प्रवेश ग्रहण करता है तो वह कक्षा 8 तक की पूर्ण शिक्षा ग्रहण करे।

क्या आप जानते हैं यह बहुत दुखद है कि हमारे देश के 45% से 55% बच्चे प्रारंभिक स्कूली शिक्षा कक्षा पाँच तक आते-आते छोड़ देते हैं।

16.2 यू. ई. ई. का महत्व (Significance of UEE)

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण किसी भी राष्ट्र के आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक विकास के लिए अति आवश्यक है।

यू.ई.ई. की आवश्यकता और महत्त्व निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है–

(*i*) संस्कृति को प्रोन्नति तथा संरक्षण प्रदान करता है।

(*ii*) संस्कृतिक जीवन को फलीभूत करता है।

(*iii*) आचार-विचार के आदान-प्रदान, सहनशीलता तथा आपसी सद्भाव आदि का विकास करता है।

(*iv*) राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन में सृजनात्मक भागीदारी करता है।

(*v*) व्यावसायिक प्रभाव का विकास करता है।

(*vi*) आवश्यक कौशल का विकास करता है।

16.3 यू.ई.ई. के कार्यक्रम (Programmes of UEE)

यू.ई.ई. के कुछ प्रमुख कार्यक्रम निम्नलिखित हैं–

1. **लक्ष्य प्राप्ति तथा विकेन्द्रीकृत सूक्ष्म परियोजना**–भारत में शिक्षा का असमान वितरण है। केरल में जहाँ 100% साक्षरता है वहीं बिहार में, मध्यप्रदेश तथा अन्य राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम है। धनी वर्ग में लोग उच्च शिक्षा आसानी से ग्रहण कर लेते हैं, किन्तु निर्बल वर्ग तथा निर्धन परिवारों के बच्चों के लिए साक्षर होना एक कठिन लक्ष्य है। सरकार ने शिक्षा के असमान वितरण को दूर करने के लिए यू.ई.ई. के रूप में विकेन्द्रीकृत सूक्ष्म परियोजना का निर्माण किया है।
2. **नॉनफ़ॉर्मल शिक्षा**–नॉन फ़ॉर्मल शिक्षा उन बच्चों के लिए वरदान है जो नियमित विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकते, अत: 6-14 वर्ष के बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फ़ॉर्मल प्रणाली से हटकर यह प्रणाली बनाई गई है जिससे, समाज के विभिन्न वर्गों के बच्चे, चाहे वे घर से बाहर घरों में, दुकानों पर काम करते हों या अन्य कारणों से स्कूल छोड़ गए हों। नॉन फ़ॉर्मल शिक्षा इन्हें हर प्रकार की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर देती है।
3. **अधिगम का निम्नतम स्तर**–भारत में छात्रों को जाति, धर्म से ऊपर उठकर उन्हें अधिगम तथा शिक्षा के निम्नतम स्तर तक पढ़ाने पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए नॉन फॉर्मल एजुकेशन (NFE) केन्द्रों में बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराई जाती है।

नोट

4. **ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड का उपयोग**–विद्यालयों में मूलभूत आवश्यकताओं की कमी, अनाकर्षक विद्यालय वातावरण, पढ़ाई सम्बंधी सुविधाओं की कमी प्राइमरी स्कूलों में बच्चों के स्कूल छोड़ने का एक प्रमुख कारण है, इस कमी को पूरा करने के लिए ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड को प्रारंभ किया गया है।

बाल देखरेख, शिक्षा, साक्षरता तथा यू.ई.ई. में संबंध स्थापित करना

बाल देखरेख तथा शिक्षा प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण में एक प्रभावी भूमिका निभाता है। यह शिक्षा गर्भधारण से लेकर 6 वर्ष तक के बच्चों के लिए है। ECCE, प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण में सहायक सेवा के रूप में कार्य करता है। वर्तमान ECCE कार्यक्रम में निम्नलिखित क्रियाएँ तथा कार्यक्रम शामिल हैं।

- समेकित बाल विकास शिक्षा
- बालवाड़ियाँ, आँगनवाड़ियाँ जोकि गैर सरकारी संस्थाएँ हैं सरकारी मदद से चलाई जा रही हैं।
- प्रारंभिक बाल शिक्षा

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)**–

(*i*) ……… के सार्वत्रीकरण का अर्थ है 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराना।

(*ii*) ……… नियमित रूप से शिक्षा ग्रहण कर पाने वाले छात्रों के लिए बहुत लाभदायक है।

(*iii*) ……… 1987-88 में प्रारंभ किया गया जिसके अन्तर्गत प्रारंभिक विद्यालयों में सभी आवश्यक सामग्री उपलब्ध कराना आता है।

16.4 भारत में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के प्रयास (Efforts for Universalization of Education in India

1. **प्रारम्भिक शिक्षा को प्राथमिकता**–पूरे भारत में प्रारंभिक शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा के समकक्ष माना गया है, इसके लिए बहुत-से शिक्षण कार्यक्रम चलाये गये हैं।
2. **वित्तीय सहायता**–प्रारंभिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए निम्न प्रयास किये गए हैं।

   (*i*) जहाँ तक संभव हो सके स्कूलों में दोहरी शिफ़्ट लगाना।

   (*ii*) समुदाय से पठन सामग्री, इमारत तथा अन्य सुविधाओं को प्राप्त करके स्कूल के लिए उपलब्ध कराना।
3. **शिक्षा का पुनर्गठन**–एकल अंक प्रवेश प्रणाली की जगह, बहुप्रवेश प्रणाली प्रयुक्त की गई है जो 9, 11 तथा 14 वर्ष के बच्चे अपनी आवश्यकतानुसार अलग कक्षाओं में प्रवेश ले सकते हैं। प्रारंभिक स्तर पर पार्टटाइम शिक्षा के लिए भी सुविधाएँ होनी चाहिए।
4. **निर्धन छात्रों के लिए सुविधाओं का प्रावधान**–निर्धन छात्रों के लिए मुफ़्त पुस्तकों, यूनिफ़ार्म तथा अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं।

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण की नवीन योजनाएँ

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा उसके कार्यक्रम के अस्तित्व में आने पर भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार तथा शिक्षा के सार्वत्रीकरण का ध्येय पूरा करने के लिए भारत सरकार ने विभिन्न कार्यक्रम बनाये हैं। ये सभी शिक्षा विभाग, मानव संसाधन तथा विकास मंत्रालय (MHRD) भारत सरकार द्वारा संचालित किये जाते हैं। ये योजनाएँ निम्नलिखित हैं–

1. जिला प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP)
2. मिड डे मील राष्ट्रीय प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम

3. लोक जम्बिश
4. शिक्षाकर्मी प्रोजेक्ट
5. ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड
6. प्रारंभिक स्तर पर सर्व शिक्षा अभियान

1. **जिला प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम** (DPEP)–भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए DPEP को राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में 1993 में प्रारंभ किया। DPEP का मूलभूत सिद्धांत राष्ट्रीय स्तर पर चलाये जा रहे प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण कार्यक्रम का राज्य तथा ज़िला स्तर पर संचालन करना है।

   DPEP के प्रमुख उद्देश्य

   (*i*) प्रारंभिक शिक्षा में ड्रॉपआउट छात्रों के प्रतिशत में 10 प्रतिशत तक कमी लाना।

   (*ii*) शिक्षा के सार्वत्रीकरण के औसत स्तर को बढ़ाना।

   (*iii*) प्रवेश तथा ड्रॉपआउट छात्रों की संख्या के अंतर में 5 प्रतिशत तक की कमी लाना।

2. **मिड डे मील योजना**–यह कार्यक्रम 15 जनवरी, 1995 को भारत सरकार द्वारा छात्रों की प्रवेश संख्या और उपस्थिति बढ़ाने के लिए तथा भारत में प्रारंभिक शिक्षा का विकास करने के लिए प्रारंभ किया गया।

3. **लोक जम्बिश**–यह कार्यक्रम भारत सरकार ने स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास परिषद की सहायता से शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए राजस्थान में आरंभ किया। "लोक जुम्बिश" का अर्थ है शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए लोक अभियान"। भारत सरकार ने 1992-94 में इस प्रोजेक्ट को दो वर्षों के लिए मंजूरी दे दी। इस कार्यक्रम ने पूरे राज्य के कई ज़िलों के 25 ब्लॉक में शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कार्य किए इसमें 18 करोड़ का व्यय किया गया जियमें SIDA (Swedish International Development Council), भारत सरकार तथा राजस्थान सरकार की सहभागिता का औसत क्रमशः 3:2:1 है। इसका प्रथम चरण 30 जून 1994 पूर्ण हुआ इसका दूसरा चरण 1994-98 में पूर्ण हुआ, जिसमें 75 ब्लॉकों में शिक्षा के विकास के लिए कार्य किए गए।

4. **शिक्षा कर्मी प्रोजेक्ट** (SKP)–शिक्षा कर्मी प्रोजेक्ट राजस्थान में 1987 में आंरभ किया गया तथा जून 1998 तक चला, यह प्रोजेक्ट भी स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास परिषद्, भारत सरकार तथा राजस्थान सरकार की सहभागिता द्वारा पूर्ण हुआ।

> *नोट्स* मिड डे मिल कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य प्रतिदिन प्रतिछात्र को 100 ग्राम गेहूँ/चावल द्वारा दी जाने वाली कैलोरी के बराबर भोजन उपलब्ध कराना है।

प्रोजेक्ट के उद्देश्य

1. शिक्षा का सार्वत्रीकरण
2. स्कूल छोड़ने वाले छात्रों की संख्या में कमी लाना
3. प्रारंभिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाना।

यह प्रोजेक्ट राजस्थान के सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों विशेषतः लड़कियों की शिक्षा के लिए शुरू किया गया। इसमें स्कूल में कार्यरत शिक्षकों के स्थान पर स्थानीय शिक्षकों की नियुक्ति की गई जो शैक्षणिक रूप से अधिक योग्य नहीं थे परन्तु विशेष रूप से प्रशिक्षित थे। शिक्षा कर्मी स्थानीय व्यक्ति होता था। पुरुषों के लिए इनकी शैक्षणिक योग्यता कक्षा आठ तथा महिलाओं के लिए कक्षा 6 थी। कम शिक्षा होने के कारण विशेष रूप से प्रशिक्षित

नोट

किया गया। इसमें गैर सरकारी संगठनों (NGOS) तथा ग्राम शिक्षा समिति (VEC) का काफ़ी योगदान रहा। प्रहर पाठशाला शैक्षिक कार्यक्रम उन बच्चों के लिए तैयार किया गया जो नियमित रूप से दैनिक विद्यालय में शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकते। इस योजना से 71% प्रतिशत अर्थात् 22000 हज़ार छात्राएँ लाभान्वित हुईं। इस कार्यक्रम से 32 ज़िलों के 146 ब्लॉकों के 1.18 लाख छात्र तथा 0.82 लाख छात्राएँ लाभान्वित हुए।

5. **ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड**—यह कार्यक्रम 1987 में भारत सरकार द्वारा संचालित किया गया। "ऑपरेशन" शब्द का अर्थ इस कार्यक्रम की आवश्यकता पर बल देता है। इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य स्कूलों में प्रारंभिक शिक्षा के सुधार के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।

   इस कार्यक्रम के तीन अंग हैं—

1. सभी स्कूलों में कम से कम दो कमरे, एक बड़ा आँगन तथा छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग शौच सुविधाओं का प्रावधान हो।
2. प्रत्येक विद्यालय में कम से कम दो शिक्षक जिसमें कि एक महिला शिक्षक होने का प्रावधान।
3. आवश्यक शिक्षण तथा पाठन सामग्री का प्रावधान ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड में सामुदायिक भूमिका के विभिन्न चरण हैं—

   (*i*) स्थानीय समुदाय द्वारा स्कूल की इमारत तथा खेलकूद के लिए आवश्यक ज़मीन उपलब्ध कराना।

   (*ii*) स्थानीय समुदाय द्वारा स्कूली इमारतों की मरम्मत आदि का उत्तरदायित्व लेना।

   (*iii*) स्कूल के अहाते के चारों तरफ फैन्सिग लगवाने का उत्तरदायित्व लेना।

टास्क ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड के प्रमुख अंगों के विषय में बताइये।

6. **प्रारंभिक स्तर पर सर्वशिक्षा अभियान**—सर्वशिक्षा अभियान केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों की सहभागिता से शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए चलाये जाने वाला कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराना है। सर्वशिक्षा अभियान का केन्द्र विशेषत: लड़कियों, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करना है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित वाक्यों में 'सही' अथवा 'गलत' का चुनाव कीजिए (State Whether the following sentences are 'True' or 'False')—

(*i*) DPEP प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 1980 में उठाया गया महत्वपूर्ण कदम है।

(*ii*) 'ऑपरेशन' शब्द ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड में इसकी आवश्यकता तथा अनिवार्यता को दर्शाता है।

(*iii*) लोकजम्बिश एक शैक्षिक प्रोजेक्ट है जो भारत सरकार ने राजस्थान सरकार तथा स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास परिषद् की सहभागिता से चलाया।

(*iv*) यू.ई.ई. कार्यक्रम शिक्षास्तर के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दसवीं पंचवर्षीय योजना में प्रारंभ किया गया।

16.5 सारांश (Summary)

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण किसी भी राष्ट्र के आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक विकास के लिए अति आवश्यक है।

नोट

1950 से लेकर अब तक भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बहुत से कार्यक्रम आयोजित किये हैं। ये न सिर्फ 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए बल्कि शिक्षा को पूर्णरूपेण ग्रहण करके उसे आत्मसात करने के लिए बनाये गए हैं।

प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण का तात्पर्य है, 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा मुफ़्त उपलब्ध कराना, चाहे वे किसी धर्म, जाति, लिंग तथा क्षेत्र के हों।

भारत में शिक्षा का असमान वितरण है। केरल में जहाँ 100% साक्षरता है वहीं बिहार, मध्यप्रदेश तथा अन्य राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम है। धनी वर्ग में लोग उच्च शिक्षा आसानी से ग्रहण कर लेते हैं, किन्तु निर्बल वर्ग तथा निर्धन परिवारों के बच्चों के लिए साक्षर होना एक कठिन लक्ष्य है। सरकार ने शिक्षा के असमान वितरण को दूर करने के लिए यू.ई.ई. के रूप में विकेन्द्रीकृत सूक्ष्म परियोजना का निर्माण किया है।

नॉन फ़ॉर्मल शिक्षा उन बच्चों के लिए वरदान है जो नियमित विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकते अत: 6-14 वर्ष के बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फ़ॉर्मल प्रणाली से हटकर यह प्रणाली बनाई गई है जिससे, समाज के विभिन्न वर्गों के बच्चे, चाहे वे घर से बाहर घरों में, दुकानों पर काम करते हों या अन्य कारणों से स्कूल छोड़े गए हों। नॉन फ़ॉर्मल शिक्षा इन्हें हर प्रकार की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर देती है।

पूरे भारत में प्रारंभिक शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा के समकक्ष माना गया है, इसके लिए बहुत-से शिक्षण कार्यक्रम चलाये गये हैं।

एकल अंक प्रवेश प्रणाली की जगह, बहु प्रवेश प्रणाली प्रयुक्त की गई है जो 9, 11 तथा 14 वर्ष के बच्चे अपनी आवश्यकतानुसार अलग कक्षाओं में प्रवेश ले सकते हैं। प्रारंभिक स्तर पर पार्टटाइम शिक्षा के लिए भी सुविधाएँ होनी चाहिए।

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति तथा उसके कार्यक्रम के अस्तित्व में आने पर प्रारंभिक शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार तथा शिक्षा के सार्वत्रीकरण का ध्येय पूरा करने के लिए भारत सरकार ने विभिन्न कार्यक्रम बनाये हैं। ये सभी शिक्षा विभाग, मानव संसाधन तथा विकास मंत्रालय (MHRD) भारत सरकार द्वारा संचालित किये जाते हैं। ये योजनाएँ निम्नलिखित हैं—

1. जिला प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP)
2. मिड डे मील राष्ट्रीय प्रारंभिक शिक्षा कार्यक्रम
3. लोक जम्बिश
4. शिक्षा कर्मी प्रोजेक्ट
5. ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड
6. प्रारंभिक स्तर पर सर्व शिक्षा अभियान

सर्वशिक्षा अभियान केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों की सहभागिता से शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए चलाये जाने वाला कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ़्त शिक्षा उपलब्ध कराना है। सर्वशिक्षा अभियान का केन्द्र विशेषत: लड़कियों, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करना है।

16.6 शब्दकोश (Keywords)

- **एनजीओ**—गैर सरकारी संगठन।
- **वीईसी**—ग्राम शिक्षा समिति।

नोट

16.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्रारंभिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण से आप क्या समझते हैं?
2. यू.ई.ई. कार्यक्रम के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. यू.ई.ई के प्रमुख कार्यक्रम क्या हैं?
4. जिला प्रारम्भिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) और मिड डे मील पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (*i*) प्रारम्भिक शिक्षा (*ii*) अनधिकृत शिक्षा (*iii*) ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड

2. (*i*) गलत (*ii*) सही (*iii*) सही (*iv*) गलत

16.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—17: जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
17.1 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme)
17.2 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के उद्देश्य (Objectives of DPEP)
17.3 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की विशिष्टताएँ (Characteristics of DPEP)
17.4 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम का प्रबंधन प्रारूप (Management Structure of DPEP)
17.5 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की प्रमुख उपलब्धियाँ (Major Achievements of DPEP)
17.6 सारांश (Summary)
17.7 शब्दकोश (Keywords)
17.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
17.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, उद्देश्य, विशिष्टताएँ, प्रबंधन प्रारूप तथा प्रमुख उपलब्धियों की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम निम्न स्तर पर शिक्षण योजनाओं की प्रक्रियाओं को पूरा करने का एक प्रयास है। यह जिला स्तर पर योजनाओं को कार्यान्वित करता है। इसका मुख्य कार्य जिला स्तर पर शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए वित्त का प्रबंध करना है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम एक ऐसा कार्यक्रम है जो शिक्षण योजनाओं के लिए न सिर्फ वित्तीय वितरण को जिला स्तर पर सुचारू रूप से कार्यान्वित कराता है बल्कि विभिन्न स्थानीय स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता में भी सुधार लाता है।

17.1 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए 1994 में केन्द्र सरकार द्वारा प्रारंभ किया गया।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) बाह्य रूप से सहायता प्रोजेक्ट है। इस प्रोजेक्ट में खर्च का 85 प्रतिशत वहन केन्द्र सरकार द्वारा तथा शेष 15 प्रतिशत राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। केन्द्र सरकार बाह्य स्रोतों से सहायता

नोट

लेती है। वर्तमान में IDA से 5,137 करोड़ रू. तथा 1,801 करोड़ EC/DFID/UNICEF जोकि DPEP से सम्बद्ध हैं से सहायता प्राप्त हुई।

> *क्या आप जानते हैं* जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के अन्तर्गत 5-7 वर्ष के प्रोजेक्ट में प्रत्येक जिले के लिए 40 करोड़ रू. का खर्च वहन किया गया, जिसमें 33.3 प्रतिशत जनकल्याण कार्यों पर ख़र्च हुआ तथा 6 प्रतिशत प्रबंधन पर खर्च हुआ। शेष धन गुणवत्ता सुधार गतिविधियों में खर्च किया गया।

17.2 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के उद्देश्य (Objectives of DPEP)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- प्राथमिक विद्यालयों द्वारा शिक्षा को सभी बच्चों तक पहुँचाना।
- प्राथमिक स्तर पर विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों की संख्या में 10 प्रतिशत तक की कमी लाना।
- छात्रों की उपलब्धि स्तर में 25 प्रतिशत तक की वृद्धि करना।
- सभी प्रकार के शैक्षिक कठिनाइयों को 5 प्रतिशत तक कम करना।
- जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए जिला स्तर पर कार्य करता है। कुछ राज्यों में शिक्षा का स्तर अधिक है तो कहीं कम। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम DPEP इस अंतर को कम करने के लिए प्रयासरत है।

17.3 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की विशेषताएँ (Characteristics of DPEP)

किसी भी ज़िले में प्राथमिक शिक्षा के स्तर, जिला स्तर पर मिलने वाले वित्त को सही ढंग से ख़र्च तथा उपयोग करने की स्वतंत्रता पर निर्भर करता है। भारत में अधिकांशत: वित्त संबंधी निर्णय केन्द्र तथा उच्च संस्थाओं द्वारा लिये जाते हैं तथा निम्न स्तर तक आते-आते योजना का पूर्ण कार्यान्वयन ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) योजना के अनुसार जिलों को एक बड़ी धनराशि सीधे रूप से दी जाती है, जिससे कि यह धनराशि ज़िले की शिक्षा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) एक केन्द्रपोषित कार्यक्रम है। इसकी एक प्रमुख विशेषता वित्त स्रोत है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) वित्त राज्य तथा जिला स्तर पर चलाई जा रही योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए उपयोग किया जाता है। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के अन्तर्गत आने वाली वित्तीय सहायता शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए पर्याप्त नहीं होता तथा उसे जिला स्तर पर योजनाओं को पूर्ण भी करना होता है। आवश्यकता पूर्ति के लिए जो शेष धन आवश्यक होता है उसकी पूर्ति राज्य सरकार करती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–**

   (*i*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) .... है।

   (*ii*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) का एक प्रमुख कार्य .... हैं।

   (*iii*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) जिला स्तर पर प्राथमिक शिक्षा के सुधार तथा शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बड़ी .... प्रदान करती है।

नोट

17.4 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम का प्रबंधन प्रारूप (Management Structure of DPEP)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) का एक विशेष प्रबंधन प्रारूप होता है, जोकि कार्यक्रम को बेहतर ढंग से कार्यान्वित करता है, इसके क्रियाकलापों पर निगरानी रखता है तथा वित्त के सुचारू रूप से आवागमन को जारी रखता है।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के क्रियाकलापों पर निगरानी रखने के लिए प्रबंधन सूचना प्रणाली (MIS) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) का प्रमुख अंग है। इस कार्यक्रम के कई चरण हैं। पहले चरण में यह कुछ राज्यों के चुने हुए जिलों में कार्यान्वित किया गया। वर्तमान में मध्य प्रदेश के 19 जिलों, महाराष्ट्र के 5 जिलों, असम, हरियाणा तथा कर्नाटक के 4 जिलों, केरल तथा तमिलनाडु के 3 जिलों में इस कार्यक्रम का संचालन किया जा रहा है। यहाँ योजना प्रक्रिया पूर्ण हो चुकी है। अब यह कार्यक्रम पश्चिम बंगाल तथा आन्ध्र प्रदेश के पाँच जिलों में संचालित किया जा रहा है। इसे अन्य राज्यों में भी लागू करने का प्रयास चल रहा है। मोबिलाइज़ेशन, भागीदारी तथा विद्यालयी प्रभावीकरण इस कार्यक्रम के प्रमुख उद्देश्य हैं।

> *टास्क* जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) में ज़िले का चुनाव करते समय किन बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है?

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) की रणनीतियाँ—

(*i*) **कक्षा कार्यकारी योजना—**जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) स्कूल प्रक्रियाओं तथा कक्षा क्रियाकलापों के सुधार के लिए योजना बनाई हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य विद्यालय क्रियाकलापों में सुधार तथा गुणवत्ता लाना है। कक्षा संबंधी क्रियाकलापों तथा उसके प्रबंधन में सुधार द्वारा शैक्षिक कार्यक्रमों को सफ़ल बनाया जा सकता है।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) नियमित सेवापरक प्रशिक्षण कार्यक्रमों, शिक्षण कार्यकारिणी के योजना तथा प्रबंधन में प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षक कार्यकुशलता के लिए स्थानीय वातावरण बनाता है। यह राज्य स्तरीय संस्थाओं जैसे SCERT तथा DIET जैसे जिला स्तरीय संस्थानों को मज़बूती प्रदान करता है, ब्लॉक और जिला स्तर पर नए प्रारूप तैयार करता है, तथा SIEMT जैसे प्रबंधन प्रशिक्षण संस्थानों का प्रबंधन करता है।

(*ii*) **प्रभावी योजना—**जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) में जिला स्तर पर स्थानीय लोग योजना में भाग लेते हैं। योजना के तरीके बहुत आसान तथा प्रभावी होते हैं तथा स्थानीय लोगों द्वारा आसानी से समझे जा सकते हैं। राष्ट्रीय तथा राज्य स्रोत संगठन इन योजना-कुशलता में पूर्ण रूप से सहयोग देते हैं। यह सहायता दो प्रकार की होती है।

(*i*) जिला स्तर पर शिक्षा योजना प्रारूप का विकास करना।

(*ii*) स्थानीय स्तर पर लोगों को प्रशिक्षित करने के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करना।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के संदर्भ में, NIEPA ने जिला योजना की कार्यविधि के लिए एक पत्र का विकास किया तथा अनेक कार्यशालाओं का आयोजन किया, किन्तु यह परोक्ष रूप से योजना बनाने में भाग नहीं लेता। स्थानीय स्तर पर कार्ययोजना का विकास किया जाता है।

नोट

जिला स्तरीय कार्यक्रम 6 से 7 वर्षों के लिए बनाये जाते हैं, तथा प्रतिवर्ष इनकी गतिविधियों तथा कार्यकलापों की रूपरेखा तैयार की जाती है। यह रूपरेखा अगले वर्ष के लिए पुराने अनुभवों के आधार पर की जाती है।

(*iii*) **सहभागी क्रिया की योजना**—जिला स्तरीय कार्यक्रम उन लोगों द्वारा बनाये जाते हैं जोकि इस कार्यक्रम से सीधे तौर से प्रभावित होते हैं। स्थानीय स्तर के संगठन जैसे पंचायत, शिक्षक अभिभावक संघ, शिक्षक संघ ग्राम शिक्षा समिति तथा अन्य शैक्षिक कार्यकारी अंग में स्थानीय लोग ही योजना बनाते हैं।

योजना प्रक्रियाओं में विभिन्न स्तरों पर स्थानीय लोगों द्वारा भाग लिया जाता है। पहला जिले में विभिन्न विभागों द्वारा भागीदारी, दूसरे वे लोग जो कार्यक्रम को संचालित करते हैं।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) का प्रमुख कार्य केवल शिक्षा का विकास करना ही नहीं बल्कि स्थानीय स्तर पर शैक्षिक वातावरण उत्पन्न करना DPEP स्थानीय लोगों की योग्यताओं व क्षमताओं का उपयोग करके शिक्षा का जिला स्तर पर सर्वत्रीकरण करता है।

नोट्स जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) पहले जिला स्तरीय कार्यक्रमों की सहायता से ज़िले में शिक्षा के सुधार संबंधी कार्य करता है तथा साथ ही राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर भी शिक्षा के स्तर को बढ़ावा देता है।

17.5 जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की प्रमुख उपलब्धियाँ (Major Achievements of DPEP)

(*i*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) की सहायता से अब तक 1,60000 नए विद्यालय खोले जा चुके हैं। 8,40,000 विद्यालयों में निर्माण कार्य हो चुके हैं। इन विकल्पीय विद्यालयों से 3.5 लाख बच्चे तथा सेतु पाठ्यक्रमों से 2 लाख छात्र लाभान्वित हो चुके हैं।

(*ii*) विद्यालय निर्माण संबंधी बहुत से कार्य जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) की सहायता से पूरे हो चुके हैं तथा प्रगति की ओर अग्रसर हैं। इनमें 52,758 विद्यालय की इमारत से संबंधित, 58,604 अतिरिक्त कक्षाएँ, 16,619 स्रोत केन्द्र, 29,307 मरम्मत संबंधी कार्य, 64,592 शौचालय तथा 24,909 पीने के पानी की सुविधाएँ सम्मिलित हैं।

(*iii*) पिछले तीन सालों में कुल प्रवेश अनुपात 93 से 95 प्रतिशत तक हो गया है।

(*iv*) लड़कियों की प्रवेश संख्या में अभूतपूर्व सुधार हुए हैं। जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के प्रथम चरण में जिलों में छात्राओं की प्रवेश संख्या में वृद्धि 48% से बढ़कर 49% हो गई, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) फेज अन्य जिलों में 46% से 47% हो गई है।

(*v*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) राज्यों में 4,20,203 से भी ज़्यादा विकलांग बच्चों का नामांकन हो चुका है जोकि कुल विकलांग छात्रों का 76% है।

(*vi*) लगभग सभी प्रोजेक्ट विद्यालयों, आवासीय विद्यालयों में ग्राम शिक्षा समितियाँ तथा विद्यालय प्रबंधन समितियाँ स्थापित की जा चुकी हैं।

(*vii*) लगभग 1,77,000 शिक्षक, जिसमें शिक्षामित्र तथा शिक्षाकर्मी सम्मिलित हैं, नियुक्त किये जा चुके हैं।

(*viii*) लगभग 3,380 स्रोत केन्द्र तथा ब्लॉक स्तर पर 29,725 केन्द्र शैक्षणिक सहायता तथा अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए खोले गए हैं।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में 'सही' तथा 'गलत' का चुनाव कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')–

(*i*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए प्रबंधन सूचना प्रणाली का विकास करना इस कार्यक्रम का विशेष अंग है।

(*ii*) जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) स्कूल प्रक्रियाओं तथा कक्षा की प्रक्रियाओं में संबंध स्थापित करता है।

(*iii*) सभी प्रोजेक्ट ग्रामों तथा आवासीय विद्यालयों में ग्राम शिक्षा समिति तथा स्कूल प्रबंधन समितियाँ नहीं हैं।

17.6 सारांश (Summary)

निम्न स्तर पर शिक्षण योजनाओं की प्रक्रियाओं को पूरा करने का एक प्रयास है। यह जिला स्तर पर योजनाओं को कार्यान्वित करता है। इसका मुख्य कार्य जिला स्तर पर शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए वित्त का प्रबंध करना है।

किसी भी ज़िले में प्राथमिक शिक्षा के स्तर, जिला स्तर पर मिलने वाले वित्त को सही ढंग से ख़र्च तथा उपयोग करने की स्वतंत्रता पर निर्भर करता है। भारत में अधिकांशत: वित्त संबंधी निर्णय केन्द्र तथा उच्च संस्थाओं द्वारा लिये जाते हैं।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) के अन्तर्गत आने वाली वित्तीय सहायता शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए पर्याप्त नहीं होता तथा उसे जिला स्तर पर योजनाओं को पूर्ण भी करना होता है।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (DPEP) नियमित सेवापरक प्रशिक्षण कार्यक्रमों, शिक्षण कार्यकारिणी के योजना तथा प्रबंधन में प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षक कार्यकुशलता के लिए स्थानीय वातावरण बनाता है।

जिला स्तरीय कार्यक्रम 6 से 7 वर्षों के लिए बनाये जाते हैं, तथा प्रतिवर्ष इनकी गतिविधियों तथा कार्यकलापों की रूपरेखा तैयार की जाती है। यह रूपरेखा अगले वर्ष के लिए पुराने अनुभवों के आधार पर की जाती है।

17.7 शब्दकोश (Keywords)

- **केन्द्रपोषित**–केन्द्र द्वारा संचालित।
- **परोक्ष**–अलग रहकर।

17.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के विषय में बताइये।
2. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के प्रबंधन प्रारूप की व्याख्या कीजिए।
4. जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के महत्त्वपूर्ण अर्जन क्या हैं?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (*i*) केन्द्रपोषित (*ii*) वित्त स्रोत (*iii*) जिला

2. (*i*) सत्य (*ii*) असत्य (*iii*) सत्य

नोट

17.9 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

इकाई–18: सर्वशिक्षा अभियान (Sarvashiksha Abhiyan)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

18.1 सर्वशिक्षा अभियान (Sarvshiksha Abhiyan)

18.2 सर्वशिक्षा अभियान की विशिष्टताएँ (Characteristics of SSA)

18.3 सर्वशिक्षा अभियान के उद्देश्य (Aims of SSA)

18.4 योजनाओं के प्रकार (Types of Plans)

18.5 सारांश (Summary)

18.6 शब्दकोश (Keywords)

18.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

18.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे-

- सर्वशिक्षा अभियान की विशिष्टताओं, उसके प्रकार एवं उद्देश्य की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से शिक्षा संबंधी सुधार आरंभ किए गए, शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बहुत सी योजनाएँ तथा कार्यक्रम बनाए गए तथा इन्हें कार्यान्वित भी किया गया। शिक्षा के स्तर में सुधार लाने, बच्चों की प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धता तथा अन्य कई समस्याओं को सुलझाने के लिए भारत सरकार ने विभिन्न राज्य सरकारों की सहभागिता से 'सर्वशिक्षा अभियान' कार्यक्रम आरंभ किया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बहुत सी योजनाओं को शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए कार्यान्वित किया गया। इस इकाई में हम सर्व शिक्षा अभियान तथा इससे जुड़े अनेक पहलुओं पर विचार करेंगे।

18.1 सर्वशिक्षा अभियान (Sarvshiksha Abhiyan)

सर्व शिक्षा अभियान भारत सरकार द्वारा संचालित शिक्षा के सार्वत्रीकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम है। SSA भारत सरकार द्वारा 2001-2002 में राज्य सरकारों की सहभागिता से प्रारम्भ किया गया।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य 2010 तक 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को मुफ्त तथा उपयोगी प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना था। सर्वशिक्षा अभियान (SSA) के जहाँ एक ओर अपने मानक लक्ष्य है तथा क्रियाकलाप है वहीं दूसरी ओर यह अन्य कार्यक्रमों जैसे लोक जम्बिश, ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड आदि के संरक्षक कार्यक्रम के रूप में कार्य करता है। SSA शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए शिक्षा अभियान में स्थानीय लोगों की भागीदारी पर विशेष बल देता है।

नोट

> *नोट्स* प्राथमिक शिक्षा जीवन के प्रति उत्तरदायित्व, शिशु मृत्यु तथा बच्चों के पोषण संबंधी स्तर के संदर्भ में मानव कल्याण के स्तर को बढ़ाती है।

18.2 सर्वशिक्षा अभियान की विशिष्टताएँ (Characteristics of SSA)

सर्वशिक्षा अभियाान शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सामाजिक भागीदारी पर बल देता है–इसकी कुछ विशिष्टताएँ निम्नलिखित हैं।

- यह शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए समय बाधित कार्यक्रम है।
- यह भारत में प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता की आवश्यकता की पूर्ति करता है।
- यह प्राथमिक शिक्षा द्वारा सामाजिक न्याय को प्रोन्नत करने का अवसर देता है।
- यह प्राथमिक शिक्षा के प्रबंधन में पंचायती राज संस्थाओं, स्कूल प्रबंधन समितियों, ग्राम तथा नगरीय स्लम स्तर शिक्षा समिति अभिभावक, शिक्षक संघ तथा माता-शिक्षा संघ, अनुसूचित जनजातीय स्वायत्त परिषदों तथा सभी निम्नस्तरीय प्रारूपों की भागीदारी पर जोर देता है।
- यह केन्द्र, राज्य तथा स्थानीय सरकारों के बीच सामंजस्य तथा सहभागिता प्रदान करता है।
- प्राथमिक शिक्षा से संबंधित राज्यों के दृष्टिकोण के विकास का अवसर देता है।

18.3 सर्व शिक्षा अभियान के उद्देश्य (Aims of SSA)

सर्वशिक्षा अभियान का प्रमुख उद्देश्य 2010 तक 6 से 14 वर्षीय बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराना था। साथ ही शिक्षा के स्तर को बढ़ाने तथा, सामाजिक, शैक्षिक तथा लैंगिक अन्तर कम करने के लिए सामाजिक भागीदारी का उपयोग करना भी इसका एक प्रमुख उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त कुछ और उद्देश्य भी हैं जो निम्नलिखित हैं-

- 2007 तक सभी बच्चों को पाँच वर्षों की प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य पूरा करना।
- 2010 तक आठ वर्षीय प्राथमिक शिक्षा सभी बच्चों को उपलब्ध कराना।
- प्राथमिक शिक्षा के स्तर को सुधारना।
- 2007 से 2010 तक प्रारम्भिक स्तर पर सभी प्रकार के सामाजिक अंतरों को कम करने के लिए कार्य करना।
- 2010 तक विद्यालयी छात्रों के स्कूल छोड़ने की दर को कम करना।

> *टास्क* सर्व शिक्षा अभियान के प्रमुख उद्देश्य बताइये?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-(Fill in the blanks)**
   1. .... 2001-2002 में राज्य सरकार की सहभागिता से शुरू किया गया।
   2. सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत चलने वाला .... कार्यक्रम है।
   3. SSA केन्द्र सरकार तथा .... सरकार की सहभागिता से चलने वाला कार्यक्रम है।
   4. संवैधानिक समिति के अनुसार मुफ्त तथा अनिवार्य शिक्षा .... के बच्चों को दी जानी चाहिए।

18.4 योजनाओं के प्रकार (Types of Plans)

सर्वशिक्षा अभियान एक समय बाधित कार्यक्रम है। इसका अर्थ है कि सभी लक्ष्य तथा उद्देश्य दिये हुए समय पर पूर्ण करना।

सर्वशिक्षा अभियान दो प्रकार की योजनाओं को पूर्ण करता है।

(*i*) वार्षिक

(*ii*) अनुदिश (पर्सपेक्टिव)

वार्षिक योजना के लिए एक वर्ष का समय लिया गया तथा पर्सपेक्टिव योजना के लिए लंबे समय का लक्ष्य रखा गया। इससे लिए दीर्घकालीन नीतियाँ तथा कार्यकलाप बनाये गए। पर्सपेक्टिव योजना लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक दीर्घ समयावधि में लगने वाला वित्तीय सहयोग का अनुमान बताती है जबकि एक वर्षीय योजना लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए प्रयुक्त गतिविधियों पर जोर देती है। वार्षिक योजना लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए प्रयुक्त गतिविधियों पर जोर देती है। सर्वशिक्षा अभियान की योजना का कार्यान्वय निम्न चरणों में होता है–

समस्याओं की पहचान

सबसे पहले शैक्षिक तथा सामान्य सूचना एवं अध्ययन के आधार पर समस्या की पहचान की जाती है। शैक्षिक मूल्यांकन की स्थिति में जिला स्तर पर प्रारम्भिक शिक्षा की समस्याओं तथा आवश्यकताओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। शिक्षा की उपलब्धता, प्रवेश संस्था, छात्रों द्वारा स्कूल छोड़ने की समस्या, तथा शिक्षा की गुणवत्ता संबंधी समस्याओं को पहचान कर उनका समाधान किया जाता है।

लक्ष्य निर्धारण

शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए शिक्षा को सर्वत्र उपलब्ध कराने, प्रवेश के सार्वत्रीकरण, आदि उद्देश्यों को पूरा करना अति आवश्यक है। इसके लिए आवश्यक है कि इन समस्याओं से निपटने के लिए लक्ष्य निर्धारित किये जाएँ। ये लक्ष्य एक प्रणाली के अनुरूप समय की परिसीमा के अन्दर निर्धारित किये जाते हैं। शिक्षा में लैंगिक अन्तर को समाप्त करने तथा पिछले वर्गों की शिक्षा के लिए लक्ष्य निर्धारण की आवश्यकता है।

योजनाओं का कार्यान्वयन: लक्ष्यों को निर्धारित करने के बाद उसमें लगने वाले वित्त का अनुमान लगाया जाता है, तथा उसके लिए वित्त की व्यवस्था की जाती है। विभिन्न जिला स्तर तथा अन्य निम्न स्तर पर योजनाओं का कार्यान्वयन किया जाता है। इसके लिए केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार व सामाजिक सहभागिता के द्वारा इन योजनाओं को फलीभूत किया जाता है।

क्या आप जानते हैं वार्षिक योजना तथा पर्सपेक्टिव योजना केवल एक लिखित कथन नहीं है। बल्कि शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए उपलब्ध स्त्रोतों तथा अन्य क्रियाओं का वर्तमान परिदृश्य दर्शाती है।

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

2. निम्नलिखित कथनों में सही ✓ अथवा गलत × का निशान लगाइए–

1. SSA में तीन प्रकार की योजनाओं पर कार्य किया जाता है। ☐
2. परिरूप योजना राज्य के परिरूप को दर्शाती है। ☐

नोट

18.5 सारांश (Summary)

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से शिक्षा संबंधी सुधार आरंभ किए गए। शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए बहुत सी योजनाएँ तथा कार्यक्रम बनाए गए तथा इन्हें कार्यान्वित भी किया गया।

सर्व शिक्षा अभियान भारत सरकार द्वारा संचालित शिक्षा के सार्वत्रीकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम है।

SSA शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लिए शिक्षा अभियान में स्थानीय लोगों की भागीदारी पर विशेष बल देता है।

सर्वशिक्षा अभियान का प्रमुख उद्देश्य 2010 तक 6 से 14 वर्षीय बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराना था। साथ ही शिक्षा के स्तर को बढ़ाने तथा, सामाजिक, शैक्षिक तथा लैंगिक अन्तर कम करने के लिए सामाजिक भागीदारी का उपयोग करना भी इसका एक प्रमुख उद्देश्य है।

शिक्षा के सार्वत्रीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए शिक्षा को सर्वत्र उपलब्ध कराने, प्रवेश के सार्वत्रीकरण, आदि उद्देश्यों को पूरा करना अतिआवश्यक है। इसके लिए आवश्यक है कि इन समस्याओं से निपटने के लिए लक्ष्य निर्धारित किये जाएँ।

18.6 शब्दकोश (Keywords)

- **संरक्षक**–सुरक्षा प्रदान करने वाला।
- **फलीभूत**–सफल।

18.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सर्वशिक्षा अभियान के विषय में विस्तारपूर्वक समझाइये
2. सर्वशिक्षा अभियान (SSA) के प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?
3. सर्वशिक्षा अभियान (SSA) की विशेषताएँ लिखिए।
4. सर्वशिक्षा अभियान (SSA) की योजना के प्रकार की विवेचना कीजिए।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (*i*) सर्वशिक्षा अभियान (*ii*) कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय

(*iii*) स्थानीय (*iv*) 14 वर्ष

2. (*i*) [✗] (*ii*) [✓]

18.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–19: शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009)
(Right to Education Act, 2009)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

19.1 शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (Right to Education Act, 2009)

19.2 शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 की विशिष्टताएँ (Features of Right to Education Act-2009)

19.3 शिक्षा अधिकार अधिनियम के उद्देश्य (Objectives of Right to Education Act)

19.4 शिक्षा अधिकार अधिनियम, 2009 के बाद वर्तमान स्थिति (Present situation after RTE Act-2009)

19.5 सारांश (Summary)

19.6 शब्दकोश (Keywords)

19.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

19.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- शिक्षा का अधिकार अधिनियम की विशिष्टताओं एवं उद्देश्यों की व्याख्या करने में।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम–2009 के बाद की स्थिति की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

भारत में शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 के पारित होने को भारत के लिए एक ऐतिहासिक दिन माना जाता है। अधिनियम के अनुसार 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को 8 वर्षीय विद्यालयी शिक्षा मुफ़्त दी जाएगी। यह अधि नियम न केवल बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा प्रदान करता है बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार पर भी जोर देता है। इस इकाई में हम शिक्षा के अधिकार अधिनियम व विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

19.1 शिक्षा अधिकार अधिनियम (Right to Education Act, 2009)

शिक्षा का अधिकार का अर्थ है 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चे, चाहे वे किसी भी धर्म अथवा समुदाय के हों मुफ़्त अनिवार्य शिक्षा प्राप्त कर सकें। बच्चों की मुफ़्त शिक्षा अधिकार अधिनियम 1 अप्रैल, 2010 को लागू किया गया। इसे संविधान में अनुच्छेद-21A के रूप में सम्मिलित किया गया। 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को 8 वर्ष की प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना इसका प्रमुख लक्ष्य है। 8 वर्ष की अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा को प्राप्त करने के लिए बच्चों के प्रवेश का दायित्व राज्य सरकार का है। Documents उपलब्ध न होने की दशा में किसी भी छात्र को प्रवेश के लिए मना नहीं किया जा

नोट

सकता। प्रवेश के लिए किसी प्रकार की परीक्षा नहीं ली जाएगी और प्रवेश प्रक्रिया समाप्त होने के बाद भी बच्चे का प्रवेश किया जाएगा। जो छात्र शारीरिक तथा मानसिक रूप से विकलांग हैं उन्हें भी नियमित शिक्षा दी जाएगी।

> *नोट्स* शिक्षा का अधिकार संविधान के अनुच्छेद-45 के अन्तर्गत राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत का एक भाग बन गया है।

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)-**

   (*i*) .... 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ़्त अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करता है।

   (*ii*) शिक्षा का अधिकार अधिनियम आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों को निजी स्कूलों में प्रवेश के लिए .... आरक्षण देता है।

   (*iii*) शिक्षा का अधिकार अधिनियम के अनुसार, प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण करने पर एक .... दिया जाएगा।

   (*iv*) शिक्षा का अधिकार अधिनियम के अन्तर्गत .... की कमी के कारण किसी भी बालक को प्रवेश के लिए मना नहीं किया जाएगा।

19.2 शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 की विशिष्टताएँ (Features of Right to Education Act-2009)

शिक्षा के अधिकार अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- 6 से 14 वर्ष की आयुवर्ग के सभी बच्चों को मुफ़्त अनिवार्य शिक्षा।
- प्रारम्भिक शिक्षा को पूरा करने तक किसी भी बच्चे को न तो अनुत्तीर्ण किया जाएगा, न किसी कारण से विद्यालय से निष्कासित किया जाएगा।
- यदि कोई बच्चा 6 वर्ष से अधिक है और वह अभी तक प्रारम्भिक शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाया है तो उसकी आयु के अनुरूप उसे उच्च कक्षा में प्रवेश दिया जाए, जिन बच्चों को उनकी आयु के अनुसार यदि उच्च कक्षा में प्रवेश मिल गया है तो उसे विषयों से सम्बन्धित प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है। जो बच्चा एक बार प्राथमिक स्तर पर प्रवेश प्राप्त कर चुका है, उसे मुफ्त अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है, चाहे वह 14 वर्ष से अधिक आयु का हो जाये।
- प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश के लिए जन्म, मृत्यु तथा विवाह अधिनियम 1856 या किसी अन्य प्रमाणपत्र के आधार पर ही आयु निर्धारण किया जाएगा। यदि किसी प्रकार का कोई प्रमाणपत्र उपलब्ध न हो तो बच्चे को प्रवेश के लिए मना नहीं किया जाएगा।
- कक्षा में 'छात्र अध्यापक' का एक निश्चित प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण कर लेने के बाद इन छात्र-छात्राओं को एक प्रमाणपत्र दिया जाएगा।
- कक्षा में 'छात्र अध्यापक' एक निश्चित अनुपात रखा जाएगा।
- सभी निजी विद्यालयों में कक्षा 1 में आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के बच्चों के लिए 25 प्रतिशत आरक्षण दिया जाएगा।
- शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार किया जाएगा।

नोट

- यदि अध्यापकों की डिग्री पाँच वर्ष के अंदर जमा नहीं होती है तो उन्हें नौकरी छोड़नी होगी।
- मान्यता प्राप्त विद्यालयों के लिए विद्यालय निर्माण तथा प्रारूप संबंधी सुधार तीन वर्षों के अंदर पूरे करने होंगे अन्यथा उनकी मान्यता रद्द कर दी जाएगी।
- वित्तीय भार केन्द्र तथा राज्य सरकारों के बीच वितरित किया जाएगा।

क्या आप जानते हैं कक्षा आठ तक पहुँचते-पहुँचते स्कूल छोड़ने वाले अनुसूचित जाति के छात्रों का प्रतिशत 62.9% है जबकि अनुसूचित जनजाति के छात्रों का प्रतिशत 55.2% है।

राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग इस अधिकार की सुरक्षा तथा देखरेख के लिए गठित किया गया है। NCPCR में इस अधिकार से संबंधित सभी मामलों की जानकारी तथा निगरानी रखने के लिए एक विशेष विभाग बनाया गया है। इस उद्देश्य के लिए NCPCR ने एक टोल फ्री नम्बर भी जारी किया है जिसमें इस अधिकार के हनन से सम्बन्धित शिकायतें दर्ज करायी जा सकती हैं। NCPCR, छात्रों, शिक्षकों, प्रशासकों, कलाकारों, लेखकों, अधिवेत्ताओं को इस अभियान का अभिन्न अंग बनने के लिए आमंत्रित करती है, जिससे इस देश में प्रत्येक बच्चा प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा प्राप्त करने का स्वप्न पूरा कर सके, तथा कम से कम 8 वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर सके।

19.3 शिक्षा का अधिकार-2009 के उद्देश्य (Objectives of Right to Education 2009)

शिक्षा का अधिकार उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(*i*) उपलब्धता: सभी बच्चों जिसमें बालिकाएँ, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के बच्चे सम्मिलित हैं के लिए शिक्षा के सार्वत्रिक प्रवेश को लागू करना, 1 किलोमीटर के क्षेत्र में सभी बच्चों की शिक्षा के लिए प्राथमिक विद्यालय की स्थापना का प्रावधान करना तथा प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयों का अनुपात कम से कम 1:2 होना।

(*ii*) रिटेन्शन: कक्षा I से V तक के स्कूल छोड़ने वाले छात्रों की संख्या 20 प्रतिशत तथा I से VIII तक 40 प्रतिशत तक के बच्चों की संख्या में कमी लाना, ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड जैसे शिक्षापरक कार्यक्रमों व योजनाओं की सहायता से विद्यालय सुविधाओं में सुधार लाना।

(*iii*) अर्जन: प्रारंभिक, मध्यम तथा उच्च स्तर पर शिक्षा अधिगम के निम्नतम स्तर को प्राप्त करना।

(*i*) निगरानी रखना: शिक्षा के सार्वत्रीकरण के संरक्षण तथा निगरानी रखने के लिए बनाई गई शिक्षा प्रणाली में सुधार लाना तथा स्थानीय समुदाय को इसमें सहभागी बनाना आदि।

19.4 शिक्षा अधिकार अधिनियम 2009 के बाद वर्तमान स्थिति (Present Situation After RTE Act, 2009)

(*i*) स्कूल के अभाव में शिक्षा ग्रहण न कर पाने वाले बालकों की संख्या जहाँ 2003 में 25 मिलियन थी वहीं 2009 के मध्य तक यह घटकर 8.1 मिलियन रह गई। सबसे अधिक सुधार बिहार, झारखण्ड, मणिपुर तथा छत्तीसगढ़ राज्यों में हुआ किन्तु उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा आदि राज्यों में स्थिति संतोषप्रद नहीं है।

(*ii*) यद्यपि समाज के पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त कार्यक्रम चलाये गये हैं परन्तु अब भी इस ओर शिक्षा की स्थिति में अधिक सुधार नहीं हुआ है। लड़कियों का प्रवेश प्रतिशत अब भी लड़कों की अपेक्षाकृत काफी कम है। उच्च प्राथमिक विद्यालय (कक्षा 6-8) में लड़कियों का प्रवेश लड़कों से 8.8 प्रतिशत कम रहा। यह लैंगिक अंतर अनुसूचित जातियों में 12.6 अंक तथा अनुसूचित जनजातियों में 16 अंक दर्ज किया गया है। अनूसूचित जाति तथा जनजाति के बच्चे आठ वर्षीय प्रारंभिक शिक्षा के अधिकार को पाने से सबसे अधिक वंचित हैं।

नोट

- 30 छात्रों पर एक योग्य व प्रशिक्षित शिक्षक का अनुपात होता है, किन्तु अभी राष्ट्रीय स्तर पर यह स्थिति 1 शिक्षक प्रति 34 छात्र पर है। झारखण्ड, मध्य प्रदेश, तथा पश्चिमी बंगाल में 60 छात्रों पर केवल 1 शिक्षक उपलब्ध है। इस स्थिति से उबरने के लिए कम से कम 1.2 मिलियन अतिरिक्त शिक्षकों की आवश्यकता है। वर्तमान समय में 5 में से 1 प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के पास अनिवार्य निम्नत्तम शैक्षणिक योग्यता नहीं है।
- भारत में 100 में से 84 स्कूलों में पीने के पानी की सुविधा है, किन्तु अरूणाचल प्रदेश, असम, मेघालय के आधे स्कूलों में यह सुविधा नहीं है। 100 में से 65 स्कूलों में कॉमन शौचालय नहीं है। 100 में से 54 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालयों की व्यवस्था नहीं है। असम, मेघालय मणिपुर के 9 में से 1 स्कूल में अलग शौचालय की व्यवस्था नहीं है, जबकि बिहार, छत्तीसगढ़, जम्मू तथा कश्मीर और उड़ीसा के चार में से 1 स्कूल में अलग शौचालय नहीं है। शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 में लागू होने के बाद भी अभी शिक्षा के सार्वत्रीकरण का लक्ष्य पूरा करने में पर्याप्त प्रयास करने होंगे।

टास्क बाल शिक्षा अधिकार की सुरक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग के क्या कार्य हैं?

स्व–मूल्यांकन (Self Assessment)

2 **निम्नलिखित कथनों में 'सही' तथा 'गलत' का चुनाव कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')–**

(*i*) शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम के अन्तर्गत अनुसूचित जाति तथा जनजाति के छात्रों जिसमें बालिकाएँ भी सम्मिलित हैं प्रवेश पाने का अधिकार प्राप्त हुआ है।

(*ii*) कक्षा में प्रति 50 छात्रों पर 1 योग्य व अनुभवी शिक्षक होना चाहिए।

(*iii*) शिक्षा के लिए अधिकार अधिनियम सभी प्रकार के पिछड़े वर्गों जैसे बाल मजदूर, विस्थापित बच्चे तथा विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए एक प्लेटफॉर्म प्रदान करता है।

(*iv*) शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम, 2009 में 100 प्रतिशत लड़कियाँ 8 वर्षीय विद्यालय शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

19.5 सारांश (Summary)

- शिक्षा का अधिकार का अर्थ है 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चे, चाहे वे किसी भी धर्म अथवा समुदाय के हों मुफ्त अनिवार्य शिक्षा प्राप्त कर सकें। बच्चों की मुफ्त शिक्षा अधिकार अधिनियम 1 अप्रैल, 2010 को लागू किया गया। इसे संविधान में अनुच्छेद (21A) के रूप में सम्मिलित किया गया। 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों को 8 वर्ष की प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना इसका प्रमुख लक्ष्य है। 8 वर्ष की अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा को प्राप्त करने के लिए बच्चों के प्रवेश का दायित्व राज्य सरकार का है। Documents उपलब्ध न होने की दशा में किसी भी छात्र को प्रवेश के लिए मना नहीं किया जा सकता। प्रवेश के लिए किसी प्रकार की परीक्षा नहीं ली जाएगी और प्रवेश प्रक्रिया समाप्त होने के बाद भी बच्चे का प्रवेश किया जाएगा। 6 से 14 वर्ष की आयुवर्ग के सभी बच्चों की मुफ्त अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाएगी।
- प्रारम्भिक शिक्षा को पूरा करने तक किसी भी बच्चे को न तो अनुत्तीर्ण किया जाएगा, न किसी कारण से विद्यालय से निष्कासित किया जाएगा। यदि कोई बच्चा 6 वर्ष से अधिक है और वह अभी तक प्रारम्भिक शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाया है तो उसकी आयु के अनुरूप उसे उच्च कक्षा में प्रवेश दिया जाए, जिन बच्चों को उनकी

नोट

आयु के अनुसार यदि उच्च शिक्षा में प्रवेश मिल गया है तो उसे विषयों से सम्बन्धित प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है। जो बच्चा एक बार प्राथमिक स्तर पर प्रवेश प्राप्त कर चुका है, उसे मुफ्त अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है, चाहे वह 14 वर्ष से अधिक आयु का हो जाये।

- राष्ट्रीय बाल अधिकार सुरक्षा आयोग इस अधिकार की सुरक्षा तथा देखरेख के लिए गठित किया गया है। NCPCR में इस अधिकार से संबंधित सभी मामलों की जानकारी तथा निगरानी रखने के लिए एक विशेष विभाग बनाया गया है। इस उद्देश्य के लिए NCPCR ने एक टोल फ्री नम्बर भी जारी किया है जिसमें इस अधिकार के हनन से सम्बन्धित शिकायतें दर्ज करायी जा सकती हैं। NCPCR, छात्रों, शिक्षकों, प्रशासकों, कलाकारों, लेखकों, अधिवेत्ताओं को इस अभियान का अभिन्न अंग बनने के लिए आमंत्रित करती है, जिससे इस देश में प्रत्येक बच्चा प्रारम्भिक स्कूली शिक्षा प्राप्त करने का स्वप्न पूरा कर सके, तथा कम से कम 8 वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर सके।
- सभी बच्चों जिसमें बालिकाएँ, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के बच्चे सम्मिलित हैं के लिए शिक्षा के सार्वत्रिक प्रवेश को लागू करना, 1 किलोमीटर के क्षेत्र में सभी बच्चों की शिक्षा के लिए प्राथमिक विद्यालय की स्थापना का प्रावधान करना तथा प्राथमिक तथा उच्च प्रारंभिक विद्यालयों का अनुपात कम से कम 1:2 होना।
- यद्यपि समाज के पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त कार्यक्रम चलाये गये हैं परन्तु अब भी इस ओर शिक्षा की स्थिति में अधिक सुधार नहीं हुआ है। लड़कियों का प्रवेश प्रतिशत अब भी लड़कों की अपेक्षाकृत काफी कम है।
- कक्षा आठ तक पहुँचते-पहुँचते स्कूल छोड़ने वाले अनूसूचित जाति के छात्रों का प्रतिशत 62.9% है जबकि अनुसूचित जनजाति के छात्रों का प्रतिशत 55.2% है।
- भारत में 100 में से 84 स्कूलों में पीने के पानी की सुविधा है, किन्तु अरूणाचल प्रदेश, असम, मेघालय के आधे स्कूलों में यह सुविधा नहीं है। 100 में से 65 स्कूलों में कॉमन शौचालय नहीं है। 100 में से 54 स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालयों की व्यवस्था नहीं है। असम, मेघालय, मणिपुर के 9 में से 1 स्कूल में अलग शौचालय की व्यवस्था नहीं है, जबकि बिहार, छत्तीसगढ़, जम्मू तथा कश्मीर और उड़ीसा के चार में से 1 स्कूल में अलग शौचालय नहीं है।

19.6 शब्दकोश (Keywords)

- **सहभागी**–बराबर का भागीदार।
- **निरस्त**–रद्द करना।

19.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 को समझाइये।
2. शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम की क्या विशेषताएँ हैं?
3. शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम के उद्देश्य क्या हैं?
4. शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम के पारित होने के बाद भारत में शिक्षा की क्या स्थिति है? सविस्तार समझाइये।

उत्तर– स्व–मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (*i*) शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 (*ii*) 25%
   (*iii*) प्रमाण पत्र (*iv*) अधिपत्र
2. (*i*) सत्य (*ii*) असत्य (*iii*) सत्य (*iv*) असत्य

नोट

19.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।

नोट

इकाई–20: माध्यमिक शिक्षा–अवधारणा एवं आवश्यकता (Secondary Education—Concept and Need)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
20.1 माध्यमिक शिक्षा की अवधारणा (Concept of Secondary Education)
20.2 माध्यमिक शिक्षा की आवश्यकता एवं उद्देश्य (Need and Objectives of Secondary Education)
20.3 सारांश (Summary)
20.4 शब्दकोश (Keywords)
20.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
20.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- माध्यमिक शिक्षा की आवश्यकता एवं अवधारणा की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्राचीन काल में वैदिक युग से लेकर मुस्लिम युग तक शिक्षा के दो ही स्तर रहे हैं, प्राथमिक तथा उच्च। मध्यम स्तर के दर्शन मुस्लिम युग में प्रमाण पत्र या उपाधि के तीन स्तर पाये गये–**आमिल, काबिल, फाजिल।** इन तीनों में काबिल को माध्यमिक स्तर की संज्ञा दी जा सकती है। वैसे तो मकतब प्रारम्भिक शिक्षा देते थे, तो मदरसों में उच्च शिक्षा दी जाती थी।

भारत में आधुनिक शिक्षा का आरम्भ ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना से हुआ। कम्पनी के साथ आने वाले ईसाई पादरी यहाँ पर योरोपीय ढंग के विद्यालय खोलने लगे। **डॉ. डी.ओ. एलेन** (Dr. D.O. Allen) के शब्दों में–"शिक्षा संस्थाओं ने मिशनरियों को भारतीयों से संपर्क स्थापित करने और उन्हें धार्मिक सिद्धान्तों से अवगत कराने का अवसर प्रदान किया।"

भारत में अंग्रेज, डच, डेन, पुर्तगाली, फ्रांसीसी मिशनरियों ने क्रमशः चिनसुरा, नामापट्टम्, विमलीपट्टम, तंजौर, रामपुर, त्रिचनापल्ली, ट्रानक्यूबर, माही, बनाम, वादीकाल, पांडिचेरी, चन्द्रनगर, गोवा, दमन, दीव, बेसीन, लंका, हुगली, कोचीन, चटगांव, मद्रास, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों में धर्मार्थ की स्थापना की।

मिशनरियों में से कैरी, वार्ड तथा मार्शमैन ने स्थानीय देवी-देवताओं की कड़ी आलोचना करनी आरम्भ की और अपशब्दों का प्रयोग किया। परिणामतः कम्पनी सरकारों ने मिशनरियों पर धर्म प्रचार तथा शिक्षा संस्थान आरंभ करने पर प्रतिबंध लगा दिया।

नोट

1792 में अंग्रेजों ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा के महत्व को समझा। उन्होंने (*i*) भारत में विद्यालयों की स्थापना, (*ii*) अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा, (*iii*) नि:शुल्क शिक्षा, (*iv*) धर्म प्रचार के ध्येय की पूर्ति के लिए पंचसूत्री योजना आरंभ की। **ग्रांट** (C. Grant) के शब्दों में, "इस योजना की सफलता के लिये केवल सरकार के हार्दिक संरक्षण की आवश्यकता है। यदि सरकार इसकी सफलता चाहती है तो यह सफल हो सकती है।" **नायक एवं नुरूल्लाह** के शब्दों में, "ग्रांट को कभी-कभी भारत में आधुनिक शिक्षा का जन्मदाता कहा जाता है।"

अंग्रेजी शिक्षा के व्यापक प्रसार के कारण **ए.एन. वसु** ने लिखा, "यह मुख्यत: मिशनरियों के प्रयत्नों का ही परिणाम था कि 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में इस देश की शिक्षा ने एक नवीन पद्धति का आविर्भाव देखा।"

कलकत्ता मदरसा (1781) तथा बनारस संस्कृत कॉलेज (1791), फोर्ट विलियम कॉलेज, कलकत्ता (1800) तथा पूना संस्कृत कॉलेज (1820) में खोले गये। इन संस्थाओं के खोले जाने से उच्च शिक्षा का मार्ग प्रशस्त हुआ। उसमें तत्कालीन प्रारंभिक स्तर आज का माध्यमिक स्तर कहा जा सकता है।

भारत में कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई विश्वविद्यालयों में हाई स्कूल से लेकर उच्च स्तर की शिक्षा दी जाने लगी। माध्यमिक शिक्षा के इस विकास को इन कालखण्डों में विभाजित किया जा सकता है।

20.1 माध्यमिक शिक्षा की अवधारणा (Concept of Secondary Education)

माध्यमिक शिक्षा का वर्तमान रूप अपने पीछे सौ वर्ष से अधिक की विकास परम्परा को लिये हुये हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं अन्य यूरोपीय व्यावसायिक कम्पनियों के साथ धर्म-प्रचार के लिये मिशनरी आये और उन्होंने विदेशियों के बालकों की शिक्षा की व्यवस्था की। 1830 में कम्पनी के डायरेक्टर्स ने अंग्रेजी की शिक्षा देने का निश्चय किया। **एन.एन. बसु** के अनुसार–"यहाँ के वासियों के लिये सरकार चलाने हेतु शिक्षा की व्यवस्था का निर्णय लिया गया।" 7 मार्च 1835 को लॉर्ड मैकॉले की शिक्षा नीति पर लॉर्ड विलियम बैंटिक ने हस्ताक्षर कर दिये। 1844 में लॉर्ड हार्डिंग ने पढ़े लिखे भारतीयों के लिये नौकरी के द्वार खोल दिये। इसका परिणाम यह हुआ कि पाश्चात्य शिक्षा का विकास तेजी से होने लगा। 1852 तक भारत में 32 मान्यता प्राप्त विद्यालय हो गये थे।

1. 1854 से 1940 तक

डिस्पैच में घोषणा की गई है–"भारत के लोगों को यूरोपीय लेखकों की रचनाओं से परिचित कराया जाये–यूरोपियनों के कार्य एवं विचारों के परिणामस्वरूप प्रत्येक विषय तथा ज्ञान को सामान्य शिक्षा का उद्देश्य बनाना चाहिए।"

इसके आधार पर मद्रास, बम्बई और कलकत्ता में विश्वविद्यालयों की स्थापना 1857 ई. में हुई। इन विश्वविद्यालयों ने मैट्रिक की परीक्षा के आधार पर माध्यमिक विद्यालयों पर नियन्त्रण करना आरम्भ किया। इस प्रकार विद्यालयों का कार्य कॉलेजों के लिये आधार का निर्माण करना हो गया।

क्या आप जानते हैं माध्यमिक शिक्षा के विकास में **वुड डिस्पैच** (Wood Despatch) का बहुत महत्व है। वुड-डिस्पैच ने माध्यमिक शिक्षा के लिए नींव का कार्य किया है।

1882 ई. के हन्टर-कमीशन ने माध्यमिक विद्यालयों के लिये विभिन्न पाठ्यक्रम प्रस्तावित किये। आयोग ने सुझाव दिया– "माध्यमिक विद्यालयों के लिये कक्षाओं में दो भाग हों। एक तो मैट्रिक की परीक्षा की तैयारी कराये और दूसरा युवकों को व्यापारिक तथा असाहित्यिक कार्यों के लिये तैयार करें।" 1904 ई. तक माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 3916 से 5124 हो गई। परन्तु अनियोजित प्रसार से कई खामियाँ सामने आईं। शिक्षा-विभाग का बिना सहायता प्राप्त स्कूलों पर नियन्त्रण नहीं था। विश्वविद्यालय भी मान्यता देने में शिथिलता बरतते थे। 1904 ई. में इण्डियन यूनिवर्सिटी एक्ट के अनुसार मैट्रिक की परीक्षा के लिये नियम बनाये गये। इस प्रकार विद्यालय, विश्वविद्यालयों के नियन्त्रण में और भी अधिक आ गये।

2. 1905 से 1917 तक

इस युग की तीन विशेषतायें रही हैं—

(1) **राष्ट्रीय प्रवृत्तियों का उद्भव**—लॉर्ड कर्जन की शिक्षा नीति की प्रतिक्रियास्वरूप राष्ट्र चेतना का विकास हुआ। बंगाल में नेशनल कौंसिल ऑफ एजुकेशन की स्थापना हुई। नेशनल कॉलेज टैक्नीकल इन्स्टीट्यूट आदि स्थापित हुये।

(2) **शिक्षा का माध्यम**—इस युग में अनुभव किया गया कि शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी नहीं, अपितु मातृभाषा होनी चाहिए। यह प्रश्न **श्री रायनिगार** (Rayanigar) ने कौंसिल में रखा। इस प्रस्ताव का इन कारणों से विरोध हुआ—

(*i*) छात्रों का अंग्रेजी ज्ञान घटेगा।

(*ii*) भारतीय भाषाओं में पाठ्य-पुस्तकों का अभाव है।

(*iii*) जहाँ एक से अधिक भाषायें बोली जाती हैं, वहाँ पर कठिनाई आयेगी।

(*iv*) अंग्रेजी अन्तर्देशीय महत्त्व की भाषा है।

(3) **माध्यमिक विद्यालयों का नियन्त्रण**—इस युग में विद्यालयों की शिक्षा विभाग से सहायता प्राप्त करने के लिए और विश्वविद्यालयों से मान्यता के लिये नियन्त्रित किया गया। तब यह निश्चय हुआ कि विद्यालयों पर नियन्त्रण शिक्षा विभाग का ही रहेगा।

3. 1917 से 1947 तक

इस युग में माध्यमिक शिक्षा का मूल्यांकन समय-समय पर आयोग ने किया।

(1) **कलकत्ता यूनिवर्सिटी कमीशन**—इस आयोग ने कहा है—"कोई सन्तोषजनक पुनर्गठन या विश्वविद्यालय प्रणाली उस समय तक सम्भव नहीं है जब तक माध्यमिक शिक्षा-स्तर पर क्रान्तिकारी पुनर्गठन न हो, जिससे विश्वविद्यालय प्रभावित होते हैं।" इस आयोग ने दो परीक्षाओं—मैट्रिक तथा इण्टरमीडिएट का विधान प्रस्तुत किया। इसी प्रकार इन्टर कॉलेजों को आर्ट, साइन्स, चिकित्सा तथा इन्जीनियरिंग के लिये खोला गया।

(2) **हर्टांग रिपोर्ट**—हर्टांग रिपोर्ट में भी कहा गया है कि मैट्रिक की परीक्षा ने सारे पाठ्यक्रम पर प्रभाव जमाया है। इस समिति ने सुझाया कि मिडिल स्कूलों में वर्नाक्यूलर पाठ्यक्रम विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये होने चाहिये। व्यावसायिक पाठ्यक्रम भी लागू किये जायें।

(3) **सार्जेंट रिपोर्ट**—1944 में युद्धोत्तरकाल की परिस्थितियों के सन्दर्भ में सार्जेंट कमेटी का निर्माण हुआ। इस कमेटी के सुझाव के अनुसार—माध्यमिक कोर्स 6 वर्ष का हो। प्रवेश की आयु प्राथमिक शिक्षा के पश्चात् 11 वर्ष हो। हाई स्कूल के लिये प्रतिभाशाली छात्रों को चुना जाये। चुनाव प्रभावशाली व निष्पक्ष हो। हाईस्कूल में दो प्रकार के कोर्स हों—(1) बौद्धिक, (2) प्रौद्योगिक।

4. स्वाधीनता के बाद

स्वाधीनता के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा के विकास में 4 महत्त्वपूर्ण समितियों तथा आयोगों का गठन हुआ।

(1) **ताराचन्द समिति (1948)**—इस समिति ने सुझाव दिया कि बहुउद्देशीय माध्यमिक विद्यालय स्थापित किये जायें। समिति ने एक आयोग की नियुक्ति की आवश्यकता अनुभव की।

(2) **विश्वविद्यालय आयोग (1948)**—विश्वविद्यालय आयोग ने कहा कि माध्यमिक शिक्षा ही विश्वविद्यालय की शिक्षा का आधार है। उसमें सुधार होने चाहियें।

(3) **माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)**—इस आयोग की नियुक्ति माध्यमिक शिक्षा के संगठन के अध्ययन के लिये हुई थी। इस आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन का प्रारूप दिया। जो इस प्रकार है—

नोट

(*i*) 6-4 वर्ष का 8 वर्ष का पाठ्यक्रम।

(*ii*) 15-17 वर्ष की आयु के बालकों के लिये 3 वर्ष के विभिन्न कोर्स।

(*iii*) हायर सेकेण्डरी के पश्चात् 3 वर्ष का डिग्री पाठ्यक्रम।

(4) **शिक्षा आयोग (1964-66)–डॉ. दौलतसिंह कोठारी** की अध्यक्षता में गठित इस आयोग ने सारे देश में माध्यमिक शिक्षा की समरूपता की सिफारिश की। विभिन्न पाठ्यक्रमों, विषयों तथा डाक द्वारा शिक्षा का प्राविधान प्रस्तुत किया।

इस प्रकार सन् 1830 से लेकर 1953 तक माध्यमिक शिक्षा ने बहुत से उतार-चढ़ाव देखे हैं। समय के साथ-साथ माध्यमिक विद्यालयों के उद्देश्यों, संगठन तथा कार्यक्रम में परिवर्तन आता रहा है। देश ने आज राष्ट्र विकास को अपना लक्ष्य बनाया है और उसके अनुसार माध्यमिक शिक्षा अपना मार्ग बदल रही है।

माध्यमिक शिक्षा का स्वरूप

भारत में माध्यमिक शिक्षा का स्वरूप एक-सा नहीं है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सर्वेक्षण काल में देश में माध्यमिक शिक्षा के इन रूपों को देखा था–

1. **हायर एलीमेण्ट्री अथवा मिडिल स्कूल–**कुछ राज्यों में मिडिल स्कूलों को हायर एलीमेन्ट्री, वर्नाक्यूलर-मिडिल स्कूल आदि के नाम से जाना जाता है। प्राथमिक शिक्षा के पश्चात् इन विद्यालयों में कक्षा 6 से कक्षा 8 तक के शिक्षण की व्यवस्था है।

2. **माध्यमिक विद्यालय (Secondary School)–**माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के दो भाग प्रचलित हैं– (1) जूनियर स्तर, (2) हायर स्तर। कहीं-कहीं पर सीनियर बेसिक स्कूल भी इसी के अन्तर्गत आते हैं। इनमें से 3 से 4 वर्ष की शिक्षा की व्यवस्था है। हाई स्कूल, माध्यमिक स्तर का उच्च स्तर है। कुछ जगहों पर इस अवस्था का कार्यकाल 3 वर्ष से ऊपर होता है। कुछ जगहों पर इस अवस्था का कार्यकाल 3 वर्ष से ऊपर होता है।

3. **हायर सेकेण्डरी स्कूल–**हायर सेकेण्डरी स्कूल आधुनिकतम प्रकार के विद्यालय हैं।

4. **हायर एजुकेशन–**कुछ राज्यों में प्री-यूनिवर्सिटी तथा डिग्री का पहला वर्ष भी माध्यमिक शिक्षा के अन्तर्गत आता है।

5. **इण्टरमीडिएट कॉलेज–**सैडलर कमीशन की सिफारिफशों के परिणामस्वरूप इण्टरमीडिएट कॉलेजों की स्थापना एवं सेकेण्डरी एण्ड इण्टरमीडिएट एजुकेशन का गठन हुआ। इनमें दो वर्ष का पाठ्यक्रम होता है, कक्षा 11 तथा 12 के अन्तर्गत विभिन्न पाठ्यक्रमों के शिक्षण की व्यवस्था इनमें है।

6. **व्यावसायिक कॉलेज–**माध्यमिक स्तर पर अनेक व्यावसायिक कॉलेज हैं। इनमें इन्जीनियरिंग, टेक्नोलॉजी, मेडिसन, वेटेनरी, एग्रीकल्चर एवं कॉमर्स के पाठ्यक्रम हैं। इनमें कहीं पर हाई स्कूल के बाद और कहीं पर इण्टरमीडिएट के बाद प्रवेश की व्यवस्था है।

7. **टेक्निकल संस्थान–**इस स्तर पर अनेक टेक्निकल संस्थान भी हैं। इनमें व्यावसायिक एवं पॉलीटेक्निक संस्थान भी हैं। अनेक ऐसे संस्थान हैं जिनमें 12 वर्ष की आयु के बालकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था है।

8. **पॉलीटेक्निक–**अनेक राज्यों में विभिन्न व्यवसायों के लिये विभिन्न अवधियों के प्रशिक्षण के लिये पॉलिटेकनीक संस्थानों का गठन किया है। इनमें मिडिल तथा हाई स्कूल के समक्ष योग्यता वाले छात्रों को प्रवेश दिया जाता है। इनमें टेक्नोलॉजी, आर्ट एण्ड क्राफ्ट, सेक्रेटेरियल प्रैक्टिस, डोमेस्टिक साइन्स, होमक्राफ्ट एवं सामान्य ज्ञान का प्रशिक्षण दिया जाता है।

नोट

माध्यमिक शिक्षा की नवीन संरचना

माध्यमिक शिक्षा आयोग के समक्ष माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन के समय तीन प्रश्न प्रमुख थे–(1) माध्यमिक शिक्षा किस आयु समूह के लिये हो? (2) विद्यमान व्यवस्था में क्या परिवर्तन हो? (3) परिवर्तन से अप्रभावित विद्यालयों में कुशलता का विकास किस प्रकार हो?

कोठारी कमीशन ने शिक्षा को जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में माना है और माध्यमिक शिक्षा-आयोग शिक्षा के विभिन्न स्तरों को स्वतन्त्र इकाई मानता है। **माध्यमिक शिक्षा आयोग** के अनुसार–"हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि माध्यमिक स्तर स्वयं में एक पूर्ण इकाई है, यह अवस्था की तैयारी नहीं है, इस अवस्था के अन्त में यदि छात्र चाहे तो वह जीवन के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के लिए किसी लाभदायक व्यवसाय को अपना सकता है।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा का नवीन रूप इस प्रकार प्रस्तावित किया था। आयोग के अनुसार विस्तृत रूप-रेखा का ध्यान रखते हुए माध्यमिक शिक्षा की नवीन संरचना प्राथमिक अथवा जूनियर बेसिक विद्यालय में 4 या 5 वर्ष की शिक्षा के पश्चात् आरम्भ हो।

1. इसमें मिडिल स्कूल या जूनियर सेकेण्डरी बेसिक स्तर पर 3 वर्ष का पाठ्यक्रम हो
2. हायर सेकेण्डरी स्तर पर 4 वर्ष का पाठ्यक्रम हो। आयोग ने विद्यमान इण्टरमीडिएट प्रणाली को हायर सेकेण्डरी प्रणाली से बदलने की बात कही है, जो चार वर्ष की हो एवं इण्टरमीडिएट का एक वर्ष इसमें सम्मिलित किया जाये।

इसी प्रकार तीन वर्ष का पाठ्यक्रम डिग्री प्राप्त करने के लिये हो। इस प्रकार सम्पूर्ण माध्यमिक स्तर दो भागों में विभक्त हो जाता है–(1) कक्षा 6 से 8 तक जूनियर माध्यमिक स्तर। (2) कक्षा 9 से 11 तक उच्चतर माध्यमिक स्तर।

आयोग ने स्पष्टत: इण्टरमीडिएट परीक्षा को दोषपूर्ण बताया है। उसके अनुसार–"इण्टरमीडिएट परीक्षा का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह कॉलेज की निरन्तरता को समाप्त करती है एवं डिग्री पाठ्यक्रम के नियोजन को विषम बनाती है। माध्यमिक स्तर पर एक वर्ष जोड़ने से कुशलता बढ़ेगी एवं एक वर्ष डिग्री पाठ्यक्रम के साथ जोड़ने से शैक्षणिक कुशलता का निर्माण होगा। इस प्रकार तीन वर्ष के समय में अनवरत् विकास होता रहता है।"

"जिन स्थानों पर हायर सेकेण्डरी पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाया जा सके तथा जिन कॉलेजों में चार वर्ष का पाठ्यक्रम अर्थात् दो वर्ष का इण्टरमीडिएट एवं दो वर्ष का डिग्री पाठ्यक्रम पढ़ाया जा रहा हो, वहाँ पर विश्वविद्यालय में प्रवेश से पूर्व का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये प्री-यूनिवर्सिटी का एक वर्ष का पाठ्यक्रम हो। प्री-यूनिवर्सिटी का पाठ्यक्रम कॉलेजों में आरम्भ हो।"

आयोग ने इण्टरमीडिएट स्तर को विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948) के सुझाव के अनुसार समाप्त करने का प्रस्ताव किया था। आयोग का विचार था कि इण्टरमीडिएट कक्षा को समाप्त करके माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा किया जा सकता है। आयोग ने यदाकदा यह अनुभव किया है कि इण्टरमीडिएट स्तर इच्छित उद्देश्य की प्राप्ति में असफल रहा है।

टास्क कोठारी आयोग कब गठित किया गया?

कोठारी कमीशन का सन्दर्भ

माध्यमिक शिक्षा आयोग की प्रस्तावना को यद्यपि कई राज्यों में स्वीकार कर लिया गया था किन्तु माध्यमिक स्तर पर अनेक रूप देश में प्रचलित रहे, यथा मिडिल स्कूल, जूनियर हाई स्कूल, सीनियर बेसिक, हायर एलीमेन्ट्री, हाई स्कूल, हायर सेकेण्डरी एवं इण्टरमीडिएट आदि। कुछ राज्यों में प्री-प्रोफेशनल, प्री-यूनीवर्सिटी, प्री-मेडिकल, प्री-इन्जीनियरिंग

नोट

भी माध्यमिक शिक्षा के अन्तर्गत रहे हैं। कोठारी कमीशन ने शिक्षा की नवीन संरचना में देश में एकरूपता बनाये रखने पर विशेष बल दिया है। इसीलिये माध्यमिक स्तर को उसने दो भागों में विभक्त किया है–(1) लोअर सेकेण्डरी स्तर, इनमें 8-9 या 9-10 कक्षा हैं। (2) हायर स्तर, इसमें 11-12 कक्षा हैं।

प्रश्न यह है कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने तो इण्टरमीडिएट प्रणाली को समाप्त करने की घोषणा कर दी। कई राज्यों ने हायर-सेकेण्डरी प्रणाली को समाप्त करने की घोषणा कर दी। कई राज्यों ने हायर-सेकेण्डरी प्रणाली अपनाई। जो राज्य इण्टरमीडिएट परीक्षाओं का संचालन करते रहे, वे मजे में रहे क्योंकि माध्यमिक शिक्षा आयोग का यह ढाँचा ही ढह गया। यद्यपि बात इतनी अवश्य हुई कि कोठारी कमीशन ने इण्टरमीडिएट नाम न अपनाकर हायर-सेकेण्डरी नाम ही रखा।

संक्षेप में हम प्रचलित तथा प्रस्तावित माध्यमिक शिक्षा के रूप को इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं–

विद्यमान रूप	प्रस्तावित रूप
1. हाई स्कूल	1. सेकेण्डरी
1. कक्षा 11 या पी.यू.सी.	कक्षा 8 से 12 या 11-12
2. जूनियर कॉलेज (केरल)	(क) निम्न माध्यमिक शिक्षा
3. इण्टरमीडिएट कॉलेज (उ.प्र. एवं बम्बई)	कक्षा 8-10
4. प्री-प्रोफेशनल, प्री-मेडिकल	या कक्षा 11-12
प्री-इन्जीनियरिंग	(ख) उच्चतर माध्यमिक शिक्षा
	कक्षा 9-11

वास्तविकता यह है कि आज देश भर में शिक्षा संगठन को एकरूपता प्रदान की जाये, जिससे राष्ट्रीय एकता तथा समाज की एकता का निर्माण हो। इनमें समाज सेवा तथा राष्ट्र सेवा के कार्यक्रम हों जिनमें बालक के अनेक प्रकार की सद्‌भावनाओं का विकास हो सकता है। आज पूरे देश में 10 + 2 शिक्षा योजना आरम्भ की जाती है।

3. 10 + 2 + 3 शिक्षा योजना

शिक्षा आयोग (1964-66) ने अपनी सर्वांगीण शिक्षा दिग्दर्शिका के अन्तर्गत जिस आधारभूत तथ्य को स्वीकार किया है–वह है सम्पूर्ण देश में एक समान शिक्षा प्रणाली। विविधताओं के इस देश में शिक्षा विविधता की प्रक्रिया में प्रवाहित होती है और यह कहना कठिन हो गया है कि किस प्रदेश की शिक्षा का स्तर ऊँचा है अथवा नीचा है।

नवीन शैक्षिक संरचना अर्थात् 10 + 2 + 3 शिक्षा प्रणाली की अनुगूँज हो रही है। केन्द्रीय विद्यालयों में इस प्रणाली को आधार मानकर प्रयोग भी किये गये। सफलता के मानदण्डों का निर्धारण किया गया। परन्तु देखने में यह आया कि सम्पूर्ण देश में समान पाठ्यचर्या को लेकर चलने वाले ये केन्द्रीय विद्यालय समान शिक्षा प्रणाली की मंजिल को तलाश नहीं कर पा रहे हैं। स्वयं इस प्रणाली से संबद्ध **श्री रजनी कुमार** का कथन है–"जब हमने सैकड़ों ग्रीष्मकालीन पाठ्यक्रम आधुनिक गणित तथा विज्ञान में शिक्षकों को ओरियेन्टेड करने के लिये प्रणाली का निर्माण किए, क्या हम समाज की गतिशील शक्तियों को समझने के लिये सामाजिक दर्शन को पाठ्यक्रम संचालित नहीं कर सकते थे; यही आधार था सामाजिक तथा आर्थिक संरचना में परिवर्तन का।" शिक्षा के इस विशाल आधार की उपेक्षा नहीं की जा सकती थी।

10 + 2 + 3 प्रणाली के बीज सन् 1882 के हन्टर कमीशन के प्रतिवेदन में पाये जाते हैं। हन्टर कमीशन ने कहा था, माध्यमिक शिक्षा के निर्धारित स्तर के बाद शिक्षा का प्रवाह दो स्तर में विभक्त हो जाना चाहिये। **एक,** जो विश्वविद्यालय शिक्षा के लिये प्रवेश द्वार हो और **दूसरा,** जो जनता को अधिक व्यावहारिक, व्यावसायिक या असाहित्यिक शिक्षा के क्षेत्र की ओर उन्मुख हो। दुर्भाग्य था देश का–सरकार और जनता; दोनों ही इस परामर्श को पचा न पाये।

नोट

इसके बाद 1929 में तत्कालीन सरकार ने प्रचलित परीक्षा प्रणाली का पुनरावलोकन करने के लिए हर्टांग कमेटी की आवश्यकता पर बल दिया। परन्तु सरकार माध्यमिक स्तर पर इस प्रकार कार्यक्रम न उठा सकी और समिति का यह सुझाव फाइलों में ही बन्द रह गया।

1935 ई. में केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदात्री परिषद ने आर्थिक मन्दी के प्रभावों की समीक्षा करते हुये माध्यमिक स्तर पर पुन: व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को लागू करने की सिफारिश की। **एबॉट एवं वुड** (ए. एबॉट एवं एस. डब्ल्यु. वुड) समिति को इस संस्तुति पर अपनी राय देने के लिये कहा गया। 1936 ई. में **एबॉट** एवं **वुड** ने दो भागों में अपने प्रतिवेदन को प्रस्तुत किया। पहले भाग में उन्होंने भारत में व्यावसायिक शिक्षाओं की जटिलताओं पर विचार किया। दूसरे भाग में समिति ने व्यावसायिक शिक्षा के लिये दो प्रकार के स्कूल *(i)* जूनियर *(ii)* सीनियर; चलाने का सुझाव दिया। जूनियर वोकेशनल स्कूलों का माध्यमिक स्तर रखा गया। इनमें विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। सीनियर स्कूलों में विशेषीकृत शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। इस दल के प्रतिवेदन में सामान्य शिक्षा के सर्वोच्चक्रम को अपनाया गया। इस प्रतिवेदन के परिणामस्वरूप देश में पॉलिटेक्निक विद्यालय अस्तित्व में आये।

दूसरा महायुद्ध आरम्भ हुआ और समाप्त हुआ। देश की व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होने लगे। ऐसे समय 1944 में **सर जॉन सार्जेंट** की अध्यक्षता में देश की शिक्षा की पुनर्रचना के लिये एक समिति का गठन किया गया। इस दल ने दो प्रकार के हाई स्कूलों की संस्तुति की–*(i)* वोकेशनल तथा टेक्निकल, *(ii)* एकेडेमिक। पहले में व्यावहारिक ज्ञान तथा उद्योग की शिक्षा तथा दूसरे में सैद्धान्तिक शिक्षा की व्यवस्था की गई। परिणामत: 1945 ई. में ऑल इण्डिया कौंसिल फार टेक्निकल एजुकेशन की स्थापना हुई और देहली पॉलीटेक्निक फार कॉमर्स एजुकेशन अस्तित्व में आया। योजना का स्वागत हुआ परन्तु धनाभाव के प्रचलित नारे ने इस स्वप्न को साकार न होने दिया।

बाद के दशक में भारत स्वतन्त्र हुआ और कुछ मौलिक प्रश्नों तथा स्वतन्त्र भारत में शिक्षा प्रणाली के गठन पर बल दिया और यूँ मुदालियर कमीशन शिक्षा के रंगमंच पर अवतरित हुआ। मुदालियर कमीशन ने माध्यमिक शिक्षा के लिये दो प्रकार के पाठ्यक्रम प्रस्तावित किये जिनमें सामान्य शिक्षा के साथ-साथ कुछ व्यावसायिक शैक्षिक धारायें भी थीं, जिनमें टेक्नोलॉजी, कृषि, वाणिज्य तथा ललित कलाओं का प्रावधान किया गया। परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक राज्य में पॉलिटेक्निक तथा मल्टीपरपज स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुई। 1950 में सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड ने इन स्कूलों के लिये अध्यापकों को तैयार करने के लिये चार क्षेत्रीय महाविद्यालयों की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की। 1963 ई. में ये महाविद्यालय अस्तित्व में आये।

कमीशनों तथा समितियों की दौड़ में बहुचर्चित रहा कोठारी कमीशन जिसने 1964-66 में अपना कार्य सम्पूर्ण कर देश के लिये समान और महान् शैक्षिक स्वरूप का विशालकाय प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। कमीशन ने 1986 तक 50 प्रतिशत हायर सेकेन्डरी बालकों के व्यावसायिक पाठ्यक्रम लेने की योजना बनाई। कमीशन का कहना है—हमारी मुख्य संस्तुति यह है कि निम्न माध्यमिक स्तर के कुल नामांकनों का 20 प्रतिशत तथा कक्षा 10 के बाद से नामांकनों का 30 प्रतिशत अंशकालीन या पूर्णकालीन व्यावसायिक पाठ्यक्रम में आ जाये। 14 एवं 18 वर्षा के बालक बालिकाओं को इस प्रकार के व्यावसायिक तथा तकनीकी पाठ्यक्रम लेने के लिये प्रोत्साहित किया जाये।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **निम्नलिखित कथनों में से 'सत्य' तथा 'असत्य' की पहचान कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')—**
   1. ताराचन्द समिति (1948) ने सुझाव दिया कि बहुउद्देश्यी माध्यमिक विद्यालय स्थापित करना आवश्यक नहीं है।
   2. विश्वविद्यालय आयोग (1948) ने कहा कि माध्यमिक शिक्षा ही विश्वविद्यालय शिक्षा का आधार है।
   3. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) की नियुक्ति माध्यमिक एवं उच्चशिक्षा के संगठनात्मक अध्ययन के लिए हुई थी।
   4. शिक्षा आयोग (1964-66) ने सारे देश में माध्यमिक शिक्षा की समरूपता की सिफारिश की।
   5. कोठारी कमीशन सन् 1960-62 ई. में गठित किया गया।

नोट

20.2 माध्यमिक शिक्षा की आवश्यकता एवं उद्देश्य (Need and objectives of Secondary Education)

देश को आजाद हुये 63 वर्ष बीत गये अर्थात् एक पीढ़ी जवान हो गई परन्तु देश में शिक्षा का विदेशी पौधा अमरबेल की तरह फैलता रहा। इस शिक्षा का सम्बन्ध न तो राष्ट्रीय चरित्र से रहा और न राष्ट्रीय पुनर्रचना से; समय-समय पर भावात्मक तथा राष्ट्रीय एकता समिति (1962) ने इस ओर संकेत किया–कुल मिलाकर छात्र समाज के हित की दृष्टि से हम यह समझते हैं कि समस्त देश में शिक्षा का स्वरूप एक समान हो और उसमें समन्वय हो सके तथा स्तरों को सुरक्षित रखा जा सके। देश में जिस तरह का वातावरण गत दशक में रहा, उसका एकमात्र उपाय है सम्पूर्ण राष्ट्र में एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का संचालन।

कोठारी कमीशन ने सम्पूर्ण शिक्षा को तीन स्तरों में बाँटा है–प्रथम स्तर पूर्ण स्कूलों तथा प्राथमिक शिक्षा, द्वितीय स्तर पर हाईस्कूल तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा तृतीय स्तर पर अवर स्नातक, उत्तर स्नातक तथा शोध को सम्मिलित किया गया है।

शिक्षा की नवीन संरचना और केन्द्रीय विद्यालयों द्वारा उसका क्रियान्वयन देश के अन्य विद्यालयों के समक्ष एक प्रश्न उपस्थित करता है–क्या वे शिक्षा का इस नवीन संरचना के साथ तालमेल बैठा सकेंगे और वांछित स्तर प्राप्त कर सकेंगे? उत्तर संशय युक्त है। कारण भी स्पष्ट है कि केन्द्र सरकार द्वारा संचालित ये विद्यालय साधन सम्पन्न हैं और इनमें जन-सामान्य को प्रवेश मिलना सम्भव नहीं है। फलत: इनकी संरचना वर्ग विशेष के लिये की गई है। इनमें प्रवेश भी प्रतियोगिता के आधार पर होता है। अत: क्रीम निकालकर उससे मक्खन या घी कुछ भी बनाया जा सकता है। रही छाछ मथने की बात, सो प्रदेशों के विद्यालय कर ही रहे हैं। साधनहीन ये विद्यालय राष्ट्र को जो भी दे देते हैं, वह आकाश कुसुम ही है।

कोठारी कमीशन ने नवीन शैक्षिक संरचना के सन्दर्भ में शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या करते हुये कहा है–"शिक्षा में जिस सबसे महत्त्वपूर्ण और जरूरी सुधार की आवश्यकता है, वह है इसका रूप बदलने की, उसे लोगों की जीवन आवश्यकताओं, आकांक्षाओं से सम्बन्धित करने की और इस प्रकार उसे राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये आवश्यक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का एक शक्तिशाली साधन बनाने की। इस प्रयोजन के लिये शिक्षा का विकास इस तरह होना चाहिये कि उत्पादित बड़े सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण सम्भव हो सके, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में तेजी आये और सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य विकसित हो।"

इन उद्देश्यों तथा सामाजिक परिवर्तन के लिये 10 + 2 + 3 में शिक्षा को उत्पादन से जोड़ने का संकल्प लिया गया है। विज्ञान शिक्षा, शिल्प विज्ञान तथा औद्योगीकरण, व्यावसायीकरण को कार्यानुभव से जोड़ने की बात की गई है। सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिये समान स्कूल, सामाजिक राष्ट्रीय सेवा, भाषानीति तथा राष्ट्रीय चेतना को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है। शिक्षा को आधुनिकीकरण के प्रवाह में ढालने तथा सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा, धर्म की शिक्षा व्यवस्था की गई है।

आपात् स्थिति की घोषणा से राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्ति हुई है शायद इसीलिये केवल एन्सर्ट द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम की 10 + 2 का आधार मानकर परिवेश, परिस्थिति का विचार किये बिना राष्ट्रीय एकीकरण के नाम पर देश के सभी प्रदेश 10 + 2 को अपनाने का नारा बुलन्द कर रहे हैं। शायद उन्होंने यह नहीं सोचा कि देश में उत्तर प्रदेश भी था जहाँ 10 + 2 पहले से ही विद्यमान रहा है। रहा नवीन प्रवाह में बहने का सवाल, कक्षा 4 तक अर्थात् पहले आठ वर्षों का पाठ्यक्रम सामान्य है और कक्षा 9 से विशेषीकरण होता है। यहीं पर वे कार्यानुभव केन्द्रित पाठ्यक्रम भी है जिनको लेकर बालक व्यावसायिक प्रवाह में जा सकता है। कक्षा 10 तक 16 विषयों में दक्ष होने की सम्भावना मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षाशास्त्रियों द्वारा निर्मित की गई एक अमनोवैज्ञानिक अवधारणा है। इसको प्रदेशों पर लादना शिक्षा भार को बढ़ाना है। हमें तो 10 + 2 में ऐसी योजना चाहिये जो हमारे देश की मिट्टी के अनुकूल हो। इस तरफ रूस और अमेरिका से शिक्षा शोध की भीख माँगने से काम नहीं चलेगा।

नोट

10 + 2 में त्रिभाषा सूत्र का मनमाने ढंग से उपयोग किया गया है। हम यह मानकर चलते हैं कि अंग्रेजी के बिना हमारा काम नहीं चलेगा। एन्सर्ट के सचिव महोदय ने एक जगह कहा कि अंग्रेजी कक्षा 3 से लेकर कक्षा 9 तक कहीं भी आरम्भ की जा सकती है परन्तु उन्होंने यह कहीं व्यवस्था नहीं की कि राष्ट्रभाषा हिन्दी का पठन सभी प्रदेशों में कक्षा 3 से हो जाना चाहिये और प्रादेशिक भाषाओं में से एक का गठन अनिवार्य हो। भाषा की शैक्षिक नीति इस प्रकार हमारी राष्ट्रीय एकता को बनाये रख सकेगी, इसमें संशय है।

हमारे राजनेता इस तथ्य से अनभिज्ञ हैं कि देश में नौकरशाही यह नहीं चाहती कि जनता से प्रशासन तथा शासन में नेता आयें, वंश परम्परा चलती रहे और इसके लिये एक वंश से लोग मिलते रहें।

उच्च शिक्षा की विधिवत् स्थापना के लिए देश में उच्चशिक्षा का कार्यकाल 4 वर्ष रखा गया। ये 4 वर्ष 12-वर्षीय शिक्षा का पाठ्यक्रम समाप्त होने के बाद आते हैं। मुदालियर कमीशन (1953) की सिफारिशों ने इण्टरमीडिएट को समाप्त कर हायर सेकेन्डरी 11 वर्ष का पाठ्यक्रम प्रस्तावित किया। इसे देश के अधिकांश प्रदेशों ने लागू किया और आज फिर पुरानी प्रथा पर आ रहे हैं। यह एक अपव्यय है। इस अपव्यय से राष्ट्र कल्याण की आशा नहीं की जा सकती। आज भी सम्पूर्ण देश में हम एकदम नवीन प्रणाली में 'स्विचओवर' नहीं कर सकते। शासकीय-प्रशासनीय, प्रबन्धकीय और शिक्षण सम्बन्धी अनेक समस्यायें हमारे सामने हैं। इसलिये 10 + 2 के साथ + 3 का पाठ्यक्रम अपने आपमें एक प्रश्न चिन्ह है। तीन वर्षीय पाठ्यक्रमों के लम्बा कर देने मात्र से ही समस्या हल नहीं होती।

इतना विचार करने के बाद प्रश्न यह उठता है कि राष्ट्र निर्माण के इस सशक्त कार्यक्रम को किस प्रकार लागू किया जाये।

1. **सामान्य प्रवाह**—पहले वर्षों में सोलह विषयों का पठन छात्रों के लिये अमनोवैज्ञानिक है। वैयक्तिक भिन्नता पर ध्यान दिये बिना साहित्य, विज्ञान, गणित आदि विषयों को इस रूप से बढ़ाया जाना छात्रों के विकास पर प्रहार करना है। अत: उत्तर प्रदेश के माध्यमिक पाठ्यक्रम के स्वरूप को अपनाया जाये। पाँच विषयों में गहन शिक्षा दी जाये। इनमें अनेक उपवर्ग हैं जिनमें अनिवार्य विषय (भाषा, गणित) के साथ वैकल्पिक समूह न लिया जाये। कक्षा 8 तक सामान्य प्रवाह चले।
2. **शिक्षण का माध्यम**—शिक्षण का माध्यम राष्ट्रीय भाषा हो। एक निर्धारित स्तर तक मातृभाषा पढ़ाई जाये। स्पष्ट है अंग्रेजी के माध्यम से हम एक और विश्व से तो जुड़ जाते हैं परन्तु अपने ही देश में पृथक् हो जाते हैं।
3. **अपनी भाषा**—एन्सर्ट ने पाठ्य पुस्तकें अंग्रेजी में तैयार करके अपनी मूल प्रवृत्ति को प्रस्तुत कर दिया है। अच्छा होता ये पुस्तकें राष्ट्रभाषा तथा मातृभाषा में तैयार होती है।
4. **कार्यानुभव**—कार्यानुभव को कक्षा की सीमाओं में बाँधने से शिक्षा के उत्पादन को साथ जोड़ने की मूल भावना समाप्त हो जाती है। क्या यह नहीं अच्छा होता—यदि समाज तथा समुदाय के साथ सम्पर्क करके वास्तविक परिस्थितियों में से कार्यानुभव दिया जाता।

माध्यमिक शिक्षा का मूल तत्व है इसका प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा के मध्य सेतु बनाना। यदि कोई व्यक्ति उच्च शिक्षा ग्रहण करना चाहता है तो उसे माध्यमिक शिक्षा के पुल से गुजरना पड़ता है। मूल बात यह है कि यदि हम माध्यमिक शिक्षा को सेतु मानते हैं तो प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा, एक नदी के दो किनारे हुए। बीच की नदी या खाई को पार करने के लिये सेतु चाहिये; पर यह खाई ज्यों की त्यों रहती है। माध्यमिक शिक्षा सेतु न बनकर शिक्षा के सतत् प्रवाह है, इस प्रवाह में से जो जितना चाहे, ज्ञान तथा कौशल प्राप्त कर सकता है।

माध्यमिक शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में एकरूपता लाने की आवश्यकता है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद तथा प्रदेश की शिक्षा परिषदों में पाठ्यक्रम तथा मूल्यांकन में एकसमानता होनी चाहिए। सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न है—इसके उद्देश्य का। क्या हम छात्र को नौकरी के लिये तैयार करते हैं या जीवन की तैयारी कराते हैं? शारीरिक श्रम की उपेक्षा करके माध्यमिक शिक्षा न तो राष्ट्र के लिये उपयोगी है और न व्यक्ति के लिये।

माध्यमिक शिक्षा की राष्ट्र के लिये उपादेयता नई तालीम के आदर्शों का पालन करने से हो सकती है। इसका तथा कर्म का समन्वय ही माध्यमिक शिक्षा की सफलता का आधार है।

नोट्स आम धारणा है कि जिस राज्य की शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है, उसी का स्तर ऊँचा है। यही कारण है कि प्रतियोगी परीक्षाओं में **'एडाप्टेड मदर लैंग्वेज'** के प्यार तथा दुलार की छांह में विकसित हुए पुत्र तथाकथित सफलता की सीढ़ी पर चढ़ते चले जाते हैं और माँ का दूध पीकर बढ़ने वाले जन-जीवन की सामान्य धारा में अपना अस्तित्व प्रवाहित कर देते हैं—गुमनाम और गुमसुम।

माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Secondary Education)

मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य की चर्चा में कहा है कि नागरिकों की आदतों, प्रवृत्तियों तथा चारित्रिक गुणों के विकास में शिक्षा को योगदान करना चाहिये जिससे कि वे प्रजातांत्रिक नागरिकता के उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सके एवं उन ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का विरोध कर सके जो व्यापक राष्ट्रीय तथा धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास में बाधक हो। आयोग ने शिक्षा द्वारा राष्ट्रीयता, राष्ट्र की उत्पादन शक्ति में वृद्धि, चारित्रिक गुणों के विकास तथा धर्मनिरपेक्षता की प्रगति आदि की आवश्यकता को ध्यान में रखकर माध्यमिक शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्यों को बताया–

(1) व्यावसायिक कुशलता का विकास।

(2) नेतृत्व की योग्यता का विकास।

(3) जनतांत्रिक नागरिकता का विकास।

(4) विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास।

1. व्यावसायिक कुशलता का विकास– आयोग के अनुसार, माध्यमिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में व्यावसायिक कुशलता का विकास होना चाहिए। इसलिए इस शिक्षा से सम्बन्धित पाठ्यक्रम के अन्तर्गत व्यावसायिक तथा औद्योगिक शिक्षा से सम्बन्धित विशेष विषयों का समावेश किया जाना अति आवश्यक है। इस प्रकार की व्यवस्था से देश तथा छात्र दोनों का ही लाभ होगा। छात्रों की दृष्टि से यह व्यवस्था इसलिए लाभदायक रहेगी क्योंकि उन्हें अपनी अभिरुचि से सम्बन्धित व्यावसायिक विषयों की शिक्षा तथा प्रशिक्षण पहले ही प्राप्त हो जायेगा एवं जीवन में उन्हें रोजगार के लिए घूमना नहीं पड़ेगा। दूसरी ओर राष्ट्र को अपने औद्योगिक तथा व्यावसायिक विकास के लिए योग्य तथा प्रशिक्षित व्यक्ति मिल जायेंगे। इसके लिए यह जरूरी होगा कि विद्यार्थियों में श्रम के प्रति सम्मान की भावना का विकास किया जाये तथा उनमें परिश्रम की भावना विकसित की जाये। शिक्षा को उत्पादन से जोड़ा जाये तथा उसे एक पूँजी के रूप में स्वीकार किया जाये तथा इसके साथ-साथ व्यावसायिक तथा औद्योगिक प्रशिक्षण से सम्बन्धित सुविधायें भी माध्यमिक विद्यालयों को उपलब्ध करायी जानी चाहिए।

2. नेतृत्व योग्यता का विकास–माध्यमिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य नेतृत्व योग्यता का विकास होना चाहिये। विशेष रूप से माध्यमिक स्तर पर, विद्यार्थियों में इस योग्यता का विकास किया जाना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि माध्यमिक स्तर की शिक्षा को प्राप्त करने के पश्चात् देश के अनेक विद्यार्थियों का व्यावसायिक जीवन प्रारम्भ हो जाता है, इसके लिए स्कूलों में इस प्रकार के अवसरों का सृजन किया जाना चाहिये जो नेतृत्व योग्यता का विकास करने में सहायक हो। वस्तुत: किसी भी प्रजातन्त्रात्मक देश की सफलता के लिए नेतृत्व की योग्यता का विकास अत्यन्त आवश्यक है। नेतृत्व प्रदान कर सकें एवं देश को विकास के पथ पर आगे बढ़ा सकें।

3. जनतन्त्रात्मक नागरिकता का विकास– भारतवर्ष एक लोकतन्त्रीय शासन पद्धति द्वारा संचालित होने वाला देश है। भारत देश के अस्तित्व को कायम रखने के लिय यह जरूरी है कि देश के लोगों में आदर्श नागरिकता से सम्बन्धित गुणों, मनोवृत्तियों तथा योग्यताओं का विकास किया जाये। इस दृष्टि से इस देश के लोगों में प्रेम, देश-प्रेम, सौहार्द, अनुशासन, सहयोग तथा सहिष्णुता आदि की भावनाओं का विकास करना माध्यमिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। इन सबके अभाव में विद्यार्थियों के बौद्धिक पक्ष का सम्पूर्ण विकास करना असम्भव है।

नोट

भिन्न-भिन्न प्रकार के बौद्धिक, सामाजिक, योग्यताओं नैतिक गुणों, कौशलों के विकास आदि के साथ-साथ विद्यार्थियों को इस योग्य बनाया जाना भी अत्यन्त आवश्यक है कि वे देश की सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं के प्रति सचेत रहें तथा उनको अच्छी तरह से समझ सकें एवं उनके समाधान में अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुसार योगदान दे सकें। भिन्न-भिन्न प्रकरणों पर प्रायोजित तरीके से चिन्तन करना, विचारों को सही ढंग से अभिव्यक्त करना एवं नये-नये विचारों को ग्रहण करना आदि योग्यतायें भी प्रजातन्त्रीय नागरिकता का विकास करने की दृष्टि से आवश्यक हैं।

4. विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास– माध्यमिक शिक्षा के इस उद्देश्य के अन्तर्गत, विद्यार्थियों की रचनात्मक शक्तियों का विकास किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। उनको अपनी संस्कृति से भी अवगत कराया जाना आवश्यक है जिससे कि वे अपनी संस्कृति के योग्य अंशों को आत्मसात् कर सकें एवं उनके अविरल विकास में अपना पूरा-पूरा योगदान दे सकें। इन सबके अलावा यह भी जरूरी है कि विद्यार्थियों को अपनी रुचियों का विकास करने तथा मनोरंजन का अवसर प्राप्त करने की परिस्थितियों का भी सृजन किया जाये। अवकाश के समय के सदुपयोग करने की वांछित योग्यता की प्रगति तथा संवेगात्मक सन्तुलन को बनाये रखने की योग्यता का विकास भी छात्रों के व्यक्तित्व के विकास में सहायक सिद्ध होगा। इसलिए माध्यमिक शिक्षा का संगठन, इस प्रकार से किया जाना चाहिये जिससे उनकी मानसिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, कलात्मक तथा भावात्मक योग्यताओं का उचित विकास हो सके।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. कोठारी कमीशन ने सम्पूर्ण शिक्षा को ········ में बाँटा है।
2. 10 + 2 + 3 प्रणाली के बीज सन् 1882 के ········ के प्रतिवेदन में पाये जाते हैं।
3. माध्यमिक शिक्षा की नई तालीम के ········ की उपादेयता राष्ट्र के लिए हो सकती है।
4. माध्यमिक विद्यालयों को ········ प्रशिक्षण से सम्बंधित सुविधाएँ भी उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
5. माध्यमिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य ········ का विकास है।

20.3 सारांश (Summary)

- माध्यमिक शिक्षा का वर्तमान रूप अपने पीछे सौ वर्ष से अधिक की विकास परम्परा के लिये हुये है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं अन्य यूरोपीय व्यावसायिक कम्पनियों के साथ धर्म-प्रचार के लिये मिशनरी आये और उन्होंने विदेशियों के बालकों की शिक्षा की व्यवस्था की। 1830 में कम्पनी के डायरेक्टर्स ने अंग्रेजी की शिक्षा देने का निश्चय किया।
- 1882 ई. के हन्टर-कमीशन ने माध्यमिक विद्यालयों के लिये विभिन्न पाठ्यक्रम प्रस्तावित किये। आयोग ने सुझाव दिया– "माध्यमिक विद्यालयों के लिये कक्षाओं में दो भाग हों। एक तो मैट्रिक की परीक्षा की तैयारी कराये और दूसरा युवकों को व्यापारिक तथा असाहित्यिक कार्यों के लिये तैयार करें।"
- विश्वविद्यालय आयोग ने कहा कि माध्यमिक शिक्षा ही विश्वविद्यालय की शिक्षा का आधार है।
- **शिक्षा आयोग (1964-66)–डॉ. दौलतसिंह कोठारी** की अध्यक्षता में गठित इस आयोग ने सारे देश में माध्यमिक शिक्षा की समरूपता की सिफारिश की। विभिन्न पाठ्यक्रमों, विषयों तथा डाक द्वारा शिक्षा का प्रावधान प्रस्तुत किया।
- माध्यमिक शिक्षा आयोग के समक्ष माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन के समय तीन प्रश्न प्रमुख थे–(1) माध्यमिक शिक्षा किस आयु समूह के लिये हो? (2) विद्यमान व्यवस्था में क्या परिवर्तन हो? (3) परिवर्तन से अप्रभावित विद्यालयों में कुशलता का विकास किस प्रकार हो?

नोट

- **कोठारी कमीशन** ने शिक्षा को जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया के रूप में माना है और माध्यमिक शिक्षा-आयोग शिक्षा के विभिन्न स्तरों को स्वतन्त्र इकाई मानता है। **माध्यमिक शिक्षा आयोग** के अनुसार–"हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि माध्यमिक स्तर स्वयं में एक पूर्ण इकाई है, वह अवस्था की तैयारी नहीं है, इस अवस्था के अन्त में यदि छात्र चाहे तो वह जीवन के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के लिए किसी लाभदायक व्यवसाय को अपना सकता है।"
- **शिक्षा आयोग (1964-66)** ने अपनी सर्वांगीण शिक्षा दिग्दर्शिका के अन्तर्गत जिस आधारभूत तथ्य को स्वीकार किया है–वह है सम्पूर्ण देश में एक समान शिक्षा प्रणाली। विविधताओं के इस देश में शिक्षा विविधता की प्रक्रिया में प्रवाहित होती है और यह कहना कठिन हो गया है कि किस प्रदेश की शिक्षा का स्तर ऊँचा है अथवा नीचा है।
- 10 + 2 + 3 प्रणाली के बीज सन् 1882 के हन्टर कमीशन के प्रतिवेदन में पाये जाते हैं। हन्टर कमीशन ने कहा था, माध्यमिक शिक्षा के निर्धारित स्तर के बाद शिक्षा का प्रवाह दो स्तर में विभक्त हो जाना चाहिये। **एक,** जो विश्वविद्यालय शिक्षा के लिये प्रवेश द्वार हो और **दूसरा,** जो जनता को अधिक व्यावहारिक, व्यावसायिक या असाहित्यिक शिक्षा के क्षेत्र की ओर उन्मुख हो। दुर्भाग्य था देश का–सरकार और जनता; दोनों ही इस परामर्श को पचा न पाये।
- माध्यमिक शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में एकरूपता लाने की आवश्यकता है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद तथा प्रदेश की शिक्षा परिषदों में पाठ्यक्रम तथा मूल्यांकन में एक समता होनी चाहिए। सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न है–इसके उद्देश्य का।
- माध्यमिक शिक्षा की राष्ट्र के लिये उपादेयता नयी तालीम के आदर्शों का पालन करने से हो सकती है। इसका तथा कर्म का समन्वय ही माध्यमिक शिक्षा की सफलता का आधार है।
- मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य की चर्चा में कहा है कि नागरिकों की आदतों, प्रवृत्तियों तथा चारित्रिक गुणों के विकास में शिक्षा को योगदान करना चाहिये जिससे कि वे प्रजातांत्रिक नागरिकता के उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सके एवं उन ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का विरोध कर सके जो व्यापक राष्ट्रीय तथा धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास में बाधक हो।
- माध्यमिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य नेतृत्व योग्यता का विकास होना चाहिये। विशेष रूप से माध्यमिक स्तर पर, विद्यार्थियों में इस योग्यता का विकास किया जाना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि माध्यमिक स्तर की शिक्षा को प्राप्त करने के पश्चात् देश के अनेक विद्यार्थियों का व्यावसायिक जीवन प्रारम्भ हो जाता है, इसके लिए स्कूलों में इस प्रकार के अवसरों का सृजन किया जाना चाहिये जो नेतृत्व योग्यता का विकास करने में सहायक हो।
- भारतवर्ष एक लोकतन्त्रीय शासन पद्धति द्वारा संचालित होने वाला देश है। भारत देश के अस्तित्व को कायम रखने के लिए यह जरूरी है कि देश के लोगों में आदर्श नागरिकता से सम्बन्धित गुणों, मनोवृत्तियों तथा योग्यताओं का विकास किया जाये।

20.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अविरल**–लगातार
- **पुनर्रचना**–पुन:निर्माण

20.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा के विकास पर एक निबंध लिखिए।
2. माध्यमिक शिक्षा को प्राथमिक तथा उच्च शिक्षण के मध्य सेतु क्यों कहा गया है?

नोट

3. माध्यमिक शिक्षा में कार्यानुभव की क्या स्थिति है?
4. स्वतंत्रता के पूर्व माध्यमिक शिक्षा की क्या व्यवस्था थी? विभिन्न आयोगों तथा समितियों ने इस विषय में क्या कहा है? संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.
1. असत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य
5. असत्य

2.
1. तीन स्तरों
2. हण्टर कमीशन
3. आदर्शों
4. व्यावसायिक एवं औद्योगिक
5. नेतृत्व योग्यता।

20.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–21: माध्यमिक शिक्षा की समस्याएँ (Problems of Secondary Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

21.1 माध्यमिक शिक्षा की समस्याएँ एवं उनका समाधान (Problems of Secondary Education and Their Remedies)

21.2 मूल्यांकन एवं परीक्षा प्रणाली (Examination and Evaluation System)

21.3 सारांश (Summary)

21.4 शब्दकोश (Keywords)

21.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

21.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं को जानने एवं उनके समाधान के उपायों की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त, माध्यमिक शिक्षा में सुधार करने हेतु विभिन्न आयोगों का गठन किया गया, जिन्होंने इस सम्बन्ध में अपने-अपने सुझावों को प्रस्तुत किया, लेकिन फिर भी विभिन्न समस्यायें माध्यमिक शिक्षा के विकास में बाधक बनी हुई हैं, जिनके कारण माध्यमिक शिक्षा दोषपूर्ण है।

21.1 माध्यमिक शिक्षा की समस्याएँ एवं उनका समाधान (Problems of Secondary Education and their Remedies)

समस्यायें एवं उनके समाधान के सुझाव निम्नलिखित हैं–

(1) उद्देश्यहीनता की समस्या–माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को शिक्षण के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी नहीं होती है और न ही इसके लिए वे कोई नियोजित प्रयत्न कर पाते हैं। इसी कारण वे बालकों में वांछनीय परिवर्तन करने में असफल रहते हैं। उद्देश्य न होने के कारण बालकों का भविष्य भी अन्धकारमय रहता है। उद्देश्यहीनता की समस्या के समाधान के लिए माध्यमिक स्तर की शिक्षा का उद्देश्य निश्चित किया जाये तथा शिक्षा को एक स्वतन्त्र इकाई बनाया जाये।

मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य सम्बन्धी निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये–

1. व्यावसायिक कुशलता में वृद्धि की जाये।

नोट

2. बालकों में नेतृत्व शक्ति का विकास किया जाये।
3. बालकों में लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास किया जाये।
4. बालकों के व्यक्तित्व का विकास किया जाये।

(2) शिक्षा की दोषपूर्ण नीति—ज्ञान को भली प्रकार से छात्रों तक पहुँचाने के लिए शिक्षा विधियाँ महत्वपूर्ण साधन हैं। परन्तु आज भी हमारे देश में अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों में परम्परागत शिक्षण विधियों का ही प्रयोग किया जाता है। नवीन शिक्षण विधियों से शिक्षक तथा छात्र दोनों ही अनभिज्ञ हैं।

शिक्षा की दोषपूर्ण नीति को समाप्त करने के लिए छात्र व शिक्षक को नवीन शिक्षण विधियों से परिचित कराया जाये तथा नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाये।

(3) अपर्याप्त पाठ्य-पुस्तकें—माध्यमिक स्तर पर प्रकाशित अधिकांशतः पाठ्य-पुस्तकें ऐसी हैं, जिनसे छात्र स्पष्ट जानकारी प्राप्त नहीं करते हैं। अवबोधनीय, सरल तथा स्पष्ट भाषा का इन पाठ्य-पुस्तकों में अभाव पाया जाता है। पाठ्य-वस्तु को वांछित रूप से न समझ पाने के कारण अधिकांश छात्र पाठ्य-वस्तु को रट लेते हैं। यदि रटे हुए प्रश्न परीक्षा में नहीं आते हैं तो वे अनुत्तीर्ण हो जाते हैं।

मुदालियर तथा कोठरी आयोग ने अपर्याप्त पाठ्य-पुस्तकों में सुधार करने के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये—

1. पाठ्य-पुस्तकें शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होनी चाहिये।
2. पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण छात्रों की बौद्धिक योग्यता तथा कक्षा की परिस्थिति के अनुसार किया जाये।
3. पाठ्य-पुस्तकों की भाषा सरल तथा स्पष्ट हो।
4. पाठ्य-पुस्तकों के चयन, निर्माण तथा प्रकाशन के लिए एक समिति का गठन किया जाये, जिसका सभापतित्व शिक्षा संचालक करे।

(4) व्यावसायीकरण की समस्या—औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप आज माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करना अत्यन्त आवश्यक है। कोठरी आयोग के अनुसार, "इस शिक्षा को विस्तृत पैमाने पर व्यावसायिक बनाया जाये तथा 1968 तक व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की विद्यार्थी संख्या का बीस प्रतिशत व उच्चतम माध्यमिक स्तर की समग्र विद्यार्थी स्तर की समग्र विद्यार्थी संख्या के पचास प्रतिशत कर दिया जाये।" परन्तु विभिन्न आयोगों द्वारा प्रस्तुत सुझावों के उपरान्त भी आज शिक्षा के व्यावसायीकरण में कोई सार्थक प्रयास नहीं हुए हैं।

व्यावसायीकरण की समस्या के समाधान के लिए माध्यमिक स्तर पर दो प्रकार की व्यवस्था की जाये—(1) सामान्य शिक्षा स्तर तथा (2) व्यावसायिक शिक्षा। इन दोनों स्तरों पर एक से तीन वर्ष तक व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाये। माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिए धनी व्यक्तियों से शिक्षा-कर लिया जाये। छात्रों को व्यावसायिक केन्द्रों में ले जाकर उन्हें व्यावसायिक ज्ञान प्रदान किया जाये तथा व्यावसायिक शिक्षा की प्राप्ति के पश्चात् उन्हें रोजगार दिलाने का हर सम्भव प्रयास किया जाये।

(5) अवांछित विद्यालयों की वृद्धि—भारत में सरकारी तथा गैर-सरकारी दोनों प्रकार के माध्यमिक विद्यालय हैं। शिक्षा विस्तार के साथ अनेक अवांछित विद्यालयों में भी वृद्धि हुई है। इन विद्यालयों में छात्रों से अधिक फीस ली जाती है। शिक्षकों से अधिक वेतन लिखवाकर उन्हें कम वेतन दिया जाता है।

अवांछित विद्यालयों की वृद्धि की समस्या का समाधान करने के लिए सरकार को निम्नलिखित कदम उठाने चाहिये।

(1) देश के सभी अवांछनीय विद्यालय बन्द कर दिये जायें।

(2) सरकार के द्वारा माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये, जिससे इन विद्यालयों के प्रबन्धक लाभ न उठा सकें।

(6) दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली—माध्यमिक स्तर की परीक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। यह परीक्षा प्रणाली छात्रों में अनुशासनहीनता को बढ़ावा देती है। अधिकांश छात्र नकल की ओर आकर्षित होते हैं तथा शिक्षक भी शिक्षण के प्रति लापरवाही दिखाते हैं। प्रश्न-पत्रों में लघु तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का अभाव रहता है।

नोट

दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली की समस्या के समाधान हेतु मुदालियर आयोग ने निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये–

(1) बाह्य परीक्षायें कम होनी चाहियें।

(2) बाह्य तथा आन्तरिक परीक्षाओं के कार्यों का मूल्यांकन अंकों के स्थान पर ग्रेडों द्वारा किया जाये।

(3) परीक्षा में केवल निबन्धात्मक प्रश्न ही नहीं पूछे जायें।

(4) विद्यालय में प्रत्येक छात्र का एक विद्यालय अभिलेख हो जिससे छात्र द्वारा अनेक क्षेत्रों में प्राप्त की गयी सफलताओं का वर्णन किया जाये।

(7) विस्तार की समस्या–हमारे देश में आज माध्यमिक विद्यालयों में छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। छात्रों की संख्या के अनुपात में विद्यालयों की संख्या कम है। इसी कारण एक-एक कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या 70 से अधिक होती जा रही है जिससे शिक्षक प्रत्येक छात्र पर ध्यान नहीं दे पाते हैं। माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास की दृष्टि से विस्तार की समस्या एक गम्भीर समस्या बनी हुई है।

विस्तार की समस्या के समाधान हेतु विद्यालय की संख्या में वृद्धि की जाये। प्रत्येक कक्षा में कम विद्यार्थी बैठाये जाये जिससे शिक्षक सभी विद्यार्थी पर ध्यान दे सकें।

(8) पाठ्यक्रम की समस्या–माध्यमिक स्तर की शिक्षा दोषपूर्ण है। समस्त विद्यार्थी निर्धारित और परम्परागत पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षा प्राप्त करते हैं। छात्रों को अपनी रुचि तथा मानसिक योग्यता के अनुसार विषय-चयन के अवसर प्राप्त नहीं होते हैं जिससे वे अभिवृत्तियों तथा मौलिक विचारों के अनुरूप शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

पाठ्यक्रम की समस्या के समाधान के लिए मुदालियर आयोग ने निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये–

(1) पाठ्यक्रम छात्रों को प्रेरित करने वाला होना चाहिये।

(2) पाठ्यक्रम छात्रों को विभिन्न योग्यताओं तथा क्षमताओं का विकास करने वाला होना चाहिये।

(3) पाठ्यक्रम लचीला होना चाहिये।

(4) पाठ्यक्रम के सम्पूर्ण विषयों में परस्पर सम्बन्ध होना चाहिये।

(5) छात्रों को उनकी रुचि के अनुसार विषयों के चयन का अवसर प्रदान किया जाना चाहिये।

(9) शिक्षकों की स्थिति–माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षण कार्य करने वाले अनेक शिक्षक आज भी अप्रशिक्षित हैं। इनमें से अधिकांश शिक्षकों की कार्य में रुचि नहीं होती और जिनकी रुचि होती है वे कम वेतन के कारण अपना कार्य निष्ठापूर्वक नहीं कर पाते हैं। इन सब बातों का प्रभाव विद्यार्थियों के शैक्षिक जीवन पर पड़ता है, फलस्वरूप उनका भविष्य अन्धकारपूर्ण हो जाता है।

इस समस्या के समाधान हेतु शिक्षकों को शिक्षण कार्य के लिए प्रशिक्षित किया जाये। शिक्षकों का वेतन बढ़ाया जाये जिससे उनकी इस व्यवसाय में रुचि उत्पन्न हो तथा वे अपना कार्य निष्ठापूर्वक कर सकें।

(10) सामुदायिक जीवन का अभाव–भारत के अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों में सामुदायिक जीवन का अभाव पाया जाता है, क्योंकि इन विद्यालयों में सामाजिक कार्यों का आयोजन नहीं किया जाता है। परिणामस्वरूप छात्रों में परस्पर प्रेम, सद्भाव और सहयोग की भावना का विकास नहीं हो पाता है और न ही उनमें सामुदायिक जीवन की भावना का विकास हो पाता है। ये विद्यालय छात्रों को उत्तम नागरिक बनाने तथा उनमें सुसंगठित सामुदायिक जीवन व्यतीत करने की भावना का विकास करने में असमर्थ हैं। परिणामस्वरूप इन विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् छात्र देश के कर्त्तव्यनिष्ठ नागरिक नहीं बन पाते हैं।

इस समस्या के समाधान के लिए विद्यालयों को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाया जाये। सरकार, शिक्षक, विद्यार्थी तथा जनता सभी मिलकर इस कार्य को करें तथा समस्त विद्यालयों को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाने के लिए अपना योगदान दें।

नोट

माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के प्रसार की समस्या के कारण

(1) **जनसंख्या के अनुपात में विद्यालयों की संख्या में वृद्धि न होना**—आज भारत में जिस तेजी से जनसंख्या बढ़ रही है उसके अनुपात में विद्यालयों की संख्या अत्यधिक कम है। यद्यपि विद्यालयों की संख्या बढ़कर 5.72 लाख हो गयी है, फिर भी यह जनसंख्या के अनुपात में बहुत कम है।

(2) **अनुचित शैक्षिक व्यवस्था**—आज भारत में शिक्षा की व्यवस्था भी ठीक प्रकार से नहीं की जा रही है। अनुभव व ज्ञान के अभाव में विद्यालयों की समुचित व्यवस्था इनके द्वारा न कर पाने से विद्यालयों का स्तर दिन-प्रतिदिन गिरता जा रहा है।

(3) **शिक्षकों का असन्तुष्ट होना**—शिक्षा के प्रसार की समस्या का सबसे मुख्य कारण है—शिक्षकों का शिक्षण कार्य से असन्तुष्ट होना क्योंकि भारत सरकार शिक्षकों को समाज के अन्य वर्गों के समकक्ष सुविधा, सम्मान तथा प्रतिष्ठा देने की तरफ कोई ध्यान नहीं दे रही है। आज अन्य वर्गों के समान मिलने वाली सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए शिक्षकों को आन्दोलन करना पड़ता है। इन आन्दोलनों के परिणामस्वरूप शिक्षकों के असन्तोष में वृद्धि होती है।

(4) **कर्मचारियों में कार्य के प्रति निष्ठा का अभाव**—आज भारत में शिक्षा विभाग भी सरकार के अन्य विभागों की तरह भ्रष्ट आचरण का केन्द्र बन गया है। शिक्षा सेवा आयोगों से लेकर शिक्षा निदेशालयों, मण्डल तथा जिला स्तर के कार्यालयों तक में शिक्षकों के वेतन, उनकी शेष रकम, महँगाई भत्ते तथा रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए रिजर्व बैंक के गवर्नर का अनुशासन पत्र चाहिये। अत: ऐसी स्थिति में शिक्षा का प्रसार किस प्रकार सम्भव है।

(5) **नामांकन की संख्या में वृद्धि**—छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत माध्यमिक शिक्षा के परिणामस्वरूप प्रसार पर विशेष ध्यान दिया गया। प्रवेश तथा नामांकन को नियमित करने और छात्रों की व्यावसायीकरण की दिशा में मोड़ने के प्रयत्न किये गये, परन्तु जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में नामांकन की संख्या में वृद्धि नहीं हो रही है। इससे भी प्रसार की समस्या में वृद्धि हो रही है।

माध्यमिक शिक्षा के प्रसार की समस्या के समाधान हेतु सुझाव

आज माध्यमिक शिक्षा के प्रसार की समस्या एक गम्भीर समस्या बनी हुई है। इसलिए इस समस्या का समाधान अति शीघ्र किया जाना आवश्यक है। इस समस्या का समाधान निम्नलिखित सुझावों के द्वारा किया जा सकता है—

(1) शिक्षा प्रशासन में फैले भ्रष्टाचार को समाप्त किया जाये।
(2) शिक्षा को सार्वभौम बनाया जाये।
(3) पाठ्यक्रम को जीवन से सम्बन्धित बनाया जाये।
(4) नवीन निजी विद्यालयों की स्थापना पर रोक लगायी जाये।
(5) बालकों को शैक्षिक अवसरों की समानता प्रदान की जाये।
(6) शिक्षकों को प्रशिक्षित करने की समुचित व्यवस्था की जाये।
(7) विद्यालयों का समय-समय पर निरीक्षण तथा पर्यवेक्षण किया जाये।
(8) शिक्षा प्रशासन के सभी स्तरों से भ्रष्टाचार का निवारण किया जाये।
(9) विद्यालय प्रबन्ध में शिक्षकों की भागीदारी हो।
(10) संचार तकनीक का प्रयोग किया जाये।

> *क्या आप जानते हैं* भारत में 80% शिक्षा की व्यवस्था का संचालन निजी तन्त्र कर रहा है।

नोट

21.2 मूल्यांकन एवं परीक्षा प्रणाली (Examination and Evaluation System)

माध्यमिक स्तर पर परीक्षाओं का आयोजन मान्यता प्राप्त संस्थाओं या शिक्षा परिषद् द्वारा किया जाता है। परीक्षाओं का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों के विकास का सही-सही मूल्यांकन करना होता है। इस सन्दर्भ में माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार–"परीक्षा न केवल शिक्षा के प्रकरण को ही प्रभावित करती है वरन् वास्तव में वह शिक्षा के सम्पूर्ण अधिगम को प्रभावित करती है।"

प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दोष–भारत की प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दोष निम्न प्रकार हैं–

(1) विद्यार्थी कुन्जियों तथा गाइडों पर अधिक निर्भर रहता है। उसे प्रश्नों के उत्तर रटने तथा निबन्धात्मक शैली में उत्तर देने में अधिक कुशलता दिखानी पड़ती है।

(2) शिक्षक की सफलता इस बात पर आँकी जाती है कि वह अधिक से अधिक अपने कितने छात्रों को उत्तीर्ण करा सकता है।

(3) छात्रों के अभिभावकों का भी यही दृष्टिकोण रहता है कि उनके बच्चे परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् उचित नौकरी प्राप्त कर लें तथा नौकरी देने वाले भी प्रमाण-पत्र के आधार पर ही व्यक्ति को नौकरी देते हैं।

(4) शिक्षक भी छात्रों में गुणों का विकास कराने के बजाय परीक्षा में छात्र को पास करना ही अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

नोट्स भारत की प्रचलित शिक्षा प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह प्रणाली विद्यार्थियों की योग्यता का सही-सही मूल्यांकन करने में पूर्ण रूप से सक्षम नहीं है।

परीक्षा का महत्व–बाह्य परीक्षा विद्यार्थी तथा शिक्षक दोनों के लिए प्रेरणादायक होती है। बाह्य परीक्षाओं का महत्व निम्नलिखित हैं–

(1) स्वतन्त्र रूप से अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करती है।

(2) भाषा शैली तथा लेखन शक्ति के विकास में सहायक होती है।

(3) परीक्षा अध्यापकों को सार्वजनिक स्तर प्रदान करती है।

(4) परीक्षा प्रदत्त ज्ञान को प्रयुक्त करने का अवसर प्रदान करती है।

(5) परीक्षा के द्वारा मानसिक योग्यताओं का मूल्यांकन किया जा सकता है।

(6) स्पष्ट रूप से उद्देश्य प्राप्ति के लिए शिक्षण का सहारा लेती है।

(7) परीक्षा उत्तीर्ण करने पर छात्र को समाज से मान्यता प्राप्त हो जाती है।

(8) छात्र का सही मूल्यांकन बाह्य तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षायें करती हैं।

मुदालियर आयोग के सुझाव–मुदालियर आयोग ने परीक्षा तथा मूल्यांकन प्रणाली में सुधार करने के लिए निम्न सुझाव दिये–

(1) विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास ज्ञात करने के लिये एवं उसके भविष्य को निर्धारित करने के लिए प्रत्येक विद्यार्थी के विद्यालय रिकार्ड को उचित ढंग से रखा जाना चाहिये। उसमें समय-समय पर विद्यार्थी द्वारा किये गये कार्य तथा उपलब्धियों को दर्शाया जाना चाहिये।

(2) माध्यमिक परीक्षायें विद्यार्थियों को दिये जाने वाले प्रमाण-पत्र में भिन्न-भिन्न विषयों को सार्वजनिक परीक्षा के परिणामों के अलावा उन विषयों के विद्यालय परीक्षाफलों जो सार्वजनिक परीक्षा में शामिल नहीं हैं तथा विद्यालय रिकार्ड के सारांश का उल्लेख होना चाहिये।

नोट

(3) बाह्य परीक्षाओं की संख्या में कमी की जानी चाहिये तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षायें आरम्भ हो जानी चाहियें। प्रश्नों के प्रारूप में परिवर्तन तथा निबन्धात्मक परीक्षाओं की व्यक्तिनिष्ठता को कम किया जाना चाहिए।

(4) छात्रों के अन्तिम मूल्यांकन में आन्तरिक परीक्षाओं तथा विद्यालय रिकार्ड को समुचित महत्व दिया जाना चाहिये।

(5) माध्यमिक विद्यालय परीक्षाओं की समाप्ति पर केवल एक ही सार्वजनिक परीक्षा आयोजित होनी चाहिये।

(6) बाह्य तथा आन्तरिक परीक्षाओं में विद्यार्थियों के कार्यों का मूल्यांकन और श्रेष्ठीकरण करते समय तथा विद्यालय रिकार्ड बनाते समय संख्यात्मक अंकन प्रणाली के स्थान पर सांकेतिक अंकन प्रणाली अपनाई जानी चाहिये।

कोठारी आयोग के सुझाव—कोठारी आयोग के अनुसार—"मूल्यांकन एक सतत् रूप से चलने वाली प्रक्रिया है। यह शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग है। इससे विद्यार्थी की अध्ययन की आदतों तथा शिक्षक की शिक्षण पद्धति पर गहरा प्रभाव पड़ता है।"

परीक्षा तथा मूल्यांकन में सुधार के लिए कोठारी आयोग द्वारा अग्रलिखित सुझाव दिये गये हैं—

(1) संचित अभिलेखों को विद्यालय में सुरक्षित रखा जाये।

(2) प्रमाण-पत्रों के साथ-साथ स्कूली परीक्षाओं तथा कार्यों का अनुभव भी संचयी अभिलेखों के साथ बोर्ड द्वारा विद्यार्थियों को दिया जाये।

(3) मूल्यांकन की नई-नई विश्वसनीय तथा वैध एप्रोच लिखित परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाये।

(4) परीक्षा के अन्त में दिये जाने वाले प्रमाण-पत्रों में उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण न लिखा जाये।

(5) विद्यार्थियों के विकास के लिए उन पहलुओं पर भी ध्यान आवश्यक है जिनको लिखित परीक्षाओं के माध्यम से नहीं मापा जा सकता।

(6) प्राथमिक जाँच करते समय भिन्न-भिन्न रीतियाँ निरीक्षण, अध्यापक निर्मित परीक्षण, मौखिक परीक्षा, मनोवृत्ति, रुचि, योग्यता आदि के परीक्षण की प्रभावीकृत जाँच का प्रयोग किया जाये।

टास्क परीक्षा प्रणाली में सुधार के लिए मुदालियार आयोग ने क्या सुझाव दिये?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

मुदालियार आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य सम्बंधी निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये—

1. ········ कुशलता में वृद्धि की जाये।
2. बालकों की ········ का विकास किया जाये।
3. बालकों में ········ नागरिकता का विकास किया जाये।
4. बालकों के ········ का विकास किया जाये।
5. परीक्षा में केवल ········ प्रश्न ही न पूछे जायें।

21.3 सारांश (Summary)

- माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को शिक्षण के सम्बन्ध में स्पष्ट जानकारी नहीं होती है और न ही इसके लिए वे कोई नियोजित प्रयत्न कर पाते हैं। इसी कारण वे बालकों में वांछनीय परिवर्तन करने में असफल रहते हैं। उद्देश्य न होने के कारण बालकों का भविष्य भी अन्धकारमय रहता है। उद्देश्यहीनता की समस्या के समाधान के लिए माध्यमिक स्तर की शिक्षा का उद्देश्य निश्चित किया जाये तथा शिक्षा को एक स्वतन्त्र इकाई बनाया जाये।

नोट

- ज्ञान को भली प्रकार से छात्रों तक पहुँचाने के लिए शिक्षा विधियाँ महत्वपूर्ण साधन हैं। परन्तु आज भी हमारे देश में अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों में परम्परागत शिक्षण विधियों का ही प्रयोग किया जाता हैं। नवीन शिक्षण विधियों से शिक्षक तथा छात्र दोनों ही अनभिज्ञ हैं।
- शिक्षा की दोषपूर्ण नीति को समाप्त करने के लिए छात्र व शिक्षक को नवीन शिक्षण विधियों से परिचित कराया जाये तथा नवीन शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाये।
- औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप आज माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करना अत्यन्त आवश्यक है।
- व्यावसायीकरण की समस्या के समाधान के लिए माध्यमिक स्तर पर दो प्रकार की व्यवस्था की जाये–(1) सामान्य शिक्षा स्तर तथा (2) व्यावसायिक शिक्षा। इन दोनों स्तरों पर एक से तीन वर्ष तक व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाये।
- भारत में सरकारी तथा गैर-सरकारी दोनों प्रकार के माध्यमिक विद्यालय हैं। शिक्षा विस्तार के साथ अनेक अवांछित विद्यालयों में वृद्धि हुई है।
- देश के सभी अवांछनीय विद्यालय बन्द कर दिये जायें।
- सरकार के द्वारा माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाये, जिससे इन विद्यालयों के प्रबन्धक लाभ न उठा सकें।
- माध्यमिक स्तर की परीक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। यह परीक्षा प्रणाली छात्रों में अनुशासनहीनता को बढ़ावा देती है। अधिकांश छात्र नकल की ओर आकर्षित होते हैं तथा शिक्षक भी शिक्षण के प्रति लापरवाही दिखाते हैं।
- बाह्य परीक्षायें कम होनी चाहियें।
- बाह्य तथा आन्तरिक परीक्षाओं के कार्यों का मूल्यांकन अंकों के स्थान पर ग्रेडों द्वारा किया जाये।
- परीक्षा में केवल निबन्धात्मक प्रश्न ही नहीं पूछे जायें।
- माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षण कार्य करने वाले अनेक शिक्षक आज भी अप्रशिक्षित हैं। इनमें से अधिकांश शिक्षकों को शिक्षण कार्य में रुचि नहीं होती और जिनकी रुचि होती है वे कम वेतन के कारण अपना कार्य निष्ठापूर्वक नहीं कर पाते हैं।
- भारत के अधिकांश माध्यमिक विद्यालयों में सामुदायिक जीवन का अभाव पाया जाता है, क्योंकि इन विद्यालयों में सामाजिक कार्यों का आयोजन नहीं किया जाता है। परिणामस्वरूप छात्रों में परस्पर प्रेम, सद्भाव और सहयोग की भावना का विकास नहीं हो पाता है और न ही उनमें सामुदायिक जीवन की भावना का विकास हो पाता है।

21.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अनभिज्ञ–** जानकारी न होना।
- **कर्त्तव्यनिष्ठ–** कर्त्तव्य का पालन करने वाला।

21.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा की समस्याएँ क्या हैं? वर्णन कीजिए।
2. माध्यमिक शिक्षा के प्रसार की समस्या के कारणों पर प्रकाश डालिए।
3. माध्यमिक शिक्षा की समस्या के समाधान के उपायों की व्याख्या कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

नोट

1. व्यावसायिक 2. नेतृत्व शक्ति 3. लोकतांत्रिक
4. व्यक्तित्व 5. निबंधात्मक

21.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–22: माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण (Vocationalisation of Secondary Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

22.1 माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण एवं उद्देश्य (Aims and Vocationalisation of Secondary Education)

22.2 आचार्य राममूर्ति के सुझाव एवं वर्तमान स्थिति (Suggetions of Acharya Rammurti and Current Status)

22.3 सारांश (Summary)

22.4 शब्दकोश (Keywords)

22.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

22.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण और उसके उद्देश्यों को समझने एवं व्याख्या करने में;
- माध्यमिक शिक्षा पर आचार्य राममूर्ति के सुझावों का विश्लेषण करने और वर्तमान स्थिति से अवगत होने में।

प्रस्तावना (Introduction)

देश में जिस रफ्तार से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है, उस रफ्तार से नौकरियाँ तथा रोज़गार नहीं बढ़ रहे हैं। फलत: स्वरोजगार की तरफ देश के किशोर तथा युवाशक्ति को ले जाना आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा पर यह आरोप भी लगता रहा है कि यह केवल बौद्धिक बनाती है। रोज़गार के लिये बालकों को तैयार नहीं करती। इसलिये माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर सर्वप्रथम कोठारी शिक्षा आयोग ने विचार किया। बाद में शिक्षा नीति में भी व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की गई और पंचवर्षीय योजनाओं में बजट का प्रावधान किया गया।

यह सर्वविदित है कि आज की शिक्षा पर यह स्पष्ट आरोप है कि 'जो इसे प्राप्त करता है, वह बेकार हो जाता है जो इसे प्राप्त नहीं करता, वह निरक्षर रह जाता है।' इतने बड़े और सटीक आरोप का निराकरण माध्यमिक स्तर पर ऐसी व्यवस्था करना है जिससे बालक में किसी भी व्यवसाय को करने, चलाने की क्षमतायें विकसित हो जायें। सच तो यह है कि शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्यों का निर्धारण करते समय यह कहा गया–'भारत के भाग्य का निर्माण इस समय उसकी कक्षाओं में हो रहा है। हमारा विश्वास है कि यह कोई चमत्कारोक्ति नहीं है। विज्ञान तथा शिल्प विज्ञान पर आधारित इस दुनिया में शिक्षा ही लोगों की खुशहाली, कल्याण और सुरक्षा के स्तर का निर्धारण करती है। हमारे स्कूलों और कॉलेजों से निकलने वाले विद्यार्थियों की योग्यता और संख्या पर ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के उस महत्वपूर्ण कार्य की सफलता निर्भर करेगी जिसका प्रमुख लक्ष्य हमारे रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठाना है।'[1]

नोट

22.1 माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण एवं उद्देश्य (Aims and Vocationalisation of Secondary Education)

शिक्षा का व्यवसायीकरण वास्तव में राष्ट्रीय आवश्यकता है। राष्ट्र के विकास के लिये शिक्षा के माध्यम से दृढ़ संकल्प तथा शक्ति के साथ जनशक्ति को विकसित करना आवश्यक कार्यक्रम है। व्यवसायीकरण के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. **राष्ट्र का योजनाबद्ध विकास**–स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् देश के कर्णधारों के समक्ष समस्या थी राष्ट्र विकास की। राष्ट्र का विकास राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ होने पर ही निर्भर करता है, राष्ट्र विकास की गति को तेज करने के लिये शिक्षा की नीति को दृढ़, कल्याणपूर्ण करना तथा वर्तमान स्थिति में सुधार करना आवश्यक है।

2. **सभी को रोजगार**–मनुष्य का एकमात्र लक्ष्य स्वयं में उन क्षमताओं को विकसित करना है जो उसे, उसके जीवन निर्वाह के लिये आवश्यक है। इसलिये शिक्षा ऐसी हो जो बालक को सामान्य इच्छा, क्षमताओं तथा वैयक्तिक गुणों के विकास के साथ आर्थिक विकास तथा रोजगार से परिपूर्ण कर सके। देश की गरीबी, इसलिये अभिशाप है कि उन्हें उनके श्रम का उचित मूल्य नहीं मिलता। कुछ लोगों के एकाधिकार के कारण आर्थिक विषमता से बेरोजगारी बढ़ती है। शिक्षा ऐसी विषमताओं को दूर करने का प्रयास करती है।

3. **सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण**–शिक्षा के माध्यम से व्यावसायीकरण की प्रक्रिया, समाज तथा राष्ट्र में एकीकरण को जन्म देती है। भारतीय समाज में स्तरीकरण (Stratification) ने उर्ध्व गतिशीलता को कम किया है। गरीब-अमीर, शिक्षित-अशिक्षित में अन्तर अधिक होता जा रहा है। इसका कारण है– (*i*) शिक्षित व्यक्ति अपनी संस्कृति से दूर हो रहे हैं। (*ii*) अलोकतांत्रिक जाति व्यवस्था ने लोकतंत्र को भयावह स्थिति में पहुँचाया है। (*iii*) धर्म ने भेदभाव पैदा किया है। शिक्षा के व्यावसायीकरण के द्वारा एकीकृत तथा समतापूर्ण समाज की रचना की जा सकती है।

4. **राजनीतिक विकास**–जब अर्थव्यवस्था ठीक होती है तो व्यक्ति में विवेक उत्पन्न होता है। अपने अधिकार तथा कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता उत्पन्न होती है। आर्थिक मजबूती (*i*) लोकतंत्र को मजबूत बनाती है। (*ii*) स्वतंत्रता की रक्षा तथा (*iii*) जनमानस में जागृति उत्पन्न करती है। विश्व में औद्योगिक प्रगति तथा तकनीकी विकास के कारण चुनौती का सामना करना पड़ रहा है, जब देश समुन्नत होते हैं तो समान स्तर पर राजनीतिक बदलाव होते हैं।

5. **संसाधनों का विकास**–माध्यमिक स्तर पर बालक में चेतना विकसित होने लगती है। इस स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के कारण संसाधनों का विकास होता है। भौतिक संसाधनों के विकास के अन्तर्गत उत्पादन, विपणन आदि आते हैं। मानव संसाधन का विकास शिक्षा के द्वारा होता है। लोगों के ज्ञान, कौशल, हित तथा मूल्यों में परिवर्तन के कारण उनका विकास होता है। **राबर्ट हीलब्रोनर** ने इस प्रक्रिया को नये तरीकों की शिक्षा देना बतलाया है। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है–"बड़े पैमाने पर मानव में परिवर्तन और अधिक आर्थिक विस्तार के लिये अनिवार्य पूंजी साधन से अन्तर्भाग की केवल पूर्ति से ही परम्पराओं से जकड़ा कोई भी समाज आधुनिक समाज के रूप में परिवर्तित नहीं हो सकेगा। इस रूपान्तर के लिये व्यापक सामाजिक काया पलट से कम कोई भी चीज पर्याप्त नहीं होगी। आदतों में आमूल परिवर्तन, समय, परिश्रम, धन और कार्य सम्बन्धी मूल्यों का परिवर्तनपूर्ण अनुस्थापन तथा स्वयं दैनिक जीवन की बनावट के ताने-बाने को मिटाना और फिर से बनाना भी आवश्यक होगा।"

6. **शिक्षा को उत्पादकता के साथ जोड़ना**–व्यावसायीकरण के माध्यम से शिक्षा को उत्पादन के साथ जोड़ना आवश्यक है। इससे शिक्षा का विस्तार होगा। शिक्षा के साथ उत्पादन जोड़ने के लिये (*i*) शिक्षा और संस्कृति के मूल अंग के रूप में विज्ञान, (*ii*) सामान्य शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में कार्य-अनुभव, (*iii*) उद्योग, कृषि, व्यापार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शिक्षा का व्यावसायीकरण, (*iv*) उच्च स्तर पर कृषि, विज्ञान शिक्षा में अनुसंधान की जरूरत है।

नोट

नोट्स शिक्षा के माध्यम से व्यवसायीकरण की प्रक्रिया, समाज तथा राष्ट्र में एकीकरण को जन्म देती है।

माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण

युग की बदलती मान्यताओं के बीच हमारा देश प्रगति की दौड़ में अन्य देशों की तुलना में सैकड़ों वर्ष पीछे है। हम चाहते हैं, हम उन्नत देशों के समकक्ष आ जायें, इस प्रक्रिया में हम जब तक उनके समकक्ष पहुँचेंगे, वे और भी आगे बढ़ चुकेंगे। इसका कारण है—हमारे ज्ञान का आधुनिक विज्ञान तथा तकनीकी के साथ सम्बन्ध नहीं रहा है। शिक्षा आयोग ने माध्यमिक ही नहीं, शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा के व्यावसायीकरण को प्रस्तावित किया है। आयोग ने व्यावसायीकरण का आधार रखा है—उत्पादन। इसीलिये शिक्षा तथा उत्पादन के आपसी सम्बन्धों पर विचार करके शिक्षा के पुनर्निर्माण की योजना का आधार इस प्रकार प्रस्तुत किया है—विज्ञान, शिक्षा एवं संस्कृति का आधार होना चाहिये। (2) सामान्य शिक्षा में 'कार्यानुभव' अभिन्न अंग के रूप में होना चाहिये। (3) उद्योग, कृषि तथा व्यापार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण होना चाहिये। (4) कृषि तथा सम्बन्धित विज्ञान पर विशेष बल देते हुए विश्वविद्यालय स्तर पर वैज्ञानिक तथा प्राविधिक शिक्षा का विकास करना चाहिये।

माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण क्यों?

माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करने के लिये आयोग ने उसके दोनों ही स्तरों निम्न माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक पर विस्तार से विचार किया है। शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिये जो कल्पना की थी, उसके अनुसार कक्षा 8 से 10 के 20 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त होनी चाहिये। इसी प्रकार कक्षा 11-12 में 50 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिये। शिक्षा आयोग ने यह स्वीकार किया है—"महत्वपूर्ण सुधारों में से एक यह है कि उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण कर दिया जाये एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में कुल छात्र संख्या का 50 प्रतिशत प्रवेश ले।" आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के दोनों स्तरों पर व्यावसायिक शिक्षा के सम्बन्ध में अपने विचार इस प्रकार दिये हैं—

1. निम्न माध्यमिक स्तर—

(*i*) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में प्राथमिक शिक्षा के पश्चात् के पाठ्यक्रम भी हैं। यदि इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश की आयु 14 वर्ष कर दी जाये तो प्राथमिक पाठशाला से निकलने के पश्चात् छात्रों की बहुत बड़ी संख्या इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेगी (यह आयु 16 वर्ष है और इसे घटाकर 15 वर्ष कर दिया गया है)।

(*ii*) वे छात्र जो कक्षा 7 या 8 के पश्चात् पढ़ना छोड़ देते हैं, वे पारिवारिक व्यवसाय में काम करते हैं, कुछ का विचार यह होता है कि वे लघु-स्तरीय उद्योग या व्यापार करेंगे। ऐसे लोगों के लिये अंशकालीन पाठ्यक्रमों की व्यवस्था होनी चाहिये जिससे वे योग्यता प्राप्त कर सकें एवं अपने कौशल का विकास कर सकें। **कोठारी आयोग** ने प्रस्ताव दिया है कि—"शिक्षा विभाग में अलग से एक अनुभाग की स्थापना की जाये, जो युवकों के सम्पर्क में रहे और उन्हें पूर्णकाल या अंशकाल के आधार पर सामान्य शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण का उचित अवसर प्रदान करे।"

(*iii*) ग्रामीण क्षेत्र के अधिकांश छात्र परिवार में खेतों में काम करते हैं। उन्हें भावी शिक्षा के साथ-साथ सामान्य शिक्षा एवं व्यावसायिक कुशलता का प्रशिक्षण प्राप्त करने के अवसर प्रदान किये जायें।

(*iv*) लड़कियों की बहुत बड़ी संख्या, विद्यालय छोड़ने के तुरन्त या कुछ देर बाद विवाह कर लेती है। उनके लिए सामान्य शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिये।

2. उच्चतर माध्यमिक स्तर—आयोग ने इस स्तर पर बहुत बड़ी संख्या में व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की है—

(*i*) पूर्वकालीन अध्ययन की सुविधाओं के प्रसार के साथ-साथ उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अंशकालीन पाठ्यक्रम की व्यवस्था होनी चाहिये, चाहे वह प्रबन्धित (Arranged) उद्योगों, सांध्यकालीन अथवा पत्राचार पाठ्यक्रमों के द्वारा ही हो।

(*ii*) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में अधिकांश पाठ्यक्रम ऐसे हों जिनकी प्रवेश योग्यता कक्षा 10 उत्तीर्ण हो।

(*iii*) ये पाठ्यक्रम स्वास्थ्य, व्यापार, प्रशासन, लघु उद्योग एवं ऐसे कार्यों का प्रशिक्षण दें जिनका समय 6 मास से तीन वर्ष तक का हो एवं छात्रों को प्रमाण-पत्र या डिप्लोमा दिया जाये।

शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर अधिक जोर दिया है। इस अभियान को चलाने के लिये केन्द्र सरकार राज्य सरकारों को सहायता दे। अमेरिका का सन्दर्भ देते हुए आयोग ने संघ सरकार पर ही माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण का दायित्व सौंपा। विद्यमान व्यवस्था के अनुरूप माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा का प्रावधान उतना नहीं है जितना आगामी 20 वर्षों में चाहिये।

माध्यमिक स्तर पर ये विद्यालय केवल 3 प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति करती है। 1965-66 ई. में इसमें 2.2 प्रतिशत वृद्धि हुई। 1985-86 ई. में माध्यमिक स्तर पर 20 प्रतिशत वृद्धि होनी चाहिये, यह परिकल्पना आयोग की रही है। शिक्षा आयोग ने आगामी 20 वर्षों में व्यावसायिक विद्यालयों में 24,13,000 छात्रों के प्रवेश की व्यवस्था की है, इसी प्रकार व्यावसायिक महाविद्यालयों में 6,86,300 छात्रों के प्रवेश की व्यवस्था है जो कुल छात्र संख्या का 43 प्रतिशत है। आयोग ने अपना लक्ष्य 50 प्रतिशत निर्धारित किया।

3. विद्यालयी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा—आयोग ने विद्यालयी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के लिए अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये हैं—

(*i*) केन्द्र सरकार की ओर से 14-18 वर्ष के लड़के लड़कियों के लिये विभिन्न पाठ्यक्रमों को आरम्भ करना चाहिये। इसके लिये अमेरिका के स्मिथ ह्यूज एक्ट के समानान्तर संघ सरकार पर ही इसका उत्तरदायित्व हो।

(*ii*) जहाँ तक प्रतिभाशाली छात्रों का प्रश्न है, उन्हें अलग से पाठ्यक्रम न दिलाकर उसी के अन्तर्गत सघन कार्य कराकर इस अभाव को पूरा किया जा सकता है।

(*iii*) इस समय देश में 356 पॉलिटेक्निक संस्थान हैं जिनमें 1,13,000 छात्रों के अध्ययन की व्यवस्था है।

(*iv*) आयोग ने जूनियर टेक्निकल स्कूलों के नाम को बदल कर टेक्निकल हाईस्कूल कर देने की सिफारिश की है। आई. टी. आई तथा टेक्निकल हाईस्कूल उत्पादोन्मुखी प्रशिक्षण की व्यवस्था करें।

क्या आप जानते हैं भौतिक संसाधनों के विकास के अन्तर्गत उत्पादन, विपणन आदि आते हैं।

व्यवसायीकरण का अभिन्न अंग—कार्यानुभव

व्यवसाय के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने के लिये आयोग ने कार्यानुभव प्रस्तावित किया है। **कार्यानुभव** को **आयोग** ने इस प्रकार परिभाषित किया है...हम कार्यानुभव को विद्यालय, घर कार्यशाला, खेल, फैक्ट्री या किसी अन्य उत्पादक कार्य में सहयोग देने के रूप में परिभाषित करते हैं।"

(*i*) कार्यानुभव—आयोग ने शिक्षा के हर स्तर पर कार्यानुभव लागू करने की बात कही है। कार्यानुभव का मूल आधार है—विद्यार्जन तथा धनार्जन की प्रक्रिया को साथ-साथ सम्पन्न करना। वास्तविकता यह है कि कार्यानुभव से श्रम के प्रति निष्ठा का दृष्टिकोण विकसित होता है। यह विकसित दृष्टिकोण उच्चतर माध्यमिक स्तर पर जीवन के विस्तृत क्षेत्र में समायोजन के लिये बड़े पैमाने पर विशेषीकृत पाठ्यक्रमों की व्यवस्था प्रस्तुत करता है जिनमें से वे अपनी रुचि के अनुकूल पाठ्यक्रम चुनकर जीवनयापन कर सकते हैं।

नोट

(*ii*) **उच्च स्तर**–आयोग ने उच्च कक्षाओं में इस दृष्टिकोण के बारे में कहा है–"उच्च कक्षाओं में यह कला शिक्षण का रूप ले सकता है जिनसे छात्र की रचनात्मक योग्यता एवं प्राविधिक चिन्तन का विकास हो। तब भी कार्यानुभव, जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में दिया जा सकता है, जैसे कटाई या बुआई के समय खेतों पर काम करना या किसी पारिवारिक इकाई में किसी प्रकार का उत्पादन कार्य करना एवं इसी प्रकार के अवसरों का अधिकाधिक उपयोग करना।"

(*iii*) **कार्यशाला–आयोग** ने कहा है–"हर विद्यालय या विद्यालयों के समूह के लिये एक कार्यशाला की व्यवस्था आगामी वर्षों में हो जानी चाहिये। कार्यानुभव कार्यशाला प्रशिक्षण का स्वरूप निम्न माध्यमिक स्तर पर ले सकता है। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर जहाँ छात्र अधिक परिपक्व होते हैं और तुलना में उनकी संख्या भी कम होती है, उन्हें कार्यशाला एवं खेतों एवं औद्योगिक तथा व्यापारिक संस्थानों में कार्यानुभव दिया जाना चाहिये।"

(*iv*) **शिक्षण सामग्री**–विद्यालयी शिक्षण में अनेक प्रकार की सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है। उन सामग्रियों का उत्पादन भी कार्यानुभव के द्वारा विद्यालयों एवं संस्थानों में होना चाहिये। कहा गया है–(1) कुछ चुने हुये संस्थान (वैज्ञानिक तथा तकनीकी) पूर्ण-स्तर (Full-Scale) पर उत्पादन करें। (2) कुछ संस्थानों में विद्यालयों एवं कालेजों के लिये कार्यशाला एवं प्रयोगशाला में काम आने वाले यन्त्रों का उत्पादन हो। (3) कुछ संस्थायें फर्नीचर, सहायक सामग्री आदि का उत्पादन करें।

4. छात्रवृत्ति और व्यवसायीकरण–आयोग ने माध्यमिक स्तर पर व्यावसायीकरण को बढ़ावा देने के लिये अनेक प्रकार की व्यवस्था की सलाह दी है। आयोग के शब्दों में व्यावसायिक विद्यालयों में छात्रवृत्तियों का प्रावधान अधिक है। यह अनुपात सामान्य शिक्षा की छात्रवृत्तियों से अधिक है। इससे आगे विकास के आधार इस प्रकार होने चाहिये–(1) प्रवेश में उदारता की नीति, (2) छात्रवृत्तियों की धनराशि में वृद्धि। भारत जैसे देश में अधिकांश व्यक्ति अपने बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा इसलिये नहीं दिला पाते कि उनकी आर्थिक स्थिति इस योग्य नहीं होती। इसीलिए व्यावसायिक शिक्षा के लिये छात्रवृत्तियों की मात्रा में उदारता की संस्तुति करके व्यावसायीकरण को सफल बनाने का प्रयत्न किया है।

5. व्यवसायीकरण–उपयोग एवं उपलब्धि–माध्यमिक-शिक्षा के व्यवसायीकरण से अनेक समस्याओं का अन्त हो जायेगा। ये समस्यायें अभी विकराल हैं, बाद में इनका शमन होगा। आयोग ने बुनियादी शिक्षा के समान ही नौकरियों को प्रोत्साहित नहीं किया है। देश का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र की आवश्यकता के लिये कार्य करे और उसके कार्य का हर अंश राष्ट्र-विकास में योगदान दे। व्यवसायीकरण के उपयोग से होने वाली उपलब्धियाँ इस प्रकार होंगी–

(*i*) रोजगार एवं शिक्षा का सीधा सम्बन्ध हो जायेगा।

(*ii*) व्यक्ति को जीवन-यापन करने के लिये दफ्तरों की अपेक्षा अपने बाजुओं पर निर्भर रहना होगा।

(*iii*) शिक्षा के व्यवसायीकरण से देश की आर्थिक स्थिति सुधरेगी एवं जनशक्ति का उपयोग किया जायेगा।

(*iv*) आयोग ने आशा व्यक्त की है कि यों हर पढ़े-लिखे व्यक्ति को प्रमाण-पत्र के साथ-साथ रोजगार दिया जा सकेगा।

(*v*) छात्रों में शिक्षा की सोद्देश्यता का दृष्टिकोण विकसित होगा। उन्हें अनुभव होगा कि राष्ट्र-निर्माण के लिये उनकी भी आवश्यकता है। आयोग की दृष्टि में यह परिवर्तन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

(*vi*) माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण से भारतीय परिस्थितियों एवं स्रोतों का उचित उपयोग किया जा सकेगा। हण्टर कमीशन ने 1882 में इसी प्रकार की शिक्षा-व्यवस्था की प्रस्तावना की थी।

(*vii*) विज्ञान तथा तकनीकी को आधार मानकर आधुनिकीकरण में 'राम और 'काम' का समन्वय होगा।

परन्तु ये उपलब्धियाँ कब प्राप्त होंगी, कैसे प्राप्त होंगी? जब हम इस पर विचार करते हैं तो आयोग की इन प्रस्तावनाओं पर ध्यान जाता है–(1) माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण के लिये यह आवश्यक है कि विद्यालयों में अभी से ही 20 प्रतिशत छात्रों को व्यवसायीकरण पाठ्यक्रम दिलाये जायें। 50 प्रतिशत छात्रों को उच्चतर माध्यमिक स्तर पर प्रवेश दिया जाये। (2) माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के अवसर सभी को समान रूप से प्राप्त होना चाहिये। छात्रवृत्तियों का व्यापक कार्यक्रम आरम्भ किया जाना चाहिये।

नोट

6. योजना आयोग के स्टीयेरिंग ग्रुप का प्रतिवेदन—व्यवसायीकरण का उद्देश्य शिक्षा प्रवाह के एक वर्ग की देश की जनशक्ति तथा आर्थिक विकास के सन्दर्भ में विकसित एवं प्रशिक्षित करना है। व्यावसायिक कौशल के विकास तथा प्रशिक्षण के छात्र मध्य स्तर (Middle Level) अर्थात् कृषि, उद्योग, वाणिज्य आदि हेतु तैयार हो जाते हैं। पॉलिटेक्निक संस्थानों में इन पाठ्यक्रमों के रखे जाने एवं प्रशिक्षण से छात्र का सम्बन्ध सेवा आयोजक (Employer) हो जाता है। माध्यमिक विद्यालयों में इसीलिये शैक्षिक तथा व्यावसायिक मार्ग प्रदर्शन का आयोजन कौशल प्रशिक्षण की जानकारी हेतु होना चाहिये। शिक्षा विभागों को उन क्षेत्रों में व्यावसायिक कौशल विकसित करना चाहिये जिनमें संस्थागत सुविधायें विद्यमान नहीं हैं। इन पाठ्यक्रमों का आयोजन रोजगार देने वाले अभिकरणों के सहयोग से होना चाहिये। बहुद्देशीय विद्यालयों से प्राप्त अनुभव यह संकेत करते हैं कि व्यावसायिक प्रशिक्षण उस समय तक प्रभावशाली ढंग से संगठित नहीं किया जा सकता जब तक कि उनका सम्बन्ध उन सेवा आयोजकों (Employers) से नहीं होगा जहाँ पर प्रशिक्षित व्यक्ति को लगना है।

व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की अदला-बदली कुशल व्यक्तियों द्वारा बहुत सावधानी से निर्धारित होनी चाहिये। भौगोलिक गतिशीलता कुशल व्यक्तियों में सीमित होती है अत: स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार ही व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का गठन होना चाहिये। इस कार्य हेतु जिला स्तर पर सर्वेक्षण करने शैक्षिक तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण की योजना बनाने में सुविधा रहती है।

कार्यानुभव तथा व्यवसायीकरण का प्रभावशाली कार्यक्रम इस दिशा में प्रभावी हो सकता है। इस कार्य के लिये संस्थाओं तथा सरकारी अभिकरणों (Agencies) में सम्पर्क बना रहना चाहिये। प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर भी संगठनात्मक सुविधायें सदैव प्राप्त होनी चाहियें। राष्ट्रीय स्तर पर एन्सर्ट (NCERT) को सूचनादाता तथा क्लीयरिंग हाऊस के रूप में कार्यानुभव तथा व्यवसायीकरण हेतु कार्य करना चाहिये। राज्य स्तर पर स्वतन्त्र जनशक्ति कोष्ठ (Man-power Cell) का निर्माण मुख्यमन्त्री (योजना मन्त्री) के अधीन होना चाहिये जो समय-समय पर वांछित जनशक्ति की घोषणा करे, नीति बनाये आदि। राज्य शिक्षा संस्थानों के आयोजक अधिकारियों (Employing Authorities) की सहायता से अनुसंधान, प्रशिक्षण, प्रसार खण्ड का निर्माण करना चाहिये। जिला स्तर पर प्रोजेक्ट अधिकारी की नियुक्ति हो जो कार्यानुभव, शिक्षक प्रशिक्षण तथा पॉलीटेक्निक में समन्वय स्थापित करे। जिलाधीश की अध्यक्षता में रोजगार समिति का गठन हो।

7. योजनायें और व्यवसायीकरण—पंचवर्षीय योजना में कार्यानुभव तथा व्यवसायीकरण, दोनों को एक-दूसरे का पूरक मानकर विचार किया गया है। योजना में वह विचार इस प्रकार हुआ है—

(*i*) **कार्यानुभव**—कार्यानुभव का प्रस्तुतीकरण 'विकास के दृष्टिकोण' (Perspective for Development) से किया गया है। योजना में 50,000 विद्यालयों में कार्यानुभव आरम्भ करने, राज्य शिक्षा संस्थानों को सशक्त करने, जिला प्रोजेक्ट अधिकारियों की नियुक्ति, एक लाख अध्यापकों का प्रशिक्षण, 125 सामान्य सुविधा केन्द्रों (Common Facility Centres) की व्यवस्था 10.60 करोड़ रुपयों से की गई।

(*ii*) **व्यवसायीकरण**—माध्यमिक स्तर पर व्यवसायीकरण की योजना को अनेक भागों तथा क्षेत्रों में लागू किया गया। स्वास्थ्य, कृषि, श्रम एवं रोजगार, पॉलीटेक्निक शिक्षा को माध्यमिक स्तर पर व्यवसायीकरण के अन्तर्गत लिया गया। जिला स्तर पर सर्वेक्षण, सूचना ग्रहण, प्रशिक्षण व्यवसाय आदि के लिये एक करोड़ रुपये की अतिरिक्त व्यवस्था की गई।

(*iii*) **मार्ग-प्रदर्शन**—व्यवसायीकरण को बल प्रदान करने के लिये 20,000 अध्यापकों को **कैरियर मास्टर्स** की प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई। स्टेट ब्यूरो तथा **जिला मार्ग प्रदर्शन** अधिकारियों की नियुक्ति की व्यवस्था भी की गई। इस कार्यक्रम पर 2.5 करोड़ रुपये की व्यवस्था थी।

वास्तविकता यह है कि माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण नई योजना नहीं है, परन्तु देश की वर्तमान स्थिति को देखते हुये यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योजना के अनुरूप रोजगार दें। यह तभी सम्भव हो पायेगा जब शिक्षा के हर स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा दी जायेगी। माध्यमिक स्तर, शिक्षा के सभी स्तरों से अधिक महत्त्वपूर्ण इसलिये है कि इसके 50 प्रतिशत छात्रों को जीवनयापन के लिये प्रयत्न करने पड़ जाते हैं। यदि इस अवसर पर उन्हें काम नहीं दिया गया तो मानव-शक्ति का अपव्यय होगा। मानव-शक्ति का अपव्यय राष्ट्र की क्षति है। अत: माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण आवश्यक है।

नोट

22.2 आचार्य राममूर्ति के सुझाव एवं वर्तमान स्थिति (Suggestions of Acharya Ram Murti and Current Status)

आचार्य राममूर्ति समिति के सुझाव

आचार्य राममूर्ति समिति (1990) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यवसायीकरण के बारे में इस प्रकार सुझाव दिये–

1. व्यावसायिक शिक्षा का आदर्श प्रारूप इस प्रकार अपनाया जा सकता है–

कक्षा	सामान्य कोर	व्यावसायिक कोर
9	शैक्षिक-व्यावसायिक	शैक्षिक-व्यावसायिक
10	शैक्षिक-व्यावसायिक	शैक्षिक-व्यावसायिक
11-12	शैक्षिक-व्यावसायिक	व्यावसायिक-व्यावसायिक

2. छात्रों को व्यावसायिक विषयों में से अपनी रुचि का विषय चयन करने की सुविधा हो।
3. अनौपचारिक रूप से भी व्यावसायिक शिक्षा दी जाये।

प्राविधिक तथा प्रबन्धन शिक्षा के लिये भी विभिन्न स्तरों के पाठ्यक्रम चलाये जाने चाहिये तथा सतत् आधार पर इन पाठ्यक्रमों का मूल्यांकन किया जाना चाहिये। शिक्षकों की गुणवत्ता विकसित करने के लिये अध्ययन-अवकाश, ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण तथा अभिनव पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिये।

वर्तमान स्थिति (Current Status)

कोठारी कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार 1986 ई. में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का अनुपालन हुआ और माध्यमिक स्तर पर केन्द्रीय माध्यमिक परिषद के कार्यानुभव के पाठ्यक्रम में स्थान दिया। प्रदेशों में माध्यमिक शिक्षा बोर्डों ने भी सामान्य शिक्षा के साथ-साथ 25% बालकों के लिये व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम आरम्भ किये।

पॉलीटेक्निक, टेक्निकल हाईस्कूलों में माध्यमिक स्तर के व्यावसायिक पाठ्यक्रम आरम्भ हुए। भारत में पंजाब तथा दक्षिण के राज्यों में तो इस व्यवस्था का प्रभाव देखने को मिल रहा है। उत्तर प्रदेश में व्यावसायिक शिक्षा का प्रभाव कम दिखाई दे रहा है, इसका कारण है, शिक्षण की सुविधाओं का अभाव।

साथ ही, यह भी प्रश्न उभर रहा है, माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त छात्र, कुछ बड़े उद्योगों की तुलना में अपने रहन-सहन व जीवन स्तर में सुधार कर सकेंगे? पुन: सामाजिक स्तरीकरण की समस्या तथा जीवन शैली की गुणवत्ता शिक्षा के वर्तमान व्यवसायीकरण की गुणवत्ता पर प्रश्न-चिह्न लगाती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. व्यवसायीकरण का उद्देश्य शिक्षा प्रवाह के एक वर्ग की देश की जनशक्ति तथा .... के संदर्भ विकसित करना है।
2. व्यावसायिक कौशल के विकास तथा प्रशिक्षण से छात्र मध्य स्तर अर्थात् .... हेतु तैयार हो जाते हैं।
3. भौगोलिक गतिशीलता .... में सीमित होती है।
4. आचार्य राममूर्ति का सुझाव है कि व्यावसायिक शिक्षा .... से भी दी जाय।
5. राममूर्ति समिति के अनुसार छात्रों को व्यावसायिक विषयों में से .... चयन करने की सुविधा हो।

22.3 सारांश (Summary)

- शिक्षा का व्यवसायीकरण वास्तव में राष्ट्रीय आवश्यकता है। राष्ट्र के विकास के लिये शिक्षा के माध्यम से दृढ़ संकल्प तथा शक्ति के साथ जनशक्ति को विकसित करना आवश्यक कार्यक्रम है।
- स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् देश के कर्णधारों के समक्ष समस्या थी राष्ट्र विकास की। राष्ट्र का विकास राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ होने पर ही निर्भर करता है, राष्ट्र विकास की गति को तेज करने के लिये शिक्षा की नीति को दृढ़, कल्याणपूर्ण करना, वर्तमान स्थिति में सुधार करना आवश्यक है।
- मनुष्य का एकमात्र लक्ष्य स्वयं में उन क्षमताओं को विकसित करना है जो उसे, उसके लिए जीवन निर्वाह के लिये आवश्यक है। इसलिये शिक्षा ऐसी हो जो बालक को सामान्य इच्छा क्षमताओं तथा वैयक्तिक गुणों के विकास के साथ आर्थिक विकास तथा रोजगार से परिपूर्ण कर सके।
- भारतीय समाज में स्तरीकरण (Stratification) ने उर्ध्व गतिशीलता को कम किया है। गरीब-अमीर, शिक्षित-अशिक्षित में अन्तर अधिक होता जा रहा है। (*i*) शिक्षित व्यक्ति अपनी संस्कृति से दूर हो रहे हैं। (*ii*) अलोकतांत्रिक जाति व्यवस्था ने लोकतंत्र को भयावह स्थिति में पहुँचाया है। (*iii*) धर्म ने भेदभाव पैदा किया है। शिक्षा के व्यवसायीकरण के द्वारा एकीकृत तथा समतापूर्ण समाज की रचना की जा सकती है।
- माध्यमिक स्तर पर बालक में चेतना विकसित होने लगती है। इस स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के कारण संसाधनों का विकास होता है।
- मानव संसाधन का विकास शिक्षा के द्वारा होता है। लोगों के ज्ञान, कौशल, हित तथा मूल्यों में परिवर्तन के कारण उनका विकास होता है।
- व्यवसायीकरण के माध्यम से शिक्षा को उत्पादन के साथ जोड़ना आवश्यक है। इससे शिक्षा का विस्तार होगा। शिक्षा के साथ उत्पादन जोड़ने के लिये (*i*) शिक्षा और संस्कृति के मूल अंग के रूप में विज्ञान, (*ii*) सामान्य शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में कार्य-अनुभव, (*iii*) उद्योग, कृषि, व्यापार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शिक्षा का व्यवसायीकरण, (*iv*) उच्च स्तर पर कृषि, विज्ञान शिक्षा में अनुसंधान की जरूरत है।
- युग की बदलती मान्यताओं के बीच हमारा देश प्रगति की दौड़ में अन्य देशों की तुलना में सैकड़ों वर्ष पीछे हैं। हम चाहते हैं, हम उन्नत देशों के समकक्ष आ जायें, इस प्रक्रिया में हम जब तक उनके समकक्ष पहुचेंगे, वे और भी आगे बढ़ चुकेंगे। इसका कारण है—हमारे ज्ञान का आधुनिक विज्ञान तथा तकनीकी के साथ सम्बन्ध नहीं रहा है। शिक्षा आयोग ने माध्यमिक ही नहीं, शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा के व्यवसायीकरण को प्रस्तावित किया है। आयोग ने व्यवसायीकरण का आधार रखा है—उत्पादन।
- माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण करने के लिये आयोग ने उसके दोनों ही स्तरों निम्न माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक पर विस्तार से विचार किया है। शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण के लिये जो कल्पना की थी, उसके अनुसार कक्षा 8 में 10 तथा 20 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त होनी चाहिये। इसी प्रकार कक्षा 11-12 में 50 प्रतिशत छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिये।
- शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण पर अधिक जोर दिया है। इस अभियान को चलाने के लिये केन्द्र सरकार राज्य सरकारों को सहायता दे। अमेरिका का सन्दर्भ देते हुए आयोग ने संघ सरकार पर ही माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण का दायित्व सौंपा।
- व्यवसाय के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने के लिये आयोग ने कार्यानुभव प्रस्तावित किया है। **कार्यानुभव** को **आयोग** ने इस प्रकार परिभाषित किया है...हम कार्यानुभव को विद्यालय, घर कार्याशाला, खेल, फैक्ट्री या किसी अन्य उत्पादक कार्य में सहयोग देने के रूप में परिभाषित करते हैं।"
- आयोग ने शिक्षा के हर स्तर पर कार्यानुभव लागू करने की बात कही है। कार्यानुभव का मूल आधार है—विद्यार्जन तथा धनार्जन की प्रक्रिया को साथ-साथ सम्पन्न करना।

नोट

- माध्यमिक-शिक्षा के व्यवसायीकरण से अनेक समस्याओं का अन्त हो जायेगा। ये समस्यायें अभी विकराल हैं, बाद में इनका शमन होगा। आयोग ने बुनियादी शिक्षा के समान ही नौकरियों को प्रोत्साहित नहीं किया है। देश का प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र की आवश्यकता के लिये कार्य करे और उसके कार्य का हर अंश राष्ट्र-विकास में योगदान दे। व्यवसायीकरण के उपयोग से होने वाली उपलब्धियाँ इस प्रकार होंगी–
  (*i*) रोजगार एवं शिक्षा का सीधा सम्बन्ध हो जायेगा।
  (*ii*) व्यक्ति को जीवन-यापन करने के लिये दफ्तरों की अपेक्षा अपने बाजुओं पर निर्भर रहना होगा।
  (*iii*) शिक्षा के व्यवसायीकरण से देश की आर्थिक स्थिति सुधरेगी एवं जनशक्ति का उपयोग किया जायेगा।
- छात्रों में शिक्षा की सोद्देश्यता का दृष्टिकोण विकसित होगा। उन्हें अनुभव होगा कि राष्ट्र-निर्माण के लिये उनकी भी आवश्यकता है। आयोग की दृष्टि में यह परिवर्तन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।
- आचार्य राममूर्ति समिति (1990) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यवसायीकरण के बारे में इस प्रकार सुझाव दिये–
  (*i*) छात्रों को व्यावसायिक विषयों में से अपनी रुचि का विषय चयन करने की सुविधा हो।
  (*ii*) अनौपचारिक रूप से भी व्यावसायिक शिक्षा दी जाये।
- प्राविधिक तथा प्रबन्धन शिक्षा के लिये भी विभिन्न स्तरों के पाठ्यक्रम चलाये जाने चाहिये तथा सतत् आधार पर इन पाठ्यक्रमों का मूल्यांकन किया जाना चाहिये।

22.4 शब्दकोश (Keywords)

- **सोद्धेश्यता**–उद्देश्य सहित।
- **अंशकालीन**–कम समय वाला।

22.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण के उद्देश्य बताइये।
2. भारत में माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण की आवश्यकता पर समीक्षात्मक आलोचना लिखिये। ऐसा करने में क्या कठिनाइयां हो सकती हैं और उनको कैसे दूर किया जा सकता है?
3. पाठ्यक्रम के व्यवसायीकरण से क्या अभिप्राय है? माध्यमिक स्तर पर यह क्यों अपरिहार्य है? इसके लिये उठाये गये कदमों का संक्षेप में वर्णन कीजिये।
4. टिप्पणी लिखिए–'व्यावसायिक शिक्षा डांवाडोल है'।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. आर्थिक विकास
2. कृषि, उद्योग, वाणिज्य आदि
3. कुशल व्यक्तियों
4. अनौपचारिक रूप
5. अपनी रुचि का विषय।

22.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।

नोट

इकाई—23: अध्यापक शिक्षा
(Teacher Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

23.1 अध्यापक शिक्षा का अर्थ और महत्व (Meaning and Importance of Teacher Education)

23.2 अध्यापक शिक्षा की आधारभूत धारणाएँ (Basic Concept of Teacher Education)

23.3 सारांश (Summary)

23.4 शब्दकोश (Keywords)

23.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

23.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- अध्यापक शिक्षा के अर्थ, महत्व और आधारभूत धारणाओं का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्राचीन काल से ही शिक्षक एक आदर्श व्यक्ति के रूप में रहा है। उसका काम था, बालक को दूसरा जन्म देना। जब बालक, माता-पिता का घर छोड़कर गुरुकुल में आता था, उसका उपनयन संस्कार होता था, वह द्विज (जिसका दूसरा जन्म हुआ है) कहलाता था। बालक के आन्तरिक गुणों का विकास करने, उसे समाज के, परिवार के अनुकूल बनाना शिक्षक का कर्त्तव्य था। राम, कृष्ण, गौतम, महावीर, शिवाजी, विवेकानन्द आदि महान पुरुष अपने गुरुओं की ही देन रहे हैं।

23.1 अध्यापक शिक्षा का अर्थ और महत्व (Meaning and Importance of Teacher Education)

अध्यापक शिक्षक (Teacher Education) का अर्थ है, **शिक्षक + शिक्षा = शिक्षकों की शिक्षा** यानि **एजुकेशन फॉर टीचर्स** (Education for Teachers)। स्पष्ट है कि शिक्षा, व्यक्ति के ज्ञानात्मक, कार्यात्मक तथा भावानात्मक पक्ष का विकास करती है।

शिक्षक शिक्षा की योग्यता का अर्थ

योग्यता से अभिप्राय निष्पत्ति का वह स्तर है जो किसी परीक्षण की कसौटी पर खरा उतरता है। शिक्षक शिक्षा के अन्तर्गत वे सभी पक्ष आ जाते हैं जिनसे व्यक्ति में ज्ञान तथा कौशल का विकास होता है। वे सभी क्रियायें, जिनके माध्यम से

नोट

भावी शिक्षकों का निर्माण होता है, वे सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक रूप से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन करते हैं। शिक्षक-शिक्षा, भावी शिक्षकों में रुचि, अभिरुचि तथा कौशलों का विकास करते हैं।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को कुछ योग्यताओं व कौशल का परिचय कराना मात्र ही नहीं है, बल्कि उनमें शिक्षण के प्रति रुचि का विकास भी करना जरूरी है। रुचि के कारण शिक्षक नये ज्ञान तथा कौशल के प्रति सचेत होता है।

शिक्षक जब कक्षा में जाता है तो उसे वांछित योजना बनानी पड़ती है, वह उस योजना को क्रियान्वित करने के लिये पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों, कौशल आदि का प्रयोग करता है और फिर वांछित शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करता है। वह ज्ञानात्मक, गत्यात्मक तथा प्रभावात्मक अधिगम की उपलब्धि ग्रहण करता है।

अध्यापक शिक्षा का महत्व

अध्यापक शिक्षा के महत्व इस प्रकार हैं–

1. **मानव मूल्यों का विकास**–महात्मा गाँधी द्वारा प्रणीत मूल्यों–सत्य, अहिंसा, आत्मानुशासन, आत्माभिव्यक्ति तथा श्रमनिष्ठा का विकास।
2. **सामाजिक परिवर्तन का साधन**–शिक्षक शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन के साधन या अभिकर्ता (Agent) के रूप में संप्रेषण का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।
3. **मार्गदर्शक एवं नेता**–शिक्षक शिक्षा का उद्देश्य छात्रों को नेता बनाना ही नहीं है। अपितु विस्तृत समुदाय का मार्गदर्शक (Guide) भी बनाना है।
4. **सम्पर्क सूत्र**–विद्यालय तथा समुदाय के जीवन में विभिन्न साधनों तथा उपायों द्वारा समन्वय कराने तथा सम्पर्क सूत्र (Laision) का कार्य करना।
5. **प्रत्यावर्तन**–समाज की ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण करना तथा वातावरण के साधनों द्वारा जीवन में प्रत्यावर्तन करना।
6. **सकारात्मक मनोवृत्ति**–भावी पीढ़ी में शैक्षिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं वैयक्तिक समस्याओं के प्रति सकारात्मक (Positive) मनोवृत्ति विकसित करना।
7. **उद्देश्यात्मक अवबोध**–छात्राध्यापकों के शिक्षण के उद्देश्यों को भारतीय संदर्भ में समझना, समाज में प्रजातांत्रिक-धर्म निरपेक्ष तथा समाजवादी संदर्भ में विद्यालयों में चेतना का विकास करना।
8. **विकास तथा अभिवृद्धि**–छात्राध्यापकों में अवबोध, रुचि, मनोवृत्ति तथा कौशलों का विकास इस प्रकार करना कि वे छात्रों का सर्वांगीण विकास कर सकें।
9. **शिक्षण क्षमता**–छात्राध्यापकों में शिक्षण की क्षमता का विकास स्वीकृत मानकों के अनुसार करना।
10. **संप्रेषण**–छात्राध्यापकों में संप्रेषण, कौशल तथा योग्यताओं का विकास इस प्रकार करना कि कक्षा के भीतर तथा बाहर शिक्षण के नये आयाम स्थापित हो सकें।
11. **ज्ञान तथा कौशल**–छात्राध्यापक में उसके विषय के ज्ञान तथा विषय शिक्षण की गहन, रोचक तथा स्पष्ट विधियों को विकसित करना।
12. **शोध तथा अन्वेषण**–छात्राध्यापकों में शिक्षण के शोध तथा अन्वेषण करने की क्षमता विकसित करना।

क्या आप जानते हैं शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को कुछ योग्यताओं व कौशल से परिचय कराना मात्र ही नहीं है, बल्कि उनमें शिक्षण के प्रति रुचि का विकास भी करना जरूरी है। रुचि के कारण शिक्षक नये ज्ञान तथा कौशल के प्रति सचेत होता है।

नोट

23.2 अध्यापक शिक्षा की आधारभूत धारणाएँ (Basic Concept of Teacher Education)

अध्यापक शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों के पीछे शिक्षकों में गौरव तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की पुनर्प्राप्ति का ध्येय निहित है, इसलिये शिक्षक शिक्षा की मूलभूत धारणायें इस प्रकार हैं–

1. **मानव की प्रगति**–शिक्षा का उद्देश्य, व्यक्ति को धर्म निरपेक्ष, प्रजातांत्रिक एवं समाजवादी समाज के अनुरूप बनाना है, शिक्षक शिक्षा इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होती है।
2. **शिक्षक शिक्षा की भूमिका**–मानव निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ शैशवावस्था से हो जाता है, अत: बालक की शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर एक ओर शिक्षक शिक्षा एक सातत्यता का निर्वाह करता है तो दूसरी ओर बालक की विभिन्न विशेषताओं की सामाजिक मांग के अनुरूप पूर्ति करती है।
3. **कोर-पाठ्यक्रम**–शिक्षक शिक्षा चूंकि सातत्य प्रक्रिया है, इसलिये इसके प्रत्येक स्तर-पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक तथा महाविद्यालय पर कोर-पाठ्यक्रम के माध्यम से आगे बढ़ती है।
4. **भिन्नता का पक्ष**–शिक्षक शिक्षा का पाठ्यक्रम मनुष्य की विशेषताओं एवं सामाजिक आवश्यकताओं से जुड़ा है, अत: राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति तथा बाल विकास के संदर्भ में शिक्षक शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाया जाता है।
5. **समन्वय**–शिक्षक शिक्षा का प्रत्येक कार्यक्रम इस प्रकार का होता है कि वह पूर्व प्राथमिक से प्राथमिक, माध्यमिक तथा महाविद्यालयी स्तर पर समन्वित होता जाता है।
6. **शिक्षक शिक्षा के तत्व**–मौलिक भिन्नताओं के बावजूद शिक्षक शिक्षा के आन्तरिक तत्व इस प्रकार हैं–
   (*i*) शिक्षा शास्त्रीय पाठ्यक्रम,
   (*ii*) समुदाय के साथ कार्य,
   (*iii*) पाठ्य सामग्री, शिक्षण विधियों एवं शिक्षणाभ्यास का पाठ्यक्रम।

> *टास्क* कोर-पाठ्यक्रम से आप क्या समझते हैं?

7. **उचित अनुपात**–शिक्षा शास्त्रीय, पाठ्य सामग्री, शिक्षण विधि तथा शिक्षण अभ्यास, इन सभी कार्यक्रमों में शिक्षक शिक्षा के स्तर के अनुसार आनुपातिक बल दिया जाना चाहिये।
8. **शिक्षक शिक्षा का केन्द्र-बिन्दु**–शिक्षा सिद्धान्त, पाठ्यक्रम तथा सामुदायिक कार्यों के मध्य समन्वय हो तथा ये कार्य शिक्षक शिक्षा के केन्द्र-बिन्दु हों। इसके आधार इस प्रकार हैं–
   (*i*) भावी शिक्षक को शिक्षण कार्य, क्यों और कैसे, शिक्षक के व्यवहार के संदर्भ में ज्ञान हो तथा शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान, समाज शास्त्र के स्वीकृत सिद्धान्तों का अनुगमन करे।
   (*ii*) भावी शिक्षक को सामाजिक परिवर्तन के अभिकर्ता (Agent), छात्रों के नेता तथा समाज के मार्गदर्शक के रूप में होना चाहिये।
   (*iii*) भावी शिक्षक को अपने विषय पर अधिकार हो, शिक्षण विधियों में पारंगत हो।
9. **अनुपयोग**–भावी शिक्षक को शिक्षक शिक्षा के भी तत्वों को कक्षा के भीतर तथा बाहर, शैक्षिक परिस्थितियों में उपयोग करना चाहिये।
10. **स्पष्ट अवबोध**–शिक्षक को प्रभावशाली बनाने के लिये आवश्यक है उसे समाज तथा समुदाय की आवश्यकताओं तथा विशेषताओं का बोध होना चाहिये और ऐसे कौशलों को विकसित करना चाहिये जिनसे समुदाय में वांछित सामाजिक परिवर्तन तथा सामुदायिक विकास हो सके।
11. **स्पष्ट कार्यक्रम**–शिक्षक शिक्षा का कार्यक्रम वैध एवं ठोस होना चाहिये। दृश्य, स्पर्श तथा गत्यात्मक अनुभवों को पुनर्बलित किया जाना चाहिये। इसलिये शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम स्पष्ट, भिन्न तथा सघन होना चाहिये।

नोट

12. **तीन विशेषतायें**–सतत् प्रक्रिया के रूप में शिक्षक शिक्षा की तीन विशेषतायें होनी चाहियें–
    (*i*) लोचनीय,
    (*ii*) प्रासंगिकता,
    (*iii*) अन्तर्विद्या विषयक।
13. **दो प्रकार के पाठ्यक्रम**–शिक्षक शिक्षा में दो प्रकार के पाठ्यक्रम होने चाहिए।
    (*i*) विषय पाठ्यक्रम
    (*ii*) विधियों का पाठ्यक्रम
14. **थ्योरी पाठ्यक्रम**–सैद्धांतिक के पाठ्यक्रम उतने ही हों, जितने बालक के व्यवहार को समझने तथा उसमें ज्ञानात्मक, गत्यात्मक तथा प्रभावात्मक व्यवहार में परिवर्तन कर सकें।

> *नोट्स* वैज्ञानिक ज्ञान, सकारात्मक मनोवृत्ति एवं संपुष्ट धारणाओं के आधार पर, बालक की क्षमताओं को विकसित करने के लिये शिक्षण व्यवहार में संशोधन किया जाना चाहिये।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. योग्य शिक्षकों का देश एक ……… का देश है।
2. प्राचीन युग में ……… उच्च कक्षा के विद्यार्थियों की सहायता से अध्यापन कार्य करते थे।
3. मद्रास में सन् ……… में प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना की गयी।
4. लाहौर में सन् ……… में प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना की गयी।
5. नार्मल विद्यालयों में ……… विद्यालय के अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता है।
6. सेकेण्डरी प्रशिक्षण विद्यालयों में ……… विद्यालयों के शिक्षणों को प्रशिक्षण दिया जाता है।
7. ट्रेनिंग महाविद्यालयों में ……… के छात्रों को पढ़ाने के लिये अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता है।
8. विश्वविद्यालय आयोग ने सन् ……… में प्रशिक्षण विद्यालयों का पाठ्यक्रम लचीला और स्थानीय वातावरण के अनुकूल बनाने पर सुझाव दिया।
9. कोठारी आयोग ने सन् 1966 में ……… का प्रबन्ध करने का सुझाव दिया।
10. सन् 1913 में सरकारी प्रस्ताव में ……… को महत्व प्रदान किया गया।

23.3 सारांश (Summary)

- अध्यापक शिक्षा (Teacher Education) का अर्थ है, **शिक्षक + शिक्षा = शिक्षकों की शिक्षा** यानि **एजुकेशन फॉर टीचर्स** (Education for Teachers)। स्पष्ट है कि शिक्षा, व्यक्ति के ज्ञानात्मक, कार्यात्मक तथा भावनात्मक पक्ष का विकास करती है।
- योग्यता से अभिप्राय निष्पत्ति का वह स्तर है जो किसी परीक्षण की कसौटी पर खरा उतरता है। शिक्षक शिक्षा के अन्तर्गत वे सभी पक्ष आ जाते हैं जिनसे व्यक्ति में ज्ञान तथा कौशल का विकास होता है।
- शिक्षक जब कक्षा में जाता है तो उसे वांछित योजना बनानी पड़ती है, वह उस योजना को क्रियान्वित करने के लिये पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों, कौशल आदि का प्रयोग करता है और फिर वांछित शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करता है।

नोट

- महात्मा गाँधी द्वारा प्रणीत मूल्यों–सत्य, अहिंसा, आत्मानुशासन, आत्माभिव्यक्ति तथा श्रमनिष्ठा का विकास।
- शिक्षक शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन के साधन या अभिकर्ता (Agent) के रूप में संप्रेषण का महत्वपूर्ण कार्य करती है।
- शिक्षक शिक्षा का उद्देश्य छात्रों को नेता बनाना ही नहीं है। अपितु विस्तृत समुदाय का मार्गदर्शक (Guide) भी बनाना है।
- भावी पीढ़ी में शैक्षिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं वैयक्तिक समस्याओं के प्रति सकारात्मक (Positive) मनोवृत्ति विकसित करना।
- छात्राध्यापकों के शिक्षण के उद्देश्यों को भारतीय संदर्भ में समझना, समाज में प्रजातांत्रिक-धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवादी संदर्भ में विद्यालयों में चेतना का विकास करना।
- छात्राध्यापकों में शिक्षण की क्षमता का विकास स्वीकृत मानकों के अनुसार करना।
- शिक्षा का उद्देश्य, व्यक्ति को धर्मनिरपेक्ष, प्रजातांत्रिक एवं समाजवादी समाज के अनुरूप बनाना है, शिक्षक शिक्षा इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होती है।
- मानव निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ शैशवावस्था से हो जाता है, अत: बालक की शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षक शिक्षा एक सातत्यता का निर्वाह करता है तो दूसरी ओर बालक की विभिन्न विशेषताओं की सामाजिक मांग के अनुरूप पूर्ति करती है।
- शिक्षक शिक्षा का प्रत्येक कार्यक्रम इस प्रकार का होता है कि वह पूर्व प्राथमिक से प्राथमिक, माध्यमिक तथा महाविद्यालयी स्तर पर समन्वित होता जाता है।
- भावी शिक्षक को शिक्षक शिक्षा के सभी तत्वों को कक्षा के भीतर तथा बाहर, शैक्षिक परिस्थितियों में उपयोग करना चाहिये। वैज्ञानिक ज्ञान, सकारात्मक मनोवृत्ति एवं संपुष्ट धारणाओं के आधार पर, बालक की क्षमताओं को विकसित करने के लिये शिक्षण व्यवहार में संशोधन किया जाना चाहिये।
- शिक्षक शिक्षा का कार्यक्रम वैध एवं ठोस होना चाहिये। दृश्य, स्पर्श तथा गत्यात्मक अनुभवों को पुनर्बलित किया जाना चाहिये। इसलिये शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम स्पष्ट, भिन्न तथा सघन होना चाहिये।

23.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अन्वेषण**–खोज
- **क्रियान्वित**–लागू करना।

23.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अध्यापक शिक्षा से आप क्या समझते हैं? वर्णन कीजिए।
2. अध्यापक शिक्षा के अर्थ एवं महत्व की व्याख्या कीजिए।
3. अध्यापक शिक्षा की मूलभूत धारणाओं की विश्लेषणात्मक व्याख्या कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. उज्ज्वल भविष्य	2. आचार्य	3. 1956 ई.	4. 1881 ई.
5. प्राथमिक	6. मिडिल	7. हाई स्कूल	8. 1949 ई.
9. अंशकालीन प्रशिक्षण	10. अध्यापक प्रशिक्षण।		

नोट

23.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–24: अध्यापक शिक्षा के प्रकार
(Types of Teacher Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
24.1 सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा (Pre-Service Teacher Education)
24.2 सेवारत् अध्यापक शिक्षा (In-Service Teacher Education)
24.3 सारांश (Summary)
24.4 शब्दकोश (Keywords)
24.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
24.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सेवा पूर्व एवं सेवारत अध्यापक शिक्षा का विवेचन करने में

प्रस्तावना (Introduction)

भारत में अध्यापक-शिक्षा का वर्तमान पाठ्यक्रम व्यावसायिक कौशल पर अधिक बल देता है और शिक्षण-विधियों तक सीमित है। इसमें अध्यापक के व्यक्तित्व के विकास के लिये कम स्थान है। यह शिक्षक की सामाजिक क्षमताओं, रचनात्मक विचार, तथा अनुसंधान योजना पर कम ध्यान देता है। इस प्रकार अध्यापक नये विचारों का जनक तथा समालोचक न होकर शैक्षिक विचारों का उपभोक्ता बन जाता है। अध्यापक निर्माण का संतुलित पाठ्यक्रम अध्यापक को ऐसे अवसर देता है जिससे कि व्यक्ति के रूप में उसका पूर्ण विकास हो सके, वह अध्यापन कला का विशेषज्ञ या कक्षा का प्रबन्धक न होकर सृजनात्मक व्यक्ति बन सके।

अध्यापक-शिक्षा के पाठ्यक्रम में अध्यापक के सर्वांगीण विकास के लिये उन समस्त पाठ्यक्रमों को समाहित करना चाहिये जिनसे उपरोक्त लक्ष्य की पूर्ति हो। इसके अन्तर्गत उन विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमों को महत्त्व दिया जाना चाहिए जो अध्यापक के विभिन्न बोधों और कौशलों को विकसित करते हैं। यदि तीन वर्षीय उपाधि पाठ्यक्रम बनाया जाता है तो उसमें आधा समय अध्यापक के व्यक्तिगत, सामाजिक तथा प्रत्ययी कौशलों के विकास में लगाना चाहिए तथा शेष आधा समय उसके व्यावसायिक शैक्षिक कौशल के विकास में लगाना चाहिये। यदि एक वर्षीय पाठ्यक्रम बनाया जाता है तो सम्पूर्ण समय व्यावसायिक दक्षता तथा व्यक्तिगत एवम् सामाजिक कौशलों के विकास में लगाना चाहिये।

नोट

24.1 सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा (Pre-Service Teacher Education)

सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा की महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) प्रभावशाली माध्यमिक विद्यालय के अध्यापक को राष्ट्रीय उद्देश्यों का ज्ञान होना चाहिये। इससे उसमें ऐसी योग्यता विकसित होगी जिसके द्वारा वह विद्यार्थियों की वर्तमान पीढ़ी को भारत में प्रबुद्ध नागरिकों के रूप में प्रशिक्षित कर सकेगा।

(2) अध्यापक को भारत के बारे में प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की संस्कृति एवम् विचारों का उत्तम ज्ञान होना चाहिए। इससे उसे एक उचित एवं स्वस्थ व्यक्तिगत जीवन दर्शन विकसित करने में सहायता मिलेगी जो एक अध्यापक के लिए आवश्यक है।

(3) अध्यापक को व्यवसाय की चुनौती की सराहना करनी चाहिये, तथा उन संभावनाओं का पता लगाना चाहिये जिनमें कमियों की क्षति-पूर्ति हो सके। इससे उसमें व्यवसाय के प्रति आशावादिता की वृद्धि होगी तथा अध्यापन में तात्कालिक सुख प्राप्त होगा।

(4) अध्यापक को देश के लिये अपने कार्य की महत्ता का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिये। उसे अपने व्यवसाय पर गर्व होना चाहिये।

(5) अध्यापक को प्रजातांत्रिक मूल्यों का सम्मान करना चाहिये। उसे अपने से अलग विचार रखने वालों का सम्मान करना चाहिये।

(6) अध्यापक का स्वस्थ संवेगात्मक विकास होना आवश्यक है। उसे प्रसन्न रहना चाहिये। यदि अध्यापक प्रसन्नचित्त रहता है तो छात्र इसके इस रूप को अपने जीवन मे अपना सकेंगे।

(7) अध्यापक को अभिभावक एवं समुदाय से सतत् सम्पर्क रखना चाहिए। उसे उनके सम्मुख विद्यालय के प्रति अपने विचार की व्याख्या करनी चाहिये तथा उनका सहयोग प्राप्त करना चाहिये। उसे समुदाय का नेतृत्व करना चाहिये। उसे बालकों एवं प्रौढ़ों से सम्मान प्राप्त करना चाहिये। उसे विद्यालयी क्रिया-कलापों को समुदाय के सुधार के रूप में संगठित करना चाहिये।

(8) अध्यापक को सभी प्रकार की सूचनायें रखनी चाहियें, उसे जिज्ञासु होना चाहिये। उसे केवल उस विषय का ही पण्डित नहीं होना चाहिये जिसे वह पढ़ाता है या उन कौशलों को जिनका वह छात्रों में विकास करना चाहता है, उसे सामयिक पत्र-पत्रिकाओं का पढ़ने की रुचि होनी चाहिये।

(9) अध्यापक में उच्च कोटि की संवाद क्षमता, स्पष्टता, शुद्धता तथा तार्किकता होनी चाहिये।

(10) अध्यापक को सीखने की प्रक्रिया का तथा बच्चों को सीखने के लिये निर्देशित करने की विधि का बोध होना चाहिये। उसमें कक्षा-कार्य को नये ढंग से संगठित करने की योग्यता होनी चाहिये। उसे बहुत अधिक कठोर नहीं होना चाहिये, इससे वह नये रुझानों से वंचित रहता है।

(11) अध्यापक को बहुत अधिक उपदेश नहीं देना चाहिये। उसे बहुत अधिक अभ्यास नहीं करना चाहिये। यद्यपि शुरू में अभ्यास का परिणाम अच्छा होता है, परन्तु आगे चलकर उसका उतना महत्त्व नहीं होता। अध्यापक को छात्रों का उचित मार्गदर्शन करना चाहिये, तथा उन्हें अपनी सोच के अनुसार कार्य करने देना चाहिये।

(12) अध्यापक को श्रव्य-दृश्य सामग्री का प्रयोग करने में निपुण होना चाहिये। उसे यह ज्ञात होना चाहिये कि कौन सी सामाग्री का प्रयोग कब किया जाये और क्यों किया जाये। उसमें सहायक सामग्री के निर्माण की योग्यता होनी चाहिये।

(13) अध्यापक को आधुनिक मूल्यांकन प्रविधियों का ज्ञान होना चाहिये तथा उसमें उनके परिणामों को दूसरों तक पहुँचाने की क्षमता होनी चाहिये।

(14) अध्यापक को पाठ्य-सहगामी क्रियाओं में भाग लेना चाहिये। उसमें उनके संगठन की योग्यता होनी चाहिये।

(15) अध्यापक को पाठ्यक्रम के उद्देश्य एवं क्षेत्र का बोध होना चाहिये।

(16) अध्यापक को विद्यालय के प्रति शुभचिन्तक होना चाहिये। अन्य अध्यापकों के साथ मिलकर उसे विद्यालय की अच्छी स्थिति की रक्षा करनी चाहिये।

(17) अध्यापक को मनौविज्ञान के व्यावहारिक पक्ष को समझना चाहिये। उसे किशोरों की शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक विशेषताओं और आवश्यकताओं की जानकारी होनी चाहिये तथा उनके समाधान की योग्यता रखनी चाहिये।

(18) अध्यापक को निम्न उपायों से विद्यार्थियों द्वारा सम्मान प्राप्त करना चाहिये—

(*i*) प्रभावशाली व्यक्तित्व जिससे सम्मान प्राप्त होता है एवम् आज्ञा का पालन होता है।

(*ii*) बालकों के प्रति त्याग, उत्साह, मित्रता तथा उनके व्यवहार को समझना।

(*iii*) धीमी गति से अधिगम करने वाले छात्रों को हतोत्साहित नहीं करना।

(*iv*) व्यक्तिगत विभिन्नताओं के अनुसार शिक्षण को समायोजित करना।

(*v*) सूचनाओं की शुद्धता तथा छात्रों को बिना मदद के पढ़ने के लिये प्रेरित करना।

(*vi*) छात्रों को उनके स्वयं के अनुभवों के आधार पर प्राप्त तथ्यों से सामान्यीकरण करने में उनकी सहायता करना।

एक सफल अध्यापक शिक्षा और अध्यापन की योजना, निर्देशन और मूल्यांकन का दायित्व पूरा करता है। वह संस्कृति और नागरिकता प्राप्त व्यक्ति है। वह यह विश्वास करता है कि उसका कार्य राष्ट्र और समुदाय के विकास में महत्त्वपूर्ण है। यूनेस्को ने अपने 5 अगस्त, 1968 के प्रस्ताव में अध्यापक की स्थिति के सम्बन्ध में कहा था "ऐसी नीति जो अध्यापक-शिक्षा में प्रवेश हेतु निर्धारित हो। उसे ऐसी आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए जो समाज को ऐसे अध्यापक प्रदान करें जिनमें आवश्यक नैतिकता, बौद्धिक एवम् शारीरिक गुण हों तथा व्यावसायिक ज्ञान एवम् कौशल हों।" जर्मनी में कहा जाता है कि "अध्यापक-शिक्षा में अध्यापक को सोचना सिखाया जाय न कि उसे मशीन की तरह प्रशिक्षित किया जाय।" जे.बी.कोनान्ट ने अमरीकी अध्यापकों की शिक्षा के चार उद्देश्य बतायें—

1. अध्यापक को प्रजातान्त्रिक सामाजिक घटक को समझना चाहिए। उन्हें शिष्यों को भविष्य का नागरिक समझना चाहिए तथा लोकतन्त्रीय जीवन पद्धति के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखना चाहिये। उनके जीवन के व्यक्तिवादी दर्शन में भारत के सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता होनी चाहिए।
2. अध्यापक में छात्रों के सामाजिक व्यवहार को समझने की योग्यता होनी चाहिये।
3. अध्यापक को बालक के विकास का बोध होना चाहिये।
4. उन्हें शिक्षण सिद्धान्तों का बोध होना चाहिए।

विद्यालय के एक अनुभवी प्रधानाचार्य के अनुसार अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम अध्यापक को इस योग्य बनाये कि वह जान सके कि उसका कर्त्तव्य छात्रों को पढ़ाना है। केवल पाठ्यवस्तु प्रस्तुत करना नहीं।

सम्पूर्णानन्द समिति ने कहा—"अब यह महत्त्वपूर्ण विषय बन गया है कि अध्यापकों को प्रशिक्षण का ऐसा कार्यक्रम दिया जाना चाहिए जो उन्हें राष्ट्रीय दृष्टिकोण, एकता तथा सांस्कृतिक और बौद्धिक अखण्डता की प्राप्ति में सहायक हो।" राधाकृष्णन् आयोग के अनुसार "विद्यार्थी विद्यालय में जो कुछ देखता है उसे अपने व्यावहारिक जीवन में उतारना चाहता है।"

नवीन कार्यक्रम निर्माण में आवश्यक तत्त्व

1. (*i*) वर्तमान बी.एड. स्तरीय कार्यक्रम का विश्लेषण करना।

(*ii*) इस कार्यक्रम के उपयोगी घटकों के बारे में शिक्षाविदों, प्रधानाचार्यों एवं अध्यापकों की सम्मति प्राप्त करना।

(*iii*) विषय से सम्बन्धित आख्याओं का पुनरावलोकन करना।

नोट

2. मार्च 1969 में कलकता में इन बातों पर विचार करने तथा नये कार्यक्रम की रचना हेतु अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्रोफेसरों संकायाध्यक्षों एवम् प्रधानाचार्यों की एक अखिल भारतीय बैठक का आयोजन किया गया। इस समूह द्वारा अध्यापक की भूमिका पर आम सहमति बनायी गयी। इसके द्वारा शिक्षक-शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण किया गया। इन उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में कार्यक्रम का विस्तृत विवरण सुझाया गया। इस बात की ओर भी इंगित किया गया कि कार्यक्रम का कौन-सा घटक उद्देश्य की पूर्ति करेगा। विशेष उद्देश्य के लिए कई घटकों का प्रतिपादन किया गया एवम् सभी उद्देश्यों पर ध्यान दिया गया। इस प्रकार निर्मित कार्यक्रम को देश के चुने हुए 150 महाविद्यालयों एवम् विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों को उनकी अनुभूति जानने हेतु भेजा गया। अखिल भारतीय शिक्षक-प्रशिक्षक संघ के जोधपुर अधिवेशन में भी इस कार्यक्रम को बांटा गया और उस पर चर्चा की गई। जो सुझाव प्राप्त हुए थे उनमें अधिकांश इस आख्यान में सम्मिलित कर लिये गए।

छात्र शिक्षण एवम् मूल्यांकन पर आधारित बारहवें क्षेत्रीय सेमिनार एवम् कार्यशाला के सुझावों को भी पूर्णतया प्रयोग में लाया गया। ये सुझाव विभाग द्वारा स्वीकृत हैण्डबुक में सम्मिलित हैं।

अध्यापक शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Teachers Education)

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति में सामान्य शिक्षा एवम् व्यक्तिगत संस्कृति का विकास करना होना चाहिये। उसे शिक्षण की योग्यताओं को विकसित करना चाहिये। उसे शिक्षण के उन सिद्धान्तों के प्रति जागरूक बनाये रखना चाहिये जो स्नेहपूर्ण मानवीय सम्बन्धों के लिये आवश्यक हो तथा जिसमें उत्तरदायित्व की भावना हो, जो शिक्षण के माध्यम से सहयोग दे और समाज के लिये आदर्श बने। यूनेस्को के अनुसार अध्यापक शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्यों को तीन भागों में बांटा जा सकता है—(*i*) बोध, (*ii*) कौशल तथा (*iii*) अभिवृत्ति।

1. व्यापक बोधात्मक उद्देश्य (Comprehensive Objectives)

(*i*) समाज की संरचना, कार्य एवम् अन्त:क्रिया का ज्ञान

(*ii*) बालविकास एवम् अधिगम प्रक्रिया का बोध

(*iii*) विकासशील बालकों की समस्याओं का बोध

(*vi*) विद्यालयीय संगठन एवं प्रशासन का ज्ञान

(*v*) परीक्षा एवम् मूल्यांकन की विधियों का ज्ञान एवम् बोध

2. कौशल उद्देश्य (Skill Objectives)

(*i*) विभिन्न शिक्षण विधियों के प्रयोग की योग्यता एवम् कौशल

(*ii*) शिक्षण विधियों का विकास एवम् विषय के प्रयोग की योग्यता

(*iii*) प्रभावपूर्ण कौशल एवम् अभिप्रेरणा

(*iv*) शिक्षण के विशेष उद्देश्यों को बनाने की योग्यता

(*v*) मूल्यांकन प्रविधियों के प्रयोग तथा पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के संगठन की योग्यता।

3. अभिवृत्ति से सम्बन्धित उद्देश्य (Attitude Objectives)

(*i*) शिक्षण व्यवसाय के प्रति स्वस्थ एवम् सकारात्मक दृष्टिकोण

(*ii*) शिक्षण समस्याओं के प्रति वैज्ञानिक एवम् वस्तुपरक दृष्टिकोण

(*iii*) अध्यापक में प्रजातान्त्रिक एवम् राष्ट्रीय दृष्टिकोण, छात्रों की समस्याओं के प्रति सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण तथा उन्हें उचित राय देना।

बी.एड. कार्यक्रम (B.Ed. Programme)

सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम 100 अंक का होता है।

शिक्षण अभ्यास 200 अंक का होता है।

नोट

कार्यक्रम में निम्नलिखित सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम सम्मिलित हैं—

1. शिक्षा के सिद्धान्त या शिक्षा के सामाजिक और दार्शनिक आधार।
2. शैक्षिक मनोविज्ञान एवम् प्रारम्भिक शैक्षिक सांख्यिकी।
3. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में भारतीय शिक्षा की समस्यायें।
4. शिक्षण या शिक्षण तकनीकी विधियाँ।
5. विद्यालय विषयों की शिक्षण विधियाँ प्रारम्भिक पाठ्यक्रम के रूप में या एक विद्यालय विषय विशिष्ट पाठ्यक्रम के रूप में।
6. निम्न में से एक विशिष्ट या ऐच्छिक पाठ्यक्रम होता है—
   (*i*) शैक्षिक मापन और मूल्यांकन
   (*ii*) शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन
   (*iii*) शैक्षिक प्रशासन और पर्यवेक्षण
   (*iv*) विद्यालय संगठन
   (*v*) जनसंख्या शिक्षा
   (*vi*) स्वास्थ्य शिक्षा
   (*vii*) बुनियादी शिक्षा
7. शिक्षण विधियाँ, विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले दो विषय।

निम्नलिखित विषयों में से किन्ही दो को अभ्यास शिक्षण के लिये चुना जाता है—

(अ) 1. भौतिक विज्ञान 2. रसायन विज्ञान 3. वनस्पति और 4. सामान्य विज्ञान।

(ब) 5. गणित 6. गृह विज्ञान 7. हिन्दी 8. संस्कृत 9. अंग्रेजी 10. इतिहास 11. भूगोल 12. अर्थशास्त्र 13. नागरिकशास्त्र 14. सामाजिक अध्ययन 15. कृषि और 16. वाणिज्य।

प्रत्येक छात्र-अध्यापक को प्रत्येक विषय के 20 पाठ पढ़ाने होते हैं। अन्तिम परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये 40 पाठ पढ़ाना आवश्यक है। आदर्श पाठ एवम प्रदर्शन-पाठ विषय विशेषज्ञ द्वारा पढ़ाये जाते हैं। बी. एड, पाठ्यक्रम में इस समय विभिन्न शिक्षा विभागों में सूक्ष्म शिक्षण एवम् अनुकरणीय शिक्षण का संगठन किया जाता है। अन्तिम परीक्षा में प्रत्येक छात्राध्यापक द्वारा दो पाठ पढ़ाये जाते हैं जिसमें से एक पाठ विशिष्ट विषय में पढ़ाना आवश्यक है। प्रायोगिक परीक्षा के पहले सत्रीय कार्य जमा करना आवश्यक है। प्रायोगिक परीक्षा का तरीका एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय में बदलता है, परन्तु सभी विश्वविद्यालयों में एक जैसा प्रतिमान है। बी.एड. परीक्षा में सिद्धान्त तथा प्रयोगात्मक विषयों में अलग-अलग श्रेणियाँ प्रदान की जाती हैं।

अध्यापक-शिक्षा की संरचना (Structure of Teacher Education)

1. **प्रथम अवस्था**—अध्यापक शिक्षा की, प्राथमिक अवस्था के पूर्व की, माध्यमिक एवं महाविद्यालय की अवस्था आती है।
2. **द्वितीय अवस्था या एम. एड**—उनके लिए अध्यापक शिक्षा जिन्होंने बी. एड. एवं एल. टी. का प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है।
3. **तृतीय अवस्था या एम. फिल**—जिन्होंने एम. एड. की परीक्षा उत्तीर्ण की है उनकी अध्यापक शिक्षा। यह पी.एच.डी. की पूर्व अवस्था भी कहलाती है।
4. **चतुर्थ अवस्था**—एम. फिल. की परीक्षा पास कर लेने के बाद, प्रत्येक छात्र से यह आशा की जाती है कि वह कुछ शैक्षिक समस्याओं का चुनाव करें और उनको थीसिस के रूप में प्रस्तुत करे।

नोट

अध्यापक शिक्षा की अवस्थायें (Stages of Teacher Eduaction)

1. पूर्व-प्राथमिक अवस्था (Pre-Primary Stage)

प्रत्येक तहसील स्तर पर एक पूर्व-प्राथमिक अध्यापक शिक्षा का केन्द्र होना चाहिये। प्रशिक्षार्थी की न्यूनतम योग्यता हाई-स्कूल हो एवं प्रशिक्षण की अवधि एक वर्ष की हो। अध्यापक-शिक्षा की संरचना निम्नलिखित हो–

(*i*) **शिक्षण कौशल** (Teaching Skills)–कविता का पाठ बताना, कहानी कहना, खेल खेलना, एवं कला तथा विशिष्ट शिक्षण विधियाँ

(*ii*) **शिक्षण उद्देश्य** (Teaching Objectives)–बालक का सर्वांगीण विकास।

(*iii*) **शिक्षण की प्रकृति** (Nature of Teaching)–व्यवहार का पैटर्न।

2. प्राथमिक अवस्था (Primary State)–ऐसे विद्यालय सामान्य विद्यालय कहलाते हैं, जहाँ पर कि प्राथमिक अध्यापकों के लिये शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। इनका संचालन राज्य सरकार द्वारा होता है। अध्यापक प्रशिक्षार्थी की न्यूनतम योग्यता हाई स्कूल होती है। समय की अवधि दो वर्ष की होती है। प्रशिक्षणार्थी को बी.टी. की उपाधि दी जाती है। प्रवेश पाने की न्यूनतम योग्यता स्नातक होती है। इसकी अवधि एक वर्ष की होती है तथा उसकी संरचना निम्न प्रकार होती है–

(*i*) **शिक्षण कौशल** (Teaching Skills)–शारीरिक शिक्षा, मनोरंजक कार्यकलाप, स्वास्थ्य शिक्षा, कला, संगीत, खेल, एवं विशिष्ट शिक्षण विधियाँ है।

(*ii*) **शिक्षण उद्देश्य** (Teaching Objectives)–भाषा (मातृ भाषा और अंग्रेजी) प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान और गणित, बच्चे का मानसिक विकास।

(*iii*) **शिक्षण की प्रकृति** (Nature of Teaching)–आधुनिक व्यवहार का ज्ञान, विद्यालय के महत्त्वपूर्ण स्थान का ज्ञान, सामाजिक परिवर्तन के विषय का ज्ञान, प्रजातन्त्र में विश्वास रखना आदि।

3. जूनियर अवस्था (Junior of Middle State)–इस प्रशिक्षण को सी.टी., सी.टी. (बेसिक) जे.टी.सी, जे.बी.टी.सी. अथवा बी.टी.सी. के नाम से जाना जाता है। प्रशिक्षणार्थी के प्रवेश की न्यूनतम योग्यता इण्टरमीडिएट होती है। प्रशिक्षण की अवधि दो वर्ष की होती है। यह प्रशिक्षण अध्यापक शिक्षा के लिये कोई योगदान नहीं करता है।

4. माध्यमिक अवस्था (Secondary of Higher Secondary Stage)–इस अवस्था पर न्यूनतम योग्यता स्नातक होती है। इसकी प्रशिक्षण अवधि एक वर्ष की होती है। सामान्यतया इस प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम को दो भागों में बांटते हैं–(1) सैंद्धान्तिक, (2) प्रयोगात्मक। इसके द्वारा एल.टी., (बेसिक)., बी. एड. की उपाधि दी जाती है। क्षेत्रीय महाविद्यालय में चार वर्ष का सामूहिक प्रशिक्षण देकर बी. एस. सी., एड., उपाधि प्रदान करते हैं। इसमें प्रवेश इण्टरमीडिएट के बाद होता है। प्रशिक्षार्थी की न्यूनतम योग्यता स्नातक होती है। ऐसे अभ्यर्थी को वरीयता दी जाती है जिसने बी. ए. में शिक्षा शास्त्र लिया हो या अध्यापक हो। इस उपाधि को बी. फिल. के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रशिक्षण की अवधि एक वर्ष की होती है एवं शिक्षा की संरचना अग्रलिखित प्रकार की होती है।

(*i*) **शिक्षण कौशल** (Teaching Skills)–(1) प्रशिक्षण की विधि, एक विषय में विशिष्टीकरण, (2) सूक्ष्म-शिक्षण, (3) स्वास्थ्य का ज्ञान, शारीरिक शिक्षा, खेल मनोरंजक क्रियायें एवं कार्य अनुभव, (4) मानव व्यवहार का ज्ञान।

(*ii*) **शिक्षण उद्देश्य** (Teaching Objectives)–शिक्षण तकनीकी (भारतीय एवं व्यावहारिक रूप में) इसमें शिक्षक की प्रभावोत्पादकता, प्रशिक्षण एवं अधिगम के सिद्धान्त आते हैं। वैकल्पिक पाठ्यक्रम की भी व्यवस्था करनी चाहिये, उसमें निम्नलिखित में से एक होना अनिवार्य है–

(1) मापन एवं मूल्यांकन के सिद्धांत (2) निर्देशन (3) क्रियात्मक अनुसन्धान (4) शैक्षिक दर्शन एवं (5) शैक्षिक मनोविज्ञान।

नोट

(*iii*) **शिक्षण की प्रकृति** (Nature of Teaching)—मानवीय प्रकृति के प्रजातन्त्रीकरण की प्रक्रिया का ज्ञान, राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता तथा राष्ट्रीय शान्ति में पूर्ण विश्वास, इन सबमें धनात्मक विकास करना, शिक्षकों में व्यक्तिगत, सामाजिक एवं व्यावसायिक गुणों का विकास करना।

सैद्धान्तिक विषय में पाँच प्रश्न पत्र होते हैं जिनमें प्रत्येक प्रश्न पत्र 100 अंक का होता है। इस प्रकार सैद्धांतिक प्रश्न पत्र 500 अंक तक होता है। प्रयोगात्मक शिक्षण 200 (दो सौ अंक) का होता है। प्रयोगात्मक प्रशिक्षण सूक्ष्म-शिक्षण एवं कुछ उचित विधियों पर आधारित होते हैं। वर्तमान समय में प्रयोगात्मक प्रशिक्षण में न तो अध्यापक प्रशिक्षक और न ही प्रशिक्षणार्थी रुचि रखता है। जब तक कि किसी नये प्रयोगात्मक प्रशिक्षण का शोध न हो तब तक इसके बन्द कर देना चाहिये। इस सन्दर्भ में बी. एड. प्रशिक्षण के कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य निम्नलिखित हैं—

(*i*) छात्राध्यापकों की वर्तमान चयन प्रणाली पूरी तरह खत्म कर देनी चाहिये। इसके सम्बन्ध में पी.एम.टी. की तरह ही प्रवेश परीक्षा का आयोजन करना चाहिये।

(*ii*) प्रत्येक सत्र की शुरुआत जुलाई माह से होनी चाहिये तथा सत्रावसान मई माह में होना चाहिये।

(*iii*) प्रयोगात्मक परीक्षा का मूल्यांकन दो स्तरों पर किया जाना चाहिये, प्रथम पूर्णरूप से आन्तरिक दूसरा पूर्णरूप से बाह्य।

(*iv*) सभी प्रयोगात्मक क्रियाएँ केवल औपचारिकताएँ न होकर पूर्ण रूप से वास्तविक रूप में होनी चाहिये।

5. महाविद्यालयी स्तर (Collegiate Level):- महाविद्यालयों के शिक्षकों के लिये वर्तमान समय में अध्यापक-शिक्षा आकर्षित नहीं करती। ऐसे अध्यापकों की नियुक्ति की जानी चाहिये जोकि योग्य हों एवं अपने व्यवसाय में दक्ष हों।

नोट्स पूर्व-प्राथमिक अध्यापक-शिक्षा की ओर अभी तक कोई उचित ध्यान नहीं दिया गया है। इसके लिये नाममात्र की प्रशिक्षण संस्थायें, इलाहाबाद, आगरा, लखनऊ एवं दिल्ली में हैं।

(*i*) एम.एड. पाठ्यक्रम (M.Ed. Course)

वर्तमान समय में एम. एड. के सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम को बन्द कर देना चाहिये। इसके कुछ प्रश्न पत्रों जैसे शैक्षिक अनुसंधान एवं शोध प्रपत्र को एम. फिल. की कक्षा में लागू करना चाहिये। दर्शन, मनोविज्ञान एवं निर्देशन बी. एड. में रखा जाना चाहिये। इस प्रकार एक नये पाठ्यक्रम की संरचना करनी चाहिये जिसमें नये प्रकरणों का समावेश हो जो अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शन एवं राजनीतिशास्त्र से संबंधित हों।

(*ii*) एम.फिल. पाठ्यक्रम (M.Phil. Course)

एम.एड. या एम.फिल. की परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके अभ्यर्थी को इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जाता है। इसकी संरचना निम्नलिखित है:

(1) **शिक्षण कौशल** (Teaching Skill)—विशिष्ट कौशल एवं मुख्य कौशल से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण ज्ञान, व्यवहार, सुधार, समस्या को पहचानने की क्षमता, कौशलों का विश्लेषण एवं पहचान।

(2) **शिक्षण उद्देश्य** (Teaching Objectives)—1. अध्यापक शिक्षा, 2. शैक्षिक अनुसंधान एवं यन्त्र, 3. शैक्षिक संरचना एवं शैक्षिक प्रशासन, 4. पाठ्यक्रम की व्यवस्था करना, 5. शिक्षा के क्षेत्र में यन्त्रों का विशिष्टीकरण।

(3) **शिक्षण की प्रकृति** (Nature of Teaching)—सृजनात्मक का विकास, सामाजिक ज्ञान, नेतृत्व के गुणों का विकास, मनोवृत्ति का विकास, शिक्षण के महत्त्व एवं अर्थ को समझना।

इस पाठ्यक्रम की प्रभावोत्पादकता के लिये सुझाव

1. 'शिक्षण तकनीकी' के विषय को इस पाठ्यक्रम से निकाल देना चाहिये क्योंकि वर्तमान समय में यह पाठ्यक्रम बी.एड., एम.एड. एवं एम.फिल. में है।

नोट

2. एम. फिल. के पाठ्यक्रम के लिये एक सप्ताह में कुछ घण्टों का निर्धारण करना चाहिये, जिसमें कि शिक्षाविदों एवं प्रोफेसरों के द्वारा शिक्षा की समस्याओं विशेषतया भारतीय शिक्षा की समस्याओं के समाधान पर व्याख्यान होने चाहिये।
3. एम. फिल. के पाठ्यक्रमों का चयन इस प्रकार किया जाये कि उनका समावेश अच्छी-अच्छी पुस्तकों में हो सके।
4. एम. फिल. पाठ्यक्रम परीक्षा पर आधारित न हो, इसके मूल्यांकन में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि शिक्षकों में शिक्षण एवं अनुसन्धान की योग्यता का विकास हो।

(*iii*) पी.एच.डी. की अवस्था (Ph. D. Stage)

इस स्तर पर प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को सार्थक समस्या का चयन करना चाहिये। उस समस्या का समाधान करने के लिये विशाल आंकड़ों का संकलन करना चाहिये तथा सांख्यिकी के आधार पर उनकी व्याख्या करनी चाहिये।

इस अवस्था के लिये सुझाव

1. अध्यापक-शिक्षा से सम्बन्धित प्रयोगात्मक समस्या को प्राथमिकता के साथ हल करना।
2. केवल उन्हीं समस्याओं का चयन करना जोकि भारतीय परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त हों।
3. जब किसी शोध-प्रपत्र की स्वीकृति हो रही हो तो इस बात को ध्यान में रखना कि ऐसे प्रकरण का चयन न हो जो किसी विदेशी शोध से लिया गया हो।
4. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाले शोध छात्रों के कार्यों की समय-समय पर समीक्षा की जानी चाहिये। यदि उनका कार्य सन्तोषजनक न हो तो उनकी सहायता को स्थगित कर देनी चाहिए।
5. ऐसे प्रत्येक शोध निर्देशक को अलग से भुगतान मिलना चाहिए जो कि शोध छात्र का निर्देशन कर रहा हो।
6. शिक्षाशास्त्र में परास्नातक उपाधि रखने वाले अभ्यर्थी का पंजीकरण शोध के लिए सीधे होना चाहिए।

अध्यापक शिक्षा के मानदंड (Standards of Teacher Education)

मित्जेल (1960) ने शिक्षक के क्षमता या प्रभाव के निम्न तीन सिद्धान्त बताये—

1. पूर्व योग्यता मानदण्ड (Presage Factors or Criteria) :-

(*i*) सन्दर्भ (context) (*ii*) साइबरनेशन (cybernation) (*iii*) नेतृत्व का अवसर (extent of lead) (*iv*) नियन्त्रण (control) (*v*) सीमायें (boundaries) (*vi*) चुनाव या चयन (selection)

पूर्व योग्यता मानदण्ड छात्र शिक्षक की निम्न संभावनाओं को इंगित करता है—शैक्षिक उपलब्धि, ज्ञान, बुद्धि, योग्यताभाव, एवं व्यक्तित्व का तत्त्व आदि।

2. प्रक्रिया मानदण्ड (Process factors of Criteria)— पूर्व सूचना कसौटी एवं प्रक्रिया मानदण्ड के बीच स्पष्ट समय अन्तर नहीं है। ये मानदण्ड कक्षा में अन्तःक्रिया, कक्षा में व्यवहार मौखिक या शारीरिक, संवाद-प्रवीणता आदि को इंगित करता है। नियन्त्रण एवं चयन आदि पूर्व योग्यता मानदण्ड के भाव भी इसके अन्तर्गत आते हैं।

कार्य सिद्धान्तों की पहचान विभिन्न कार्यक्रमों एवं प्रारूपों में सम्मिलित है जैसे—व्यक्तित्व प्रसार, भावना विभाजन, अभ्यास एवं विलम्ब केन्द्रित पाठ्यक्रम।

(1) परिमाण; उद्देश्यः पूर्व आकांक्षित, अनुभव, निर्देश सामग्री, स्तर एवं सामान्य मूल्यांकन,
(2) व्यक्तित्व की सीमा
(3) भावना विभाजन का अनुभव
(4) समर्थन पद्धति
(5) विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम।

नोट

3. उत्पाद मानदण्ड (Product criteria)—यह मानदण्ड परिणाम को इंगित करता है जोकि शिक्षण के फलस्वरूप छात्रों के परीक्षाफल, छात्रों के विचार, शिक्षक एवं छात्रों के बीच अन्त:क्रिया के रूप में फलीभूत होता है। शिक्षक इन प्रतिमानों में बताये गये नियमों के अनुसार कार्य करने में सक्षम होता है।

छात्र-शिक्षण का अर्थ (Meaning of Student-Teaching)

1. **शाब्दिक अर्थ**—यह "छात्र-शिक्षण" शब्द दो शब्दों के मेल से बना है, छात्र तथा शिक्षण। छात्र का अर्थ होता है, कि वह व्यक्ति जिसमें—बुद्धि, व्यक्तित्व प्रवणता, योग्यता सभी क्षमतायें हैं और उसे समूह में शिक्षित या प्रशिक्षित किया जाता है। शिक्षण में ऐसी क्रियायें की जाती हैं जिनसे छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाया जाता है। इसके अन्तर्गत छात्र एवं शिक्षक दोनों की क्रियायें एवं प्रतिक्रियायें आती हैं। पहले शिक्षक को उपदेश देने की प्रक्रिया अथवा मूल्यों एवं अभिवृत्तियों का विकास करना समझा जाता था। आज शिक्षण को प्रभावी निर्देशन की क्रिया माना जाता है जिसमें सुनियोजित एवं निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। शिक्षक के उद्देश्यों का छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन के रूप में प्राप्त की जाती है।
2. **छात्र-शिक्षण का तार्किक अर्थ**— एक छात्र को प्रशिक्षित करके प्रभावशाली शिक्षक बनाने के लिये उसके निहित गुणों एवं कौशल का विकास करना होता है। शिक्षक जन्मजात होते हैं, परन्तु उन्हें विकसित करने तथा प्रभावशाली शिक्षक बनाने के लिये समुचित वातावरण एवं परिस्थितियाँ देनी होती हैं।
3. **शिक्षण अभ्यास**—छात्र-शिक्षण के साथ अधिगम पर भी बल दिया जाता है जबकि शिक्षण अभ्यास (Teaching Practice) के अन्तर्गत शिक्षण की क्रियाओं को ही महत्त्व दिया जाता है। छात्र-शिक्षण में छात्र की क्षमताओं के विकास को प्राथमिकता दी जाती है। अभ्यास-शिक्षण में मूल्यांकन को महत्त्व दिया जाता है। प्रभावशाली अध्यापक बनाने के लिये व्यक्ति की क्षमताओं और योग्यताओं की जानकारी एवं विकास की आवश्यकता होती है।
4. **छात्र-शिक्षण का परिवर्तनशील प्रत्यय**—समय के परिवर्तन के साथ 'छात्र-शिक्षण' के प्रत्यय का अर्थ भी परिवर्तनशील है। भावी शिक्षकों को अन्य पाठ्यक्रम के विषयों से पृथक समझना चाहिए। शिक्षण में छात्र औपचारिक कक्षाओं में प्रवचन, प्रयोगशाला या पढ़ने की क्रियाओं को करता है, जिनमें पाठ्य-पुस्तकों, व गृहकार्यों द्वारा वह अपनी स्मरण शक्ति से पुरावृत्ति करता है। आज के परिवेश में छात्र-शिक्षण में पाठ-नियोजन अधिगम सहायक सामग्री को प्रयुक्त करके पाठ को पढ़ाना, प्रयोग कराना शामिल है जिसमें वह सुनना, प्रस्तुतीकरण, वाद-विवाद के आयोजन और छात्रों की निष्पत्ति के मूल्यांकन हेतु परीक्षण प्रश्न तैयार करता है।
5. **आधुनिक 'छात्र-शिक्षण' प्रत्यय**—छात्र-शिक्षण के कार्यक्रम का प्रारूप, छात्राध्यापक के लिये शिक्षण-अधिगम की मूलभूत क्रियाओं को समझना, ग्रहण करना तथा उनका प्रयोग करना है। इसके अतिरिक्त उसे वास्तविक शिक्षण समस्याओं को समझना तथा छात्रों को निर्देशन देना है। छात्र-शिक्षण में शिक्षण-कौशलों का स्वामित्व प्राप्त करना होता है।

छात्राध्यापक-शिक्षण की चुनौतियों को सकारात्मक दृष्टिकोण से समझने एवं हल करने का प्रयास करता है। इनके समाधान के लिये वह उपलब्ध प्रविधियों का प्रयोग करने का प्रयास करता है। छात्र-शिक्षा के अंतर्गत सभी क्रियाओं-शिक्षण-कौशल, शिक्षण-समस्याओं, निर्देशन आदि को सम्मिलित किया जाता है। छात्र-शिक्षण में छात्राध्यापक पर्यवेक्षण से कुछ अपेक्षा करने के बजाय स्वयं इन क्रियाओं का नियोजन एवं सम्पादन करता है। वह कक्षा-शिक्षण की समस्याओं के समाधान के लिये क्रियात्मक अनुसंधान का प्रयोग करता है और समस्या का वैज्ञानिक समाधान निकालता है।

क्या आप जानते हैं शिक्षण एक सामाजिक प्रत्यय है जो शासन प्रणाली तथा सामाजिक दर्शन से प्रभावित होता है। भारतीय परिवेश में शिक्षण को एक अन्त:प्रक्रिया माना जाता है।

नोट

छात्र-शिक्षण की विशेषताएँ (Characteristics of Student-Teaching)

1. **व्यावसायिक अनुभव (Professional Experience)**—छात्र-शिक्षण के अन्तर्गत व्यावसायिक अनुभवों का सम्पादन किया जाता है जिससे शिक्षा-सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप में प्रदर्शन किया जा सके और उनके सम्पादन के कौशलों का विकास किया जा सके।
2. **निर्देशन अनुभव (Directed learning experience)**—छात्र-शिक्षण काल में छात्र एक समूह को सीखने की ओर उन्मुख करने के लिये निर्देशन प्रदान करता है। वह छात्र के समूह की अधिगम की कठिनाइयों का निदान करके सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है।
3. **शिक्षण-अधिगम परिस्थिति (Teaching-learning situation)**—छात्राध्यापक छात्र को सामूहिक रूप से सिखाने के लिये समुचित परिस्थिति उत्पन्न करता है और साथ ही साथ ऐसा करने से वह स्वयं पढ़ाना सीखता है। इस प्रकार शिक्षण एक अधिगम परिस्थिति है।
4. **जटिल क्रिया (Complex activity)**—छात्र शिक्षण में शिक्षण एवं अधिगम दोनों क्रियायें साथ होती हैं। इसलिये यह शिक्षण तथा अधिगम के समान जटिल हैं। शिक्षक को शिक्षण की क्रियाओं को समझना और उन्हें अधिगम से सम्बन्धित करना है। उसका प्रमुख उद्देश्य व्यावसायिक अधिगम अनुभवों के माध्यम से छात्रों का विकास करना है। छात्र-शिक्षण अधिगम की समुचित परिस्थिति को उत्पन्न करने के लिये आवश्यक प्रत्यय है। इससे छात्राध्यापक को आत्म-विश्लेषण तथा स्वयं के मूल्यांकन तथा अपनी क्षमताओं के विकास का अवसर प्राप्त होता है। अस्तु, छात्र-शिक्षण एक शिक्षक की क्रियाओं के सिखाने का माध्यम है। वह शिक्षण-कौशलों के विकास के लिये समुचित अनुभव एवं अवसर प्रदान करता है। वह छात्राध्यापकों को उनकी व्यावसायिक क्रियाओं के सभी पक्षों की तैयारी करने का अवसर एवं अनुभव प्रदान करता है।
5. **शिक्षण-अभ्यास की प्रकृति**—छात्राध्यापकों को शिक्षण-अभ्यास से पूर्व सैद्धान्तिक ज्ञान दिया जाता है। उसके बाद शिक्षण अभ्यास कराया जाता है। शिक्षण अभ्यास का प्रमुख उद्देश्य छात्राध्यापकों में प्रभावशाली शिक्षण-कौशल एवं योग्यता का विकास करना है। शिक्षण-अभ्यास में निम्नलिखित क्रियायें सम्मिलित की जाती हैं—
   - (*i*) शिक्षा-संकाय के प्राध्यापकों एवं सहयोगी विद्यालयों के योग्य शिक्षकों द्वारा आदर्श-पाठ का प्रदर्शन करना और छात्राध्यापकों द्वारा शिक्षण पाठों का निरीक्षण करना।
   - (*ii*) पाठ-योजनाओं के लिये आवश्यक सहायक सामग्री तथा अनुदेशन सहायक सामग्री की रचना करना तथा उसकी व्यवस्था करना।
   - (*iii*) विद्यालय के विषयों में से दो विषयों का चयन करके उनकी पाठ्य-सामग्री, पाठों की रचना कराना और उनकी जाँच करना।
   - (*iv*) शिक्षण-कौशलों के विकास एवं सुधार करने की दृष्टि से सुझाव देना।
   - (*v*) पाठों के प्रस्तुतीकरण के अन्त में छात्राध्यापकों द्वारा वाद-विवाद।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. **निम्नलिखित कथनों में 'सत्य' तथा 'असत्य' की पहचान कीजिए (State Whether the following statements are 'True' or 'False')—**

1. अध्यापक को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में भाग लेना चाहिए।
2. अध्यापक में उच्चकोटि की संवाद क्षमता स्पष्टता, शुद्धता तथा तार्किकता होनी चाहिए।
3. अध्यापक को पाठ्यक्रम के उद्देश्य एवं क्षेत्र की जानकारी आवश्यक नहीं होती।
4. छात्र शिक्षण के अंतर्गत व्यावसायिक अनुभवों का सम्पादन किया जाता है।

नोट

5. छात्राध्यापकों को शिक्षण अभ्यास के लिए सैद्धांतिक ज्ञान आवश्यक नहीं है।

24.2 सेवारत अध्यापक शिक्षा (In-Service Teacher Education)

प्राचीन काल (Ancient Period): भारत में विभिन्न समुदायों के मध्य विभिन्न माध्यमों से काफी समय पहले शिक्षा के विस्तार का विचार था। मेला, त्योहार, औपचारिक, सामाजिक, धार्मिक माध्यम से पूरे समुदाय एवं शिक्षकों को धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। इसके अलावा धार्मिक यात्रा, सामुदायिक वार्तालाप आदि भी शिक्षा प्रदान करने के साधन थे।

अंग्रेजों का काल (British Period): अंग्रेजी के काल में अध्यापक-शिक्षा के प्रति कम प्रयास किये गए। वुड डिस्पैच (Wood Despatch 1954) ने शिक्षकों में उनके व्यवसाय में सुधार एवं विकास की घोषणा की । भारतीय शिक्षा आयोग (1882) ने निम्नलिखित प्रस्तावों को पारित किया–

(*i*) शिक्षण-सिद्धान्तों एवं अभ्यास की परीक्षा में सफल होने पर ही माध्यमिक शिक्षा में स्थाई अध्यापक की नियुक्ति की जोयेगी।

(*ii*) स्नातक स्तर के छात्रों को इस परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए कुछ समय के लिए प्रशिक्षण के लिए जाना आवश्यक होता है।

सेवारत अध्यापक–शिक्षा के प्रत्यय और प्रशिक्षण संस्थाओं की भूमिका का संकेत सर्वप्रथम लॉर्ड कर्जन (1904) की शिक्षा नीति में मिलता है। इसके बाद सेवारत् अध्यापक शिक्षा के इतिहास का उल्लेख भारत सरकार के फरवरी 1913 के शिक्षा नीति के प्रस्ताव में किया गया था। सन् 1929 में हर्टाग समिति ने अपने प्रस्ताव में स्पष्ट रूप से सेवारत् अध्यापक-शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया था। हर्टाग समिति के प्रस्ताव के मंजूर होने पर संघीय शासन की राज्य सरकारों ने अध्यापक-शिक्षा की व्यवस्था का आरम्भ किया था। सन् 1937 के बाद से भारत में सेवारत् अध्यापक-शिक्षा का विकास आरम्भ हुआ।

स्वतन्त्रता के बाद का काल (Post Independence Period): सन् 1944 में युद्धोपरान्त शिक्षा के विकास के लिए रिपोर्ट प्रकाशित हुई, जिसमें शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के विकास की बात कही गयी। सन् 1944 से 1948 के मध्य तक यह पाया गया कि विभिन्न राज्य देश में इस व्यवस्था को नया रूप दे रहे हैं। मद्रास, बिहार एवं उत्तर प्रदेश में फिर से रेफ्रैशर कोर्स एवं ग्रीष्म कालीन संस्थाएं स्थापित की गयीं। सन् 1949 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने एक अति आवश्यक प्रस्ताव पारित करके हाई स्कूल एवं इण्टरमीडिएट के शिक्षकों के लिए संस्थाओं में रिफ्रैशर पाठ्यक्रम का आरम्भ किया था। समिति ने यह प्रस्ताव पारित किया कि इस योजना की सार्थकता अध्यापकों की प्रोन्नति से सम्बंधित करके प्रमाणित की जा सकती है। प्रत्येक चार या पाँच वर्ष के बाद शिक्षक को उनकी उपस्थिति के आधार पर पदोन्नति देकर इस योजना को प्रभावी बनाया जा सकता है। सन् 1950 में प्रशिक्षण संस्थाओं के प्राचार्यों की गोष्ठी बड़ौदा में हुई। इस समिति ने पूर्व शिक्षकों के प्रशिक्षण एवं सेवारत् अध्यापकों के लिए रिफ्रेशर पाठ्यक्रम तथा ऐसे शिक्षकों के लिये उच्च प्रशिक्षण की व्यवस्था पर बल दिया जोकि किसी विशेष क्षेत्र में विशेष योग्यता चाहते हैं।

सन् 1951 में प्रशिक्षण महाविद्यालयों के संघ के संयुक्त सचिव ने व्यावसायिक संस्थाओं के द्वारा पत्राचार पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षा की व्यवस्था के प्रति ध्यान दिलाया और व्यावसायिक प्रशिक्षण के विकास पर बल दिया। सन् 1958 में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशें की जो कि प्रशिक्षण संस्थाओं में दी जानी चाहिये–

1. रिफ्रेशर पाठ्यक्रम,
2. विशिष्ट विषयों में अल्प-तीव्र पाठ्यक्रम
3. कार्यशाला में व्यावहारिक प्रशिक्षण, तथा
4. गोष्ठी एवं व्यावहारिक वाद-विवाद।

सन् 1954 में तीसरी गोष्ठी आयोजित की गई जिसमें भारत की प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रचार्यों ने इस व्यवस्था के विषय में फिर से विचार-विमर्श किया। इसमें सेवारत् अध्यापक शिक्षा के विषय में विशेष वार्ता हुई।

नोट

सन् 1955 में भारतीय माध्यमिक परिषद् ने सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा के लिये एक सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित योजना के शुभारम्भ के लिये संकल्प किया जिसके अन्तर्गत देश की चुनी हुई प्रशिक्षण संस्थाओं में विस्तार सेवा के माध्यम से सेवारत् अध्यापक शिक्षा का आरम्भ किया जाना था। परिषद् ने विस्तार सेवा केन्द्र के माध्यम से 24 प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सेवारत् अध्यापकों में व्यावसायिक गुणों के विकास के लिये एवं संस्थाओं के सुधार के लिये कार्यक्रम का आरम्भ किया। सन् 1957-1958 के मध्य विभिन्न अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं ने विस्तार सेवा केन्द्र खोले। इस प्रकार प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या 54 तक पहुँच गई। सन् 1959 में इस परिषद् को परामर्श समिति का रूप दे दिया गया और इसकी देख-रेख शिक्षा मंत्रालय द्वारा की जाने लगी। भारत सरकार एक नये विभाग का निर्माण किया। इस विभाग का नाम 'माध्यमिक शिक्षा प्रसार नियोजन निदेशालय' रखा गया। सितम्बर 1961 में एक नयी स्वायत्त संस्था 'राष्ट्रीय प्रशिक्षण एवं अनुसन्धान परिषद्' की स्थापना की गयी। डेपसे को इस संस्था के एक भाग के रूप में मान्यता प्रदान की गयी। सन् 1962 में और अधिक विस्तार सेवा विभागों की स्थापना की गयी जिससे कि अधिक से अधिक लोग प्रसार सेवा का उपयोग कर सकें। इसी वर्ष में 23 प्रशिक्षण विद्यालयों में प्रसार इकाइयाँ खोली गयीं। सेवारत् अध्यापक शिक्षा एवं विस्तार सेवा की इकाइयों की संख्या सन् 1965 तक 96 तक पहुँच गयी थी।

सन् 1962-63 के मध्य रा. प्र. अनु. प. ने अपने बेसिक शिक्षा विभाग के माध्यम से प्रशिक्षण विद्यालयों में 23 प्रसार सेवा केन्द्रों की स्थापना की। सन् 1964 में शिक्षा आयोग ने चार-पाँच वर्ष में पुन: एक बार सभी सेवारत् अध्यापकों के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता पर विशेष बल दिया।

इस प्रकार सेवारत् अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता पर लगातार बल दिया जाता रहा है। देश के विभिन्न भागों में सेवारत् शिक्षकों के प्रशिक्षण के विभिन्न प्रकार के केन्द्रों, पत्राचार संस्था, अवकाश कालीन संस्था की स्थापना की गयी है। समय-समय पर विभिन्न प्रकार की गोष्ठियों, वाद-विवादों और सेम्पोजियमों का आयोजन किया जाता रहा है, परन्तु देश में सेवारत् अध्यापकों के पर्याप्त प्रशिक्षण की आवश्यकता आज भी बनी हुई है, जिससे कि इसकी कमियों को दूर किया जा सके, तथा शिक्षकों के व्यावसायिक गुणों में विकास हो सके।

नोट्स सन् 1937 में भारत में ए. बूट एवं एस. एच. छल ने व्यावसायिक शिक्षा की एक रिपोर्ट प्रकाशित की। इसमें यह विचार स्पष्ट किया गया कि शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था दो रूपों में की जाये–

1. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा (In-service Teacher-Education),
2. पूर्व-सेवारत् अध्यापक-शिक्षा (Pre-service Teacher-Education)

सेवारत् अध्यापक शिक्षा की मूलभूत मान्यताएँ (Postulates of In-Service Education)

1. सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा उनके पूरे व्यावसायिक जीवन में एक नियोजित ढंग से होनी चाहिये।
2. सेवारत् अध्यापक शिक्षा के द्वारा शिक्षा के विभिन्न पहलुओं में गुणात्मक विकास किया जा सकता है।
3. सेवारत् अध्यापक को दिया गया पूर्व प्रशिक्षण उनके व्यावसायिक जीवन में प्रभावशाली ढंग से अपने कार्य को संचालित करने के लिये पर्याप्त नहीं होता।
4. जीवन के अनेक मानवीय क्षेत्रों में नित्य प्रति परिवर्तन हो रहा है जिससे कि शिक्षा भी प्रभावित होती है। अस्तु, यह आवश्यक है कि शिक्षक उन परिवर्तनों से भली-भाँति अवगत होता रहे।
5. शिक्षा में परिवर्तन लाने के लिये यह आवश्यक है कि शिक्षक अन्य सम्बन्धित क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तनों से अवगत होता रहे। इसके लिये यह आवश्यक है कि शिक्षकों की योग्यता, ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति आदि में परिवर्तन लाया जाये तथा विकास किया जाये।
6. शैक्षिक समस्याओं को हल करने के लिये यह आवश्यक है कि इस प्रकार की गोष्ठियों का आयोजन किया जाय, जिनका उपयोग प्रभावशाली ढंग से हो सके।
7. सेवारत अध्यापक-शिक्षा शिक्षा के विकास के लिये एक आवश्यक तत्त्व है।

सेवारत् अध्यापक शिक्षा का अर्थ (Meaning of In-Service Education)

सेवारत् अध्यापक-शिक्षा में व्यावसायिक अध्यापकों एवं अन्य अध्यापकों को उनके व्यवसाय से सम्बन्धित निरन्तर जानकारी प्रदान करना, एवं व्यावसायिक गुणों तथा कौशलों में सुधार एवं विकास करना सम्मिलित है। सेवारत् अध्यापक-शिक्षा की व्यवस्था, अध्यापक को शिक्षण-व्यवसाय में प्रवेश करने के पश्चात् उनके लगातार विकास के लिये उचित अनुदेशन को सुनिश्चित करने के लिये दी जाती है। सेवारत् अध्यापक-शिक्षा द्वारा अध्यापकों के अन्दर व्यावसायिक गुणों का विकास किया जाता है।

सेवारत् अध्यापक शिक्षा की परिभाषा (Definition of In-Service Education)

1. "सेवारत् अध्यापक शिक्षा एक क्रियाबद्ध योजना है, जिसका उद्देश्य शिक्षक और शैक्षिक सेवा कर्मचारियों का निरन्तर विकास है।
   —एम.बी. बुच
2. "वे समस्त क्रियायें एवं पाठ्यक्रम जिनका उद्देश्य अध्यापक के व्यावसायिक गुणों को स्थाई करना तथा उनमें इच्छा शक्ति एवं कौशलों का विकास करना होता है, सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के प्रत्यय में आता है।"
   —केन (1969)

सेवारत् अध्यापक शिक्षा की गतिविधियाँ (Activities of In-Service Teacher Education)

1. व्यावसायिक ज्ञान प्राप्त करना,
2. कौशल का विकास करना,
3. व्यवसाय के प्रति अभिवृत्ति उत्पन्न करना,
4. व्यवसाय से सम्बन्ध रखना,
5. व्यावसायिक कौशल, प्रशासकीय कौशल, प्रबन्धकीय कौशल, नेतृत्व कौशल आदि का विकास करना,
6. शिक्षण व्यवसाय के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करना
7. शिक्षण-विधियों और शोध कार्यों पर आधारित पाठ्यक्रम तथा
8. सेमिनार, सेम्पोजियम, गोष्ठी, वार्तालाप आदि क्रियाकलापों की व्यवस्था करना।

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (University Education Commission, 1949)

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने अध्यापक-शिक्षा की आवश्यकता इन शब्दों में व्यक्त की है—

"यह असाधारण बात है कि विद्यालय का अध्यापक जो शिक्षा 25 वर्ष की आय तक सीखता है उसी के आधार पर अध्ययन करता रहता है और अपने अनुभवों के अतिरिक्त किसी नवीन ज्ञान को नहीं प्राप्त कर पाता है। इसके लिये यह आवश्यक है कि शिक्षक को नवीन ज्ञान में समय-समय पर अवगत कराते रहना चाहिए तभी वह अपने व्यवसाय के प्रति पूर्णत: कर्त्तव्य निर्वाह कर सकता है।"

इस प्रकार विश्वविद्यालय आयोग 1949 ने भी सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा तथा प्रशिक्षण की आवश्यकता का उल्लेख किया है।

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission)

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अध्यापक शिक्षा के प्रत्यय को विशेष महत्त्व दिया और इसकी आवश्यकता के सुझाव निम्न शब्दों में व्यक्त किये हैं—

"अध्यापक-प्रशिक्षण संस्थायें कितने ही श्रेष्ठतम नियोजन करें लेकिन वे श्रेष्ठतम अध्यापक पैदा करने में असमर्थ होती हैं। वे केवल अध्यापकों के अन्दर उन गुणों, कौशलों एवं अभिवृत्तियों का समावेश कर सकती हैं जिनसे कि वे अपने कार्य का संचालन अच्छे ढंग एवं विश्वास से कर सकें, और उनके अन्तर्गत अधिकतम अनुभव समाहित हो सकें।"

नोट

सेवारत् अध्यापक शिक्षा के आधार (Bases of In-Service Teacher Education)

जे.पी. लियोनार्ड के कथन सीखना जीवन-पर्यन्त होता है" के अनुसार सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के अग्रलिखित आधार बताये हैं–

1. शिक्षा एक जीवन-पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। केवल औपचारिक प्रशिक्षण संस्थायें ही व्यावसायिक सेवा के लिये अध्यापकों को तैयार नहीं कर सकती।
2. शिक्षण के क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन नये-नये अनुसंधानों की सहायता से नये-नये विचारों का प्रादुर्भाव हो रहा है, कि शिक्षार्थी को क्या और कैसे पढ़ाया जाय।
3. प्रत्येक व्यक्ति अपने पूर्व व्यवहारों को दोहराता है। उसी तरह शिक्षक भी अपने उसी ढंग से पढ़ाना चाहता है, जैसे कि वह पहले पढ़ाता रहा है।
4. भारत के विभिन्न क्षेत्रों में विशेष रूप से गाँवों में या छोटे कस्बों में पुस्तकों, शोध-निर्देशों, एवं सफल अनुभवों या अनुदेशों का सदा अभाव रहता है, जिसकी सहायता से शिक्षक अपने व्यवसाय में दक्ष हो सकते हैं।

जे.ई. ग्रीन ने अपनी पुस्तक *School Personnel Administration* में निम्नलिखित विभिन्न कारणों का उल्लेख किया है, जिनके कारण सेवारत् अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता का पता लगाता है–

1. ज्ञान के क्षेत्र में पुन: अर्थापन की प्रवृत्ति का विकास तीव्र गति से हो रहा है जिससे कि अध्यापक प्रशिक्षण के समय दी गयी शिक्षा की निरपेक्षता का मूल्यांकन किया जा सके।
2. देश में अयोग्य शिक्षकों की एक बड़ी संख्या है जिनका लाभ देश एवं समाज को नहीं हो पा रहा है।
3. बहुत-सी ऐसी शिक्षण प्रविधियों का विकास हो रहा है, जिसका उपयोग पुराने शिक्षक नहीं कर पा रहे हैं।
4. विद्यालयी शिक्षण में नये एवं उपयोगी अनुदेशन माध्यमों की खोज की जा रही है। भाषा, प्रयोगशाला, शिक्षण मशीन, कम्प्यूटर और दूरदर्शन का उपयोग नये ढंग से शिक्षण एवं अधिगम के लिये हो रहा है।
5. शोध द्वारा शिक्षण की प्रकृति में नयी चेतना का विकास किया जा रहा है, जिससे कक्षागत शिक्षण की व्यवस्था में सुधार हो रहा है।
6. शिक्षक को दिन-प्रतिदिन शिक्षार्थी की अनेक समस्याओं को हल करना पड़ता है।
7. सामाजिक वातावरण, मूल्यों, मानकों आदि में परिवर्तन के कारण शिक्षक को नवीन विधियों एवं युक्तियों का प्रयोग करना होता है, जिससे मूल्यांकन की प्रविधि में भी परिवर्तन होता है।
8. शिक्षक को विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है, जिसके लिये विभिन्न प्रकार के ज्ञान, अभिवृत्ति एवं कौशल की आवश्यकता होती है।
9. कुछ समय पश्चात् शिक्षक यह भूल जाता है कि उसको व्यवसाय आरम्भ करने से पहले क्या ज्ञान दिया गया था?
10. शिक्षक के नैतिक एवं व्यवहारों में भी गिरावट होती जाती है।

सेवारत अध्यापक-शिक्षा की आवश्यकता (Need of In-Service Teacher Education)

1. अध्यापकों के व्यावसायिक जीवन में प्रशिक्षण की व्यवस्था का योजनाबद्ध एवं क्रमिक नियोजन।
2. शैक्षिक विस्तार के द्वारा शिक्षकों की गुणवत्ता में विकास।
3. शिक्षकों को सेवापूर्व प्रशिक्षण के द्वारा दी गयी शिक्षा उनके व्यावसायिक जीवन में उचित एवं पर्याप्त ढंग से प्रयोग नहीं हो पाती।
4. मानवीय व्यवहारो में ऐसे बहुत से क्षेत्र हैं, जिनमें नित्य नये-नये परिवर्तन हो रहे हैं, इसके लिये आवश्यक है कि शिक्षक निरन्तर उन परिवर्तनों से भली-भांति परिचित होता रहे। परितवर्तन के फलस्वरूप शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रमों, शिक्षण विधियों, अनुदेशन सामग्रियों के द्वारा शिक्षा प्रक्रिया को आवश्यक रूप से अत्याधुनिक एवं गतिशील बनाया जा सकता है। सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के विस्तार द्वारा उनके अपेक्षित व्यवहारों में परिवर्तन लाया जा सकता है।

5. शिक्षा में परिवर्तन करने के लिये, अन्य विषय क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तनों से सेवारत् अध्यापक के गुणों में विकास एवं परिवर्तन।
6. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के प्रसार द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि शिक्षा में जो परिवर्तन हो रहे हैं उनसे विद्यालय के अध्यापकों को अवगत कराया जाये जिससे वह नये परिवेश की शैक्षिक समस्याओं को भली प्रकार समझ कर उनका समाधान कर सकें।

सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of In-Service Teacher Education)

1. शिक्षक की कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिये नये-नये उद्दीपनों को प्रदान करना।
2. शिक्षकों को अपनी समस्याओं के प्रति जानकारी प्रदान करना, तथा उनको हल करने के लिये उनके ज्ञान एवं बोध का उपयोग करने में सहायता प्रदान करना।
3. प्रभावशाली शिक्षण प्रविधियों के उपयोग में सहायता प्रदान करना।
4. शिक्षा में हो रही नयी शिक्षण प्रविधियों एवं आविष्कारों से सेवारत् अध्यापक को अवगत करना।
5. शिक्षक के मानसिक दृष्टिकोण में विस्तार करना।
6. सेवारत् अध्यापकों को मूल्यांकन प्रविधियों एवं पाठ्यक्रम के विषय में जानकारी प्रदान करना।
7. शिक्षकों को उनके व्यावसायिक गुणों में वृद्धि करना।

राष्ट्रीय शिक्षा शोध संगठन विभाग (National Education Associate Research Division) के अनुसार सेवारत् शिक्षकों के लिए शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. शिक्षकों की कमियों को दूर करना, जो उन्हें अच्छे शिक्षक बनने में बाधा उत्पन्न करती है।
2. नये शिक्षकों को सहायता प्रदान करना जोकि प्रथम बार कक्षागत कठिनाइयों का अनुभव कर रहे हैं।
3. सेवारत् अध्यापकों में सतत् प्रशिक्षण एवं ज्ञान की वृद्धि करना।

सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के मूलभूत नियम (Rules of In-Service Teacher Education)

1. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा एवं पूर्व सेवारत् अध्यापक शिक्षा में अन्तर है।
2. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा एक प्रकार की प्रौढ़-शिक्षा है। अस्तु, प्रौढ़ अधिगम के नियमों तथा सिद्धान्तों का प्रयोग सेवारत् अध्यापकों के सफल व्यावसायिक जीवन के लिये किया जा सकता है।
3. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा के लिये विशिष्ट उद्देश्यों का उपयोग निर्देशन के रूप में किया जा सकता है। शैक्षिक सामग्री, मूल्यांकन प्रविधि आदि इस कार्यक्रम को सफल बनाने में सहायक होते हैं।
4. सेवारत् अध्यापक-शिक्षा का कार्यक्रम शिक्षा जगत को तभी अत्याधुनिक बना सकता है जब यह स्वयं गतिशील रहे।

सेवारत् अध्यापक-शिक्षा की वर्तमान संरचना और प्रतिमान

1. अभिविन्यास पाठ्यक्रम (Orientation courses)
2. अवकाश कालीन पाठ्यक्रम (Vacational courses)
3. अन्तराल पाठ्यक्रम (Interval courses)
4. रिफ्रेशर पाठ्यक्रम (Refresher courses)
5. पत्राचार पाठ्यक्रम (Correspondence courses)
6. संध्याकालीन पाठ्यक्रम (Evening courses)
7. गहन पाठ्यक्रम (Intensive courses)
8. कार्यशाला (Workshop)

नोट

9. सेम्पोजियम (Symposium)
10. शैक्षिक सम्मेलन (Education conferences)
11. विशेषज्ञों का आदान-प्रदान (Exchange of Experts)
12. प्रसार केन्द्र (Extension centres)
13. अल्पकालीन पाठ्यक्रम (Short term courses)
14. प्रकाशन विभाग (Publication unit)
15. व्यावसायिक लेखन (Vocational writing)
16. अप्रत्यक्ष लेखन (Indirect writings)
17. प्रायोगिक (Experimentation)
18. वैज्ञानिक गोष्ठियाँ (Scientific Seminars)।

सेवारत् शिक्षा की संस्थाएँ और साधन (Institutions and Means of In-Service Education)

1. **शिक्षा की राज्य संस्थाएँ (State Insitutes of Education)**—इन संस्थाओं की स्थापना विभिन्न राज्यों में सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा एवं शिक्षक प्रशिक्षकों के लिये की गयी। इन संस्थाओं के माध्यम से विभिन्न प्रकाशनों की सहायता से सूचनायें प्रदान करती हैं। प्राथमिक शिक्षा के विभिन्न पक्षों जैसे—पाठ्यक्रम, विधियों, प्रविधियों पर शोध कार्यों का आयोजन किया जाता है। विभिन्न प्रकार की कार्यशालाओं, गोष्ठियों, पाठ्यक्रमों एवं वाद-विवादों का आयोजन किया जाता है।
2. **विज्ञान की राज्य संस्थाएँ (State Institutes of Science)**—इन संस्थाओं में प्राथमिक एवं माध्यमिक दोनों स्तरों पर विज्ञान शिक्षा के गुणात्मक विकास पर विशेष बल दिया जाता है।
3. **अंग्रेजी की राज्य संस्थाएँ (State Institutes of English)**—देश के विभिन्न राज्यों में अंग्रेजी शिक्षा की बारह संस्थायें हैं। केन्द्रीय अंग्रेजी शिक्षा संस्थान हैदराबाद में है। चण्डीगढ़ का क्षेत्रीय अंग्रेजी शिक्षा संस्थान पंजाब, हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश में सेवा प्रदान करता है। अंग्रेजी शिक्षण की प्रविधियों को सीखने के लिये सेवारत अध्यापकों के लिये चार माह का प्रशिक्षण दिया जाता है।
4. **विस्तार सेवा विभाग (Extension Service Departments)**—देश के 104 महाविद्यालयों में प्रसार-सेवा केन्द्र खोले गये हैं। इन विभागों का उद्देश्य अध्यापक शिक्षा का नवीनीकरण करना है। गोष्ठियों, वाद-विवादों आदि के द्वारा नये विषयों की शिक्षण-विधियों एवं प्रविधियों में सुधार किया जाता है।
5. **अध्यापकों के लिये पत्राचार पाठ्यक्रम (Correspondence Courses for Teachers)**— सर्वप्रथम केन्द्रीय शिक्षा संस्थान दिल्ली द्वारा अप्रशिक्षित अध्यापकों को पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी। इस प्रकार के कार्यक्रमों के आयोजन क्षेत्रीय शिक्षा विद्यालयों में भी शुरू किये। इनमें नवीनतम विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश का है, जिसमें बी.एड. एवं एम.एड. स्तर पर पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किया गया। सन् 1972 में विश्वविद्यालय ने एम. एड. के पाठ्यक्रम पर रोक लगा दी तथा बी. एड. के पाठ्यक्रम को यथावत् जारी रखा।
6. **एम. एड. का संध्याकालीन पाठ्यक्रम (Evening Courses for M. Ed.)**—कुछ स्थानों पर सेवारत् अध्यापकों के लाभ के लिये एम. एड. के संध्याकालीन पाठ्यक्रमों का आयोजन किया गया। केन्द्रीय शिक्षा संस्थान दिल्ली ने एम.एड. का दो वर्षीय पाठ्यक्रम आरम्भ किया। पंजाब विश्वविद्यालय एवं पंजाबी विश्वविद्यालय ने इस प्रकार की सेवा क्रमशः पटियाला और चण्डीगढ़ में शुरू की जिसमें इस प्रकार के पाठ्यक्रम का समय एक वर्ष रखा गया।
7. **अध्यापकों के लिये ग्रीष्मकालीन संस्थायें (Summer Institutes for Teachers)**—विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग से सेवारत् अध्यापकों के लिये विशेष रूप से विज्ञान विषय में देश के विभिन्न भागों में गर्मी के अवकाश में प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। ऐसी संस्थाओं की समय सीमा छः सप्ताह तक होती है। इसमें वे उस कार्यक्रम में अधिक समय लेते हैं, जिससे कि उनको नया विषय का ज्ञान दिया जाये।

8. **गोष्ठियाँ** (Seminars)—गोष्ठियों का कार्यक्रम एक सप्ताह से छः सप्ताह तक होता है। इस प्रकार की गोष्ठियों की सेवारत् अध्यापकों के प्रशिक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।
9. **रिफ्रेशर पाठ्यक्रम** (Refresher Courses)—नये पाठ्यक्रमों की सहायता से अध्यापकों के मध्य नये विचारों का प्रसार किया जाता है। शिक्षा आयोग ने यह सुझाव दिया है कि प्रत्येक शिक्षक के मध्य नये विचारों का प्रसार किया जाता है। शिक्षा आयोग ने यह सुझाव दिया है कि प्रत्येक शिक्षक को पांच वर्ष बाद तीन माह के लिए आवश्यक रूप से इस प्रकार की व्यवस्था की जानी चाहिये। क्षेत्रीय शिक्षा विद्यालय ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सन् 1957 में भारती संघ के शिक्षक संगठन ने एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम का आयोजन किया।
10. **व्यावसायिक साहित्य** (Vocational Literature)—सेवारत् अध्यापक शिक्षा का विकास छोटी-छोटी पुस्तिकाओं एवं पत्रिकाओं की सहायता से किया जा रहा है। इस प्रकार का प्रकाशन राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान, भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय, राज्य शिक्षा के विभिन्न विभागों एवं अन्य संस्थाओं के द्वारा किया जा रहा है।
11. **अल्प-कालीन पाठ्यक्रम** (Short Term Courses)—सेवारत् अध्यापकों को अल्पकालीन पाठ्यक्रमों की सहायता से शिक्षा दी जाती है।
12. **दूरगामी शिक्षा** (Distance Education)—दूरगामी शिक्षा की सहायता से भी सेवारत् अध्यापकों को शिक्षा दी जाती है।
13. **अन्तराल पाठ्यक्रम** (Interval Course)—इस प्रकार के पाठ्यक्रमों का उपयोग सेवारत् अध्यापक की शिक्षा के लिये बड़े पैमाने पर किया जाता है।
14. **कार्यशालाओं का आयोजन** (Holding Workshop)—सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा का आयोजन विभिन्न कार्यशालाओं के माध्यम से किया जाता है।

सेवारत् शिक्षा की समस्याएँ (Problems of In-Service Education)

1. उद्दीपकों की कमी,
2. प्रेरणा की कमी,
3. इच्छाशक्ति की कमी,
4. अनुपयुक्त विधियों एवं प्रविधियों का प्रयोग किया जाना,
5. अपर्याप्त मूल्यांकन प्रविधियाँ,
6. अनुपयुक्त पाठ्यक्रम
7. समस्या स्रोत के अध्ययन का अभाव
8. अध्यापकों का अपर्याप्त प्रशिक्षण
9. प्रशासकीय समस्यायें
10. संस्थागत समस्यायें
11. वित्तीय कठिनाई
12. उद्देश्यों के विशिष्टीकरण की कमी,
13. अनुवर्ती कार्यक्रमों की कमी, तथा
14. सेवारत् अध्यापक शिक्षा एवं सस्था के सम्बन्धों में आवश्यक कमी।

नोट

सेवारत् अध्यापक शिक्षा के विकास के लिये सुझाव (Suggestions for Development of In-service Teacher Education)

(अ) शिक्षा आयोगों द्वारा सिफारिशें

1. विश्वविद्यालयों द्वारा प्रत्येक स्तर पर सतत् अध्यापक-शिक्षा (Continuing Teacher Education) की व्यवस्था की जानी चाहिये। विश्वविद्यालय के सहयोग से संस्था से पूर्व की शिक्षा एवं संघ से पूर्व की शिक्षा लम्बे पैमाने पर नियोजित की जानी चाहिये।
2. साधनों की कमियों को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों के लिए प्रारम्भिक अवस्था से ही प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये जिसकी अवधि प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद निरन्तर तीन माह के लिए होनी चाहिए। यह कार्य उनके सेवाकाल में ही होना चाहिये।
3. राष्ट्रीय स्तर पर एक मूलभूत नीति का प्रयोग करके प्रत्येक सेवारत् अध्यापक के व्यावसायिक गुणों में वृद्धि की जानी चाहिये। भारत में प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को उनके व्यावसायिक गुणों के विकास के लिये इस प्रकार की सुविधा नहीं है।
4. राष्ट्रीय प्रशिक्षण एवं शिक्षा अनुसन्धान परिषद ने प्रत्येक राज्य को कुछ वैधानिक सुझाव दिये हैं जिनके अनुसार सतत् शिक्षा के लिए तीन श्रेणियों में व्यवस्था की जानी चाहिए। प्रथम श्रेणी में अध्यापकों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। द्वितीय श्रेणी में माध्यमिक शिक्षको के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। तृतीय एवं अन्तिम श्रेणी में कुछ विशेषज्ञों के द्वारा प्रधानाध्यापकों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। प्रथम श्रेणी में रखे गए प्राथमिक अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी में रखे गए शिक्षणार्थियों द्वारा होनी चाहिये।
5. विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था का स्वरूप भिन्न होना चाहिए। इन सबके लिए सतत् शिक्षा का कार्यक्रम परिवर्तित होना चाहिये।
6. सतत् शिक्षा का नियोजन एक व्यापक रूप में होना चाहिए, जिसका आधार विद्यालय की आवश्यकता, शिक्षकों की आवश्यकता, निकटत भविष्य में सम्भावित विकास होना चाहिए। व्यवस्थापक को सतत् शिक्षा में भाग ले रहे शिक्षकों में धीरे-धीरे सुधार एवं विकास की प्रक्रिया को संचालित करना चाहिए।
7. सतत् शिक्षा में गहराई से चिन्तन करने एवं विचारों को अभिव्यक्त करने की आवश्यकता पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। वर्तमान समय में सतत् शिक्षा का एक आत्म-निर्भर केन्द्र खोलने का प्रयास हो रहा है।
8. पूर्व सेवारत् शिक्षक एवं सेवारत् अध्यापक के मध्य सम्बन्ध स्थापित होना चाहिए। उनके मध्य किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं रखना चाहिए।
9. सतत् अध्यापक-शिक्षा सेवा की सफलता विशेषज्ञों की योग्यता एवं गुणवत्ता पर निर्भर होती है। अध्यापकों में व्यावसायिक ज्ञान की वृद्धि के लिए उनको अनेक प्रकार के उद्दीपकों एवं अवसरों को प्रदान करना चाहिए।
10. शिक्षकों को इस कार्यक्रम में भाग लेने के लिये एक नीति तैयार की जा सकती है, जिससे कि उनके अन्दर बुनियादी प्रेरणा एवं उद्दीपक के द्वारा उनको प्रेरित किया जा सकता है। आन्तरिक उद्दीपकों में पुरस्कार, स्तर में विकास, लिखित प्रोत्साहन आदि आते हैं।
11. इस प्रकार के आयोजनों का मूल्यांकन दो स्तर पर किया जा सकता है। प्रथम अवस्था वह है जबकि सतत् शिक्षा का नियोजन किया गया हो और दूसरी अवस्था वह है जबकि सेवारत् अध्यापक अपनी शिक्षण अवधि समाप्त करके वापस जा रहे हों। इन दोनों स्तरों पर शिक्षा का मूल्यांकन किया जाना चाहिए।
12. इस प्रकार के कार्यक्रम में सहायक वातावरण को तैयार करने की आवश्यकता है। कार्यक्रम में सम्मिलित होने वाले शिक्षकों में इस प्रकार की भावना नहीं होनी चाहिए कि यह एक व्यर्थ क्रिया है। उनके अन्दर इस प्रत्यय के लिए सृजनात्मक एवं संवेदनात्मक चिन्तन करने की भावना का विकास किया जाना चाहिए।

13. सतत् शिक्षा के लिये धन, मानव शक्ति एवं समय की आवश्यकता होती है। इसलिये सतत् शिक्षा हेतु प्राथमिकता का निर्धारण राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर करना चाहिए। इससे सतत्-शिक्षा का प्रभावी रूप में क्रियान्वयन सम्भव हो सकेगा।
14. विस्तार सेवा विभाग को प्रशिक्षण महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं अन्य शैक्षिक संस्थाओं से सम्बन्धित कर दिया जाना चाहिए। विस्तार सेवा प्रशिक्षण महाविद्यालयों के मध्य अपना निजी अस्तित्व बनाये रखना चाहिए।

(ब) अन्य सुझाव

1. **प्रसार की आवश्यकता (Need for Expansion)**—अपर्याप्त सुविधा होने के कारण ऐसे शिक्षक प्रसार सेवा की व्यवस्था से वंचित रह जाते हैं जोकि व्यक्तिगत संस्थाओं से सम्बन्धित होते हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि प्रसार-सेवा का विस्तार किया जाये तथा इसमें अधिकतम अध्यापकों को सम्मिलित होने का अवसर प्रदान किया जाये। शिक्षा विद्यालयों में प्रसार-सेवा के विभाग खोले जायें। सेवारत् अध्यापकों की सुविधा के लिये जिला एवं उपजिला स्तर पर कार्यालयों की सुविधा प्रदान की जाये।
2. **विभिन्न एजेन्सियों का सहयोग (Co-operation of various Agencies)**—प्रसार-सेवा विभाग, राज्य शिक्षा संस्थान, राज्य-स्तर के शिक्षा विभाग और राजकीय विद्यालयों के परिषदों आदि शिक्षा की विभिन्न एजेंसियों को आपस में सहयोग की आवश्यकता है जिससे कि उनके कार्यक्रमों में अंशाच्छादन (Overlapping) न हो।
3. **निरीक्षकों की भूमिका (Role of Inspectors)**—शैक्षिक संस्थाओं के अध्यापकों का यह परम कर्त्तव्य है कि वे अपने शिक्षकों को सेवारत् अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए उत्साहित करें। शिक्षा अधिकारी भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित होने वाले अभ्यर्थियों को उत्साहित करें तथा उनके ज्ञानोपार्जन की इस प्रक्रिया का विवरण उनकी वार्षिक रिपोर्ट में दें।
4. **सुनियोजित कार्यक्रम (Well-Planned Programme)**—सेवारत् अध्यापक शिक्षा का नियोजन सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित ढंग से करना चाहिए। इस कार्यक्रम की निश्चित रूपरेखा होनी चाहिए। संस्थागत आवश्यकता के अनुरूप ही इस कार्यक्रम में वृद्धि करनी चाहिये।
5. **साधन व्यक्ति (Resource Persons)**—सब प्रकार से योग्य अध्यापक ही इस कार्य के लिये अनुकूल साधन व्यक्ति की तरह कार्य कर सकते हैं। इनका चयन विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों, महाविद्यालय के प्रोफेसरों तथा राज्य स्तर के विद्यालयों के शिक्षा-विदों में से किया जाना चाहिए, जिनके पास सिखाने के लिए कुछ नया ज्ञान हो।
6. **अनुवर्ती कार्यक्रम (Follow-up Programmes)**—प्रसार-सेवा कार्यक्रम द्वारा अनुवर्ती-कार्यक्रम को उचित ढंग से लागू करने के लिये कुछ ऐसे साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए, जिससे कि इस कार्यक्रम का उपयोग हो सके।
7. **अनुसन्धान (Research)**—इन कार्यक्रमों की उपयोगिता अनुसन्धान के निष्कर्षों द्वारा देखी जा सकती है। शिक्षकों को उसके निष्कर्षों को अन्य तक पहुंचाने के लिए प्रेरित करना चाहिए। शिक्षकों के लिए सूचना तथा उनके विचारों के प्रकाशन के लिये प्रत्येक तीन माह बाद विस्तार सेवा द्वारा पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित करनी चाहिये।
8. **अध्यापकों के लिए प्रलोभन (Incentive to Teachers)**—वर्तमान समय में इस प्रकार के प्रलोभनों की आवश्यकता है जोकि शिक्षकों का ध्यान इस प्रकार के कार्यक्रम की ओर आकर्षित कर सकें। अवकाश के दिनों में इस कार्यक्रम में आने वाले शिक्षकों को किसी न किसी प्रकार व्यावसायिक सुविधा से लाभान्वित करना चाहिये। उनको बी. एड. तथा एम. एड. आदि की उपाधि दी जानी चाहिए जिससे कि उनका मनोबल बड़े। इस प्रकार की व्यवस्था अमरीका में की गयी है।
9. **विषयगत शिक्षकों का संघ (Subject Teacher's Associations)**—कोठरी आयोग ने सुझाव दिया है कि विषय से सम्बन्धित शिक्षकों के संघों की स्थापना नगर, जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर होना चाहिए। इसमें विभिन्न विद्यालयों के शिक्षकों के विभिन्न विषय होने चाहिए। इस प्रकार का नियोजन प्रयोगों के आरम्भ के लिये प्रलोभन

नोट

का कार्य करेगा। राज्य स्तर के शिक्षा विभागों को इस प्रकार के संघों को सहायता प्रदान करनी चाहिये, जिससे कि ये लोग समय-समय पर गोष्ठियों का आयोजन करके अपने निजी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन कर सकें।

10. **विषय विशेषज्ञ (Subject Experts)**—विभिन्न विषयों की शिक्षण प्रविधियों के निर्देशन एवं ज्ञान के लिये जिलास्तर पर विशेषज्ञों की नियुक्तियाँ की जानी चाहियें जो शिक्षकों को विभिन्न प्रकार की शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों की जानकारी प्रदान करें।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)**
   1. सेवारत् अध्यापकों की शिक्षा उनके पूरे .... में एक नियोजित ढंग से होनी चाहिए।
   2. सेवारत् अध्यापक शिक्षा के द्वारा विभिन्न पहलुओं में .... किया जा सकता है।
   3. सेवारत् अध्यापक शिक्षा .... के विकास के लिए एक आवश्यक तत्व है।
   4. अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति में .... का विकास करना होना चाहिए।
   5. .... एक सामाजिक प्रत्यय है जो शासन प्रणाली तथा सामाजिक दर्शन से प्रभावित होता है।

24.3 सारांश (Summary)

- एक सफल अध्यापक शिक्षा और अध्यापन की योजना, निर्देशन और मूल्यांकन का दायित्व पूरा करता है। वह संस्कृति और नागरिकता प्राप्त व्यक्ति है। वह यह विश्वास करता है कि उसका कार्य राष्ट्र और समुदाय के विकास में महत्त्वपूर्ण है। यूनेस्को ने अपने 5 अगस्त, 1968 के प्रस्ताव में अध्यापक की स्थिति के सम्बन्ध में कहा था "ऐसी नीति जो अध्यापक-शिक्षा में प्रवेश हेतु निर्धारित हो। उसे ऐसी आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए जो समाज को ऐसे अध्यापक प्रदान करें जिनमें आवश्यक नैतिकता, बौद्धिक एवम् शारीरिक गुण हों तथा व्यावसायिक ज्ञान एवम् कौशल हों।"
- अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति में सामान्य शिक्षा एवम् व्यक्तिगत संस्कृति का विकास करना होना चाहिये। उसे शिक्षण की योग्यताओं को विकसित करना चाहिये। उसे शिक्षण के उन सिद्धान्तों के प्रति जागरूक बनाये रखना चाहिये जो स्नेहपूर्ण मानवीय सम्बन्धों के लिये आवश्यक हो तथा जिसमें उत्तरदायित्व की भावना हो, जो शिक्षण के माध्यम से सहयोग दे और समाज के लिये आदर्श बने।
- ऐसे विद्यालय सामान्य विद्यालय कहलाते हैं, जहाँ पर कि प्राथमिक अध्यापकों के लिये शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। इनका संचालन राज्य सरकार द्वारा होता है। अध्यापक प्रशिक्षार्थी की न्यूनतम योग्यता हाई स्कूल होती है। समय की अवधि दो वर्ष की होती है। प्रशिक्षणार्थी को बी.टी. की उपाधि दी जाती है। प्रवेश पाने की न्यूनतम योग्यता स्नातक होती है।
- **माध्यमिक अवस्था** (Secondary Stage)—इस अवस्था पर न्यूनतम योग्यता स्नातक होती है। इसकी प्रशिक्षण अवधि एक वर्ष की होती है। सामान्यतया इस प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम को दो भागों में बांटते हैं—(1) सैद्धान्तिक, (2) प्रयोगात्मक। इसके द्वारा एल.टी., (बेसिक)., बी. एड. की उपाधि दी जाती है।
- मानवीय प्रकृति के प्रजातन्त्रीकरण की प्रक्रिया का ज्ञान, राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता तथा राष्ट्रीय शान्ति में पूर्ण विश्वास, इन सबमें धनात्मक विकास करना, शिक्षकों में व्यक्तिगत, सामाजिक एवं व्यावसायिक गुणों का विकास करना।
- यह "छात्र-शिक्षण" शब्द दो शब्दों के मेल से बना है, छात्र तथा शिक्षण। छात्र का अर्थ होता है, कि वह व्यक्ति जिसमें—बुद्धि, व्यक्तित्व प्रवणता, योग्यता सभी क्षमतायें हैं और उसे समूह में शिक्षित या प्रशिक्षित किया जाता है। शिक्षण में ऐसी क्रियायें की जाती हैं जिनसे छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाया जाता है। इसके अन्तर्गत छात्र एवं शिक्षक दोनों की क्रियायें एवं प्रतिक्रियायें आती हैं।

- समय के परिवर्तन के साथ 'छात्र-शिक्षण' के प्रत्यय का अर्थ भी परिवर्तनशील है। भावी शिक्षकों को अन्य पाठ्यक्रम के विषयों से पृथक समझना चाहिए। शिक्षण में छात्र को औपचारिक कक्षाओं में प्रवचन, प्रयोगशाला या पढ़ने की क्रियाओं को करता है, जिनमें पाठ्य-पुस्तकों, व गृहकार्यों द्वारा वह अपनी स्मरण शक्ति से पुनरावृति करता है। आज के परिवेश में छात्र-शिक्षण में पाठ-नियोजन अधिगम सहायक सामग्री को प्रयुक्त करके पाठ को पढ़ाना, प्रयोग कराना शमिल है जिसमें वह सुनना, प्रस्तुतीकरण, वाद-विवाद के आयोजन और छात्रों की निष्पत्ति के मूल्यांकन हेतु परीक्षण प्रश्न तैयार करता है।
- छात्राध्यापक-शिक्षण की चुनौतियों को सकारात्मक दृष्टिकोण से समझने एवं हल करने का प्रयास करता है। इनके समाधान के लिये वह उपलब्ध प्रविधियों का प्रयोग करने का प्रयास करता है।
- सेवारत् अध्यापक-शिक्षा में व्यावसायिक अध्यापकों एवं अन्य अध्यापकों को उनके व्यवसाय से सम्बन्धित निरन्तर जानकारी प्रदान करना, एवं व्यावसायिक गुणों तथा कौशलों में सुधार एवं विकास करना सम्मिलित है। सेवारत् अध्यापक-शिक्षा की व्यवस्था, अध्यापक को शिक्षण-व्यवसाय में प्रवेश करने के पश्चात् उनके लगातार विकास के लिये उचित अनुदेशन को सुनिश्चित करने के लिये दी जाती है। सेवारत् अध्यापक-शिक्षा द्वारा अध्यापकों के अन्दर व्यावसायिक गुणों का विकास किया जाता है।
- विश्वविद्यालयों द्वारा प्रत्येक स्तर पर सतत् अध्यापक-शिक्षा (Continuing Teacher Education) की व्यवस्था की जानी चाहिये। विश्वविद्यालय के सहयोग से संस्था से पूर्व की शिक्षा एवं संघ से पूर्व की शिक्षा लम्बे पैमाने पर नियोजित की जानी चाहिये।
- साधनों की कमियों को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों के लिए प्रारम्भिक अवस्था से ही प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिये जिसकी अवधि प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद निरन्तर तीन माह के लिए होनी चाहिए। यह कार्य उनके सेवाकाल में ही होना चाहिये।
- राष्ट्रीय स्तर पर एक मूलभूत नीति का प्रयोग करके प्रत्येक सेवारत् अध्यापक के व्यावसायिक गुणों में वृद्धि की जानी चाहिये। भारत में प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को उनके व्यावसायिक गुणों के विकास के लिये इस प्रकार की सुविधा नहीं है।
- राष्ट्रीय प्रशिक्षण एवं शिक्षा अनुसन्धान परिषद ने प्रत्येक राज्य को कुछ वैधानिक सुझाव दिये हैं जिनके अनुसार सतत् शिक्षा के लिए तीन श्रेणियों में व्यवस्था की जानी चाहिए। प्रथम श्रेणी में अध्यापकों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। द्वितीय श्रेणी में माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। तृतीय एवं अन्तिम श्रेणी में कुछ विशेषज्ञों के द्वारा प्रधानाध्यापकों की शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिये। प्रथम श्रेणी में रखे गए प्राथमिक अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी में रखे गए शिक्षणार्थियों द्वारा होनी चाहिये।
- अपर्याप्त सुविधा होने के कारण ऐसे शिक्षक प्रसार सेवा की व्यवस्था से वंचित रह जाते हैं जो व्यक्तिगत संस्थाओं से सम्बन्धित होते हैं। इसलिये यह आवश्यक है कि प्रसार-सेवा का विस्तार किया जाये तथा इसमें अधिकतम अध्यापकों को सम्मिलित होने का अवसर प्रदान किया जाये। शिक्षा विद्यालयों में प्रसार-सेवा के विभाग खोले जायें।
- प्रसार-सेवा विभाग, राज्य शिक्षा संस्थान, राज्य-स्तर के शिक्षा विभाग और राजकीय विद्यालयों के परिषदों आदि शिक्षा की विभिन्न एजेंसियों को आपस में सहयोग की आवश्यकता है जिससे कि उनके कार्यक्रमों में अंशाच्छादन (Overlapping) न हो।
- कोठारी आयोग ने सुझाव दिया है कि विषय से सम्बन्धित शिक्षकों के संघों की स्थापना नगर, जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर होना चाहिए। इसमें विभिन्न विद्यालयों के शिक्षकों के विभिन्न विषय होने चाहिए। इस प्रकार का नियोजन प्रयोगों के आरम्भ के लिये प्रलोभन का कार्य करेगा। राज्य स्तर के शिक्षा विभागों को इस प्रकार के संघों को सहायता प्रदान करनी चाहिये, जिससे कि ये लोग समय-समय पर गोष्ठियों का आयोजन करके अपने निजी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन कर सकें।

नोट

24.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अंशाच्छादित**–किसी वस्तु का कुछ प्रमुख भाग आच्छादित होना
- **सेमिनार**–गोष्ठियाँ

24.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा का वर्णन कीजिए।
2. छात्र शिक्षण का क्या अर्थ है? वर्णन कीजिए।
3. सेवारत अध्यापक शिक्षा के विकास के इतिहास पर एक निबंध लिखिए।
4. सेवारत अध्यापक शिक्षा के उद्देश्यों एवं कार्यक्रमों का वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1.	1. सत्य	2. सत्य	3. असत्य
	4. सत्य	5. असत्य	
2.	1. व्यावसायिक जीवन	2. गुणात्मक विकास	3. शिक्षा
	4. सामान्य शिक्षा एवं व्यक्तिगत संस्कृति	5. 'शिक्षण'।	

24.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन. आर. सक्सेना, बी. के मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस. के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—25: अध्यापक शिक्षा के विभिन्न स्तर (Teacher Education at Various Levels)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

25.1 अध्यापक शिक्षा के विभिन्न स्तर (Teacher Education at Various Levels)

25.2 अध्यापक शिक्षा में उभरती प्रवृत्तियाँ (Emerging trends in Teacher Education)

25.3 सारांश (Summary)

25.4 शब्दकोश (Keywords)

25.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

25.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- अध्यापक शिक्षा के विभिन्न स्तरों एवं इसमें उभरती प्रवृत्तियों को विवेचित करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पूर्व प्राथमिक स्तर पर सामान्यत: शिक्षक 3 से 8 वर्ष तक की आयु के बालकों को पढ़ाते हैं, यह आयु वर्ग, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मानव जीवन का महत्वपूर्ण आयु विस्तार है। **फ्रायड** (Freud) का विचार है कि मानव का सम्पूर्ण व्यक्तित्व पांच वर्ष की आयु तक निर्मित हो जाता है।

प्राथमिक स्तर पर बालकों में ज्ञानात्मक, गत्यात्मक तथा प्रभावात्मक योग्यताओं में कुछ परिपक्वता आ जाती है। उसमें भावात्मक रूप से चिन्तन करने, तर्क करने, निष्कर्ष निकालने, शब्द का अर्थ निकालने, संप्रेषण, अपने आयु वर्ग से संपर्क रखने, समाज, घर, पड़ौस, समाज के मानकों के पालन करने की क्षमता विकसित होने लगती है। अपने संवेगों पर नियंत्रण करना, भावाभिव्यक्ति तथा सामाजिक आकांक्षा की पूर्ति की तरफ कदम बढ़ने लगते हैं। इनमें कुछ नयी समस्याओं का जन्म भी होने लगता है। नये परिप्रेक्ष्य विकसित होने लगते हैं।

25.1 अध्यापक शिक्षा के विभिन्न स्तर (Teacher Education at Various Levels)

पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षक को उन योग्यताओं से परिपूर्ण होना चाहिये जिससे वह बालकों में स्वस्थ व्यक्तित्व की नींव डाल सके। उनमें अन्तर्निहित गुणों को विकसित कर सके। हमारे देश में पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम का निर्माण करने की दिशा में विशेष काम नहीं हुआ है। एन.सी.ई.आर.टी. ने पूर्वप्राथमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा का पाठ्यक्रम ज्ञान, गौण तथा अभिवृत्ति के संदर्भ में विकसित किया है।

नोट

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रतिपादित पूर्व प्राथमिक शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. बाल्यावस्था की शिक्षा का सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना।
2. बालक की अभिवृद्धि तथा विकास के सामान्य सिद्धान्तों को समझना।
3. भारतीय संदर्भ में-ग्रामीण, नगरीय तथा औद्योगिक-बालकों की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक शिक्षा को निरूपित करना।
4. भावी शिक्षकों में अवबोध, कौशल, मनोवृत्ति तथा रुचि को विकसित करना, जिससे वे बालकों की देखभाल, वृद्धि तथा विकास में सर्वांग रूप से भाग ले सकें।
5. उत्तम वातावरण का विकास कर बालकों में शारीरिक तथा सांवैगिक स्वास्थ्य विकसित करने का कौशल शिक्षकों में उत्पन्न करना।
6. कहानी कहना, परिस्थिति का वर्णन करना आदि के कौशल विकसित करना।
7. विभिन्न अधिगम अनुभवों को प्रस्तुत करने के कौशलों को विकसित करना, जैसे संगीत, लय अभिनय, क्रिया, खेल, कार्यानुभव, सृजनात्मक कला आदि।
8. अनुपयोगी पदार्थों की सहायता से नृत्य सहायक सामग्री का निर्माण तथा उपयोग का कौशल विकसित करना।
9. बालकों के घरेलू वातावरण को समझना तथा विद्यालय तथा घर के सम्बन्धों को विकसित करना।
10. सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में विद्यालय तथा शिक्षक की भूमिका को समझना।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा

जीवन के नये आयाम विकसित होते हैं। इस स्तर पर शिक्षक का कार्य तथा बातों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। सफल शिक्षक होने के लिये भावी शिक्षकों को इन लक्ष्यों का ध्यान रखना चाहिए:

1. प्रथम तथा द्वितीय भाषा का ज्ञान प्राप्त करना, गणित, सामाजिक तथा प्राकृतिक विज्ञान तथा वातावरणीय ज्ञान से संबंधित प्रकरणों की जानकारी।
2. संबंधित विषय तथा प्रकरणों की पहचान, कौशल अधिगमन अनुभवों के चयन तथा प्रयोग की क्षमता।
3. बालक के स्वास्थ्य, शारीरिक-सृजनात्मक क्रियायें, कार्यानुभव, खेलकूद, सृजनात्मकता, संगीत तथा इन क्रियाओं को सम्पादित करने की प्रक्रिया का कौशल विकसित करना।
4. बालकों की अभिवृद्धि तथा विकास से संबंधित मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को समझना।
5. समन्वित शिक्षा समेत, बाल्यावस्था की शिक्षा का सैद्धान्तिक तथा व्यवहार प्राप्त करना।
6. औपचारिक तथा अनौपचारिक अधिगम सिद्धान्तों को समझने की शक्ति विकसित करना।
7. क्रियात्मक अनुसंधान करने की क्षमता विकसित करना।
8. बालकों के व्यक्तित्व को वांछित स्वरूप देने के लिए स्कूल, समुदाय, स्कूल-विद्यालय के सम्बन्धों को समझना।
9. सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में विद्यालय तथा शिक्षक की भूमिका समझना।

माध्यमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा

माध्यमिक स्तर पर बालक जिस आयु वर्ग का निर्माण करते हैं, वह परिपक्वता की दृष्टि से विकासोन्मुख होता है। शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य, माध्यमिक स्तर पर आरोपित किये गये; उनके मूल में किशोरावस्था की समस्यायें, अभिवृद्धि की यांत्रिकता, विभिन्न परिस्थितियों में अन्त:क्रिया के प्रति बालकों की रुचि जाग्रत करना, किशोरावस्था की प्राप्ति के बाद व्यवसाय का चयन, धर्म, समाज, राजनीति, राष्ट्र तथा अनेक कार्यों के प्रति छात्रों की रुचि, ये सभी शिक्षक शिक्षा के लिये सबल आधार प्रस्तुत करते हैं।

नोट

माध्यमिक शिक्षक शिक्षा

1. विद्यालय के नवीन पाठ्यक्रम के संदर्भ में, अपने विशेष पाठ्यक्रम को स्वीकृत शिक्षण-अधिगम सिद्धान्त के अनुसार पढ़ाने की क्षमता।

इस उद्देश्य की पूर्ति से शिक्षकों में निम्नलिखित व्यवहार परिवर्तन होंगे—

1. अपने विषय का गहन ज्ञान।
2. किसी लेख के प्रति आन्तरिक तथा बाह्य निर्णय।
3. लेखक की त्रुटि की पहचान।
4. त्रुटियों का निराकरण।
5. किशोरवस्था में सीखना।
6. कार्य तथा अनुभव की धारणा को समझना।
7. 10+2 पाठ्यक्रम को समझना तथा आलोचना।
8. पढ़ाने की कुशलता रखना।

2. बालक की अभिवृद्धि के इर्द-गिर्द वातावरण के अनुसार उनमें अवबोध, कौशल, रुचि तथा मनोवृत्ति को विकसित करना।

इस उद्देश्य की पूर्ति से शिक्षकों में निम्नलिखित व्यवहार परिवर्तन होते हैं—

1. व्यक्तित्व के सम्पूर्ण अवधारणा को समझना।
2. उन विधियों को जानना जिनमें बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है।
3. बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास के महत्व को समझना।
4. छात्रों से मानसिक संप्रेषण, सामाजिक कौशल की अन्त:क्रिया करना।
5. संस्थाओं की औपचारिक परिस्थितियों में मनोगत्यात्मक कौशल विकसित करना।
6. बालक के सर्वाधिक शारीरिक, बौद्धिक, सांवेगिक तथा सामाजिक विकास के प्रति सकारात्मक सक्रिय मनोवृत्ति विकसित करना।
7. बालकों के विकास में रुचि रखना, जैसे—
   (*i*) किशोरावस्था की समस्याओं तथा आवश्यकता के आन्तरिक तथा बाह्य अध्ययनों के प्रति रुचि।
   (*ii*) भ्रमण, सामाजिक-सांस्कृतिक कार्यों का संगठन।
   (*iii*) किशोरों के साथ बैठकें।

3. किशोरों के स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम, कार्यानुभव तथा मनोरंजनात्मक क्रियाओं के विषय, सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक ज्ञान।

इस उद्देश्य की प्राप्ति से निम्नलिखित व्यवहार परिवर्तन अपेक्षित हैं—

1. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले स्रोतों के बारे में जानना, यथा, संस्थाएँ, घर, पड़ौस, स्थानीय संस्थायें आदि।
2. शरीर के विभिन्न अंगों की कार्यप्रणाली का ज्ञान।
3. संसर्गजन्य तथा संक्रामक रोगों को जानना।
4. शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजनात्मक क्रियाओं का ज्ञान जो स्वास्थ्य की विसंगतियों के बारे में बताये।
5. शरीर के रोगों का वास्तविक ज्ञान तथा उनके वांछित उपचार।
6. आवश्यकता पड़ने पर प्राथमिक चिकित्सा का उपयोग।

नोट

4. विशेषीकरण के विषय से संबंधित कौशलों की पहचान तथा विकास, अधिगम अनुभव की खोज एवं संगठन।

इस उद्देश्य के व्यवहार परिवर्तन इस प्रकार हैं–

1. अधिगम अनुभव की अवधारणा को समझना।
2. शिक्षण-इकाई के विशेष उद्देश्यों को विकसित करना।
3. शिक्षण अनुभवों की पहचान करना–
   (*i*) अधिगम सामग्री को तत्वों मे विश्लेषण करना।
   (*ii*) शिक्षण इकाइयों के विशेष लक्ष्य विकसित करना।
   (*iii*) प्रत्येक उद्देश्य को व्यवहार में परिवर्तित करना।
   (*iv*) विशेष व्यवहार उत्पन्न करने वाली क्रिया को धारण करना।
4. विस्तृत अनुभवों में से आवश्यक अधिगम अनुभवों को प्रयोग में लाना।
5. किये गये अनुसंधान की दृष्टि से अधिगम अनुभवों को संशोधित करना।
6. अधिगम अनुभवों को तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करना।
7. छात्रों में स्वैच्छिक सहयोग के प्रति रुचि लेना, अहं का विकास तथा आकांक्षा का स्तर विकसित करना।

5. वृद्धि एवं विकास के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अवबोध को विकसित करना। ज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा मनोवृत्यात्मक वैयक्तिक भिन्नताओं तथा समानताओं को समझना।

इस उद्देश्य की पूर्ति से ये व्यवहार परिवर्तन होंगे–

1. विकास तथा अभिवृद्धि की धारणा को समझना।
2. शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा संवेगात्मक विकास को समझना।
3. प्रत्येक योग्यता की व्याख्या प्राप्त उद्देश्य के रूप में करना।
4. योग्यता की धारणा तथा प्रकार को जानना।
5. ज्ञानात्मक, मनोगत्यात्मक या योग्यताओं से संबंधित व्यवहार का जानना।

6. छात्रों को मार्गदर्शन तथा परामर्श देने के कौशल का विकास। उनकी शैक्षिक तथा व्यावसायिक विषयों एवं व्यक्तिगत समस्याओं के हल हेतु परामर्श देना।

इस उद्देश्य की पूर्ति द्वारा छात्रों में ये व्यवहार परिवर्तन होने चाहिये–

1. मार्गदर्शन एवं परामर्श की अवधारणा समझना।
2. मार्गदर्शन एवं परामर्श की प्रक्रिया के अन्तर को समझना।
3. समस्याग्रस्त बालकों पर मार्गदर्शन एवं परामर्श तकनीक, उनकी शैक्षिक निष्पत्ति तथा बुद्धि के संदर्भ में अपनाना।
4. मार्गदर्शन क्लिनिक का संगठन करना।
5. संस्थाओं, व्यक्तियों, समुदाय, विशेषज्ञों तथा विशेष व्यक्तियों से सूचना संकलन करना।
6. समस्याग्रस्त बालकों को सुधारने के लिए वांछित प्रयोग एवं प्रयोगात्मक व्यवहार करना।
7. विद्यालय, घर, समान समूह की भूमिका को बालक के व्यक्तित्व के विकास के संदर्भ में समझना तथा विद्यालय एवं घर के सम्बन्धों को बालक के मानसिक विकास के रूप में विकसित करना।
8. विद्यालय तथा शिक्षकों की भूमिका को सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में समझना।
9. क्रियात्मक/प्रयोगात्मक अनुसंधान परियोजनायें बनाना, अन्वेषण करना तथा शिक्षण को बालकों के विकास के लिये प्रभावशाली बनाना।

नोट

महाविद्यालयी स्तर पर शिक्षक शिक्षा

महाविद्यालय या कॉलेज स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र संक्रमण (Transistional) की अवस्था में होते हैं। छात्र के व्यावसायिक तथा सामाजिक समायोजन के द्वारा स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार होते हैं। इस अवस्था में अभिवृत्तियाँ सशक्त एवं परिपक्व हो जाती हैं। कार्य-शैली, आदतों तथा व्यक्तित्व में कम परिवर्तन होता है। छात्र अमूर्त धारणाओं को ग्रहण करने, तर्क करने, अपना मत प्रतिस्थापित करने एवं अधिगम की परिस्थितियों में परीक्षण के लिये तैयार रहते हैं। अत: उच्च शिक्षा के स्तर पर शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. उच्च शिक्षा स्तर के भावी शिक्षक को अपने विषय को पढ़ाने की सम्पूर्ण योग्यता तथा दक्षता होनी चाहिये। उसे विषय का सम्पूर्ण ज्ञान तथा शिक्षण विधियों में कुशल एवं पारंगत होना चाहिये।
2. उच्च शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों के प्रति अवबोध विकसित होना चाहिये। विशेष रूप से भारतीय संदर्भ में प्रजातांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवादी समाज की रचना के प्रति चेतना उत्पन्न करना।
3. व्यावसायिक/ज्ञानात्मक विषय के शिक्षण हेतु मनोगत्यात्मक कौशल विकसित करना।
4. अपने विषय के शिक्षण हेतु शैक्षिक तकनीकी के उपयोग का कौशल विकसित करना।
5. किशोरों की शारीरिक-मनोवैज्ञानिक-सामाजिक आवश्यकताओं को समझना तथा इन आवश्यकताओं को पूरा करने में उत्पन्न समस्याओं के प्रति सचेत रहना, इन समस्याओं को हल करने के प्रयास करना।
6. अनुसंधान परियोजना, क्रियात्मक अनुसंधान, प्रयोगात्मक अनुसंधान परियोजनाओं के परिचालन, छात्रों के व्यवहार में संशोधन करना।
7. कॉलेज तथा समाज में सामाजिक परिवर्तन के लिये शिक्षक की भूमिका को जानना।

उच्च स्तर पर शिक्षक-शिक्षा के ये उद्देश्य, छात्रों के व्यवहारों में इस प्रकार परिवर्तन करते हैं–

1. शिक्षा की दार्शनिक, समाजशास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक व्याख्या के साथ अवधारणाओं को समझना।
2. शिक्षा के उद्देश्य एवं लक्ष्यों में अन्तर समझना।
3. उच्च शिक्षा के संदर्भ में शिक्षा के सामान्य एवं विशेष उद्देश्यों को जानना।
4. व्यक्ति के व्यवहार प्रतिमान को प्रजातंत्र, धर्म निरपेक्षता तथा समाजवादी समाज के संदर्भ में समझना।
5. प्रजातांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवादी समाज से संबंधित व्यवहार प्रतिमान को समझना।
6. प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्ष तथा समाजवादी समाज के निर्माण के लिये गतिविधियों के परिचालन का कौशल विकसित करना।
7. शैक्षिक तकनीकी की अवधारणा को जानना।
8. शैक्षिक तथा निर्देशात्मक तकनीक में अन्तर करना।
9. अधिकतम अधिगम के लिये शैक्षिक तकनीक का उपयोग करना।
10. शिक्षा-सामग्री का विश्लेषण करना।
11. सूक्ष्म पाठ, अभिक्रमित निर्देश आदि का कक्षागत परिस्थितियों में उपयोग करना।
12. विभिन्न शिक्षण प्रतिमानों के अन्तर को समझना।
13. विशेष शिक्षण प्रतिमानों के आधार पर शिक्षण करना।
14. आवश्यकता की धारणा को समझना।
15. मूलभूत आवश्यकताओं का प्रत्यास्मरण।
16. प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता पूरी न होने के कारण जानना।
17. जैविक-सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकता में अन्तर करना।

नोट

18. किशोरों के लिये मार्गदर्शन का महत्व जानना।
19. मार्गदर्शन तथा परामर्श के क्रमिक पदों को जानना।
20. परीक्षण-सम्पादन, निर्देश, मूल्यांकन, विश्लेषण आदि के आंकड़ों से संतुष्ट होना।
21. आवश्यकता पड़ने पर मनोचिकित्सा का प्रयोग करना।

यह स्पष्ट है कि शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य, स्वयं में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। शिक्षक शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इनमें क्रमिक भिन्नता पाई जाती है। अन्तत: इनका एकमात्र लक्ष्य हैं–शिक्षकों को उन सभी उद्देश्यों का ज्ञान होना आवश्यक है जो उनकी शिक्षण क्षमता को विकसित कर सकें। शिक्षक अपने लक्ष्य को शिक्षक शिक्षा के विभिन्न पदों का अनुसरण कर प्राप्त कर सकते हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये (Fill in the blanks)–

1. उच्चशिक्षा स्तर के भावी शिक्षक को विषय को .... की सम्पूर्ण योग्यता तथा दक्षता होनी चाहिए।
2. व्यावसायिक/ज्ञानात्मक विषय के शिक्षण हेतु .... कौशल विकसित करना आवश्यक है।
3. अपने विषय के शिक्षण के लिए .... का उपयोग शिक्षक के लिए आवश्यक होता है।
4. सामाजिक परिवर्तन के लिए .... में शिक्षक की भूमिका की जानकारी आवश्यक होती है।
5. किसी भी कुशल शिक्षक को .... के विश्लेषण की क्षमता होनी चाहिए।

25.2 अध्यापक शिक्षा में उभरती प्रवृत्तियाँ (Emerging Trends in Teacher Education)

बी. ओ. स्मिथ के अनुसार "सैद्धान्तिक रूप से प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित अध्यापकों में महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि सैद्धान्तिक रूप से प्रशिक्षित अध्यापक परिमार्जित प्रत्ययों को अपने शिक्षण की क्रिया में प्रयोग करता है जिन्हें वह अध्यापन कला और अनुशासन से सीखता है या अध्यापन क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करता है, परन्तु सैद्धान्तिक रूप से अप्रशिक्षित अध्यापक शिक्षण की क्रियाओं को अपने सामान्य ज्ञान के आधार पर करेगा जिन्हें उसने अपने अनुभव से प्राप्त किया है।" इस प्रकार प्रशिक्षित अध्यापक प्राप्त ज्ञान के आधार पर अपनी शिक्षण की क्रियाओं का सम्पादन करता है उसे उनका कारण एवं प्रभाव विदित होता है। अप्रशिक्षित अध्यापक भी अपने शिक्षण में वहीं क्रियायें करता है परन्तु उसे उनके कारण और प्रभाव की जानकारी नहीं होती। अस्तु प्रशिक्षण में ऐसी नवीन प्रवृत्तियों एवं अभ्यास का ज्ञान देना आवश्यक है जिनके प्रयोग से शिक्षण की प्रक्रियाओं को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

अन्तःअनुशासन उपागम (Interdisciplinary Approach)

अन्त:अनुशासन उपागम के निर्माण में क्षेत्रीय विद्यालयों का महत्वपूर्ण स्थान है। अध्यापक-शिक्षा के गुणात्मक स्वरूप को सुधारने के लिए क्षेत्रीय विद्यालयों के द्वारा चार वर्ष का अध्यापक-शिक्षा पाठ्यक्रम दिया गया है। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के द्वारा व्यावसायिक पाठ्यक्रम एवं व्यापक-पाठ्यक्रम दिए गए हैं, जोकि उत्तम प्रकार की अध्यापक शिक्षा जैसे–शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, एक या दो विषय में विशिष्ट शिक्षा, विद्यालय में प्रशिक्षण शिक्षा के साथ प्रत्यक्ष अनुभव देते हैं। वर्तमान कुछ वर्षों में ज्ञान के अभूतपूर्व प्रादुर्भाव ने अध्यापक शिक्षा के लिये नवीन माँगों को जन्म दिया है। क्षेत्रीय विद्यालयों में, ज्ञान के आधुनिक विकास को अत्यन्त योग्य व्यक्तियों द्वारा पढ़ाया जाता है। अध्ययन विद्या के विशेषज्ञों के द्वारा, शिक्षण के प्रकार में आधुनिक विकास को पढ़ाया जाता है।

शिक्षण में इण्टर्नशिप (Internship in Teaching)

अभ्यास शिक्षण कार्यक्रम भावी शिक्षकों में वास्तविक अनुभव एवं पढ़ाने के शिक्षण कौशल में अभिवृद्धि करता है, किन्तु शिक्षण विधि में अपनाये जाने वाली विधियाँ एवं आदर्श लक्ष्य के अनुरूप नहीं हैं। कुछ शास्त्री केवल अभ्यास शिक्षण की समस्याओं की ओर ही ध्यान-केन्द्रित करते हैं। शिक्षण में इंटर्नशिप अभ्यास की विधि में सुधार करती है। इस

नोट

कार्यक्रम में अभ्यास शिक्षण तथा निर्देशित क्षेत्र अनुभवों का समायोजन है। इसमें प्रतिष्ठित विद्यालयों का चुनाव किया जाता है। शिक्षार्थी सावधानीपूर्वक अभ्यास शिक्षण को निर्देशित करते हैं। आरक्षण में इण्टर्नशिप का प्रयोग इस तरह किया जाता है जो भावी शिक्षक को प्रयोगशाला अनुभव की तरह का वह ज्ञान दे सके तथा जो उसे स्कूल की सम्पूर्ण परिस्थितियों में एक शिक्षक के रूप में व्यावसायिक श्रेष्ठता देने में समर्थ हो। शिक्षार्थी को स्कूल की विभिन्न गतिविधियों में भागीदारी के अवसर दिये जाते हैं जो व्यावहारिक होते हैं तथा जिनके द्वारा स्कूल समुदाय से उनकी पहिचान-भावना होती है। उसे सभी कार्यों और उत्तरदायित्वों में भागीदार बनाया जाता है। उसे स्थायी शिक्षक की भाँति विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं। उसे शिक्षार्थी तथा अध्यापक के दोहरे कर्त्तव्यों का निर्वाह करना होता है।

नोट्स भारत में शिक्षण के अभ्यास को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। शिक्षण योग्यताओं के प्रयोगात्मक कार्य इसके महत्वपूर्ण पक्ष के रूप में जाने जाते हैं।

इण्टर्नशिप अवधि की गतिविधियाँ—

(*i*) **कक्षाओं का निरीक्षण**—आरम्भ में कुछ दिनों में उसे अपने क्षेत्र की सभी कक्षाओं का अवलोकन करना होता है, ताकि वह स्कूल के पाठ्यक्रम एवं कार्यक्रम की वृहद जानकारी प्राप्त कर सके।

(*ii*) **अभ्यास शिक्षण**—उसे अन्य सहयोगी शिक्षकों से भी जानकारी प्राप्त करनी होती है ताकि वे सहयोग से कार्य कर सकें। वह साथी शिक्षकों से मन्त्रणा, सुझाव एवं परामर्श प्राप्त करता है। पाठ योजना बनाने, शिक्षण पद्धति तथा अन्य दैनिक गतिविधियों को क्रम देने के लिये विद्यालयों के निरीक्षकगण सहायतार्थ आते रहते हैं तथा शिक्षार्थी इन निरीक्षकगणों से अपने कार्य में और अधिक सुधारों हेतु सुझावों पर विचार-विमर्श करते हैं।

(*iii*) शिक्षार्थी से अपेक्षा की जाती है, कि वह विद्यालयों से शिक्षा के दर्शन, पाठ्यक्रम, संगठन तथा अन्य गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करे ताकि उसके मस्तिष्क में एक सम्पूर्ण बिम्ब बन सके। वह अपनी रुचियों एवं योग्यताओं के अनुरूप पाठ्य-सहगामी क्रियाओं एवं प्रशासनिक दैनिक कार्यों की भी शिक्षा प्राप्त करता है।

सामुदायिक जीवन (Community Life)

सामुदायिक जीवन कार्यक्रमों का उद्देश्य व्यक्तिगत तथा सामाजिक प्रभावकारिता उत्पन्न करना है। इसे कार्यक्रम के मुख्य पक्ष निम्नलिखित हैं—

(*i*) सामुदायिक आवास जिसको छात्रावास में अनिवार्य रूप से रहने से प्राप्त किया जा सकता है।

(*ii*) कमरों की सफाई एवं व्याख्यान कक्षों के रख-रखाव से सामुदायिक रूप से क्षेत्र की सफाई प्राप्त होती है।

(*iii*) आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार के खेलों का प्रबन्ध।

(*iv*) मनोरंजन के सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन।

(*v*) सहकारिता के आधार पर भोजनालयों का संचालन।

(*vi*) अध्ययन हेतु सुनिश्चित समय के लिये अध्ययन मण्डलों का संचालन, प्रबन्धन तथा इनसे प्राप्त उपलब्धियों का विश्लेषण।

अभिविन्यास-पाठ्यक्रम (Orientation Course)

इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

(*i*) छात्रों को उनके शिक्षण कार्यक्रमों की प्रकृति, क्षेत्र एवं उनकी महत्ता की जानकारी प्राप्त करना।

(*ii*) शिक्षा विभाग के अन्तर्गत उन्हें दायित्वों एवं आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना।

(*iii*) विशेष अध्ययन हेतु उनको चुने हुये अध्ययन विषय की जानकारी देना।

(*iv*) उनको, उनके सहपाठियों तथा परामर्शदाताओं से सुपरिचित एवं सुसम्बन्धित करना।

नोट

अभिविन्यास पाठ्यक्रम के आयोजन की अवधि चार से छः दिवस तक होती है। इस अवधि का निर्धारण विद्यार्थियों की आवश्यकतानुसार घट-बढ़ सकती है। इस समस्त कार्यक्रम का पाठ्यक्रम अग्रिम रूप से तैयार करके छात्रों एवं अध्यापकों के मध्य वितरित कर दिया जाता है। यह कार्यक्रम छात्रों के नेतृत्व में सामूहिक विचार-विमर्श एवं विचारों के आदान-प्रदान द्वारा सम्पन्न होता है।

पत्राचार-पाठ्यक्रम (Correspondence Courses)

आज विश्व के अनेक देशों में पत्राचार पाठ्यक्रम का विभिन्न व्यवसायिक समूहों द्वारा सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय देश का पहला विश्वविद्यालय है जिसे पत्राचार पाठ्यक्रम का शुभारम्भ करने का गौरव प्राप्त है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद ने विशेषज्ञों का एक अध्ययन समूह बनाया जिसने सन् 1964 में प्रशिक्षण विद्यालयों में पत्राचार पाठ्यक्रम आरम्भ करने की संस्तुति की। देश के चार शिक्षा महाविद्यालयों तथा केन्द्रित शिक्षा संस्थान दिल्ली ने पत्राचार पाठ्यक्रम के प्रयोग का साहसिक कार्य अपने हाथों में लिखा है, जिसमें दो ग्रीष्मकालीन पाठ्यक्रम रखे गए जिनकी अवधि दो माह की रखी गयी।

क्रियात्मक अनुसन्धान (Action Research)

विद्यालयों शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में गुणात्मक सुधार के लिये क्रियात्मक अनुसन्धान बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। "धारवाड़" विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग ने छात्र अध्यापकों के पाठ्यवस्तु के ज्ञान में सुधार हेतु तथा उनकी वर्तमान अध्यापन क्षमताओं को और अधिक बढ़ाने हेतु एक अग्रगामी अध्ययन किया, जिस के कुछ निष्कर्ष अधोलिखित हैं–

(*i*) छात्र अध्यापकों के पाठ्यवस्तु के ज्ञान में सुधार के लिये अल्पकालीन विचारगोष्ठी, वाद-विवाद तथा कार्यशाला सहायक सिद्ध होंगे।

(*ii*) प्रशिक्षार्थियों को शिक्षण विधियों से परिचित कराना एवं कौशलों के प्रदर्शन तथा आरम्भ में पुनराभ्यास उनके शिक्षण कौशल में उतना सुधार नहीं ला पाते जितना कि सामान्य अभ्यास।

(*iii*) आत्ममूल्यांकित परीक्षणों से प्राप्त तथ्यों द्वारा यह निष्कर्ष निकला कि इन विधियों द्वारा सकारात्मक अभिवृद्धि विकसित की जा सकती है।

सूक्ष्म शिक्षण (Micro-Teaching)

ऐलन एवं ईव (1968) के अनुसार सूक्ष्म शिक्षण में विशिष्ट व्यवहार पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है, तथा नियन्त्रित दशाओं में शिक्षण का अभ्यास किया जाता है। एक समय में एक ही कौशल में निपुणता प्राप्त की जाती है। सूक्ष्म शिक्षण वास्तविक स्थितियों में कक्षा शिक्षण है। इससे कक्षा का आकार, पाठ की लम्बाई तथा शिक्षण कौशल सीमित होते हैं।

अध्यापक प्रशिक्षण में प्रयोग करने पर सूक्ष्म शिक्षण को कक्षा शिक्षण का लघु रूप कहा जाता है। यह एक सरलीकृत नियन्त्रित अभ्यास है जिसमें तीन से पन्द्रह मिनट तक का समय होता है, और कक्षा में तीन से दस छात्र होते हैं। यहाँ छात्र वास्तविक कक्षा में होते हैं, शिक्षण वास्तविक होता है लेकिन परिवेश संरचित होता है। इसमें अग्रलिखित सोपानों का अनुकरण किया जाता हैं–

(*i*) शिक्षण-पाठ्यवस्तु की लघु इकाई का अल्पकाल में छोटी कक्षा में शिक्षण।

(*ii*) चर्चा-सुधार के लिए सुझाव।

(*iii*) उसी पाठ इकाई का दूसरे लघु समूहों पर पुनर्शिक्षण।

(*iv*) जब तक कि वांछित व्यवहार प्राप्त नहीं हो जाते चर्चा-उपलब्धियों के पदों में पुनर्सुझाव।

सूक्ष्म शिक्षण के लाभ

(*i*) **सरलता**–यह एक सरल उपागम है। इस विशेषता के कारण इसे घटक कौशल उपागम के नाम से भी जानते हैं।

(*ii*) **सुविधायुक्त एवं नियन्त्रित अनुसन्धान यन्त्र**–यह एक सुविधापूर्ण अनुसंधान यंत्र है, जिसमें वांछित मूल तत्त्वों को इच्छानुसार समायोजित किया जा सकता है, दूसरे तत्वों की भांति इस चर को नियन्त्रित भी किया जा सकता है, और उसे सूक्ष्म शिक्षण प्रयोगशाला में पुनः उत्पन्न किया जा सकता है।

(*iii*) **कम खर्चीला**—यह एक कम खर्चीली विधि है जो कर्मचारियों के समय को बचाती है और अभ्यास की प्रभावशीलता में वृद्धि करती है।

(*iv*) **सुन्दर मूल्यांकन**—इसके द्वारा अध्यापक के मूल्यांकन की नयी सम्भावनाओं का पता चलता है तथा शिक्षण में उत्तम अभिलेख, प्रमापीकृत दशाओं एवं क्षमताओं को सुनिश्चित किया जा सकता है।

(*v*) **व्यक्तिगत उपागम**—प्रत्येक छात्र, अध्यापक शिक्षण के वांछित कौशल को इस उपागम के द्वारा अपनी गति से प्राप्त करता है।

(*vi*) **उत्तम उपचारात्मक एवं निदानात्मक यन्त्र**—सूक्ष्म शिक्षण में छात्र-अध्यापक की कमियों को खोजकर उसे दूर किया जा सकता है।

अनुकरणीय सामाजिक कौशल प्रशिक्षण (Simulated Social Skill Training)

फिलिप डब्ल्यू. परड्यू के अनुसार "अनुकरणीय शिक्षण एवं निरीक्षण का सम्पादन नियमित कक्षा में नहीं होता। इसके अन्तर्गत अध्यापन स्थिति के नये माध्यम जैसे—श्रव्य या दृश्य, टेप एवं फोटोग्राफी तथा सूक्ष्म शिक्षण के वीडियो प्रयोग किये जा सकते हैं। इसके अन्तर्गत परम्परावादी शिक्षण उपागम सम्मिलित किया जा सकता है जिसमें कॉलिज के विद्यार्थी अपने ही सहपाठियों को कक्षा 10 के विद्यार्थी की तरह पढ़ाते हैं।

अनुकरणीय प्रशिक्षण के लाभ

(*i*) **प्रयोगशाला अनुभवों के पूरक के रूप में**—यह प्रविधि शिक्षक-प्रशिक्षको के लिये केवल अनुसन्धान के लिये ही रुचि का विषय नहीं है बल्कि इसे प्रयोगशाला अनुभवों के समृद्धिपूरक रूप में भी लिया जा सकता है।

(*ii*) **पुनर्अभ्यास के अवसर प्रदान करता है**—ये प्रविधियाँ शिक्षण के पूर्व की क्षमताओं को बढ़ाने में प्रयोग होती हैं ये विद्यालयी शिक्षण के पूर्व अध्यापक को प्रायोगिक अनुभव प्रदान करती हैं।

अन्तःक्रिया विश्लेषण (Interaction Analysis)

अध्यापक-शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापक की कक्षा अन्तःक्रिया को लक्ष्य बनाकर उसे विश्लेषित करने एवं उसका गुणात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।

इस क्षेत्र में दीर्घकालीन ठोस कार्यक्रम नैड ए. फिलेण्डर्स के नेतृत्व में विकसित किया गया। फ्लैण्डर्स ने अपने अध्ययन में पाया कि निम्न उपलब्धि वाली कक्षाओं की तुलना में उच्च उपलब्धि की कक्षाओं में अध्यापक के मौखिक कार्य अलग थे।

अन्तः क्रिया विश्लेषण के लाभ

1. यह एक उद्देश्यपूर्ण खोजी विधि है जिसके द्वारा कक्षा अन्तःक्रिया का विश्लेषण किया जाता है।
2. इसे सूक्ष्म शिक्षण के सन्दर्भ में प्रयोग करके अध्यापक के व्यवहार में सुधार लाया जा सकता है।
3. इसका सेवाकालीन अध्यापकों के मूल्यांकन एवं सुधार हेतु प्रयोग होता है।
4. इसे पृष्ठ-पोषण के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है।
5. इसके द्वारा आत्मप्रत्यय का निर्माण एवं उचित स्वः मूल्यांकन होता है।

समूह शिक्षण (Team Teaching)

इसे सहकारी शिक्षण भी कहा जाता है। यह तब आरम्भ होता है जब एक से अधिक अध्यापक मिलकर योजना का निर्माण करते हैं और उसे विद्यार्थियों के एक ही समूह पर प्रशासित करते हैं चाहे वे विद्यार्थी किसी भी स्तर के क्यों न हों।

समूह शिक्षण के अन्तर्गत कई संगठनात्मक विचार प्रचलित है, समूह शिक्षण दो प्राथमिक शिक्षकों को मिला करके चालीस-पचास विद्यार्थियों के निर्देशन तैयार करने में हो सकता है। दूसरी ओर वह अध्यापकों द्वारा तैयार 200

नोट

विद्यार्थियों के लिये भी हो सकता है। टीम के लिये अध्यापकों का कार्य कई भूमिकाओं और विशेषताओं को प्रदर्शित करता है। टीम भूमिका में टीम का नेता मुख्य अध्यापक, अंशकालीन अध्यापक की सहायता करने वाली सामग्री एवं टीम क्लर्क सम्मिलित होते हैं।

समूह शिक्षण के लाभ

एण्डरसन (1966) ने समूह शिक्षण की सात विशेषतायें मानी हैं जिन्हें समूह शिक्षण के लाभ के रूप में माना जा सकता है–

(*i*) शिक्षण कार्य में विशेष योग्यता।

(*ii*) छात्रों को उपसमूहों में बांटने में लचीलापन।

(*iii*) स्कूल संसाधनों का प्रभावी प्रयोग।

(*iv*) व्यवसायिक एवं अव्यावसायिक लोगों को पूरक शिक्षक के रूप में कार्य करने की सुविधा।

(*v*) संसाधनों एवं तकनीकी के प्रयोग की विस्तृत सम्भावनायें।

(*vi*) प्रशिक्षणार्थियों एवं नये अध्यापकों के प्रशिक्षण में सुविधा।

(*vii*) समूह सदस्यों की व्यावसायिक योग्यता में वृद्धि।

अभिक्रमित अनुदेशन

यह अधिगम विज्ञान के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी कदम है जिसने अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया है। आजकल विद्यालयी विषयों के शिक्षण, शैक्षिक सांख्यिकी एवं शिक्षा मनोविज्ञान के कुछ क्षेत्रों में इसका प्रयोग किया गया है जिसके फलस्वरूप कुछ अच्छे कार्यक्रम विकसित हुये हैं जिनसे छात्राध्यापक लाभान्वित हो सकता है।

अभिक्रमित अनुदेश के लाभ

(*i*) इसमें छात्र क्रियाशील रहते हैं और अपनी योग्यतानुसार आगे बढ़ते हैं।

(*ii*) इसमें प्रभावी अधिगम के लिये सभी प्रकार के वैज्ञानिक सिद्धान्तों का अधिकतम प्रयोग किया जा सकता है।

(*iii*) इसमें अधिगम प्रभावी, सुखदायी एवं स्थायी होता है।

(*iv*) इसका प्रयोग घर पर अध्ययन में किया जा सकता है जिससे संशोधन कार्यक्रम में लगने वाला अध्यापक का समय बच जाता है।

(*v*) इससे अधिगम तीव्र गति से, निश्चित एवं अधिक गहन होता है।

टास्क समूह शिक्षण से आप क्या समझते हैं?

जनसंख्या शिक्षा (Population Education)

जनसंख्या शिक्षा पूर्णतया नवीन क्षेत्र है। इसमें मूल्यों और दृष्टिकोण का विशेष ज्ञान एवं सूचनाओं तथा शिक्षकों का समावेश है। इसके अनुसार, व्यक्ति एवं राष्ट्र की भलाई हेतु, छोटे परिवार के आदर्श से संतुष्ट होना आवश्यक है। आजकल अध्यापक शिक्षण में एक सुनियोजित परिवार से सम्बन्धित दृष्टिकोण का विकास अनिवार्य रूप से हो गया है ताकि वे अति जनसंख्या वृद्धि के परिणामों के प्रति जागरूक रह सकें।

जनसंख्या शिक्षा का महत्त्व

1. जनसंख्या शिक्षा के शिक्षक कार्यक्रम में समावेश द्वारा भावानात्मक एकता, राष्ट्रीय एकता, अन्तर्राष्ट्रीय समझ-बूझ का विकास होगा तथा इसे छात्रों में भी विकसित किया जा सकेगा।

शिक्षकों में जनसंख्या शिक्षा प्रत्यय इस प्रकार उत्पन्न किया जाना चाहिये कि वे परिवार सीमित रखें क्योंकि यह परिवार तथा देश की आर्थिक प्रगति हेतु आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है। यह भावना एवं दृष्टिकोण विद्यार्थियों में भी विकसित किया जाना आवश्यक है।

2. जनसंख्या शिक्षा सामाजिक बदलाव एवं सामाजिक नियन्त्रण का एक सशक्त हथियार है। इसके द्वारा सामाजिक बदलावों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

   (i) व्यक्ति अपने पैतृक व्यवसायों का परित्याग कर रहे हैं। शिक्षा को व्यावसायिक उद्देश्यों में परिवर्तन किया है।

   (ii) महिला एवं पुरुष दोनों के ही कार्यालयों में कार्यरत रहने से बच्चों की देखभाल की समस्या उत्पन्न हुई है। उनको समाजीकरण की समस्या ने भी जन्म दिया है। इस समस्या के हल हेतु शिक्षा में नर्सरी स्कूल पद्धति का विकास हुआ है।

   (iii) भारत में जनसंख्या वृद्धि तीव्रगामी है। इस शताब्दी के अन्त तक इसके एक अरब हो जाने की संभावना है। इससे आर्थिक स्तर एवं देश की प्रगति में निश्चित रूप से अवरोध उत्पन्न होंगे। शिक्षकों को जनसंख्या नियन्त्रण के गम्भीर एवं दायित्वपूर्ण कर्त्तव्यों को निर्वाह के लिये आगे आना होगा।

इस प्रकार जनसंख्या शिक्षा को दी जाने की महत्ता की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। शिक्षक को विद्यार्थियों में इसके प्रति सजग एवं प्रबल भावनायें एवं दृष्टिकोण का विकास करना चाहिये। अत: यह आवश्यक है कि शिक्षक को जनसंख्या शिक्षा के विषय में प्रशिक्षित किया जाये।

जनसंख्या शिक्षा के लक्ष्य

जनसंख्या शिक्षा को मानव विकास कार्यक्रम का एक महत्त्वपूर्ण भाग मानते हुए डा. वी. के. आर. वी. राव. ने लिखा है, "जनसंख्या शिक्षा को अंकों का निबन्ध अथवा परिणात्मक ही नहीं समझा जाना चाहिये। जनसंख्या का गुण ही अधिक अर्थ रखता है। उत्थान के कारण के रूप में और उसके उस विकास के फलस्वरूप प्राप्त अन्तिम उद्देश्य के रूप में संख्याओं के प्रभाव को देखा जाना चाहिये, उस सन्दर्भ में जिनका प्रभाव अवनति अथवा उन्नति पर पड़ता है। जनसंख्या शिक्षा आवश्यक रूप से मानव संसाधन विकास से जुड़ी हुई है, अत: जनसंख्या शिक्षा केवल, जनसंख्या जागरूकता से ही सम्बन्धित नहीं है अपितु इसके नित्यप्रति विकसित हो रहे मूल्यों एवं धारणाओं से गहरा सम्बन्ध है ताकि गुण और मात्रा दोनों ओर सर्तकता रहे।" बीडरमैन ने शिक्षा के नैतिक एवं नीतिशास्त्रीय उद्देश्य पर बल दिया है। जनसंख्या शिक्षा का उद्देश्य उस जागरूकता एवं समझबूझ को विकसित करना है जो जनसंख्या विकास तथा राष्ट्रीय विकास के मध्य सम्बन्धों का निर्धारण करती है। वह उस जानकारी को विकसित करती है जो व्यक्ति के जनसंख्या वृद्धि के क्षेत्र में लिये गये व्यक्तिगत निर्णयों से उत्पन्न होती है। जनसंख्या जागरूकता कार्यक्रम में जनसंख्या की गतिशीलता, पारिवारिक जीवन, सन्तानोत्पत्ति की जानकारी, नई पीढ़ी को दी जानी चाहिये। उसे यह भी बतलाना चाहिये कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति के कार्य दूसरे-सदस्यों को प्रभावित करते हैं। यह जनसंख्या शिक्षा का नैतिक और नीतिशास्त्रीय लक्ष्य है। इसी के साथ इसका सूचनात्मक एवं विचारात्मक लक्ष्य सम्बन्धित है। टेलर ने जनसंख्या शिक्षण एवं परिवार नियोजन कार्यक्रमों के मध्य अभिप्रेरणात्मक सम्बन्धों पर बल दिया है। उसके अनुसार जनसंख्या शिक्षण की समस्यायें दोहरी हैं। प्रथम इसका अभिप्रेरणात्मक होना अर्थात् व्यक्तियों को परिवार नियोजन अपनाने की प्रेरणा देना तथा दूसरे इसका अनुदेशात्मक होना अर्थात् लोगों को जनसंख्या समस्या के तथ्यों से परिचित करना, इससे सम्बन्धित परिणामों की जानकारी देना एवं इसके निदानार्थ सम्भावित विकल्प सुझाना।

के. एस. राव का विचार है कि जनसंख्या शिक्षा वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति की निर्णयक्षमता समाज की भलाई के लिये कार्यरत होती है। राव के शब्दों में, "जनसंख्या शिक्षण को उस लक्ष्य की भाँति परिभाषित किया जा सकता है जिसका उद्देश्य सुविस्तृत तरीके से एक ऐसे सामाजिक क्रम को निर्मित करना है जिसमें गुण की विशेषता तथा आर्थिक न्याय सम्मिलित होकर एक लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना हो तथा विचारों के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के अनुसार इस प्रत्यय को स्थापित करे कि मानव अपने व्यक्तिगत कार्यों द्वारा अपने परिवार तथा देश को नियन्त्रित रख सकता है।"

नोट

यौन शिक्षा तथा पारिवारिक जीवन शिक्षा दोनों को जनसंख्या शिक्षा के अन्तर्गत रखा जाये। जनसंख्या शिक्षा, जनसंख्या के बारे में ज्ञान की वृद्धि एवं उचित अभिवृत्ति को सम्मिलित करती है जिसके अन्तर्गत परिवार और यौन शिक्षा दोनों आते हैं। इसमें जनसंख्या के प्रति जागरूकता, पारिवारिक जीवन, पुनरुत्पादन शिक्षा तथा आधारित मूल्य सम्मिलित हैं।

साइमन ने जनसंख्या शिक्षा में संज्ञानात्मक एवं भावनात्मक दोनों पहलुओं को सम्मिलित किया है। जनसंख्या शिक्षा जनसंख्या समस्या के बारे में सूचनायें प्रसारित करती है। परिवार नियोजन कार्यक्रम इसका एक साधन है। यह भावी पीढ़ी के दृष्टिकोण, व्यवहार एवं मूल्यों में वांछित परिवर्तन का महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

अध्यापक जनसंख्या शिक्षा

प्रमुख सोपान

1. अध्यापकों के लिए जनसंख्या शिक्षा पाठ्यक्रम का विकास करना।
2. सेवापूर्व अध्यापक प्रशिक्षण एवं सेवारत अध्यापक प्रशिक्षण के लिये जनसंख्या शिक्षा की विधियों तथा अनुदेशन सामग्री का विकास करना।

अध्यापक जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य

अध्यापक-शिक्षा कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विद्यालयों को प्रभावी ढंग से चलाने के लिये अध्यापकों का निर्माण करना है। राष्ट्रीय एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना की तरह जनसंख्या शिक्षा सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम का एक अंग होना चाहिये। छात्राध्यापकों को जनसंख्या शिक्षा के बारे में ज्ञान एवं बोध, अभिवृत्ति एवं कौशल प्रदान किया जाना चाहिये। जनसंख्या शिक्षा की पाठ्यवस्तु को अध्यापक-शिक्षा कार्यक्रम में उचित स्थान दिया जाना चाहिये।

जनसंख्या शिक्षा पाठ्यक्रम

1. **इकाई प्रथम (प्रस्तावना)**—जनसंख्या शिक्षा का अर्थ एवं क्षेत्र, पारिवारिक जीवन शिक्षा एवं यौन शिक्षा में अन्तर, जनसंख्या शिक्षा के उद्देश्य, आवश्यकता एवं उसका महत्त्व, सामान्य शिक्षा में जनसंख्या शिक्षा का स्थान।
2. **इकाई द्वितीय**—जनसंख्या की गत्यात्मकता तथा वृद्धि, वितरण तथा घनत्व, जनसंख्या वृद्धि का स्वरूप, भारत एवं विश्व के परिपेक्ष में जनसंख्या वृद्धि की विशेषतायें (जन्मदर, मृत्युदर, उम्र तथा लैंगिकता), शहरीकरण के निर्धारक एवं उसके परिणाम, जनसंख्या प्रजनन, भारत के आर्थिक, शैक्षिक एवं सामाजिक विकास में जनसंख्या वृद्धि का प्रयोग, जनसंख्या वृद्धि एवं मानव एवं प्राकृतिक संसाधन, शिक्षा की गुणवत्ता पर जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव।
3. **इकाई तृतीय**—जनसंख्या शिक्षा में अध्यापक की भूमिका, सामाजिक परिवर्तन के अभिकर्ता के रूप में अध्यापक, जनसंख्या योजना में अध्यापक की भूमिका, सामाजिक परिवर्तन एवं विकास में अध्यापक की भूमिका, जनसंख्या वृद्धि में अध्यापक की जागरूकता, जनसंख्या वृद्धि में अध्यापक का विश्वास, जनसंख्या, यौन शिक्षा एवं पारिवारिक जीवन के ज्ञान प्रदान करने में अध्यापक की भूमिका।
4. **इकाई चतुर्थ**—सामान्य शिक्षा के लिये जनसंख्या शिक्षा का पाठ्यक्रम, भारतीय विद्यालयों में पाठ्यक्रम के पुनर्निर्धारण की आवश्यकता, विद्यालयी पाठ्यक्रम में जनसंख्या शिक्षा का स्थान, पाठ्यक्रम पथ-प्रदर्शकों का विकास।
5. **इकाई पंचम**—अध्यापन विधि और मूल्यांकन, एकांकी तथा सहसम्बन्धी उपागम, जनसंख्या शिक्षा के सन्दर्भ में समस्या समाधान तथा केस स्टडी उपागम, विद्यालयी विषयों में जनसंख्या शिक्षा के शीर्षकों का उपर्युक्त अध्यापन इकाइयों जैसे—सामाजिक विषय, गणित, भाषा, सामान्य विज्ञान तथा जीवविज्ञान जैसे विषयों में समन्वय। जनसंख्या शिक्षा का पाठ्यसहगामी क्रियाओं जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रम, ड्रामा, नाटक व वाद-विवाद के साथ समन्वय। मूल्यांकन निबन्धात्मक प्रश्नों के द्वारा होना चाहिये।

6. **इकाई षष्टम**—जनसंख्या की विसंगतियाँ एवं विषय, जनसंख्या शिक्षा के बारे में प्रत्ययी विसंगति (यौन शिक्षा, पारिवारिक शिक्षा आदि), सामाजिक सांस्कृतिक मूल्य, अध्यापक की जनसंख्या के प्रति जागरूकता, आयु, कक्षा, लिंग के अनुसार जनसंख्या शिक्षा प्रत्यय को परिभाषित करने की अध्यापक की योग्यता, जनसंख्या शिक्षा पाठ्यवस्तु का क्षेत्र।

छात्र अध्यापकों को जनसंख्या शिक्षा की पाठ्यवस्तु संज्ञानात्मक स्तर पर न देकर, भावानात्मक एवं व्यावहारिक स्तर पर प्रदान करनी चाहिये। उन्हें भावी जनसंख्या वृद्धि के प्रति जागरूक होना चाहिये तथा शैक्षिक, सामाजिक एवं आर्थिक विकास पर जनंसख्या वृद्धि के परिणामों के प्रति सचेत रहना चाहिये।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)

1. प्राचीन काल में अध्यापक शिक्षा की व्यवस्था थी—
   (*a*) उत्तम (*b*) उत्तम नहीं थी (*c*) उचित (*d*) इनमें से कोई नहीं
2. मुस्लिम काल में अध्यापक शिक्षा पर—
   (*a*) बल दिया गया (*b*) कोई बल नहीं दिया गया
   (*c*) अधिक व्यय किया गया (*d*) इनमें से कोई नहीं
3. अध्यापक शिक्षा विकास प्रारम्भ हुआ—
   (*a*) प्राचीन काल में (*b*) मुस्लिम काल में (*c*) ब्रिटिश काल में (*d*) स्वतंत्र भारत में
4. मद्रास में प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना की गयी—
   (*a*) सन् 1950 में (*b*) 1882 में (*c*) 1856 में (*d*) 1881 में
5. लाहौर में प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना की गयी—
   (*a*) सन् 1882 में (*b*) सन् 1881 में (*c*) सन् 1856 में (*d*) इनमें से कोई नहीं
6. लार्ड कर्जन ने भारतीय शिक्षा सेवा विभाग के लिये अनुभवी तथा योग्य अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था किस सन् में की—
   (*a*) सन् 1902 में (*b*) सन् 1904 में (*c*) सन् 1906 में (*d*) सन् 1908 में
7. प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिये विद्यालय हैं—
   (*a*) नार्मल विद्यालय (*b*) ट्रेनिंग महाविद्यालय
   (*c*) सैकेण्डरी प्रशिक्षण विद्यालय (*d*) इनमें से कोई नहीं
8. विश्वविद्यालय आयोग ने एम.एड. में प्रवेश के लिये किन व्यक्तियों को प्रोत्साहित करने का सुझाव दिया—
   (*a*) 5 वर्ष का अनुभव प्राप्त शिक्षकों को (*b*) 6 वर्ष का अनुभव प्राप्त शिक्षकों को
   (*c*) 4 वर्ष का अनुभव प्राप्त शिक्षकों को (*d*) 3 वर्ष का अनुभव प्राप्त शिक्षकों का
9. सन् 1954 में मुदालियर आयोग ने अध्यापिकाओं के अभाव की पूर्ति के लिये सुझाव दिया—
   (*a*) प्रशिक्षण विद्यार्थी की संख्या में वृद्धि का (*b*) अनुभवी अध्यापिकाओं की नियुक्ति का
   (*c*) अप्रशिक्षित अध्यापिकाओं की भर्ती का (*d*) अंशकालीन पाठ्यक्रम के प्रबन्ध का
10. कोठारी आयोग ने प्रत्येक राज्य में अध्यापक शिक्षा स्टेट बोर्ड की स्थापना का सुझाव किस सन् में दिया है—
   (*a*) 1966 में (*b*) 1970 में
   (*c*) 1980 में (*d*) 1984 में

नोट

25.3 सारांश (Summary)

- पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षक को उन योग्यताओं से परिपूर्ण होना चाहिये जिससे वह बालकों में स्वस्थ व्यक्तित्व की नींव डाल सके। उनमें अन्तर्निहित गुणों को विकसित कर सके। हमारे देश में पूर्व प्राथमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम का निर्माण करने की दिशा में विशेष काम नहीं हुआ है। एन.सी.ई.आर.टी. ने पूर्वप्राथमिक स्तर पर शिक्षक शिक्षा का पाठ्यक्रम ज्ञान, गौण तथा अभिवृत्ति के संदर्भ में विकसित किया है।
- माध्यमिक स्तर पर बालक जिस आयु वर्ग का निर्माण करते हैं, वह परिपक्वता की दृष्टि से विकासोन्मुख होता है। शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य, माध्यमिक स्तर पर आरोपित किये गये; उनके मूल में किशोरावस्था की समस्यायें, अभिवृद्धि की यांत्रिकता, विभिन्न परिस्थितियों में अन्त:क्रिया के प्रति बालकों की रुचि जाग्रत करना, किशोरवस्था की प्राप्ति के बाद व्यवसाय का चयन, धर्म, समाज, राजनीति, राष्ट्र तथा अनेक कार्यों के प्रति छात्रों की रुचि, ये सभी शिक्षक शिक्षा के लिये सबल आधार प्रस्तुत करते हैं।
- बी. ओ. स्मिथ के अनुसार "सैद्धान्तिक रूप से प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित अध्यापकों में महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि सैद्धान्तिक रूप से प्रशिक्षित अध्यापक परिमार्जित प्रत्ययों को अपने शिक्षण की क्रिया में प्रयोग करता है जिन्हें वह अध्यापन कला और अनुशासन से सीखता है या अध्यापन क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करता है, परन्तु सैद्धान्तिक रूप से अप्रशिक्षित अध्यापक शिक्षण की क्रियाओं को अपने सामान्य ज्ञान के आधार पर करेगा जिन्हें उसने अपने अनुभव से प्राप्त किया है।"
- अन्त: अनुशासन उपागम के निर्माण में क्षेत्रीय विद्यालयों का महत्वपूर्ण स्थान है। अध्यापक-शिक्षा के गुणात्मक स्वरूप को सुधारने के लिए क्षेत्रीय विद्यालयों के द्वारा चार वर्ष का अध्यापक-शिक्षा पाठ्यक्रम दिया गया है।
- शिक्षार्थी सावधानीपूर्वक अभ्यास शिक्षण को निर्देशित करते हैं। आरक्षण में इण्टर्नशिप का प्रयोग इस तरह किया जाता है जो भावी शिक्षक को प्रयोगशाला अनुभव की तरह का वह ज्ञान दे सके तथा जो उसे स्कूल की सम्पूर्ण परिस्थितियों में एक शिक्षक के रूप में व्यावसायिक श्रेष्ठता देने में समर्थ हो।
- इसे सहकारी शिक्षण भी कहा जाता है। यह तब आरम्भ होता है जब एक से अधिक अध्यापक मिलकर योजना का निर्माण करते हैं और उसे विद्यार्थियों के एक ही समूह पर प्रशासित करते हैं चाहे वे विद्यार्थी किसी भी स्तर के क्यों न हों।
- समूह शिक्षण के अन्तर्गत कई संगठनात्मक विचार प्रचलित हैं, समूह शिक्षण दो प्राथमिक शिक्षकों को मिला करके चालीस-पचास विद्यार्थियों के निर्देशन तैयार करने में हो सकता है। दूसरी ओर वह अध्यापकों द्वारा तैयार 200 विद्यार्थियों के लिये भी हो सकता है।
- जनसंख्या शिक्षा पूर्णतया नवीन क्षेत्र है। इसमें मूल्यों और दृष्टिकोण का विशेष ज्ञान एवं सूचनाओं तथा शिक्षकों का समावेश है। इसके अनुसार, व्यक्ति एवं राष्ट्र की भलाई हेतु, छोटे परिवार के आदर्श से संतुष्ट होना आवश्यक है।

25.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अन्तर्निहित–** आंतरिक।
- **परिवेश–** वातावरण।

25.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर अध्यापक शिक्षा के उद्देश्य बतलाइये। इस सम्बंध में अंतिम व्यवहार का भी वर्णन कीजिए।
2. शिक्षा में मुख्य उभरती प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए।

नोट

3. अध्यापक शिक्षा में जनसंख्या शिक्षा पाठ्यक्रम का वर्णन कीजिए।
4. अधोलिखित पर टिप्पणी लिखिए—
   (क) सूक्ष्म शिक्षण (ख) टीम शिक्षण
   (ग) अनुकरणीय सामाजिक कौशल प्रशिक्षण

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. 1. पढ़ाने 2. मनोगत्यात्मक 3. शैक्षिक तकनीकि .4. कॉलेज और समाज
5. शिक्षा सामग्री

2. 1. (*a*) 2. (*b*) 3. (*c*) .4. (*c*)
5. (*b*) 6. (*b*) 7. (*a*) 8. (*b*)
9. (*d*) 10. (*a*)।

25.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–26: दूरस्थ शिक्षा (Distance Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

26.1 दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा, आवश्यकता और दूरस्थ शिक्षा का प्रारूप (Distance Education: Concept, Need and Modes of Distance Education)

26.2 सारांश (Summary)

26.3 शब्दकोश (Keywords)

26.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

26.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा, आवश्यकता और प्रारूप की विवेचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

दूरस्थ शिक्षा का अर्थ है कि देश के दूर भागों में रहने वाले सभी छात्रों को शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ। दूरस्थ शिक्षा (Distance Education) की व्यवस्था का कार्य व्यापक है सभी विकसित तथा विकासशील देशों में इसका प्रचार प्रचुरता से बढ़ रहा है। इसका कारण है कि शिक्षा के अर्जन मे समय एवं पैसे की बचत अर्थात् लोगों का विश्वविद्यालय या विद्यालय में अधिक शुल्क या लम्बा समय बिताने में कमी लाना है। दूसरी और सरकार की नीति है प्रत्येक व्यक्ति को साक्षर (शिक्षित) करने की प्रवृत्ति। कुछ शिक्षाशास्त्रियों ने इसकी परिभाषा देने का प्रयत्न किया ताकि यह (दूरस्थ) शिक्षा प्रणाली परम्परागत (Traditional) शिक्षा प्रणाली से विभिन्न लगे। उच्च शिक्षा में इस प्रणाली की लोकप्रियता में वृद्धि का कारण है इसका आधुनिक परिवेश में अधिक से अधिक प्रयोग होना।

26.1 दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा, आवश्यकता और दूरस्थ शिक्षा का प्रारूप (Distance Education: Concept, Need and Modes of Distance Education)

दूरस्थ शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करने के लिये विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, जो निम्न प्रकार हैं–

मूरे (Moore) के शब्दों में, "दूरगामी शिक्षा वह शिक्षण विधियों का परिवार है जिसमें सीखने की कला के साथ शिक्षण कला को भी महत्व दिया जाता है। इसमें अध्यापक और विद्यार्थी के बीच विचारों का आदान-प्रदान पत्राचार, रेडियो, दूरसंचार और अन्य कई यन्त्रों के माध्यम से किया जाता है।"

नोट

पीटर्स (Peters) दूरगामी शिक्षा की परिभाषा देते हुए लिखते हैं कि, "दूरगामी शिक्षा एक ऐसी शिक्षण प्रणाली है जिसकी सहायता से ज्ञान, कौशल और व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। इस शिक्षण प्रणाली में उच्चकोटि की शिक्षण सामग्री तकनीकी संचार साधनों द्वारा पहँचाई जाती है।"

डोहमन (Dohmen) के अनुसार, "दूरगामी शिक्षा, स्व:अध्ययन (Self-Study), की वह सुनियोजित शिक्षा प्रणाली है जिसमें विद्यार्थी को परामर्श, सीखने की सामग्री, निरीक्षण आदि का उत्तरदायित्व अध्यापकों के एक समूह पर होता है। इस उत्तरदायित्व को निभाने का प्रयास दूर संचार माध्यम की सहायता से किया जाता है।" इस परिभाषा में डोहमन ने दूरगामी शिक्षा के लिए अध्ययन और संचार माध्यम को महत्वपूर्ण माना है।

दूरगामी शिक्षा से मिलते-जुलते अन्य शब्द (Other Similar Terms of Distance Education)

दूरगामी शिक्षा को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, फ्रांस में इसे 'Enseignement', आस्ट्रेलिया में 'Off-Campus', जर्मनी में 'Frenstudium', न्यूजीलैण्ड में 'Extra Mural' आदि नामों से जाना जाता है। भारत में हम इसे External, Correspondence Education तथा Distance Education के विभिन्न नामों से पुकारते हैं।

कुछ शिक्षाशास्त्री यह कहते हैं कि External Education को हम दूरगामी शिक्षा (Distance Education) की संज्ञा नहीं दे सकते, क्योंकि External Education में विश्वविद्यालय विद्यार्थी की शिक्षा में किसी प्रकार की सहायता नहीं करता। विद्यार्थी स्वयं पढ़कर परीक्षा में बैठता है। 'पत्राचार शिक्षा' (Correspondence Education) का नाम बदलकर दूरगामी शिक्षा रख दिया है। इसलिए हम कह सकते हैं कि भारत में दोनों ही नाम पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education) और दूरगामी शिक्षा (Distance Education) प्रचलित है।

सुदूर शिक्षा की आवश्यकता (Need of Distance Education)

सुदूर शिक्षा की आवश्यकता हमारे देश में निम्न प्रकार है–

1. **राष्ट्र की प्रगति**–देश की जनशक्ति को आधुनिकतम ज्ञान तथा कौशल के सम्पर्क में रखकर ही उसका सदुपयोग राष्ट्रहित में किया जा सकता है। आज जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण सम्पूर्ण जनसंख्या को शिक्षित नहीं किया जा सकता, परन्तु सुदूर शिक्षा के द्वारा शेष व्यक्तियों को शिक्षा के अनौपचारिक माध्यमों से शिक्षित कर राष्ट्रीय प्रगति के लिये तैयार किया जा सकता है।
2. **ज्ञान को अद्यतन करना**–ज्ञान का विकास, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के कारण बहुत तेजी से हो रहा है। प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति ज्ञान के इस विकास की तुलना में अपने को अपूर्ण पाता है। अपने अपूर्णता को पूरा करने के लिये उसे सुदूर शिक्षा का सहारा लेना आवश्यक है। इसीलिये निजी अध्ययन व्यक्तिगत परीक्षार्थी तथा पत्राचार पाठ्यक्रम की प्रक्रिया आरम्भ हुई।
3. **लचीलापन**–सुदूर शिक्षा प्रणाली के माध्यम से, औपचारिक प्रणाली के विपरीत बहुत कम शर्तो का पालन करना पड़ता है। उच्चशिक्षा में क्वालीफाइड ज्ञान की सीमा को समाप्त कर दिया गया है अत: सुदूर शिक्षा के माध्यम से उच्च शिक्षा में प्रगति आने लगी है।
4. **पत्राचार पाठ्यक्रम में सुधार**–सुदूर शिक्षा के पत्राचार पाठ्यक्रम में सुधार किये गये हैं। ये इस प्रकार हैं–
   (*i*) पारम्परिक विषयों के अतिरिक्त अन्य उपयोगी विषयों में पाठ्यक्रम आरम्भ किए गये।
   (*ii*) छात्रों के दत्त कार्य (Assignments) दिये जाने लगे।
   (*iii*) छात्रों का दत्त कार्य का मूल्यांकन भी किया जाने लगा।
   (*iv*) छात्र अपनी सुविधा तथा आवश्यकता के अनुसार परीक्षा देने लगे तथा प्रमाण पत्र प्राप्त करने लगे।
5. **शैक्षिक अनुसन्धानों का उपयोग**–शिक्षा के क्षेत्र में अनेक अनुसंधान होते रहते हैं, उनका लाभ सुदूर शिक्षा को व्यवस्थित करने में किया जाने लगा।

इन अनुसंधानों का प्रभाव इस प्रकार हुआ–(1) विषयों की संरचना में सुधार किया गया। (2) शिक्षण के लिये अनेक माध्यमों का उपयोग किया जाने लगा। (3) सम्पर्क कार्यक्रमों का अनुप्रयोग।

नोट

सुदूर शिक्षा का उद्देश्य उच्च शिक्षा में प्रवेश के अन्तर को कम करना है। अधिकतम व्यक्ति संस्था के बाहर रहकर, अपने जीवन के काम-काज चलाते हुए उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकें। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु राष्ट्रीय स्तर पर इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। भारत में अनेक विश्वविद्यालय औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ अनौपचारिक रूप से सुदूर शिक्षा के माध्यम से उच्च शिक्षा प्रदान कर रहे हैं।

सुदूर शिक्षा का लाभ किसे?

सुदूर शिक्षा, शिक्षा प्राप्त करने की एक प्रणाली है। इस प्रणाली के लाभ उठाने वाले व्यक्ति ये हैं–

(*i*) जिन्हें आर्थिक, सामाजिक या अन्य कारणों से औपचारिक शिक्षा को छोड़ना पड़ा।

(*ii*) जो दूरस्थ स्थानों पर रहते हैं और जहाँ औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं है।

(*iii*) जो रुचि तथा स्फूर्ति के अभाव में औपचारिक प्रवाह से हट गये किन्तु बाद में उन्हें ज्ञानार्जन की प्रेरणा मिली है।

(*iv*) जो प्रवेश की सामर्थ्य तो रखते हैं परन्तु उन्हें औपचारिक, संस्थाओं में प्रवेश न मिला हो।

(*v*) जीवन-पर्यन्त शिक्षा की अवधारणा में विश्वास करने वाली व्यक्ति नये ज्ञान में कौशल विकसित करना चाहते हों।

(*vi*) जो सेवारत हैं।

सुदूर शिक्षा का महत्व

विश्व का कोई देश ऐसा नहीं है जहाँ सुदूर शिक्षा पर विचार-विमर्श व क्रियान्वयन न हो रहा हो। विश्व के सभी देशों में सुदूर शिक्षा द्वारा वहाँ की जनता को ज्ञान के सम्पर्क में रखा जा रहा है। परिणामतः पारम्परिक शिक्षा प्रणाली के स्थान पर सुदूर शिक्षा पर बल देने के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी जा रही है।

यह सभी जानते हैं कि जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ उच्च शिक्षा पर संस्थानिक दबाव बढ़ रहा है। इस बढ़ते दबाव को सुदूर शिक्षा के माध्यम से उच्च शिक्षा पर से हटाया जायेगा। पारम्परिक शिक्षा प्रणाली में सार्वजनिक व्यापीकरण के मार्ग में ये बाधायें हैं–

1. जीवन के यौवन काल में जबकि उसे अपनी शक्ति का उपयोग अपने तथा समाज के हित में करना चाहिये, शिक्षा प्राप्त करने में लगाना पड़ता है।
2. उच्च शिक्षा को पूरी अवधि तक चलाना पड़ता है।
3. शिक्षक की उपस्थिति अनिवार्य होती है।
4. शिक्षण का कार्य औपचारिक रूप से निश्चित स्थान पर किया जाता है।

भारत में बढ़ती जनसंख्या ने शिक्षा की आवश्यकता को बढ़ाया है। भारत में जनसंख्या का प्रसार अत्यधिक है। सभी को संस्थागत शिक्षा के अवसर न तो प्रदान किये जा सकते हैं और न ही सम्भव है। इस समस्या का समाधान करने के लिये शिक्षा को स्वयं पढ़ने वाले के द्वार पर ले जाना होगा। इस परिकल्पना को सत्य करने के लिये सुदूर शिक्षा की कल्पना, शिक्षा के सभी स्तरों पर की गई है।

सुदूर शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली का एक रूप है। विभिन्न उद्योग तथा व्यवसायों में लगे लोग अपने खाली समय में अपनी सुविधा के अनुसार अपने ज्ञान, व्यवसाय तथा उद्योग के विकास के सम्पर्क में शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस शिक्षा का विकास पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से हुआ। फिर अंशकालीन शिक्षण प्रणाली आरम्भ हुई। इन दोनों में मुद्रित सामग्री, शैक्षिक निर्देशों के माध्यम से दी गयी थी छात्र, निर्देशों के अनुसार कार्य करते थे और उनका मूल्यांकन किया जाता था। इस शिक्षा प्रणाली में शिक्षक तथा छात्रों का सम्बन्ध दूर का होता है। वे बहुत कम मिलते हैं अथवा कभी नहीं मिल पाते। केवल दूर संचार के माध्यम से उनमें सम्बन्ध होता है।

नोट

> *क्या आप जानते हैं* विश्व के 5 से अधिक देशों ने अन्तर्राष्ट्रीय सुदूर शिक्षा परिषद् (International Council of Distance) की स्थापना की।

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली (System of Distance Education)

भारत में दूरगामी शिक्षा को दो प्रकार से प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है—

(A) पत्राचार (Correspondence Course) की सहायता से।

(B) खुले विश्वविद्यालय (Open Universities) की सहायता से।

(A) पत्राचार शिक्षा (Correspondence Course)—विभिन्न विश्वविद्यालयों में पत्राचार शिक्षा के अन्तर्गत विभिन्न पाठ्यक्रमों की शिक्षा प्रदान की जा रही है। केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारे अपने-अपने कार्यक्षेत्र में 'खुले विश्वविद्यालय' भी स्थापित किए हैं।

1961 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (CABE) ने पत्राचार के माध्यम से शिक्षा प्रदान का निर्णय किया तथा विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष **डॉ. डी.एस. कोठारी** अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसने पत्राचार के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने का सुझाव दिया तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री **डॉ. के.एल. श्रीमाली** ने दूरगामी शिक्षा के कार्यक्रम का उद्घाटन का समय इसके निम्नलिखित उद्देश्य बताये हैं—

(1) भारत के निवास के लिए पत्राचार के माध्यम से उच्च स्तर पर अच्छी तथा कम खर्चीली शिक्षा व्यवस्था को आयोजित करना।

(2) सभी शिक्षित नागारिकों को उनके वर्तमान व्यवसाय में बिना किसी हस्तक्षेप के पत्राचार द्वारा शिक्षा की सुविधा प्रदान करना।

(3) उन सभी योग्य तथा इच्छुक विद्यार्थियों के लिये उच्च स्तर पर शिक्षा व्यवस्था को आयोजित करना जो निजी, आर्थिक अथवा अन्य किसी कारण से सामान्य महाविद्यालयों में प्रवेश नहीं ले सके।

विश्वविद्यालय आयोग ने भी पत्राचार-शिक्षा पर जोर दिया। उसके अनुसार पत्राचार शिक्षा निम्नलिखित प्रकार के विद्यार्थियों की आवश्यकता को पूरा करेगी—

(*i*) वे विद्यार्थी जिन्हें घरेलू हालात अथवा ऐसे ही किसी अन्य कारण से औपचारिक शिक्षा बीच में ही छोड़ देना पड़ा।

(*ii*) वह विद्यार्थी जो देश के दूर स्थानों पर रहते हैं तथा जहाँ शिक्षा सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं

(*iii*) वे विद्यार्थी जिन्हें किसी कारणवश महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं मिल सका यद्यपि उनमें उच्च शिक्षा प्राप्त करने की क्षमता है।

(*iv*) वे विद्यार्थी जिन्हें अपने यौवन काल में शिक्षा में रुचि नहीं थी परन्तु अब उनमें रुचि उत्पन्न हो गई है।

(*v*) कार्यरत व्यक्ति।

(*vi*) वे विद्यार्थी जो शिक्षा को जीवन-पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं और अपने पहले सीखे गए विषयों के अतिरिक्त किसी अन्य विषय में शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक हैं।

शिक्षा आयोग के सुझाव के फलस्वरूप अनेक विश्वविद्यालयों में पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education) के विभाग स्थापित किए गए तथा सभी प्रकार की स्नातक एवं स्नातकोत्तर डिग्रियाँ प्राप्त करने के लिए शिक्षा की व्यवस्था की गई। अब बहुत से विश्वविद्यालय B. A., B. Sc., B. Com., L. L. B., M. A., M. Com., M. Sc., M. Ed., इत्यादि पत्राचार शिक्षा द्वारा करने में सुविधायें प्रदान करते हैं।

(B) खुला विश्वविद्यालय (Open University)—दूसरे प्रकार की दूरगामी शिक्षा, (Distance Education) की संख्यायें बहुत कम तथा नयी हैं। इन्हें खुले विश्वविद्यालय (Open University) के नाम से पुकारा जाता है। विश्व

नोट

के बहुत से देशों ने दूरगामी शिक्षा को सुदृढ़ करने के लिए तथा शिक्षा में हुए नये परिवर्तनों की जानकारी देने हेतु "खुले विश्वविद्यालय" स्थापित किए हैं। विश्व में इनकी संख्या 30 या इससे अधिक है। यह विश्वविद्यालय अधिकतर इंगलैड, पश्चिमी जर्मनी, स्पेन, चीन, थाईलैण्ड, श्रीलंका, कनाडा और जापान में हैं। भारत में भी 4 खुले विश्वविद्यालय हैं, जिनमें तीन राज्य स्तर पर हैं और एक राष्ट्रीय स्तर पर है। सर्वप्रथम 1982 ई. में आन्ध्र प्रदेश में खुला विश्वविद्यालय स्थापित किया गया। 1985 ई. में संसद ने इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय स्थापित करने का निर्णय लिया।

यह विश्वविद्यालय जुलाई सन् 1986 से विधिवत कार्य करने लगा। 19 नवम्बर 1985 को भारत के प्रधानमन्त्री ने दिल्ली में मेहरौली के पास इन विश्वविद्यालय का विधिवत उद्घाटन कर दिया और इसका नाम 'इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय रखा गया।

नोट्स शिक्षा आयोग (1964-66) ने पत्राचार शिक्षा की सम्भावित शक्ति को देखते हुए इस प्रकार की शिक्षा को सुदृढ़ बनाने का सुझाव दिया। उसके अनुसार, "पत्राचार शिक्षा का दूसरे देशों जैसे-संयुक्त राज्य अमेरिका, स्वीडन, रूस, जापान, आस्ट्रेलिया आदि देशों में अच्छी प्रकार से प्रयोग किया जा रहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पत्राचार शिक्षा सामान्य विद्यालय तथा महाविद्यालय में प्रदान की गई शिक्षा के बिल्कुल समान है। इस प्रकार की शिक्षा की सुविधायें व्यापक स्तर पर दी जानी चाहिये।"

मुक्त विश्वविद्यालय क्या है?

उच्च शिक्षा को सार्वजनिक बनाने की दिशा में मुक्त विश्वविद्यालय अभिनव प्रयोग के रूप में भारत में आरम्भ किये जा रहे हैं। 1858 से लेकर 1985 तक उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को औपचारिक शैक्षिक प्रवाह से होकर गुजरना पड़ता था। किसी कारणवश यदि कोई उस प्रवाह से हट जाता था तो उसे उच्च शिक्षा के पुन: प्रवाह में आने के लिये अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। उच्च शिक्षा को सार्वजनिक बनाने की दिशा में पहला कदम था—पत्राचार पाठ्यक्रम।

उच्च शिक्षा के प्रति बढ़ती लालसा को देखते हुए इंगलैंड में प्रचलित मुक्त विश्वविद्यालय के आधार पर देश में वैसा ही मुक्त विश्वविद्यालय खोलने की आवश्यकता अनुभव की गई।

मुक्त विश्वविद्यालय, विश्व की उच्च शिक्षा की परम्परा में नवीनतम प्रयोग है। इस प्रणाली में व्यक्ति अपने को विकसित ज्ञान के संदर्भ के अद्यतन (up to date) रखना चाहता है। यह प्रणाली सार्वजनिक विश्वविद्यालय प्रणाली कहलाती है। मुक्त विश्वविद्यालय की विशेषतायें इस प्रकार हैं—(*i*) किसी डिग्री या डिप्लोमा की आवश्यकता नहीं होती, (*ii*) आयु की कोई सीमा नहीं होती, (*iii*) किसी भी क्षेत्र का व्यक्ति इस विश्वविद्यालय में प्रवेश ले सकता है, (*iv*) इसमें समय का बन्धन नहीं होता, (*v*) एवं इसका कोई परिसर नहीं होता।

ध्यान रखने की बात यह है कि परम्परागत विश्वविद्यालयों की भाँति इसमें पाठ्यक्रम, पढ़ाई तथा परीक्षा तीनों होते हैं।

मुक्त विश्वविद्यालयों का विकास

उच्च शिक्षा पर बढ़ते दबाव को देखते हुए 1979 में ब्रिटेन में पहले मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। आरम्भ में इसमें पंजीकृत छात्रों की संख्या 25000 थी। 1985 तक इसमे एक लाख व्यक्ति पंजीकृत हो चुके थे। यह विश्वविद्यालय 300 केन्द्र के द्वारा, रेडियों, टी. वी. तथा संचार के अन्य उपकरणों का उपयोग शिक्षा के लिये करता है। आजकल चीन, जापान, थाइलैंड, कोरिया, स्पेन, नीदरलैंड, पाकिस्तान तथा श्रीलंका में मुक्त विश्वविद्यालय कार्यरत हैं।

भारत में 1990 से मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना के प्रयास किये जा रहे हैं। 1982 में आंध्र में अन्नामलाई विश्वविद्यालय पहला मुक्त विश्वविद्यालय खोला गया है। इसमें बी.ए., बी.एस.सी, बी.कॉम., स्नातकोत्तर विषयों में डिग्री व व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं।

मुक्त विश्वविद्यालय : एक उपलब्धि

होमबर्ग के अनुसार–"वास्तविक अध्ययन मूलत: एक व्यक्तिगत कार्य-कलाप है और यह कार्यकलाप, अन्दरूनी प्रक्रिया के माध्यम से किया जा सकता हैं।" इस कथन के अनुसार पहले इन मुक्त विश्वविद्यालयों को वायु (ंपत) विश्वविद्यालय का नाम दिया गया।

भारत में पहला मुक्त विश्वविद्यालय एस. डी. टी. विश्वविद्यालय मुम्बई था, जिसका स्वरूप परिवर्तित किया गया। इसमें महिलाओं के लिये सुदूर शिक्षा के माध्यम से अनेक उपयोगी पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं।

मुक्त विश्वविद्यालय एक सफल प्रयोग के रूप में लोकप्रियता प्राप्त कर रहे हैं। इनकी उपलब्धि इस प्रकार है–

1. उच्च शिक्षा को सार्वजनीक बनाने की दिशा में यह एक सफल प्रयोग है।
2. इसमे प्रवेश के लिये औपचारिक शिक्षा तथा किसी प्रमाण-पत्र की आवश्यकता नहीं है।
3. प्रत्येक व्यक्ति को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्राप्त होते हैं।
4. इस पद्धति के द्वारा अपनी प्रगति तथा जीवन शैली का चुनाव करने के अवसर प्राप्त होते हैं।

होमबर्ग के शब्दों में–"यह पद्धति शिक्षार्थी के दृष्टिकोण को प्रभावित करती है। यह उन्हे समालोचनात्मक पाठक बनाकर उनकी भ्रान्तियों का निराकरण करती है। सहयोग की भावना का विकास होता है, उत्तम व्यवहार व अनुशासन का विकास करके बेरोजगारी की गुत्थियों को सुलझाती है। शर्त यह है कि यह व्यावहारिक जीवन से जुड़े व्यवसाय के कार्यानुभव से सम्बन्धित हो।"

टास्क 'इग्नू' की स्थापना कब हुई?

डॉक्टर रामशकल पाण्डेय के अनुसार–"वस्तुत: इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय के कार्य और पत्राचार शिक्षण कार्यक्रम में बहुत समानता है। सभी कार्यक्रम दूर शिक्षा के सिद्धान्त पर आधारित हैं। परम्परागत विश्वविद्यालयों मे सर्वप्रथम पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये गये जिनमें मुद्रित सामग्री द्वारा दूरस्थ छात्रों के लिये शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता था। पत्राचार शिक्षा, घर पर अध्ययन, स्वतन्त्र अध्ययन, प्राइवेट अध्ययन, मुक्त अध्ययन, दूर शिक्षा जैसी नामावली एक ही प्रकार के विचारों को मूर्त रूप देने के बहुआयामी प्रयास हैं। जिन छात्रों को आर्थिक तथा अन्य परिस्थितियों के कारण अपनी औपचारिक शिक्षा बन्द कर देनी पड़ती है या भौगोलिक दृष्टि से जो सुदूर स्थानों पर हैं या जिन छात्रों को रुचिहीनता के कारण पहली शिक्षा बन्द कर देनी पड़ी और बाद में उनकी रुचि जागृत हुई अथवा जिन्हें उच्च शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश नहीं मिला अथवा जो छात्र किसी सामुदायिक संस्था में स्वेच्छया पढ़ना नहीं चाहते हैं अथवा जो छात्र बाद में किसी अन्य विषय में अपना ज्ञान और कौशल बढ़ाना चाहते हैं अथवा जो सेवारत हैं और पढ़ने के इच्छुक हैं–इन सभी के लिये यह मुक्त विश्वविद्यालय वरदान सिद्ध होंगे।"

सुदूर शिक्षा प्रणाली की विशेषतायें (Characteristics of Distance Educational System)

सुदूर शिक्षा ने अनौपचारिक रूप से सार्थक शिक्षा की अवधारणा को सशक्त बनाया है, जीवनपयोगी शिक्षा तथा कौशल के विकास से जीवन के रहन-सहन को सुधारने तथा विकसित करने में सार्थक शिक्षा के महत्त्व को बढ़ाया है। यही कारण है कि सार्थक शिक्षा तथा सुदूर शिक्षा, चोली-दामन के रूप में उभरे हैं। सुदूर शिक्षा की विशेषतायें इस प्रकार हैं–

1. **शिक्षक-छात्र विभेद**–सुदूर शिक्षा में प्राय: सभी सामग्री पूर्व संचित होती हैं। इस सामग्री में सम्पूर्ण निर्देश होते हैं। इन निर्देशों के अनुसार छात्र अपनी तैयारी करता है। यों औपचारिक शिक्षा की गुरु शिष्य के आमने-सामने होने वाली अवधारणा इसमे नहीं होती है।

नोट

2. **कार्यक्रम विभेद**–सुदूर शिक्षा में शिक्षण अधिगम की सामग्री की संरचना तथा तैयारी इस ढंग से करनी पड़ती है जिससे औपचारिक शिक्षा की कार्य प्रणाली तथा कार्यक्रम का भेद स्पष्ट हो जाये। निजी अध्ययन स्वयं अपने को सिखाओं आदि कार्यक्रम इस विभेद के उदाहरण हैं।
3. **शैक्षिक प्रौद्योगिकी**–प्रौद्योगिकी के विकसित उपकरणों का उपयोग शिक्षा के क्षेत्र में किया जाने लगा है। मुद्रित सामग्री, दृश्य-श्रव्य साधन, दूरदर्शन, आकाशवाणी, कम्प्यूटर आदि शिक्षक, पाठ्यक्रम तथा छात्र को जोड़ते हैं।
4. **दोतरफी संवाद व्यवस्था**–सुदूर शिक्षा में शिक्षक तथा छात्रों का सम्बन्ध आमने-सामने का नहीं होता। इससे अधूरापन अनुभव होता है। अतः सम्पर्क से दोतरफी संवाद व्यवस्था की गई है।
5. **व्यक्तिगत अध्ययन**–सुदूर शिक्षा में सामूहिक शिक्षा का अवसर कम तथा व्यक्तिगत अध्ययन के अवसर अधिक होते हैं। सम्पर्क सुत्र में सामूहिकता का विकास होने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं।
6. **औद्योगीकृत विशेषता**–सुदूर शिक्षा में औद्योगीकरण का प्रभाव स्पष्ट लक्षित है। इससे व्यक्ति या छात्र की रुचि वैयक्तिक विकास में होती है। इसीलिये निजी अध्ययन में छात्र रुचि लेता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. सही विकल्प का चयन कीजिये (Choose the correct option)

1. निम्न में से कौन-सा सुदूर शिक्षा का दूसरा नाम है–
   (*a*) पत्राचार (*b*) गृह अध्ययन
   (*c*) स्वतन्त्र अध्ययन (*d*) उपर्युक्त सभी
2. सुदूर शिक्षा निम्न में से किसके लिये आवश्यक है–
   (*a*) राष्ट्र की प्रगति के लिये (*b*) ज्ञान को अद्यतन करना
   (*c*) पत्राचार पाठ्यक्रम में सुधार के लिये (*d*) उपर्युक्त सभी के लिये
3. निम्न में से कौन सी सुदूर शिक्षा प्रणाली की विशेषता है–
   (*a*) शिक्षक-छात्र विभेद (*b*) कार्यक्रम विभेद
   (*c*) व्यक्तिगत अध्ययन (*d*) उपर्युक्त सभी
4. निम्न में से कौन सा सुदूर शिक्षा का लाभ है–
   (*a*) विश्वसनीयता (*b*) स्वतन्त्रता
   (*c*) विद्या-आद्रता (*d*) उपर्युक्त सभी
5. पत्राचार पाठ्यक्रम में किसकी आवश्यकता नहीं है–
   (*a*) पाठ लेखन (*b*) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम
   (*c*) श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग (*d*) नियमित कक्षा-शिक्षण
6. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय कहाँ है–
   (*a*) दिल्ली (*b*) कोटा
   (*c*) पटना (*d*) मैसूर
7. इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना निम्न में से किस सन् में हुई–
   (*a*) 1980 में (*b*) 1982 में
   (*c*) 1985 में (*d*) 1987 में

नोट

26.2 सारांश (Summary)

- दूरगामी शिक्षा को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। उदाहरण के लिए, फ्रांस में इसे 'Enseignement', आस्ट्रेलिया में 'Off-Campus', जर्मनी में 'Frenstudium', न्यूजीलैण्ड में 'Extra Mural' आदि नामों से जाना जाता है। भारत में हम इसे External, Correspondence Education तथा Distance Education के विभिन्न नामों से पुकारते हैं।
- विश्व का कोई देश ऐसा नहीं है जहाँ सुदूर शिक्षा पर विचार-विमर्श क्रियान्वयन न हो रहा हो। विश्व के सभी देशों में सुदूर शिक्षा द्वारा वहाँ की जनता को ज्ञान के सम्पर्क में रखा जा रहा है। परिणामत: पारम्परिक शिक्षा प्रणाली के स्थान पर सुदूर शिक्षा पर बल देने के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी जा रही है।
- सुदूर शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली का एक रूप है। विभिन्न उद्योग तथा व्यवसायों में लगे लोग अपने खाली समय में अपनी सुविधा के अनुसार अपने ज्ञान, व्यवसाय तथा उद्योग के विकास के सम्पर्क में शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस शिक्षा का विकास पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से हुआ। फिर अंशकालीन शिक्षण प्रणाली आरम्भ हुई।
- शिक्षा आयोग के सुझाव के फलस्वरूप अनेक विश्वविद्यालयों में पत्राचार शिक्षा (Correspondence Education) के विभाग स्थापित किए गए तथा सभी प्रकार की स्नातक एवं स्नातकोत्तर डिग्रियाँ प्राप्त करने के लिए शिक्षा की व्यवस्था की गई। अब बहुत से विश्वविद्यालय B. A., B. Sc., B. Com., L. L. B., M. A., M. Com., M. Sc., M. Ed., इत्यादि पत्राचार शिक्षा द्वारा करने में सुविधायें प्रदान करते हैं।
- दूसरे प्रकार की दूरगामी शिक्षा, (Distance Education) की संख्यायें बहुत कम तथा नयी हैं। इन्हें खुले विश्वविद्यालय (Open University) के नाम से पुकारा जाता है। विश्व के बहुत से देशों ने दूरगामी शिक्षा को सुदृढ़ करने के लिए तथा शिक्षा में हुए नये परिवर्तनों की जानकारी देने हेतु "खुले विश्वविद्यालय" स्थापित किए हैं। विश्व में इनकी संख्या 30 या इससे अधिक है। यह विश्वविद्यालय अधिकतर इंगलैड, पश्चिमी जर्मनी, स्पेन, चीन, थाईलैण्ड, श्रीलंका, कनाडा और जापान में हैं। भारत में भी 4 खुले विश्वविद्यालय हैं, जिनमें तीन राज्य स्तर पर हैं और एक राष्ट्रीय स्तर पर है। सर्वप्रथम 1982 में आन्ध्र प्रदेश में खुला विश्वविद्यालय स्थापित किया गया। 1985 में संसद ने इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय स्थापित करने का निर्णय लिया।
- उच्च शिक्षा को सार्वजनिक बनाने की दिशा में मुक्त विश्वविद्यालय अभिनव प्रयोग के रूप में भारत में आरम्भ किये जा रहे हैं। 1858 से लेकर 1985 तक उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को औपचारिक शैक्षिक प्रवाह से होकर गुजरना पड़ता था। किसी कारणवश यदि कोई उस प्रवाह से हट जाता था तो उसे उच्च शिक्षा के पुन: प्रवाह में आने के लिये अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।
- मुक्त विश्वविद्यालय, विश्व की उच्च शिक्षा की परम्परा में नवीनतम प्रयोग है। इस प्रणाली में व्यक्ति अपने को विकसित ज्ञान के संदर्भ के अद्यतन (up to date) रखना चाहता है। यह प्रणाली सार्वजनिक विश्वविद्यालय प्रणाली कहलाती है।
- उच्च शिक्षा पर बढ़ते दबाव को देखते हुए 1979 में ब्रिटेन में पहले मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। आरम्भ में इसमें पंजीकृत छात्रों की संख्या 25000 थी। 1985 तक इसमे एक लाख व्यक्ति पंजीकृत हो चुके थे। यह विश्वविद्यालय 300 केन्द्र के द्वारा, रेडियों, टी. वी. तथा संचार के अन्य उपकरणों का उपयोग शिक्षा के लिये करता है। आजकल चीन, जापान, थाइलैंड, कोरिया, स्पेन, नीदरलैंड, पाकिस्तान तथा श्रीलंका में मुक्त विश्वविद्यालय कार्यरत हैं।

26.3 शब्दकोश (Keywords)

- **परिवेश–** वातावरण।
- **अर्जन–**प्राप्त करना।

नोट

26.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा और आवश्यकताओं का विवेचन कीजिए।
2. दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के महत्व एवं उसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए
3. मुक्त विश्वविद्यालय अथवा खुले विश्वविद्यालय से आप क्या समझते हैं? संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. (*d*)	2. (*d*)	3. (*d*)	4. (*d*)
5. (*d*)	6. (*a*)	7. (*c*)।	

26.5 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)।
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डॉ. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—27: उच्च शिक्षा का निजीकरण (Privatization of Higher Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

27.1 शिक्षा के निजीकरण का संवैधानिक स्रोत (Constitutional Source of Privatization of Education)

27.2 निजीकरण के लाभ-हानि और सुझाव (Merits-Demerits and Suggestions of Privatization)

27.3 सारांश (Summary)

27.4 शब्दकोश (Keywords)

27.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

27.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- उच्च शिक्षा के निजीकरण से होने वाले लाभ और हानियों की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय संविधान में शिक्षा को नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अन्तर्गत राज्य का विषय माना गया है। राज्य का कर्तव्य है कि वह अपने नागरिकों की समुचित शिक्षा की व्यवस्था करे। राज्य की यह व्यवस्था संविधान की धारा 45 के अनुसार और भी महत्वपूर्ण हो जाती है, जब 6-14 आयु वर्ग के बालकों की अनिवार्य, नि:शुल्क एवं सार्वभौम शिक्षा का दायित्व सरकार पर आ जाता है।

भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा पर राज्य का नियंत्रण नहीं रहा। वैदिक युग में गुरुकुलों में दी जाने वाली शिक्षा, राज्य तथा समाज द्वारा पोषित तो थी, परन्तु राज्य द्वारा नियोजित नहीं थी। शिक्षक, समाज की आवश्यकता तथा व्यक्ति के विकास के संदर्भ में शिक्षित करते थे।

27.1 शिक्षा के निजीकरण का संवैधानिक स्रोत (Constitutional Source of Privatization of Education)

शिक्षा के निजीकरण का मूल भारत के संविधान की कुछ धाराओं में विरोधाभास के साथ निहित है। शिक्षा के सांवैधानिक प्रावधानों पर विचार करना आवश्यक है।

1. धारा 29 : अल्प संख्यकों के हितों का संरक्षण—(1) भारत के राज्य क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी जिसकी अपनी विशेष लिपि, भाषा या संस्कृति है, उसे बनाये रखने का अधिकार होगा। (2) राज्य द्वारा पोषित अथवा

नोट

राज्य निधि में सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा अथवा इनमें किसी आधार पर वंचित न रखा जायेगा।

2. धारा 30 : शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यकों का अधिकार–(1) धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों की अपनी रुचि की संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा। (2) शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी विद्यालय के विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबन्ध में है।

3. धारा 45 : बालकों के लिये नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबन्ध–राज्य इस संविधान के प्रारंभ के दस वर्ष की कालावधि के भीतर सभी बालकों के चौदह वर्ष की अवस्था समाप्ति तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा।

4. धारा 46 : अनुसूचित जातियों, आदिम जातियों तथा दुर्बल विभागों के शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी हितों की उन्नति–राज्य जनता के दुर्बलतम विभागों के विशेषतया अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।

कोठारी कमीशन ने शिक्षा के लक्ष्यों का निर्धारण राष्ट्र के विकास के संदर्भ में इस प्रकार किया–

1. खाद्य सामग्री में आत्मनिर्भरता;
2. आर्थिक विकास और रोजगार;
3. सामाजिक और राष्ट्रीय एकता;
4. राजनीतिक विकास;
5. मानव सम्बन्धों एवं स्रोतों का विकास।

उपरोक्त लक्ष्यों की पूर्ति के लिये आयोग ने कहा–"शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण और आवश्यक सुधार यह है कि इसको परिवर्तित करके व्यक्तियों के जीवन, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से इसका सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया जाये और इस प्रकार इसे सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का शक्तिशाली साधन बनाया जा सकता है।"

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1967 में कहा गया–"शिक्षा को लोगों के जीवन के अधिक निकट लाने के लिए लगातार प्रयत्न, विज्ञान और शिल्प विज्ञान के विकास पर विशेष बल तथा नैतिक और सामान्य मूल्यों का निर्माण करना होगा।"

इस कार्य के लिये प्रादेशिक असंतुलन को दूर करना, शुल्कयुक्ति का आनुपातिक आधार तय करना, सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा करना आवश्यक है। तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षाओं का उपयुक्त विभाजन होना चाहिए। यथा–कृषि, उद्योग, व्यापार, शिल्प, अनुरुचिकीय प्रशिक्षण आदि।

1979 की शिक्षा नीति में कहा गया है–"माध्यमिक स्तर को आधार बिन्दु तभी माना जा सकता है जबकि वह व्यवसायिक कौशल को विकसित कर सके। इसलिये इस स्तर पर शिक्षा का व्यवसायीकरण होना आवश्यक है, जिससे छात्रों को भविष्य निर्माण करने में सहायता मिल सके। अनौपचारिक तरीकों से अनेक व्यवसायिक क्षेत्रों में प्रमाणपत्र तथा डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाये गये हैं, इनका स्वरूप ऐसा हो कि छात्रों को भविष्य में अपने व्यवसाय में प्रगति करने के अवसर मिल सकें। माध्यमिक स्तर पर इसीलिए पाठ्यक्रम में विभिन्नता (Diversification) की आवश्यकता अनुभव की गई है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा मिलेगा। ग्रामीण औद्योगीकरण में गति आयेगी। स्व-रोजगार के अवसर भी इसमें प्राप्त होंगे। समस्त बाजार, उद्योग केन्द्र तथा अन्य संस्थाओं का सहयोग भी इसके लिए आवश्यक है। समुदाय तथा विद्यालय के पारस्परिक सम्बन्धों का विकास भी आवश्यक है। शिक्षा के व्यवसायीकरण में डिग्री प्राप्त करने का मोह भी समाप्त होगा। कौशल के आधार पर ही काम मिलेगा।"

नोट

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा के निजीकरण की समस्या को शिक्षा के व्यवसायीकरण के संदर्भ में इन आधारों पर समझा जा सकता है।

1. कुशल जनशक्ति की मांग और पूर्ति में संतुलन बनाये रखना।
2. समेकित व्यवसायिक शिक्षा को उत्तम बनाने के लिये औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं का विकास व्यवसाय प्रतिमान के आधार पर करना।
3. व्यवसायिक शिक्षा द्वारा मनोवृत्ति, ज्ञान, कौशल, उद्यम एवं स्व-रोजगार की भावना विकसित करना।
4. व्यवसायिक पाठ्यक्रमों के संस्थान की स्थापना का दायित्व, सरकार तथा नियोजन, दोनों का ही सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में है।
5. व्यावसायिक, पाठ्यक्रमों के स्नातकों को सम्पर्क पाठ्यक्रमों द्वारा व्यवसायिक विकास के अवसर देना।
6. आंशिक रूप से बेरोजगारों के लिये विकास के अवसर होंगे।
7. वैकल्पिक पाठ्यक्रमों का विकास सामान्य शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के लिये है।

क्या आप जानते हैं संविधान में अल्पसंख्यकों की शिक्षा तथा शिक्षा विषयक विभिन्न प्रावधानों में शिक्षा का निजीकरण निहित है। दक्षिण भारत में अनेक निजी संस्थान इसी आधार पर खोले गये हैं। उत्तर एवं मध्य भारत में अनेक व्यावसायिक संस्थान इसी प्रकार के हैं।

निजीकरण और शिक्षा

शिक्षा का निजीकरण तथा शिक्षा का व्यवसायीकरण दो अलग-अलग धारणायें हैं। शिक्षा के व्यवसायीकरण से अभिप्राय व्यवसाय तथा रोजगार के अधिकतम अवसर प्रदान करने के लिए विभिन्न व्यवसायों तथा उद्योगों से संबंधित पाठ्यक्रमों में छात्रों का प्रवेश देना है। इससे छात्र, शास्त्रीय, पाठ्यक्रमों के बजाय उन पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेते हैं जो उन्हें आजीविका के अवसर देते हैं। बढ़ती जनसंख्या ने नौकरियों के अवसर बहुत कम कर दिये हैं। इसलिये बढ़ती बेकारी को रोकने के लिए स्व-रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना आवश्यक हो गया है।

निजीकरण की धारणा के पीछे जो भावना है, वह है—कुछ सम्पन्न तथा मुनाफाखोर व्यक्तियों का शिक्षा के क्षेत्र में धनोपार्जन करना। पहले शिक्षा संस्थाओं की स्थापना धनी व्यक्तियों द्वारा धर्मार्थ कार्य समझ कर की जाती थी; विद्या-दान की भावना उसके पीछे थी। कुछ समाजसेवी भी संस्थाओं की स्थापना कर जनसहयोग से शिक्षण संस्थाओं का परिचालन करती थीं। धार्मिक संस्थायें; यथा, आर्य समाज, धर्म समाज, ब्रह्म समाज, देव समाज, सनातन धर्म, इस्लाम, पारसी, जैन, सिक्ख समुदाय भी जन-कल्याण हेतु शिक्षण संस्थाओं की स्थापना कर शिक्षा प्रसार का कार्य करते थे।

आज स्थिति बदल गई है। सरकारों ने शिक्षा के दायित्व का निर्वाह करने में असमर्थता प्रकट की है। यहाँ तक कि अर्द्ध शिक्षा नीति में निजी उपक्रम को शिक्षा के काम में सहयोग देने का आमंत्रण दिया जाने लगा है।

उद्यमियों ने भी बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियाँ लगाने के बजाय बड़े-बड़े पांच सितारा स्कूलों की स्थापना पर ध्यान देना शुरू किया। अनिवासी भारतीयों की देश तथा संस्कृति के प्रति आस्था ने डालर तथा पौण्ड कमाने का रास्ता दिखाया। फलतः अंग्रेजी माध्यम के आवासीय विद्यालयों की संख्या में वृद्धि होने लगी। कुछ व्यवसायिक तथा वृत्तिक शिक्षा के संस्थान भी खुले, बड़ी-बड़ी कंपनियों ने भी प्रबन्धक विज्ञान तथा उसकी शाखाओं में पाठ्यक्रम आरंभ किये। आल इण्डिया कौंसिल फार टेक्नीकल एजुकेशन द्वारा निरन्तर मान्यता देने से शिक्षा के इस उद्योग को बढ़ावा मिलने लगा।

कम्प्यूटर्स के विभिन्न पाठ्यक्रमों का संचालन भी ऐसी ही कम्पनियों द्वारा हो रहा है। इन्जीनियरिंग टेक्नोलोजी के क्षेत्र में भी निजी व्यक्तियों ने संस्थानों की स्थापना की है। शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद ने जिस उदारता के साथ बी.एड. पाठ्यक्रमों के लिये निजी संस्थाओं को वित्त विहीन मान्यतायें प्रदान की हैं, वह स्पष्ट देखी जा सकती है।

नोट

विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद तथा इण्डियन कौंसिल फॉर सेकेण्ड्री ऐजुकेशन ने भी वित्त विहीन मान्यता देकर निजी क्षेत्र में विकास किया है।

कोठारी कमीशन और विश्वविद्यालय शिक्षा

विश्वविद्यालयों का महत्व प्राचीनकाल से ही रहा है। नालन्दा, तक्षशिला, उज्जैन जैसी विद्यापीठ इतिहास प्रसिद्ध रही हैं। विश्वविद्यालयों का कार्य जीवन के हर क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करना तथा मानव की मानसिक शक्तियों का विकास करने में योगदान देना रहा है। भारतीय विश्वविद्यालय का योगदान इस क्षेत्र में मुख्य रहा है। आयोग के अनुसार विश्वविद्यालयों के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(1) विश्वविद्यालयों को राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में ज्ञान देना चाहिए, इसलिये उन्हें वैयक्तिक भिन्नता तथा शालीनता को सहनशीलता की सीमा में विकसित करना चाहिये।

(2) प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम को विस्तृत क्षेत्र में प्रसारित करना।

(3) गुणात्मक आत्मविकास के लिये विद्यालयों को सहायता देना।

(4) शिक्षण एवं अनुसंधान के स्तर को ऊँचा करना।

(5) विश्वविद्यालयों को विश्व के अन्य भागों में केन्द्रों की स्थापना करनी चाहिए जिससे भारत संसार में अपना स्थान बना सके।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्राथमिकता देनी चाहिए–

(1) उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान के स्तर एवं गुण को ऊँचा उठाने के लिए क्रान्तिकारी प्रयत्न करना।

(2) राष्ट्रीय विकास के लिये जनशक्ति (Man-power) की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उच्च शिक्षा का प्रसार करना।

(3) विश्वविद्यालय के संगठन एवं प्रशासन में सुधार करना।

कोठारी कमीशन ने इस कार्यक्रम के संचालन हेतु अपने सुझाव इस प्रकार दिये हैं–

(1) यू.जी.सी. को विद्यमान विश्वविद्यालयों में से 6 विश्वविद्यालयों को, जिनमें एक आई.आई.टी. एवं एक कृषि-विश्वविद्यालय भी हो, को मुख्य विश्वविद्यालयों के रूप में विकसित करने के लिए ले लेना चाहिए।

(2) प्रमुख विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में उत्तम अध्यापक हो।

(3) सम्बद्ध कॉलेजों को स्तर के अनुसार वर्गीकृत करना चाहिए एवं सहायता देनी चाहिये। जहाँ एक या अच्छे स्तर के कॉलेज हों, वहाँ पर उन्हें स्वयं संचालित (Autonomous) स्तर दे देना चाहिए।

(4) कक्षा अध्यापन, कार्यशाला, प्रयोगशाला के कार्य के घण्टों का भार अध्यापकों पर किया जाये, बचा हुआ समय छात्रों के मार्ग-प्रदर्शन (Guidance), लेखन कार्य (Self-Study) आदि समस्याओं को हल करने एवं छोटी-छोटी अनुसन्धान योजनाओं (Research Project) में लगाना चाहिए।

(5) स्नातक कक्षाओं में शिक्षण का माध्यम क्षेत्रीय भाषायें हों जबकि पोस्टग्रेजुएट स्तर पर अंग्रेजी हो सकती है।

(6) विद्यार्थी-सेवा शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में संगठित हो। नये विद्यार्थियों की स्वास्थ्य सेवा, निवास-व्यवस्था, मार्ग-प्रदर्शन एवं परामर्श जिसमें व्यवसाय दिलाना भी है, छात्र-कल्याण एवं सहायता आदि के कार्य किये जायें।

(7) हर विश्वविद्यालय को यह निर्णय लेना चाहिए कि उसका छात्र संघ किस प्रकार कार्य करे। इसमें प्रयोग हो। यू.जी.सी. छात्र प्रतिनिधियों के वार्षिक सम्मेलन के आयोजन की व्यवस्था होनी चाहिए।

(8) शिक्षा इस योग्य हो कि उसमें युवक-युवतियाँ सभ्य व्यवहार एवं विशिष्ट मूल्यों का अर्जन करें। विश्वविद्यालय का जीवन एक हो और अध्यापक, विद्यार्थी एवं प्रशासन के व्यक्तियों में मतभेद न हो।

नोट

प्रवेश एवं कार्यक्रम

उच्च शिक्षा के प्रसार में राष्ट्र की आवश्यकताओं का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। 1985-86 तक उच्च शिक्षा में प्रवेश बढ़ता ही जायेगा। अत: व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रसार होना चाहिये। शिक्षा आयोग का विचार है कि–

1. प्रवेश के लिये सेलेक्शन पद्धति अपनाई जाये। इसके तीन आधार इस प्रकार हो सकते हैं–
   (अ) संस्थाओं में अध्यापक एवं सुविधाओं के अनुसार प्रवेश दिया जाये जिससे स्तर बना रहे।
   (आ) वे विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित मान्यताओं के अनुसार योग्य हों।
   (इ) संस्थाओं द्वारा सर्वोत्तम विद्यार्थियों को अध्ययन के लिये चुना जाना चाहिए।
2. विज्ञान तथा प्राथमिक शिक्षा की अंशकालीन (सायंकालीन कॉलेज, डाक द्वारा शिक्षा) व्यवस्था करना। 1986 तक एक-तिहाई उच्च शिक्षा अंशकालीन पद्धति से दी जाये।
3. स्नातकोत्तर-शिक्षा एवं अनुसन्धान की व्यवस्था विश्वविद्यालयों में एवं विश्वविद्यालय के केन्द्रों पर हो।
4. वर्तमान में छात्राओं का अनुपात 1 : 4 है। 1 : 3 हो जाये। मितव्ययी छात्रावास व्यवस्था एवं छात्रवृत्ति कार्यक्रम लागू किये जायें।
5. नये विश्वविद्यालय वहाँ खोले जायें, जहाँ उनकी आवश्यकता है। इसके लिये यू.जी.सी. से अनुमति प्राप्त की जाये।
6. विश्वविद्यालय सहयोग के आधार पर अपने कार्यक्रम चलायें।
7. समाज-विज्ञानों को अधिक महत्व दिया जाये।
8. विषयों के स्रोत (Combination) में अधिक लोच होनी चाहिए।
9. क्षेत्रीय अध्ययन (Area Studies) को कुछ विश्वविद्यालयों में आरम्भ किया जाये।
10. मानव विज्ञान को संगठित किया जाये।
11. शैक्षिक अनुसन्धान पर बल दिया जाये। NCERT में शैक्षिक अनुसन्धान हेतु डॉकुमेन्टेशन सेन्टर तथा क्लीयरिंग हाउस विकसित किये जायें। नेशनल ऐकेडेमी ऑफ एजुकेशन स्थापित हो। शिक्षा पर कुल व्यय बढ़ाया जाये।

विश्वविद्यालयों की सम्प्रभुता

विश्वविद्यालय अपने आप में स्वतन्त्र हों और उनके संगठन पर सरकारी नियन्त्रण हो अथवा न हो, यह प्रश्न अवश्य ही विचारणीय रहा है। आयोग ने अपने सुझाव इस प्रकार दिये हैं–

1. विश्वविद्यालयों में सम्प्रभुता विद्यार्थियों के चुनाव, अध्यापकों के चुनाव व प्रगति, पाठ्यक्रम के निर्धारण, शिक्षण पद्धति एवं अनुसन्धान के क्षेत्रों के निर्धारण में निहित होती है। भारत में सम्प्रभुता की परम्परा शक्तिशाली है। फिर भी इसका उत्तरदायित्व सरकार, आई.यू.बी., यू.जी.सी. पर रहता है। अत: यू.जी.सी., यू.बी. एवं विश्वविद्यालयों के मध्य परामर्श के लिये एक तन्त्र का निर्माण किया जाये। यू.जी.सी., आई.यू.बी. विश्वविद्यालयों की सम्प्रभुता के बनाने में जनमत तैयार करें।
2. विश्वविद्यालयों को अपने विभागों एवं संकायों को भी पर्याप्त सम्प्रभुता देनी चाहिए।
3. छात्रों एवं अध्यापकों की संयुक्त समितियाँ होनी चाहिए। एकेडेमिक कौंसिलों तथा यूनिवर्सिटी-कोर्ट्स में छात्र प्रतिनिधि हो।
4. राज्य सरकारें विश्वविद्यालयों को यथाशक्ति आर्थिक सहायता दें और उनको प्रयोग में लाने के लिये नियम सरल हों। यू.जी.सी., विश्वविद्यालयों को विकासात्मक एवं रक्षात्मक (Maintanance) अनुदान दे। ब्लाक-ग्रांट प्रणाली लागू हो। विश्वविद्यालय सरकारी जनता के हस्तक्षेप से परे हों।

नोट

नोट्स किसी व्यवस्था के सुचारू संचालन का आधार उसकी अर्थव्यवस्था है। जब हम उच्च शिक्षा के स्तर की बात करते हैं तो विश्वविद्यालय स्तर पर यह स्थिति और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। किसी भी कार्य की सफलता उसके ऊपर व्यय किये जाने वाले धन पर निर्भर है। विश्लेषण करने पर पता लगता है कि मानक स्तर प्राप्त न करने का मूल कारण धन का अभाव है।

किसी कार्य को सुचारू रूप से तभी किया जा सकता है जबकि उसके लिये पर्याप्त धन व्यय किया जाये। धन के अभाव में उच्च शिक्षा के मानदण्ड गिरे हैं। अध्यापकों का वेतन, छात्र-कल्याण, पाठ्यक्रम एवं अन्य कार्यक्रमों के विकास आदि के लिये धन व्यय करना ही पड़ता है।

राधाकृष्णन कमीशन ने विश्वविद्यालय की अर्थव्यवस्था को दृढ़ करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(1) राज्य द्वारा उच्च शिक्षा की आर्थिक सहायता प्रदान करने के अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार किया जाये।

(2) व्यक्तिगत कॉलेजों को भवन निर्माण तथा अन्य कार्यों के लिये सहायता दी जाये।

(3) इन्कम-टैक्स के कानूनों में सुधार किया जाये एवं शिक्षा में लगाया जाने वाला धन करमुक्त हो।

(4) सरकार द्वारा अतिरिक्त अनुदान दिया जाये।

(5) अनुदान देने के लिये 'अनुदान आयोग' की स्थापना की जाये।

आजकल शिक्षा मन्त्रालय ने उच्च शिक्षा के विकास के लिये 17.64 करोड़ रुपये की व्यवस्था की, जबकि पिछले वर्ष में यह राशि 14.32 करोड़ रुपया थी। आज, जबकि विश्वविद्यालयों की सम्प्रभुता सभी के समक्ष विद्यमान है, और वह तभी बनी रह सकती है जब विश्वविद्यालय अनुदान आयोग जैसी स्वायत्त संस्था का गठन हो गया है, और यह बिना रोक-टोक के विश्वविद्यालयों को अनुदान देती भी है, राज्यों के विश्वविद्यालयों को राज्य सरकारों से धन प्राप्त होता है। इसलिये राज्य सरकारों का दखल अपने क्षेत्र में स्थित विश्वविद्यालयों में रहता है।

कोठारी कमीशन ने विश्वविद्यालयों की अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप प्रदान करने के लिये इस प्रकार सुझाव दिये हैं—

(1) राज्य सरकारें विश्वविद्यालयों के साथ इस प्रकार व्यवहार करें जिससे ये आवश्यक धनराशि द्वारा आवश्यक कार्यों को कर सकें। यदि यू.जी.सी. से परामर्श कर लें तो यह भी उचित ही होगा।

(2) जब आर्थिक मामलों में सुरक्षा की आवश्यकता अनुभव हो एवं उचित मितव्ययिता की आवश्यकता हो तो इसके लिये आवश्यक है प्रगति तथा कुशलता को विकसित करने हेतु नियमों को सरल बनाया जाये। आयोग के अनुसार—"हम यह मानते हैं कि उच्च शिक्षा के मामले में खर्चे का विश्वसनीय प्राक्कलन और पूर्वानुमान लगाना और कठिन भी है।

इसके लिए हमें अनेक रूपों में विचार करना होगा।

1. केन्द्रीय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से धन प्राप्त करें।
2. राज्यों के विश्वविद्यालयों को अनुदान न दिये जाने पर धन की पूर्ति करनी चाहिये, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कुछ योजनाओं में शत-प्रतिशत, कुछ में मैचिंग (Matching) अनुदान देता है। परन्तु राज्य सरकारों की मैचिंग ग्रान्ट समय पर नहीं मिल पाती।
3. राज्य सरकारें राज्य के विश्वविद्यालयों को इस प्रकार अनुदान देती हैं—

   (1) यू.जी.सी. छात्र प्रदत्त धन पर विकासात्मक कार्यों के लिए मैचिंग ग्रान्ट।

   (2) विश्वविद्यालय के विकास के लिए नॉन-प्लान (Non-plan) अनुदान।

   (3) स्वीकृत व्यय के लिये अनुदान।

4. आयोग ने अनुदान प्रथा में इस प्रकार सुधार करने की बात कही है—
   (1) राज्य सरकारें, विश्वविद्यालयों को आर्थिक सहायता प्रदान करें एवं उसे व्यय करने की स्वाधीनता भी दें।
   (2) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग राज्य के विश्वविद्यालयों को विकास के लिए पर्याप्त सुविधायें प्रदान करें।
   (3) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पर राज्य सरकारें विकास व्यय को समान रूप से वहन करें।
   (4) विश्वविद्यालयों को समग्र रूप में ब्लाक अनुदान (Block Grant) दिया जाये।
   (5) विश्वविद्यालयों को सरकारी हस्तक्षेप तथा लेखा जाँच से मुक्त रखा जाये।

हाल ही के वर्षों में केन्द्र सरकार ने उच्च शिक्षा के विकास के लिये विशेष भूमिका निभाई है। परिणामत: शुल्क, प्रतिभूतियों तथा अन्य स्रोतों से प्राप्त होने वाली धनराशि में कमी हुई है। अत: यह आवश्यक हो गया है कि चन्दे, शुल्क तथा अन्य स्रोतों पर विस्तार से विचार किया जाये। आधुनिक शुल्क प्रणाली में अनुदान (Subsidy) निहित है और यह आर्थिक स्थिति का विचार किये बिना सभी को दी जाती है। इसके विपरीत, यदि शुल्क को बढ़ाया जाता है तो इससे निर्धन वर्ग के शिक्षा प्राप्त करने के अवसर समाप्त हो जायेंगे। इसका परिणाम छात्र-असंतोष के रूप में व्यक्त होगा। अच्छा यह होगा कि व्यावसायिक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर शुल्क बढ़ाकर छात्रवृत्तियों की संख्या में वृद्धि कर दी जाये तथा विकास शुल्क वसूला जाये।

27.2 निजीकरण के लाभ-हानि और सुझाव (Merits-Demerits and Suggestions of Privatization)

निजीकरण के लाभ

शिक्षा के निजीकरण से होने वाले लाभ—

(1) शिक्षा का प्रसार हो रहा है।

(2) जिन लोगों को प्रतियोगी परीक्षाओं में असफल होने के कारण प्रवेश नहीं मिल पाता, वे अधिक धन खर्च करके वांछित शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

(3) देश का धन सकारात्मक कार्यों में लग रहा है।

(4) बेरोजगारी किसी सीमा तक दूर हो रही है।

(5) शिक्षण संस्थाओं की स्थापना से संबंधित रोजगार, छात्रावास, कैंटीन सेवायें, स्टेशनर्स, प्रिन्टर्स तथा पब्लिशर्स को विकास के अवसर मिल रहे हैं।

(6) योग्य व्यक्तियों को अपनी प्रतिभा का विकास करने के अवसर प्राप्त होते हैं।

निजीकरण की हानियाँ

शिक्षा को उद्योग मान लेने से शिक्षा के प्रति सात्विक भाव समाप्त हो गया है। इसके निजीकरण से होने वाली हानियाँ हैं—

(1) शिक्षा, व्यापार हो गई है। उपभोक्ता तथा नियोजक दोनों इसी दृष्टि का विकास करते हैं।

(2) निजीकरण के कारण वे लोग शिक्षा से वंचित रह जाते हैं जो निर्धनता के कारण प्रतिभा होते हुए भी प्रवेश नहीं ले पाते।

(3) निजीकरण के कारण शिक्षा महंगी हो गई है। पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर कम से कम हजार रुपया प्रतिमाह औसतन शैक्षिक व्यय प्रति व्यक्ति आता है, जो सामान्य वेतनभोगी व्यक्ति के लिये समस्या है।

(4) बड़े-बड़े उद्योगपतियों ने शिक्षा संस्थाओं को सहयोगी उद्योग के रूप में स्थापित किया है।

(5) शिक्षकों का शोषण होता है। उन्हें पूरा वेतन तथा शैक्षिक सुविधायें प्राप्त नहीं होतीं।

नोट

(6) अधिकतम संस्थाओं में योग्य शिक्षक मंडल नहीं होता।

(7) इन संस्थाओं में शैक्षिक साधनों तथा सुविधाओं का अभाव होता है।

(8) शैक्षिक तथा बौद्धिक विकास के अवसर कम हो रहे हैं।

(9) एकाधिकारी प्रबन्ध के कारण शिक्षकों में तनाव रहता है।

निजीकरण के लिए कुछ सुझाव

सरकारें निरन्तर बढ़ते बोझ की दुहाई देकर शिक्षा के दायित्व से मुंह मोड़ने के अवसरों को तलाश करती रहती हैं। यही कारण है कि हम अभी तक चौदह वर्ष तक आयु के बालकों के लिये अनिवार्य, नि:शुल्क एवं सार्वभौम शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर पाये। ऐसी स्थिति में नि:सन्देह निजीकरण ही एक ऐसा सहारा है जो शिक्षा को सार्वजनिक बना सकता है। निजीकरण में मुनाफाखोरी तथा आर्थिक शोषण पर नियंत्रण रखने के साथ-साथ शैक्षिक स्तर के निर्माण तथा सर्वसुलभ बनाने के लिये इन सुझावों पर ध्यान देना आवश्यक है–

(1) निजीकरण में मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाये।

(2) शिक्षा का धर्मार्थ स्वरूप विकसित हो।

(3) मान्यता देते समय इस बात का ध्यान रखा जाये कि ऐसी संस्थाओं में प्रशासनिक योजना (Administration Scheme) बनाई जाये जिसमें सरकार, शिक्षा विभाग, समाज, छात्रों तथा अध्यापकों का प्रतिनिधित्व हो। इन प्रतिनिधियों के सशक्त अधिकार हों।

(4) शिक्षकों की सेवा शर्तों का संरक्षण सरकार द्वारा किया जाये।

(5) प्रयोगशाला, वर्कशाप, खेल के मैदान, पुस्तकालय, कम्प्यूटर, लैब तथा अन्य सुविधायें हों।

(6) शिक्षकों तथा अभिभावकों का आर्थिक शोषण न हो।

(7) निजीकरण द्वारा शिक्षा संस्थायें, संस्थाओं के रूप में चलाई जायें, न कि दुकानों के रूप में।

(8) संस्थायें स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम तैयार करें।

(9) प्रजातांत्रिकता की भावना विकसित की जाये।

हमें विश्वास है कि यदि ये सुझाव अपनाये जायें तो निजीकरण शिक्षा के प्रसार में बाधक नहीं होगा।

टास्क एक उद्योगपति कारखाना लगाने के बजाय स्कूल खोलना पसंद करता है। क्यों?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये (Fill in the blanks)–

1. निजीकरण से देश का पैसा ………… कार्यों में लग रहा है।
2. निजीकरण से ………… की समस्या कम हो रही है।
3. निजीकरण में शिक्षकों की सेवा शर्तों का संरक्षण ………… द्वारा किया जाय।
4. सरकार यह तय करे कि ………… का आर्थिक शोषण न हो।
5. निजी संस्थाओं में ………… की भावना विकसित की जाय।

27.3 सारांश (Summary)

- शिक्षा के निजीकरण का मूल भारत के संविधान की कुछ धाराओं में विरोधाभास के साथ निहित है। शिक्षा के सांवैधानिक प्रावधानों पर विचार करना आवश्यक है।

नोट

- **धारा 29 : अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण**—(1) भारत के राज्य क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी विभाग को, जिसकी अपनी विशेष लिपि, भाषा या संस्कृति है, उसे बनाये रखने का अधिकार होगा। (2) राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा अथवा इनमें किसी आधार पर वंचित न रखा जायेगा।
- **धारा 30 : शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यकों का अधिकार**— (1) धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों की अपनी रुचि की संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा। (2) शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी विद्यालय के विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबन्ध में है।
- **धारा 45 : बालकों के लिये नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबन्ध**—राज्य इस संविधान के प्रारंभ के दस वर्ष की कालावधि के भीतर सभी बालकों के चौदह वर्ष की अवस्था समाप्ति तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा।
- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1967** में कहा गया—"शिक्षा को लोगों के जीवन के अधिक निकट लाने के लिए लगातार प्रयत्न, विज्ञान और शिल्प विज्ञान के विकास पर विशेष बल तथा नैतिक और सामान्य मूल्यों का निर्माण करना होगा।"

  इस कार्य के लिये प्रादेशिक असंतुलन को दूर करना, शुल्कयुक्ति का आनुपातिक आधार तय करना, सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा करना आवश्यक है। तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षाओं का उपयुक्त विभाजन होना चाहिए। यथा—कृषि, उद्योग, व्यापार, शिल्प, अनुरुचिकीय प्रशिक्षण आदि।
- शिक्षा का निजीकरण तथा शिक्षा का व्यवसायीकरण दो अलग-अलग धारणायें हैं। शिक्षा के व्यवसायीकरण से अभिप्राय व्यवसाय तथा रोजगार के अधिकतम अवसर प्रदान करने के लिए विभिन्न व्यवसायों तथा उद्योगों से संबंधित पाठ्यक्रमों में छात्रों का प्रवेश देना है। इससे छात्र, शास्त्रीय, पाठ्यक्रमों के बजाय उन पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेते हैं जो उन्हें आजीविका के अवसर देते हैं। बढ़ती जनसंख्या ने नौकरियों के अवसर बहुत कम कर दिये हैं। इसलिये बढ़ती बेकारी को रोकने के लिए स्व-रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना आवश्यक हो गया है। निजीकरण की धारणा के पीछे जो भावना है, वह है—कुछ सम्पन्न तथा मुनाफाखोर व्यक्तियों का शिक्षा के क्षेत्र में धनोपार्जन करना।
- विश्वविद्यालयों का महत्व प्राचीनकाल से ही रहा है। नालन्दा, तक्षशिला, उज्जैन जैसी विद्यापीठ इतिहास प्रसिद्ध रही हैं। विश्वविद्यालयों का कार्य जीवन के हर क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करना तथा मानव की मानसिक शक्तियों का विकास करने में योगदान देना रहा है। भारतीय विश्वविद्यालय का योगदान इस क्षेत्र में मुख्य रहा है।
- विश्वविद्यालय अपने आप में स्वतन्त्र हों और उनके संगठन पर सरकारी नियन्त्रण हो अथवा न हो, यह प्रश्न अवश्य ही विचारणीय रहा है। आयोग ने अपने सुझाव इस प्रकार दिये हैं—
  1. विश्वविद्यालयों में सम्प्रभुता विद्यार्थियों के चुनाव, अध्यापकों के चुनाव व प्रगति, पाठ्यक्रम के निर्धारण, शिक्षण पद्धति एवं अनुसन्धान के क्षेत्रों के निर्धारण में निहित होती है। भारत में सम्प्रभुता की परम्परा शक्तिशाली है। फिर भी इसका उत्तरदायित्व सरकार, आई.यू.बी., यू.जी.सी. पर रहता है। अत: यू.जी.सी., यू.बी. एवं विश्वविद्यालयों के मध्य परामर्श के लिये एक तन्त्र का निर्माण किया जाये। यू.जी.सी., आई.यू.बी. विश्वविद्यालयों की सम्प्रभुता के बनाने में जनमत तैयार करें। विश्वविद्यालय को अपने कार्यों द्वारा अर्जित करें।
  2. विश्वविद्यालयों को अपने विभागों एवं संकायों को भी पर्याप्त सम्प्रभुता देनी चाहिए।

नोट

3. छात्रों एवं अध्यापकों की संयुक्त समितियाँ होनी चाहिए। एकेडेमिक कौंसिलों तथा यूनिवर्सिटी-कोर्ट्स में छात्र प्रतिनिधि हो।

- किसी व्यवस्था के सुचारू संचालन का आधार उसकी अर्थव्यवस्था है। जब हम उच्च शिक्षा के स्तर की बात करते हैं तो विश्वविद्यालय स्तर पर यह स्थिति और भी महत्वपूर्ण हो जाती है।

27.4 शब्दकोश (Keywords)

- **मितव्ययी–** कम व्यय करने वाला।
- **हस्तक्षेप–** दखल देना।

27.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. निजीकरण से क्या अभिप्राय है? वर्णन कीजिए।
2. निजीकरण को विकसित करने वाले संवैधानिक प्रावधानों का विवेचन कीजिए।
3. निजीकरण शिक्षा के लिए अभिशाप अथवा वरदान! विश्लेषण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सकारात्मक 2. बेरोजगारी 3. सरकार
4. शिक्षकों और अभिभावकों 5. प्रजातांत्रिकता।

27.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर.के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)।
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डॉ. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*–डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—28: शिक्षा का सार्वभौमीकरण (Globalization of Education)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

28.1 शिक्षा का सार्वभौमीकरण : अवधारणा (Globalization of Education : Concept)

28.2 सभी के लिए शिक्षा : भारतीय संदर्भ (Education to All : Indian Context)

28.3 सारांश (Summary)

28.4 शब्दकोश (Keywords)

28.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

28.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- शिक्षा के सार्वभौमीकरण को समझने एवं व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

आज विश्व में जनसंख्या जिस रफ्तार से बढ़ रही है, उससे दूनी रफ्तार से निरक्षरों तथा अल्पसाक्षरों की संख्या में वृद्धि हो रही है। विश्व के संदर्भ में शिक्षा की बाबत सोचने वालों ने सभी के लिये शिक्षा का उद्घोष किया है।

दूसरे महायुद्ध के पश्चात् विश्व के अधिकांश देशों का ध्यान शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार की ओर आकृष्ट हुआ। यह सैद्धान्तिक रूप से स्वीकार किया गया कि सभी व्यक्तियों को साक्षर होना चाहिए। **यूनीवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स** के द्वारा विश्व के देशों ने यह स्वीकार किया कि—"प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है।" संचार एवं सूचना क्रांति से विश्व के देश एक-दूसरे के नजदीक आते जा रहे हैं। इस समीपता को बनाये रखने एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिये विश्व के सभी व्यक्तियों का साक्षर होना अनिवार्य हो गया है। शिक्षा की इस अनिवार्यता को समझते हुए विश्व के प्राय: सभी देश अपने नागरिकों को शिक्षित कराने के लिये लगभग पांच दशकों से प्रयत्नशील हैं। अन्तर्राष्ट्रीय संस्था **यूनेस्को** ने भी इस ओर महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

28.1 शिक्षा का सार्वभौमीकरण: अवधारणा (Globalization of Education : Concept)

सार्वभौमीकरण का अर्थ है, "किसी विशेष संस्कृति के सभी नागरिकों की संबद्ध अनुक्रियायें (Conditioned responses) जो विचार, स्वभाव तथा जीवन शैली को निबद्ध करती है।" इस दृष्टि से किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके शिक्षित नागरिकों पर निर्भर करती है। यदि देश में निरक्षरता है तो निश्चय ही राष्ट्र पर कतिपय शिक्षित एवं

नोट

साधन सम्पन्न लोगों का अधिकार हो जायेगा। शिक्षा के अभाव में अज्ञान का विकास होता है, विवेक कुंठित होता है, स्वार्थ पनपता है और आदमी बिकाऊ हो जाता है, मानव-मूल्यों का पतन होने के कारण, ऐसे लोग उत्पन्न हो जाते हैं जो तनिक से स्वार्थ के कारण पूरे देश को बेचने का साहस कर डालते हैं। इसीलिए मानव मूल्यों के विकास, नागरिक गुणों की उत्पत्ति एवं पढ़ने, लिखने तथा गिनने की शिक्षा के साथ-साथ प्रबुद्ध एवं विवेकशील मनुष्य का निर्माण करने के लिए सार्वभौम शिक्षा आवश्यक है।

1947 में भारत में 15% साक्षरता थी जिस देश में 85% निरक्षर हों, उसे प्रगति के पथ पर ले जाने के लिए शिक्षा ही सशक्त माध्यम थी, इसीलिए संविधान में 6-11 आयु वर्ग के सभी बालक-बालिकाओं की सार्वभौम रूप से नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की गई, सार्वभौम शिक्षा का लक्ष्य 1960 ई. तक प्राप्त हो जाना चाहिये था किन्तु साधनों के अभाव, जनसंख्या वृद्धि, पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े, तथा राजनीतिक दांवपेंचों ने अभी तक इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं होने दिया। देश के हर कोने से इस उद्देश्य की पूर्ति की मांग उठ रही है और आज तक इस मांग की पूर्ति नहीं हो पा रही है। इसीलिए आज सरकार इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए बालक की शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया है।

विकासशील तथा अविकसित देशों के सामने संसाधनों की कमी, जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या की अधिकता तथा अधिकांश देशों की दीर्घकालीन औपनिवेशिकता के परिणामस्वरूप सभी के लिये शिक्षा उपलब्ध कराना अत्यन्त कठिन कार्य रहा है। विभिन्न देशों में मध्यम गति से चलाये गये कार्यक्रमों का परिणाम अत्यन्त अल्प रहा है। वर्तमान में भी यह देश साक्षरता का न्यूनतम लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सके हैं। काम चलाऊ तथा अल्पकालीन सरकारों साक्षरता का कार्यक्रमों की अकर्मण्यता का परिणाम यह रहा है कि विश्व की लगभग एक तिहाई आबादी की पहुँच प्रिन्ट मीडिया तक नहीं हो पाई है।

सभी के लिये शिक्षा के लक्ष्य को पूरा करने के उपायों को खोजने तथा शिक्षा के लिये सामूहिक वचनबद्धता को दृढ़ करने के लिये विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले सभी देशों—भारत, ब्राजील, चीन, मेक्सिको, नाईजीरिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश, इण्डोनेशिया तथा मिस्र का प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन भारत में सम्पन्न हुआ था। इन देशों की सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं धार्मिक विभिन्नता होते हुए भी जनसंख्या एवं साक्षरता के सह-सम्बन्ध में समानता मिलती है। अत: यह देश साक्षरता के प्रश्न पर एक-दूसरे की समस्याओं, कार्यक्रमों एवं अनुभवों का लाभ उठा सकते हैं।

इन देशों ने साक्षरता के लिए स्कूली शिक्षा का प्रसार तथा अनौपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ साक्षरता आदि कार्यक्रम चलाए हैं। भारत ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा आदि के माध्यम से सभी को शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया तथा 1992 में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकता, प्रौढ़ साक्षरता, लड़कियों तथा अन्य उपेक्षित वर्गों को बुनियादी शिक्षा देने के लिए कार्यक्रमों में व्यापक सुधार करके तेजी लाई गई।

इण्डोनेशिया ने साक्षरता के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास किया है। मिस्र ने प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम में अत्यधिक सफलता प्राप्त की है। चीन जैसे सर्वाधिक जनसंख्या वाले देश ने भी साक्षरता के लिए अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये हैं। पाकिस्तान में शिक्षा के लिए निजी और सरकारी क्षेत्र की भागीदारी में कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं और महिला शिक्षा का अब तक उपेक्षित कार्यक्रम तेजी से आगे बढ़ाया जा रहा है। ब्राजील में साक्षरता अभियान सफल बनाने के लिए एक 10-वर्षीय राष्ट्रीय योजना चलाई जा रही है। इस सम्मेलन में भाग लेने वाले नौ देशों की कुल जनसंख्या विश्व की आधी जनसंख्या से अधिक है तथा विश्व के सत्तर प्रतिशत निरक्षर इन देशों में रहते हैं।

नोट

> नोट्स सभी को साक्षर करने में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मुख्य रूप से जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ संसाधनों की कमी महत्वपूर्ण कारण है। बालकों की अपेक्षा बालिकाओं को शिक्षित कराने में सामाजिक, पारिवारिक एवं आर्थिक कारण गतिरोध उत्पन्न करते हैं जिसके परिणामस्वरूप पुरुषों की साक्षरता दर महिलाओं की साक्षरता दर से अधिक होती है।

'सभी के लिए शिक्षा' सम्मेलन में विशेष रूप में लड़के एवं लड़कियों के भेद को समाप्त करना, महिलाओं एवं लड़कियों को बेहतर शिक्षा की व्यवस्था करना, शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए संसाधन जुटाना, मौलिक शिक्षा की उत्कृष्टता एवं गुणवत्ता को श्रेष्ठतर बनाने के लिए शैक्षिक सुधार करने तथा शिक्षा के साथ स्वास्थ्य, जनसंख्या एवं पर्यावरण आदि महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। इससे पूर्व 'सबके लिए शिक्षा' पर एक विशेष सम्मेलन जोमतिएन, थाइलैण्ड में आयोजित किया गया था, जिसमें यह विचार किया गया था कि शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए किस प्रकार अधिक से अधिक संसाधन जुटाए जाएं?

मानव संसाधन विकास मंत्री ने तीन दिवसीय मंत्रिस्तरीय सम्मेलन के विचार-विमर्श का उल्लेख करते हुए बताया कि साक्षरता एवं शिक्षा प्रसार के क्षेत्र में लगातार आदान-प्रदान एवं विचार-विमर्श के बारे में सभी देश सहमत हैं। विशेषज्ञों का मत था कि यदि सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना है तो सतत् प्रयत्नशील रहना पड़ेगा और महिलाओं एवं बालिकाओं की शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करनी होगी।

शिखर बैठक का उद्घाटन करते हुए डॉ. शर्मा ने कहा कि, "सबके लिए शिक्षा अभियान का उद्देश्य एक ऐसी सभ्यता का विकास करना है जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी का उपयोग करती हो तथा मानवता, शांति और मित्रता की भावना को बढ़ाती हो।" उन्होंने लड़कियों तथा महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने के लिए कहा जिससे उनकी क्षमताओं का पूरा लाभ उठाया जा सके। भारत के प्रधानमंत्री ने प्रारम्भिक स्वागत भाषण में कहा कि, "सभी देशों ने शिक्षा को अपने विकास कार्यक्रमों में प्राथमिकता दी है तथा वह लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संसाधन जुटाने के उपाय खोज रहे हैं।" इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति ने कहा कि, "विकासशील देश हर प्रकार की हीन भावना त्यागकर शिक्षा प्रसार में खुलकर आपसी सहयोग करें।" यूनेस्को के महानिदेशक ने कहा कि, "लड़कियों को शिक्षा उपलब्ध करना आज का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा तात्कालिक विषय है।" यूनीसेफ के कार्यकारी निदेशक ने प्राथमिक शिक्षा की प्रगति की प्रत्येक दो वर्ष बाद समीक्षा पर बल दिया। ब्राजील के शिक्षा तथा खेल मंत्री ने 10-वर्षीय राष्ट्रीय शिक्षा योजना का विवरण प्रस्तुत किया। नाइजीरिया के शिक्षा एवं युवा विकास मंत्री ने एक वक्तव्य में विचार व्यक्त किए कि पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की कमी से अच्छी से अच्छी योजनाएं असफल हो जाती हैं। चीन के उप-प्रधानमंत्री ने कहा कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास कार्यों को जारी रखते हुए हमें शिक्षा की कमी अनदेखी नहीं करनी चाहिए। उन्होंने कहा, "हमें विकास को दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए तथा शिक्षा, विकास और शांति के उद्देश्य में संतुलन स्थापित करना चाहिए।" पाकिस्तान की शिक्षा एवं सामाजिक विकास प्रभारी ने कहा कि, "इस अभियान के लिए पाठ्यक्रम स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप होगा तथा पूरा कार्यक्रम स्वयं समुदाय द्वारा चलाया जाना चाहिए।"

नई दिल्ली शिखर बैठक ने 18-सूत्रीय घोषणा-पत्र को स्वीकृति प्रदान की। इसमें स्वीकार किया गया कि जनसंख्या वृद्धि के बढ़ते दबाव ने शिक्षा प्रणाली पर अत्यधिक बोझ डाला है। सभी राष्ट्र सहमत थे कि राष्ट्रीय स्तर पर विकास, जीवन स्तर सुधार, अयोग्यता और जनसंख्या नियंत्रण तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहिष्णुता, सद्भाव और शान्ति के लिए सभी को शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना आवश्यक है।

घोषणा-पत्र में शताब्दी के अन्त तक इन सभी देशों ने सभी को शिक्षा उपलब्ध कराने का संकल्प व्यक्त किया है। घोषणा-पत्र में कहा गया है कि, "शिक्षा सार्वभौम मानव मूल्यों के संवर्धन का सर्वाधिक प्रभावी माध्यम है तथा इसमें मानव संसाधनों की गुणवत्ता और सांस्कृतिक वैविध्य के लिए आदर का भाव भी विकसित किया जा सकता है।" शिक्षा पूरे समाज की जिम्मेदारी होनी चाहिए, जिसमें सरकारें परिवार, समुदाय तथा गैर-सरकारी एजेंसियाँ भी शामिल हैं।

नोट

इस शिखर सम्मेलन में भाग लेने वाले देशों द्वारा सन् 2000 तक सभी को शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य पूरा हुआ है या नहीं, यह तो सर्वविदित है। यूनेस्को तथा यू.एन.एफ.पी.ए. संस्थाओं को इसमें संदेह है। एक संवाददाता सम्मेलन में यू.एन.एफ.पी.ए. की कार्यकारी निदेशक ने कहा कि, "वह लक्ष्य प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, लेकिन फिर भी प्रयास करना चाहिए।" यूनेस्को की ओर से मंत्रिस्तरीय बैठक में भी एक दस्तावेज में यह कहा गया कि शिखर सम्मेलन में भाग ले रहे देशों में से केवल छः देश 90 से 100 प्रतिशत तक स्कूल जाने की उम्र वाले लड़के-लड़कियों को स्कूल भेजने में समर्थ हो सकते हैं। शेष देश प्रयास करें तो 90 प्रतिशत तक यह लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

शिखर सम्मेलन के लक्ष्य महान हैं। इन लक्ष्यों को पूरी ईमानदारी से देखा तथा परखा जाना चाहिए। भारत के संदर्भ में तो यह दायित्व और भी बढ़ जाता है।

शिखर सम्मेलन के प्रस्ताव

नई दिल्ली में सबके लिए शिक्षा के बारे में आयोजित शिखर सम्मेलन में सबसे घनी आबादी वाले देशों—भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, चीन, मिस्र, मेक्सिको, ब्राजील, इंडोनेशिया और नाइजीरिया ने ऐतिहासिक दिल्ली घोषणा पर हस्ताक्षर किए। इन नौ देशों के नेताओं ने जितनी जल्दी हो सके उससे पहले सभी के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने का संकल्प किया और प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाकर तथा बच्चों, युवाओं व वयस्कों के लिए शिक्षा के अवसर अपने-अपने देश के लोगों की शिक्षा प्राप्त करने की बुनियादी आवश्यकतायें पूरी करने के लिए अपनी वचनबद्धता दोहराई। दिल्ली घोषणा का पूरा आलेख इस प्रकार है—

1. हम विश्व के सबसे घनी आबादी वाले नौ देशों के नेतागण प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाकर तथा बच्चों, युवाओं एवं वयस्कों के लिए शिक्षा प्राप्त करने की सुविधाओं का विस्तार करने अपने-अपने देश के सभी लोगों की शिक्षा प्राप्त करने की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये सबके लिए शिक्षा के विश्व सम्मेलन तथा बच्चों के बारे में विश्व शिखर सम्मेलन के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में दृढ़ संकल्प एवं पूर्ण उत्साह के साथ प्रयास करने के प्रति अपनी वचनबद्धता को दोहराते हैं। हम अच्छी तरह जानते हैं कि विश्व की आधी से अधिक आबादी हमारे देशों में रहती है और हमारे प्रयासों की सफलता सबको शिक्षित बनाने के अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

2. हम यह मानते हैं कि—

(*i*) हमारे देशों की आकांक्षाओं तथा विकास सम्बन्धी लक्ष्यों को सभी लोगों के लिये शिक्षा की व्यवस्था से ही पूरा किया जा सकता है। शिक्षा प्राप्ति का यह अधिकार मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा और हमारे देशों के संविधानों व कानूनों में भी शामिल है।

(*ii*) शिक्षा सार्वभौम मानव मूल्यों, मानव संसाधनों की गुणवत्ता तथा सांस्कृतिक विविधता के प्रति सम्मान की भावना है।

(*iii*) यद्यपि हमारे दशों में बड़ी संख्या में लोगों को शिक्षित बनाने की दिशा में शिक्षा प्रणालियों ने काफी प्रगति की है परन्तु हम अभी तक अपने सभी देशवासियों को स्तरीय शिक्षा देने में सफल नहीं हो पाए हैं जो इस बात की ओर संकेत है कि हमें औपचारिक प्रणालियों में तथा उससे बाहर रचनात्मक दृष्टिकोण विकसित करने की आवश्यकता है।

(*iv*) शिक्षा के विषय एवं विधियां ऐसी बनाई जानी चाहिये जिनमें व्यक्तियों एवं समाजों की बुनियादी आवश्यकतायें पूरी होती हों और वे टी.वी. उन्मूलन, उत्पादकता बढ़ाने, जीवन स्तर में सुधार लाने और पर्यावरण की रक्षा जैसी अपनी सबसे गम्भीर समस्याओं पर ध्यान देने और लोकतांत्रिक समाज की रचना एवं अपनी सांस्कृतिक धरोहर को समृद्ध बनाने में अपनी उचित भूमिका निभाने में सक्षम बन सकें।

(*v*) सफल शिक्षा कार्यक्रम चलाने के लिए परिवार एवं समाज की भूमिका के संदर्भ में समुचित पोषाहार, स्वास्थ्य रक्षा तथा बच्चों की उचित देखभाल और विकास के क्षेत्र में कार्य करना आवश्यक है।

नोट

(*vi*) लड़कियों तथा महिलाओं को शिक्षित करना तथा उन्हें सक्षम बनाना अपने आप में महत्वपूर्ण लक्ष्य होने के साथ-साथ सामाजिक विकास वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों के कल्याण एवं शिक्षण और महिलाओं के लिए अपनी क्षमताओं के पूर्ण विकास के अवसरों के विस्तार को बढ़ावा देने के आधारभूत पहलू हैं।

(*vii*) बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव से शिक्षा प्रणालियों की क्षमताओं पर विपरीत प्रभाव पड़ा है तथा इनमें आवश्यक सुधार एवं संशोधन की प्रक्रिया में बाधा आई है। हमारे देश की आबादी में वर्तमान आयु अनुपात को देखते हुए आने वाले दशकों में भी यह बाधा रहेगी।

(*viii*) शिक्षा एक सामाजिक जिम्मेदारी है और होनी चाहिए जो सरकारी परिवारों, समुदायों तथा गैर-सरकारी संगठनों की सीमाओं से परे हैं। इसमें ऐसे विशाल मेलजोल में सभी की वचनबद्धता और भागीदारी की आवश्यकता है जिसमें भिन्न-भिन्न विचारों तथा राजनीतिक स्थितियों पर कोई ध्यान न दिया जाना हो।

3. हमारे देश के विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका को पहचानते हुए हम संकल्प लेते हैं कि जितनी जल्दी हो सके—

(*i*) हम प्रत्येक बच्चे को उसकी सामर्थ्य के अनुसार किसी विद्यालय या शिक्षा कार्यक्रम में प्रवेश दिलाने की व्यवस्था करेंगे, ताकि कोई भी बालक किसी अध्यापक, पठन-पाठन सामग्री अथवा उचित स्थान के अभाव के कारण शिक्षा प्राप्त करने से वंचित न रहे। यह संकल्प हम बच्चे के अधिकार की उस संधि के अन्तर्गत व अपनी वचनबद्धता को पूर्ण करने के लिए करते हैं, जिसकी हमने पुष्टि की है।

(*ii*) सभी के लिए बुनियादी शिक्षा की एक समन्वित कार्यनीति के संदर्भ में हम बच्चों व बड़ों को बुनियादी शिक्षा उपलब्ध कराने एवं अपने साक्षरता तथा वयस्क शिक्षा कार्यक्रमों का विस्तार करने की दिशा में सरकारी तथा गैर-सरकारी साधनों से अपने प्रयासों में और तेजी लाएंगे।

(*iii*) हम लिंग, आयु, उम्र, परिवार, संस्कृति, जाति व भाषा सम्बन्धी भिन्नताओं तथा भौगोलिक दृष्टियों के कारण बुनियादी शिक्षा तक पहुँच के मामले में विषमताओं को दूर करेंगे।

(*iv*) हम अध्यापकों के स्तर, प्रशिक्षण व कार्य स्थितियों में सुधार लाने, शिक्षण के विषयों और सामग्री को बेहतर बनाने तथा अपनी शिक्षा प्रणालियों में आवश्यक संशोधन करने के प्रयासों में और गति लाकर बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रमों की गुणवत्ता एवं महत्ता में सुधार लाएंगे।

(*v*) हम अपने कार्यों में राष्ट्रीय तथा अन्य स्तरों पर मानव विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देंगे, ताकि राष्ट्रीय और सामुदायिक संसाधनों के प्रबन्ध को बेहतर बनाने पर खर्च किया जाए।

(*vi*) हम अपने समाजों के सभी वर्गों के लिए सबके लिए शिक्षा की दिशा में काम करने को प्रेरित करेंगे क्योंकि यहाँ हम इस घोषणा के साथ कार्य संरचना का भी अनुमोदन कर रहे हैं और हम संकल्प करते हैं कि हम राष्ट्रीय स्तर पर अपनी प्रगति की समीक्षा करेंगे तथा आपस में और विश्व के अन्य देशों के साथ अपने-अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करेंगे।

4. इसलिए हम आह्वान करते हैं कि—

(*i*) अन्तर्राष्ट्रीय सहयोगकर्ता बुनियादी शिक्षा सुविधाओं के विस्तार एवं सुधार की अपनी राष्ट्रीय क्षमताओं में वृद्धि के हमारे प्रयत्नों के लिये अपने समर्थन को और बढ़ायें।

(*ii*) अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थान ढांचागत समायोजनों के संदर्भ में शिक्षा में निवेश पर पूर्व-निर्धारित सीमाएँ लगाए बिना शिक्षा को महत्वपूर्ण निवेश के रूप में मान्यता दे और ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण बनाये जिससे सभी देश अपना सामाजिक-आर्थिक विकास करने में समर्थ बन सकें।

(*iii*) विश्व समुदाय सभी के लिए शिक्षा के लक्ष्य के प्रति हमारी वचनबद्धता की पुष्टि से पूरा साथ दे और तक या जितनी जल्दी हो सके उससे पहले उसे प्राप्त करने के प्रयासों में तेजी लाए।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

1. **निम्नलिखित कथनों में 'सही' तथा 'गलत' का चुनाव कीजिए। (State whether the following statements are 'True' or 'False')**
    1. मानव-मूल्यों का पतन होने से ऐसे लोग पैदा हो जाते हैं जो स्वार्थवश देश की साख दांव पर लगा देते हैं।
    2. 1947 में भारत में 15 प्रतिशत साक्षरता थी।
    3. इण्डोनेशिया ने साक्षरता के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से प्रयास किया।
    4. ब्राजील ने साक्षरता अभियान को सफल बनाने के लिए पांच वर्षीय योजना चलाई।
    5. पाकिस्तान में साक्षरता के लिए निजी एवं सरकारी क्षेत्र की भागीदारी में शैक्षिक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

28.2 सभी के लिए शिक्षा : भारतीय संदर्भ (Education to All : Indian Context)

हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के नेताओं ने देश की आजादी से काफी पहले राष्ट्रीय विकास के माध्यम के रूप में शिक्षा के महत्व को पहचान लिया था। वे यह जान चुके थे कि आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिये शिक्षा बहुत जरूरी है। लोगों, विशेष रूप से कमजोर वर्गों के लोगों के जीवन-स्तर में सुधार के लिए शिक्षा काफी कारगर साधन सिद्ध हो सकती है। महात्मा गाँधी भी शिक्षा को "चेतना के विकास और समाज के पुनर्निर्माण का बुनियादी हथियार" मानते थे। 1937 में उन्होंने बुनियादी तालीम का जो कार्यक्रम प्रस्तुत किया था, उसमें सभी बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने की बात की गयी थी। इस कार्यक्रम में बच्चों के चहुँमुखी विकास पर विशेष जोर दिया गया था। इसके अलावा राष्ट्रीय दृष्टिकोण के विकास, ज्ञान के स्रोत के रूप में अपने आस-पास के माहौल के इस्तेमाल, शिक्षा और कार्य के बीच तालमेल तथा सबसे बढ़कर पढ़ाने और सीखने के माध्यम के रूप में मातृभाषा का उपयोग जैसी बातें भी गांधीजी की बुनियादी तालीम की धारणा में शामिल थीं। पढ़ना-लिखना सीखने वालों की आवश्यकताओं के अनुरूप राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली विकसित करने की दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम था। इस कार्यक्रम में सामाजिक न्याय के साथ-साथ सबको उन्नति के समान अवसर उपलब्ध कराने की क्षमता थी।

1947 में देश की आजादी के समय प्रारम्भिक शिक्षा का स्तर बिल्कुल संतोषजनक नहीं था। अंग्रेजों द्वारा थोपी गयी शिक्षा प्रणाली कुछ खास लोगों के लिए थी, जिसने शिक्षित और निरक्षरों के बीच बहुत बड़ी खाई पैदा कर दी। आर्थिक असमानता, लड़के-लड़की के बीच भेदभाव और कठोर जाति भेद जैसे कारणों से शैक्षिक असमानता और भी गम्भीर रूप धारण करती जा रही थी।

क्या आप जानते हैं स्वतन्त्रता के समय भारत की केवल 15 प्रतिशत आबादी पढ़ना-लिखना जानती थी। हर तीन बच्चों में से एक का प्राथमिक स्कूल में दाखिला होता था।

1. शिक्षा और संविधान—हमारे संविधान निर्माताओं ने इस स्थिति के घातक परिणामों और इससे बचने की प्रबल आवश्यकता भली-भांति जान-समझ ली थी। इसीलिये तो उन्होंने संविधान में व्यवस्था की कि, "राज्य (यानी सरकार) इस संविधान के लागू होने के बाद के दस वर्षों की अवधि में सभी बच्चों को चौदह वर्ष की उम्र तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायेगा।" इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में बाद में किये गये प्रयासों का उद्देश्य सभी बच्चों, युवाओं और वयस्कों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना था। राष्ट्र के विकास के जो प्रयास किये गये, उनका उद्देश्य देश में सामाजिक-आर्थिक बदलाव लाना तथा एक ऐसी नयी सामाजिक व्यवस्था कायम

नोट

करना था जो लोकतन्त्र, सामाजिक न्याय और धर्मनिरपेक्षता पर आधारित हो। यह महसूस किया गया कि प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में आम आदमी की भागीदारी के बिना न्यायोचित और समतामूलक समाज की स्थापना करना सम्भव नहीं होगा। यह बात भी महसूस की गयी कि विकास कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वयन जनता की सक्रिय भागीदारी पर निर्भर करेगा। आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए जनता को ज्ञान, कौशल, मूल्यों और नयी दृष्टि से सुसज्जित करना होगा।

देश में 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को सन् 1960 तक प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के बारे में जो संवैधानिक निर्देश जारी हुआ था, वह अभी तक पूरा नहीं हो पाया है। लेकिन इस अवधि में विभिन्न वर्गों की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की सही-सही पहचान कर ली गयी है। बुनियादी ढांचे सम्बन्धी सुविधाओं और विभिन्न सामाजिक वर्गों को इसके दायरे में लाने के कार्य में कई गुना बढ़ोत्तरी हुई है। 1951 से भारत की प्राथमिक शिक्षा प्रणाली में भारी बढ़ोत्तरी हुई है, यह दुनिया की सबसे बड़ी प्रणालियों में से एक हो गयी है।

2. अधूरे कार्य—प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में इस विस्तार के बावजूद सभी को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य पूरा नहीं हो पाया है। जनसंख्या में वृद्धि और आर्थिक कठिनाइयों की वजह और संसाधनों और आवश्यकताओं का संतुलन गड़बड़ा गया है। ऐसे स्कूलों की संख्या बहुत ज्यादा है जिनकी कोई इमारत नहीं है और जिनके पास बच्चों को खेलने के मैदान भी नहीं है। अध्यापकों के ठीक से प्रशिक्षित न होने और उनमें अपने काम के प्रति लगन के अभाव, प्रबन्ध व्यवस्था में कमी तथा छात्रों को कोई प्रेरणा न देने वाले माहौल की वजह से स्कूली पढ़ाई पूरी न कर पाने वाले बच्चों की संख्या चिन्ताजनक रूप से बढ़ गयी है।

आज जिस बात की ज्यादा जरूरत है, वह यह है कि हम अपने शैक्षिक प्रयास के लिये आवश्यक संसाधनों की स्पष्ट रूपरेखा अपने मन में बना लें ताकि सभी बच्चों की पढ़ाई-लिखाई की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। शिक्षा के प्रसार से कुछ ऐसी उलझनें भी उठ खड़ी हुई हैं जिन्हें दूर करना जरूरी हैं।

अध्यापकों के प्रशिक्षण और लगन की कमी के साथ-साथ काम के बोझ से चरमराती प्रबन्ध व्यवस्था और अनाकर्षक स्कूली माहौल के कारण शिक्षा प्रणाली में विस्तार के रूप में हुई पहल अधूरी रह गयी है। दूर-दराज के क्षेत्रों में अध्यापकों की कमी, स्कूलों में होने वाली अनियमितताएँ और स्कूली बच्चों के दायरे से बाहर हैं। इसके अलावा कुछ विशेष वर्गों की विशेष आवश्यकताएँ हैं। सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से लड़कियों को पढ़ाई-लिखाई की बजाय घर-गृहस्थी के कामकाज में लगा दिया जाता है। कई बच्चों को कच्ची उम्र में ही अपनी रोजी-रोटी कमाने पर मजबूर होना पड़ता है। स्कूल की दूरी और भौगोलिक स्थिति की वजह से भी बच्चों को पढ़ाई-लिखाई के समान अवसर नहीं मिल पाते। दूर दराज के ग्रामीण, जनजातीय, रेगिस्तानी इलाकों के बच्चे भी स्कूल नहीं आ पाते। लड़कियों, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों व कमजोर वर्गों में और बाल मजदूरों की प्राथमिक शिक्षा में भागीदारी सबसे अधिक चिन्ता का विषय है, प्राथमिक शिक्षा को सर्व-सुलभ बनाने में सबसे बड़ी बाधा इन्हीं को लेकर है। जो बच्चे प्राथमिक शिक्षा की सभी सीढ़ियाँ पार कर चुके होते हैं, वे भी पढ़ने-लिखने का निर्धारित स्तर प्राप्त नहीं कर पाते। अध्यापन का अनाकर्षक तरीका और भारी-भरकम पाठ्यक्रम को रटकर याद करने से बच्चों में वह अनिवार्य मौलिक क्षमता विकसित नहीं हो पाती जिससे वयस्क होने पर कौशल में सुधार हो सके।

3. खाई कैसे पाटी जाए—स्कूलों और उनके पाठ्यक्रम का जीवन के लिए उपयोगिता की दृष्टि से कोई महत्व न होने के कारण समाज प्राथमिक शिक्षा से दूर होता जा रहा है। वर्तमान शैक्षिक ढांचे और समाज की आवश्यकता तथा आकांक्षा के बीच के अन्तर ने प्राथमिक शिक्षा को बेअसर बना दिया है। जीवन स्तर को सुधारने और लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करने में प्राथमिक शिक्षा की जो भूमिका होनी चाहिये, उसे निभाने में यह विफल रही है। प्राथमिक शिक्षा की नयी नीति में इस अन्तर को दूर करने पर विशेष बल दिया जाना चाहिये। इस समस्या का एक अन्य चिन्ताजनक पक्ष यह है कि 6 से 14 वर्ष की उम्र के बच्चे बहुत बड़ी संख्या में स्कूली शिक्षा से वंचित हैं। इनमें मजदूरी करने वाले बच्चे, घर-गृहस्थी के कामकाज या घरेलू व्यवसाय में मदद करने वाले बच्चे (विशेष रूप से लड़कियाँ) और ऐसे इलाकों के बच्चे शामिल हैं जो स्कूल की सुविधा के दायरे से बाहर हैं। इस समस्याग्रस्त

नोट

वर्ग के लोगों की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। यह बात सही है कि इनमें से सभी औपचारिक शिक्षा वाले स्कूलों में पढ़ने नहीं जा सकते, इसलिये उनके लिए वैकल्पिक व्यवस्था करना आवश्यक होगा। केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने 1974 में स्कूल जाने में असमर्थ बच्चों को अंशकालीन (पार्ट टाइम) शिक्षा के माध्यम से पढ़ना-लिखना सिखाने की आवश्यकता पर जोर दिया था। बोर्ड का कहना था कि सबको शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य सिर्फ औपचारिक शिक्षा प्रणाली पर निर्भर रहकर पूरा नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह प्रवेश का सिर्फ एक रास्ता है और इसका एक चरण दूसरे चरण से जुड़ा हुआ है। इसमें पढ़ाने वाले अध्यापक पूर्ण-कालिक पेशेवर अध्यापक होते हैं। बोर्ड ने सिफारिश की थी वर्तमान प्रणाली में आमूल परिवर्तन किया जाये ताकि बच्चे किसी भी चरण में इसमें प्रवेश पा सकें। जो बच्चे किसी वजह से पूरे समय के लिए स्कूल जाने में असमर्थ हैं, उनके लिये अंशकालीन शिक्षा के लिए व्यापक कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए। 'सबको प्राथमिक शिक्षा' के बारे में केन्द्र सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने 1978 में जो कार्यदल गठित किया था, उसने **"या तो पूर्णकालिक शिक्षा, या फिर कोई शिक्षा नहीं"** की नीति में बड़े परिवर्तन की सिफारिश की। कार्यदल ने जो नया आदर्श वाक्य सुझाया, उसके अनुसार 6 से 14 वर्ष तक की उम्र के हर बच्चे को जहाँ तक सम्भव हो पूर्णकालिक आधार पर और जरूरत पड़ने पर अंशकालीन आधार पर शिक्षा जारी रखनी चाहिए। लेकिन अंशकालीन शिक्षा प्रणाली में न्यूनतम जानकारी के स्तर-साक्षरता, गणितीय क्षमता तथा सामाजिक और नागरिक उत्तरदायित्वों के बारे में जागरूकता में कोई कमी नहीं आनी चाहिए। इस वैकल्पिक शिक्षा प्रणाली का पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसमें इसमे आगे पढ़ाई जारी रखने की सम्भावना बनी रहे। अनौपचारिक और अंशकालिक शिक्षा केन्द्रों के रूप में इन सिफारिशों को लागू किया गया। ये केन्द्र ऐसे स्थानों पर और ऐसे समय चलाए जायेंगे ताकि ये बच्चों की सुविधा और आवश्यकताओं की दृष्टि से उपयुक्त हों।

4. नई पहल—1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने सबको प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लक्ष्य को **"कम-से-कम समय में"** पूरा करने की अनिवार्यता की ओर ध्यान आकृष्ट कराना था। इसमें सन् 1995 तक देश में 14 वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों को मुफ्त अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का संकल्प लिया गया था। समानता को बढ़ावा देने के लिए 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सभी बच्चों को न सिर्फ शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने, बल्कि जीवन में सफलता के लिए भी बराबर मौका देने की आवश्यकता पर जोर दिया गया था। इसमें स्कूली शिक्षा अधूरी छोड़ देने वाले बच्चों, स्कूल की सुविधा से रहित स्थानों के बच्चों और पूरे समय पढ़ने के लिये स्कूल जाने में असमर्थ मजदूरी करने वाले बच्चों तथा लड़कियों के लिये जिलों में शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान खोलने का फैसला लिया गया और राज्यों की शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषदों को और मजबूत बनाया गया। अब तक 307 जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थानों को मंजूरी दी जा चुकी है और राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषदों को मजबूत बनाने के कार्यक्रम को अंतिम रूप दिया जा रहा है।

जिला और शिक्षा प्रशिक्षण संस्थानों की परिकल्पना जिला स्तर के संसाधन केन्द्रों के रूप में की गयी है। भवन, कर्मचारी और उपकरणों की दृष्टि से ये संस्थान पूरी तरह सुसज्जित होंगे। इन्हें औपचारिक शिक्षा देने वाले स्कूलों के अध्यापकों के सेवा-पूर्व और सेवाकालीन, दोनों तरह के प्रशिक्षण के साथ-साथ गैर-औपचारिक तथा प्रौढ़ शिक्षा प्रणाली के अनुदेशकों के प्रशिक्षण की पूरी जिम्मेदारी सौंपी गयी है। यही इन्हीं, इन संस्थानों में शैक्षिक टेक्नोलाजी, पाठ्यक्रम और अनुदेश सामग्री विकास तथा आयोजना और प्रबन्ध जैसी पूर्ण शाखाएँ होंगी। जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान आवासीय संस्थाएँ हैं जिनका उद्देश्य आज की राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के संदर्भ में अत्यन्त आवश्यक सांस्कृतिक विरासत और मूल्यों से सम्पन्न अध्यापक तैयार कर जिले का पूर्ण विकास करना है।

आठवीं योजना के ऊपर बताये गये तीनों प्रमुख कार्यक्रमों को जारी रखा जाएगा। आपरेशन ब्लैक बोर्ड अपने वर्तमान रूप में ही जारी रखा जाएगा लेकिन इसके तहत 3 कमरों और 3 अध्यापकों की व्यवस्था की जाएगी तथा उच्च प्राथमिक स्कूलों को भी इसके दायरे में लाया जायेगा। गैर-औपचारिक शिक्षा कार्यक्रम को भी और मजबूत बनाया

नोट

जा रहा है और इसके अन्तर्गत प्रबन्ध व्यवस्था तथा तकनीकी संसाधनों की दृष्टि से सुधार किये जा रहे हैं। अधिक संख्या में जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किये जायेंगे। इन्हें जल्द-से-जल्द चालू कर दिया जायेगा। इन सब से आठवीं योजना के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये महत्त्वपूर्ण संसाधन उपलब्ध हो जायेंगे। इसके आलावा सीखने के न्यूनतम स्तर और सूक्ष्म स्तर की आयोजना के बारे में केन्द्र द्वारा प्रायोजित अलग कार्यक्रम शुरू किये जाने की सम्भावना है।

5. सूक्ष्म स्तरीय आयोजना—माइक्रो प्लानिंग यानी **सूक्ष्म स्तरीय, आयोजना** का उद्देश्य **परिवार और बच्चे को ध्यान में रखकर कार्यक्रम** तैयार करना है, ताकि प्रत्येक बच्चा नियमित रूप से अपने लिये सुविधाजनक स्थान पर पाँच साल तक स्कूल या गैर-औपचारिक शिक्षा केन्द्र में शिक्षा प्राप्त करता रहे। इस तरह की सघन कार्यक्रम-नीति का आधार, (1) आम आदमी की भागीदारी वाली योजनाएँ बनाने सम्बन्धी वह धारणा है जिसमें समाज को अपनी आवश्यकताओं का पता लगाने की जिम्मेदारी खुद उठाने के लिए प्रेरित किया जाता है और कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिये निर्णायक भूमिका सौंपी जाती है। (2) इसका आधार प्रशासनिक कामकाज का विकेन्द्रीकरण करना भी है, ताकि स्थानीय शैक्षिक कर्मी अपने-अपने क्षेत्र के बारे में निर्णय कर सकें तथा भली प्रकार समूची प्रणाली समाज की मांग के अनुरूप कार्य कर सकें।

सूक्ष्म स्तरीय आयोजना के लिए क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के अनुसार योजनाएँ बनाना भी जरूरी है। इसमें क्षेत्र का अभिप्राय राजस्व गांव से है लेकिन व्यवहार में ब्लाक, तालुका या जिले को इकाई बनाकर योजना बनायी जाती है। इस क्षेत्र में सूक्ष्म स्तरीय आयोजना को जिन उपायों से कार्यरूप दिया जायेगा, वे हैं—(1) समाज की भागीदारी हासिल करना, (2) शैक्षिक प्रशासन का विकेन्द्रीकरण, (3) स्थानीय स्तर की प्रशासनिक और संसाधन सहायक प्रणाली मजबूत बनाकर उसे नयी दिशा प्रदान करना, (4) इलाके की शैक्षिक आवश्यकताओं का पता लगाना, (5) दाखिले के लायक सभी बच्चों को स्कूलों में भर्ती कराना और जो स्कूल जाने में असमर्थ हों उनके लिए गैर-औपचारिक शिक्षा के कार्यक्रमों अथवा अन्य नये सहायक उपायों के जरिये शिक्षा उपलब्ध कराना, (6) यह सुनिश्चित करना कि सभी बच्चे नियमित रूप से वास्तव में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करते रहें और (7) स्कूलों या गैर-औपचारिक शिक्षा केन्द्रों में सुधार के उपाय करना ताकि पढ़ाई-लिखाई की कारगर व्यवस्था हो सके।

स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करने की प्रक्रिया में सुधार की नीति के अन्तर्गत इस बार पर ध्यान दिया जाता है कि कक्षाओं में क्या हो रहा है। यह प्रयास किया जाता है कि गुणवत्ता और समानता जैसे गुण शिक्षा प्रणाली में मौजूद रहें। इस नीति का उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा के सम्भावित शैक्षिक लक्ष्यों को तर्कसंगत, यथार्थ और व्यावहारिक स्तर पर निर्धारित करना है। नीति में ऐसे उपाय अपनाने की सिफारिश की गयी है। जिससे इस बात की पक्की व्यवस्था हो सके कि स्कूली शिक्षा उम्र पूरी करने वाले सभी बच्चों ने निर्धारित लक्ष्य प्राप्त कर लिये हैं। ये लक्ष्य स्कूली शिक्षा और गैर-औपचारिक शिक्षा कार्यक्रम के तहत पढ़ाई-लिखाई के न्यूनतम स्तर को भी निर्धारित करते हैं।

स्कूलों में न्यूनतम शिक्षा लागू करने के लिए मुख्य कदम ये होंगे—(1) छात्रों के सीखने के वर्तमान-स्तर का निर्धारण; (2) किसी क्षेत्र के लिए न्यूनतम शिक्षा स्तर का निर्धारण और वह समय सीमा जिसमें इस लक्ष्य को प्राप्त करना है; (3) शिक्षण के तौर-तरीकों में बदलाव उसके स्थान पर योग्यता पर आधारित तौर-तरीकों का इस्तेमाल; (4) छात्रों द्वारा सीखी गयी बातों के मूल्यांकन के लिए व्यापक कार्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा और जरूरत पड़ने पर उनमें संशोधन; (5) न्यूनतम शिक्षा स्तर प्राप्त करने के लिए भौतिक सुविधाओं; शिक्षक प्रशिक्षण और मूल्याकंन आदि के जरिये संसाधन बढ़ाकर सीखने के स्तर में सुधार। प्रयास यह होना चाहिये कि बच्चों के पढ़ना-लिखना सीखने पर नजर रखी जाये और जहां कुछ कमी रह गयी हो, वहां संसाधन बढ़ाये जायें। जिन क्षेत्रों में इसकी जरूरत अधिक महसूस की जा रही हो, वहाँ भी विकास की गति बढ़ाई जानी चाहिये। इस तरह असमानताएँ दूर की जा सकेंगी, शिक्षा के स्तर में समानता लाई जा सकेगी, संसाधनों पर बेहतर नियन्त्रण के जरिये गुणवत्ता बढ़ाई जा सकेगी।

6. भावी सम्भावनाएँ—आठवीं योजना (1992-97) में प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी नीति में समन्वित नीति की बजाय क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उसके अनुसार नीति तैयार करने पर जोर दिया गया। इसके अन्तर्गत सबको प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए लोगों की आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा गया है।

नोट

यह इस तथ्य का नतीजा है कि प्रत्येक राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश में ऐसे जिले और क्षेत्र होते हैं जिनमें स्कूली बच्चों की संख्या, साक्षरता के स्तर, स्कूल जाने वाली लड़कियों की संख्या आदि की दृष्टि से व्यापक असमानताएँ रहती हैं। कई जगह तो सबको शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य पूरा होने को है जबकि शैक्षिक दृष्टि से अग्रणी राज्यों में भी ऐसे जिले है। जो काफी पिछड़े हुए हैं। इस तरह की असमानता दूर करने के लिये राज्य स्तरीय आयोजना अनिवार्य रूप से कारगर सिद्ध नहीं होगी और इससे असमानताएँ कम नहीं की जा सकेंगी। जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, आवश्यकता इस बात की है कि योजनाएँ क्षेत्र विशेष और समुदाय विशेष की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनायी जाएँ। इसलिये भविष्य में सबको शिक्षा उपलब्ध कराने के कार्यक्रम में जिले और ब्लाक के स्तर पर योजनाएँ बनाने पर बल दिया जायेगा। इनमें क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के अनुसार समय और उत्तरदायित्वों का निर्धारण किया जा सकता है। स्पष्ट है कि ये योजनायें बुनियादी नीति के तहत ही बनायी जायेंगी और इनके प्रभावी क्रियान्वयन में केन्द्र द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों तथा राज्य स्तर के प्रयासों के लिये उपलब्ध कराये जाने वाले संसाधनों को ध्यान में रखा जायेगा।

इन परियोजनाओं का लक्ष्य शिक्षा सुविधाओं में वर्तमान असमानताओं को दूर करना और औपचारिक स्कूली शिक्षा से वंचित समुदाय के लिए वैकल्पिक नीतियां तैयार करना है। इनमें स्कूलों के शैक्षिक माहौल और उनके कामकाज में व्यापक सुधार तथा स्कूलों, गैर-औपचारिक शिक्षा केन्द्रों और स्वयंसेवी संस्थाओं के स्कूलों को चलाने में समाज की भागीदारी बढ़ाने के लिये ईमानदारी से प्रयास करने की भी व्यवस्था होगी।

उच्च साक्षरता वाले जिलों में सबको प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लक्ष्य में सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि शैक्षिक प्रबन्ध में कितना सुधार सम्भव हो पाता है और विभिन्न कार्य में कितना तालमेल बढ़ाया जा सकता है। इसी प्रकार कार्यक्रमों पर नजर रखने वाली प्रणाली में सुधार और विभिन्न कार्यक्रम लागू करने के कार्य की बेहतर निगरानी भी लक्ष्य की प्राप्ति में काफी सहायक होगी। न्यूनतम शैक्षिक ज्ञान के स्तर के कार्यक्रम को गम्भीरता से लागू किया जाना चाहिये। साक्षरता की नीची दर वाले जिलों में शैक्षिक सुविधाओं को सुलभ बनाने और अधिक-से-अधिक बच्चों को कार्यक्रमों में शामिल करने, विशेष रूप से ग्रामीण और जनजातीय लड़कियों को इसके दायरे में लाने पर जोर दिया जायेगा। ऐसे जिलों में सूक्ष्म स्तरीय आयोजना की नीति काफी सहायक हो सकती है।

अगर बहुत छोटे बच्चों की देखभाल और शिक्षा के कार्यक्रमों का विस्तार कर दिया जाये और प्राथमिक स्कूलों और अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों से उनका तालमेल बना दिया जाये तो शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े वर्गों के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने में आने वाली अड़चनों को काफी कम किया जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा के प्रसार में इनका लाभ उठाया जाना चाहिये।

राष्ट्र के सामने एक बार फिर एक सुविचारित कार्य योजना है। इसे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में और दूर-दराज के इलाकों में जनता के पूर्ण सहयोग से लागू करने के लिये स्थायी क्रियान्वयन नीति विकसित की जानी चाहिये। हमारी समूची व्यवस्था जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिये। साथ ही जनता को भी अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में जागरूक होना चाहिये। सबको प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए जो भी प्रयास किये जाये उनमें राष्ट्र और जनता की पूरी भागीदारी होनी चाहिये और इसमें उन्हें एक दूसरे की मदद करनी चाहिये। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए स्कूली शिक्षा की मौजूदा प्रणाली में दृष्टिकोण सम्बन्धी परिवर्तन लाना जरूरी होगा। प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिये मूल्यपरक शिक्षा के साथ-साथ हमारे अध्यापकों में भी आमूल परिवर्तन आवश्यक होगा। इससे पाठ्यक्रम में भी वांछित परिवर्तन किये जा सकेंगे और स्कूल का माहौल बच्चों के लिये जीवन्त और आनन्ददायक अनुभव बन सकेगा।

टास्क महात्मा गांधी ने बुनियादी तालीम कार्यक्रम का प्रस्ताव कब प्रस्तुत किया?

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

1. महात्मा गाँधी भी शिक्षा को "चेतना के विकास और समाज" के पुनर्निर्माण का .... मानते थे।
2. .... निर्देश था कि 14 वर्ष तक के उम्र के बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना अनिवार्य है।
3. प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में आम आदमी की भागीदारी के बिना .... समाज की स्थापना करना सम्भव नहीं।
4. भारत की प्राथमिक शिक्षा प्रणाली .... प्रणालियों में से एक है।
5. "या तो पूर्णकालिक शिक्षा, या फिर कोई शिक्षा नहीं" की नीति में परिवर्तन की सिफारिश .... में गठित कार्यदल ने किया।

28.3 सारांश (Summary)

- सार्वभौमीकरण का अर्थ है, "किसी विशेष संस्कृति के सभी नागरिकों की संबद्ध अनुक्रियायें (Conditioned responses) जो विचार, स्वभाव तथा जीवन शैली को निबद्ध करती है।" इस दृष्टि से किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके शिक्षित नागरिकों पर निर्भर करती है।
- 1947 में भारत में 15% साक्षरता थी जिस देश में 85% निरक्षर हों, उसे प्रगति के पथ पर ले जाने के लिए शिक्षा ही सशक्त माध्यम थी, इसीलिए संविधान में 6-11 आयु वर्ग के सभी बालक-बालिकाओं की सार्वभौम रूप से निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की गई, सार्वभौम शिक्षा का लक्ष्य 1960 ई. तक प्राप्त हो जाना चाहिये था किन्तु साधनों के अभाव, जनसंख्या वृद्धि, पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े, तथा राजनीतिक दांवपेंचों ने अभी तक इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं होने दिया।
- विकासशील तथा अविकसित देशों के सामने संसाधनों की कमी, जनसंख्या वृद्धि एवं जनसंख्या की अधिकता तथा अधिकांश देशों की दीर्घकालीन औपनिवेशिकता के परिणामस्वरूप सभी के लिये शिक्षा उपलब्ध कराना अत्यन्त कठिन कार्य रहा है।
- सभी के लिये शिक्षा के लक्ष्य को पूरा करने के उपायों को खोजने तथा शिक्षा के लिये सामूहिक वचनबद्धता को दृढ़ करने के लिये विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले सभी देशों—भारत, ब्राजील, चीन, मेक्सिको, नाईजीरिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश, इण्डोनेशिया तथा मिस्र का प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन भारत में सम्पन्न हुआ था।
- इन देशों ने साक्षरता के लिए स्कूली शिक्षा का प्रसार तथा अनौपचारिक शिक्षा, प्रौढ़ साक्षरता आदि कार्यक्रम चलाए हैं। भारत ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा आदि के माध्यम से सभी को शिक्षा प्रदान करने का प्रयास किया तथा 1992 में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकता, प्रौढ़ साक्षरता, लड़कियों तथा अन्य उपेक्षित वर्गों को बुनियादी शिक्षा देने के लिए कार्यक्रमों में व्यापक सुधार करके तेजी लाई गई।
- इण्डोनेशिया ने साक्षरता के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास किया है। मिस्र ने प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रम में अत्यधिक सफलता प्राप्त की है। चीन जैसे सर्वाधिक जनसंख्या वाले देश ने भी साक्षरता के लिए अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये हैं।
- सभी को साक्षर करने में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। मुख्य रूप से जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ संसाधनों की कमी महत्वपूर्ण कारण है।
- 'सभी के लिए शिक्षा' सम्मेलन में विशेष रूप में लड़के एवं लड़कियों के भेद को समाप्त करना, महिलाओं एवं लड़कियों को बेहतर शिक्षा की व्यवस्था करना, शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए संसाधन जुटाना, मौलिक शिक्षा की उत्कृष्टता एवं गुणवत्ता को श्रेष्ठतर बनाने के लिए शैक्षिक सुधार करने तथा शिक्षा के साथ स्वास्थ्य, जनसंख्या एवं पर्यावरण आदि महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श हुआ।

नोट

- हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के नेताओं ने देश की आजादी से काफी पहले राष्ट्रीय विकास के माध्यम के रूप में शिक्षा के महत्व को पहचान लिया था। वे यह जान चुके थे कि आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिये शिक्षा बहुत जरूरी है। लोगों, विशेष रूप से कमजोर वर्गों के लोगों के जीवन-स्तर में सुधार के लिए शिक्षा काफी कारगर साधन सिद्ध हो सकती है। महात्मा गाँधी भी शिक्षा को "चेतना के विकास और समाज के पुनर्निर्माण का बुनियादी हथियार" मानते थे।
- 1947 में देश की आजादी के समय प्रारम्भिक शिक्षा का स्तर बिल्कुल संतोषजनक नहीं था। अंग्रेजों द्वारा थोपी गयी शिक्षा प्रणाली कुछ खास लोगों के लिए थी, जिसने शिक्षित और निरक्षरों के बीच बहुत बड़ी खाई पैदा कर दी।
- हमारे संविधान निर्माताओं ने इस स्थिति के घातक परिणामों और इससे बचने की प्रबल आवश्यकता भली-भांति जान-समझ ली थी। इसीलिये तो उन्होंने संविधान में व्यवस्था की कि, "राज्य (यानी सरकार) इस संविधान के लागू होने के बाद के दस वर्षों की अवधि में सभी बच्चों को चौदह वर्ष की उम्र तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायेगा।"
- बुनियादी ढांचे सम्बन्धी सुविधाओं और विभिन्न सामाजिक वर्गों को इसके दायरे में लाने के कार्य में कई गुना बढ़ोत्तरी हुई है। 1951 से भारत की प्राथमिक शिक्षा प्रणाली में भारी बढ़ोत्तरी हुई है, यह दुनिया की सबसे बड़ी प्रणालियों में से एक हो गयी है।
- राष्ट्र के सामने एक बार फिर एक सुविचारित कार्य योजना है। इसे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में और दूर-दराज के इलाकों में जनता के पूर्ण सहयोग से लागू करने के लिये स्थायी क्रियान्वयन नीति विकसित की जानी चाहिये। हमारी समूची व्यवस्था जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिये। साथ ही जनता को भी अपने बच्चों की शिक्षा के बारे में जागरूक होना चाहिये।

28.4 शब्दकोश (Keywords)

- **सुविचारित–** सोच-समझकर किया गया कार्य।
- **बुनियादी तालीम–** बुनियादी शिक्षा।

28.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. शिक्षा के वैश्वीकरण से आप क्या समझते हैं? इसकी अवधारणात्मक प्रवृत्तियों की व्याख्या कीजिए।
2. भारतीय संदर्भ में "सभी के लिए शिक्षा" की अवधारणा को समझाइये।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1.	1. सत्य	2. सत्य	3. सत्य
	4. असत्य	5. सत्य	
2.	1. बुनियादी हथियार	2. प्रारम्भ में संवैधानिक	3. न्यायोचित और समतामूलक
	4. दुनिया की सबसे बड़ी	5. 1972	

28.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*–एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*–डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*–प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।

नोट

इकाई—29: मानवाधिकार की संक्षिप्त सार्वत्रिक ऐतिहासिक घोषणा (Brief Historical Universal Decleration of Human Rights)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
29.1 मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human rights)
29.2 भारतीय कानून में मानवाधिकार अधिनियम (Human rights act in Indian Legislation)
29.3 सारांश (Summary)
29.4 शब्दकोश (Keywords)
29.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
29.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- मानवाधिकार की सार्वभौम घोषणा और भारतीय कानून के अंतगर्त मानवाधिकार अधिनियम की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

"मानव के मौलिक अधिकारों, मानव के व्यक्तित्व के गौरव एवं महत्त्व में तथा पुरुष और स्त्रियों के समान अधिकारों में आस्था प्रकट की जाती है।"

(1) **धारा 1—**"संयुक्त राष्ट्र का उद्देश्य मानवाधिकारों के प्रति सम्मान को प्रोत्साहन देना है तथा जाति, लिंग, भाषा या धर्म के बिना किसी भेदभाव के मौलिक अधिकारों को बढ़ावा देना तथा प्रोत्साहित करना।"

(2) **धारा 13—**"महासभा के द्वारा जाति, लिंग, भाषा का धर्म के भेदभाव के बिना सभी को मानवाधिकार तथा मूलभूत स्वतन्त्रताओं की प्राप्ति में सहायता दी जाएगी।"

(3) **धारा 55—**"संयुक्त राष्ट्र संघ जाति, लिंग, भाषा तथा धर्म के भेदभाव के बिना सभी के लिये मानवाधिकार तथा मूलभूत स्वतन्त्रताओं को प्रोत्साहन देगा।"

(4) **धारा 56—**"सभी सदस्य राष्ट्र मानवाधिकारों तथा मानवीय स्वतन्त्रताओं की प्राप्ति के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ को अपना सहयोग प्रदान करेंगे।"

(5) **धारा 62—**"आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् सभी के लिए मानवाधिकारों तथा मूलभूत स्वतन्त्रताओं के प्रति सम्मान की भावना बढ़ाने तथा उनके पालन के सम्बन्ध में सिफारिश करेगी।"

नोट

29.1 मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights)

'मानवाधिकार आयोग' (Human Rights Commission) द्वारा लगभग तीन वर्षों के अथक परिश्रम के उपरान्त 'मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा' का प्रारूप बनकर तैयार हुआ। 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने कुछ संशोधनों के साथ इस प्रारूप को स्वीकार कर लिया है। इसी दिन मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणा-पत्र जारी कर दिया गया।

धारा 1. "सभी मनुष्य जन्म से स्वतन्त्र हैं और अधिकार एवं प्रतिष्ठा में एक समान हैं। उनमें विवेक और बुद्धि है, इसलिए प्रत्येक मनुष्य को दूसरों के प्रति भ्रातृत्व का व्यवहार करना चाहिए।"

धारा 2. "प्रत्येक मनुष्य बिना जाति, वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा सामाजिक उद्‌गम, जन्म या किसी दूसरे भेदभाव के, इस घोषणा में व्यक्त किये हुए सभी अधिकारों और स्वतन्त्रताओं का उपयोग का अधिकारी है। इसके अतिरिक्त किसी स्थान या देश के साथ, जिसका वह व्यक्ति नागरिक है, राजनीतिक स्तर के आधार पर भेद नहीं किया जाएगा, चाहे वह देश स्वतन्त्र हो, सुरक्षित हो या मानवाधिकार से हीन हो अथवा किसी अन्य प्रकार से सीमित सम्प्रभु हो।"

धारा 3. "प्रत्येक मनुष्य को जीवन, स्वतन्त्रता और सुरक्षा का अधिकार है।"

धारा 4. "कोई भी व्यक्ति दासता अथवा गुलामी में नहीं रखा जा सकेगा। दासता और दास व्यवस्था सभी क्षेत्रों में सर्वथा निषिद्ध होगी।"

धारा 5. "किसी भी व्यक्ति को अमानुषिक दण्ड नहीं दिया जाएगा और न ही उसके प्रति क्रूरतापूर्ण व अपमानजनक व्यवहार ही किया जाएगा।"

धारा 6. "प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार होगा कि वह प्रत्येक स्थान पर कानून के अधीन व्यक्ति माना जाए।"

धारा 7. "कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान होंगे और सभी बिना किसी भेदभाव के कानून की सुरक्षा प्राप्ति के अधिकारी हैं।"

धारा 8. "प्रत्येक व्यक्ति को संविधान या कानून द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों को भंग करने वाले कार्यों के विरुद्ध, राष्ट्रीय न्यायालयों से संरक्षण पाने का अधिकार होगा।"

धारा 9. "किसी व्यक्ति को अवैधानिक ढंग से न तो बन्दी बनाया जाएगा, न कैद किया जाएगा और न ही निष्कासित किया जाएगा।"

धारा 10. "प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्रता और निष्पक्ष न्यायालय द्वारा अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों तथा अपने विरुद्ध लगाए गए किसी अपराध के निर्णय के लिए उचित तथा खुले रूप से सुनवाई करवाने का समान रूप से अधिकार है।"

धारा 11. "प्रत्येक व्यक्ति, जिस पर दण्डनीय अपराध का आरोप है, उस समय तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि उसे एक खुले मुकदमे की सुनवाई के पश्चात् अपराधी सिद्ध न कर दिया जाए। उसे अपनी निर्दोषता प्रमाणित करने का पूर्ण अवसर दिया जाएगा।"

क्या आप जानते हैं मानवाधिकारों के सार्वभौम घोषणा पत्र में 30 धाराएँ हैं।

धारा 12. "किसी भी पारिवारिक गृहस्थी मूलक और पत्र-व्यवहार की गोपनीयता में मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा और न उसके सम्मान व प्रतिष्ठा को ही क्षति पहुँचाई जा सकेगी।"

धारा 13 (*i*) "प्रत्येक व्यक्ति का अपने राज्य की सीमा के भीतर आवागमन और निवास की स्वतन्त्रता का अधिकार होगा।"

(*ii*) "प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी देश को, जिसमें उसका अपना देश भी सम्मिलित है, छोड़ने का अधिकार है और पुन: अपने देश में लौटने का भी अधिकार है।"

धारा 14 (*i*)"प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यक कष्ट व अपमान से बचने के लिये किसी भी देश में शरण लेने और सुखपूर्वक रहने का अधिकार है।"

(*ii*) "गैर राजनीतिक अपराध या संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों व उद्देश्यों के विरुद्ध होने वाले कार्यों के फलस्वरूप मुख्यतया दण्डित व्यक्ति उपयुक्त अधिकार से वंचित रहेंगे।"

धारा 15 (*i*)"प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार प्राप्त होगा।"

(*ii*) "किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से उसकी राष्ट्रीयता से वंचित नहीं किया जा सकेगा और न उसको राष्ट्रीयता परिवर्तन के मान्य अधिकारों से ही वंचित किया जाएगा।"

धारा 16 (*i*)"वयस्क स्त्री और पुरुष को जाति, राष्ट्रीयता अथवा धर्म की सीमा के बगैर, विवाह करने तथा परिवार बसाने का अधिकार है। उन्हें विवाह करने का, वैवाहिक जीवन में रहने और वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद के समान अधिकार प्राप्त हैं।"

(*ii*) "विवाह के इच्छुक स्त्री-पुरुष की पूर्ण स्वतन्त्रता और स्वीकृति पर ही विवाह सम्पन्न होगा।"

(*iii*) "परिवार समाज की प्राकृतिक एवं मौलिक सामूहिक इकाई है और उसे समाज और राज्य द्वारा संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार है।"

धारा 17 (*i*)"प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अथवा दूसरों के साथ सम्पत्ति रखने का अधिकार है।"

(*ii*) "कोई भी व्यक्ति अपनी सम्पत्ति से बलात् निरधिकृत नहीं किया जा सकता है।"

धारा 18. "प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अनुभूति तथा धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त है।"

धारा 19. "प्रत्येक व्यक्ति को मत और विचार अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता है।"

धारा 20 (*i*) "प्रत्येक व्यक्ति को शान्तिपूर्ण ढंग से सभा करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है।"

(*ii*) "किसी भी व्यक्ति को बलात् किसी संस्था में सम्मिलित होने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है।

धारा 21 (*i*)"प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के प्रशासन में स्वतन्त्रतापूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा भाग लेने का अधिकार है।"

(*ii*) "प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकारी सेवाओं में अपनी योग्यता के बल पर स्थान प्राप्त करने का अधिकार है।"

(*iii*) "जनमत ही प्रशासन शासनाधिकार का आधार होगा और जनमत का निर्णय मतदान द्वारा किया जाएगा।"

धारा 22. "प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार प्राप्त होगा।"

धारा 23 (*i*)"प्रत्येक व्यक्ति को काम करने, इच्छानुसार अपनी जीविका हेतु व्यवसाय चुनने, काम की उचित परिस्थितियाँ प्राप्त करने तथा बेकारी से बचने का अधिकार है।।"

(*ii*) "प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव समान कार्य के लिए समान वेतन पाने का अधिकार है।"

(*iii*) "प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्य के लिए समुचित पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार है।"

(*iv*) "प्रत्येक व्यक्ति अपने हितों की सुरक्षा के लिए श्रम संघ गठित करने अथवा उसमें सम्मिलित होने का अधिकारी है।"

नोट

नोट्स जो अपराध, अपराध करने के समय किसी राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत दण्डनीय नहीं था, उसके लिए अपराध के बाद बने हुए कानून द्वारा किसी व्यक्ति को दण्डित नहीं किया जा सकेगा। जो सजा, अपराध करने के समय कानून के अनुसार वैध थी, उससे अधिक सजा भी बाद के बने कानून द्वारा निर्धारित नहीं की जा सकेगी।

धारा 24 "प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और अवकाश का अधिकार है।"

धारा 25 (*i*) "प्रत्येक व्यक्ति को अपना समुचित जीवन स्तर बनाये रखने का अधिकार प्राप्त है।"

(*ii*) "प्रत्येक माता को शिशु के मातृत्व और शिशु की विशेष देखभाल तथा मातृत्व सहायता प्राप्त करने का अधिकार है।"

धारा 26. "प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है। शिक्षा का लक्ष्य मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास और मानव अधिकारों एवं मौलिक स्वतन्त्रताओं की प्रतिष्ठा को बढ़ाना होगा।"

धारा 27. "प्रत्येक व्यक्ति को सांस्कृतिक अधिकार प्राप्त हैं। प्रत्येक व्यक्ति सांस्कृतिक क्रिया-कलापों में बिना किसी भेदभाव के भाग ले सकता है और अपनी प्रतिभा से लाभान्वित हो सकता है।"

धारा 28. "प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकारी है जिससे इस घोषणा में उल्लेखित अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की पूर्ण प्राप्ति हो सके।

धारा 29 (*i*) "समाज के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के कुछ ऐसे कर्त्तव्य हैं जिनके पालन से ही उसके व्यक्तित्व का स्वतन्त्र एवं पूर्ण विकास सम्भव है।"

(*ii*) "प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकारों और स्वतन्त्रताओं का उपयोग करने में उन सीमाओं के अन्दर रहना होगा जो कानून द्वारा निर्धारित की गई है।"

(*iii*) "संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों और सिद्धान्तों के विरुद्ध किन्हीं अधिकारों व स्वतन्त्रताओं का उपभोग अमान्य है।"

धारा 30. "इस घोषणा पत्र में उल्लिखित किसी भी आदेश के ऐसे अर्थ न लगाए जाएँ जिनसे किन्हीं राज्यों के समूह या व्यक्ति को किसी भी ऐसे कार्य में लगाने या करने का अधिकार मिले जिसका इस घोषणा पत्र में वर्णित अधिकारों और स्वतन्त्रताओं में से किसी का भी हनन होता हो।

घोषणा का स्वागत

श्रीमती रूजवेल्ट ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को **'सम्पूर्ण मानव समाज के मैग्नाकार्टा'** की संज्ञा दी। कुछ विद्वानों ने इसे **'मानवतावाद का दमकल'** कहकर पुकारा। **चार्ल्स मलिक** ने लिखा है कि, "यह घोषणा-पत्र प्रस्ताव मात्र न होकर संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का ही एक अंग है।" परन्तु **पाल्मर** व **परकिन्स** ने इस सम्बन्ध में कहा कि, "यह घोषणा केवल आदर्शों का प्रतिपालन है, कानूनी रूप से बाध्य करने वाला कोई समझौता नहीं है, परन्तु यह एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय मसविदा निश्चय ही है।"

टास्क मानवाधिकार का क्या अर्थ है?

नोट

29.2 भारतीय कानून में मानवाधिकार अधिनियम (Human rights Act in Indian Legislation)

भारत के मानवाधिकार

8 जनवरी, 1994 को 44वें गणतन्त्र वर्ष में भारत में संसद द्वारा **'मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993'** (1994 का अधिनियम संख्या 10) पारित किया गया जिसका उद्देश्य मानवाधिकार के संरक्षण के लिए तथा उससे सम्बद्ध मामलों के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग तथा मानवाधिकार न्यायालयों के गठन एवं विविध प्रकार के प्रावधान करना है।

इस अधिनियम की **धारा-2** में मानवाधिकार की परिभाषा दी गई है। मानवाधिकारों का मूल लक्ष्य मानव जीवन और उसकी गरिमा को सुरक्षा प्रदान करना है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)—

1. भारतीय संसद द्वारा मानवाधिकार अधिनियम 1993 अपने .... वर्ष में पारित किया गया।
2. .... ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को सम्पूर्ण मानव समाज के मैग्नाकार्टा की संज्ञा दी।
3. मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा प्रारूप को संयुक्त राष्ट्र संघ ने .... को स्वीकार कर लिया।
4. .... जाति, लिंग भाषा या धर्म के भेदभाव के बिना सभी के लिए मानवाधिकार तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं को प्रोत्साहन देगा।
5. प्रत्येक मनुष्य को ...., स्वतंत्रता और सुरक्षा का अधिकार है।

29.3 सारांश (Summary)

- 'मानवाधिकार आयोग' (Human Rights Commission) द्वारा लगभग तीन वर्षों के अथक परिश्रम के उपरान्त 'मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा' का प्रारूप बनकर तैयार हुआ। 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने कुछ संशोधनों के साथ इस प्रारूप को स्वीकार कर लिया।
- प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यक कष्ट व अपमान से बचने के लिये किसी भी देश में शरण लेने और सुखपूर्वक रहने का अधिकार है।
- वयस्क स्त्री और पुरुष को जाति, राष्ट्रीयता अथवा धर्म की सीमा के बगैर, विवाह करने तथा परिवार बसाने का अधिकार है। उन्हें विवाह करने का, वैवाहिक जीवन में रहने का और वैवाहिक सम्बन्ध विच्छेद के समान अधिकार प्राप्त हैं।
- विवाह के इच्छुक स्त्री-पुरुष की पूर्ण स्वतन्त्रता और स्वीकृति पर ही विवाह सम्पन्न होगा।
- प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अनुभूति तथा धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त है।
- प्रत्येक व्यक्ति को मत और विचार अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता है।
- प्रत्येक माता को शिशु के मातृत्व और शिशु की विशेष देखभाल तथा मातृत्व सहायता प्राप्त करने का अधिकार है।
- प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है। शिक्षा का लक्ष्य मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास और मानव अधिकारों एवं मौलिक स्वतन्त्रताओं की प्रतिष्ठा को बढ़ाना होगा।
- प्रत्येक व्यक्ति को सांस्कृतिक अधिकार प्राप्त हैं। प्रत्येक व्यक्ति सांस्कृतिक क्रिया-कलापों में बिना किसी भेदभाव के भाग ले सकता है और अपनी प्रतिभा से लाभान्वित हो सकता है।

नोट

- संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों और सिद्धान्तों के विरुद्ध किन्हीं अधिकारों व स्वतन्त्रताओं का उपभोग अमान्य है।
- **श्रीमती रूजवेल्ट** ने मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को **'सम्पूर्ण मानव समाज के मैग्नाकार्टा'** की संज्ञा दी। कुछ विद्वानों ने इसे **'मानवतावाद का दमकल'** कहकर पुकारा। **चार्ल्स मलिक** ने लिखा है, "यह घोषणा-पत्र प्रस्ताव मात्र न होकर संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का ही एक अंग है।"
- 8 जनवरी, 1994 को 44वें गणतन्त्र वर्ष में भारत में संसद द्वारा **'मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993'** (1994 का अधिनियम संख्या 10) पारित किया गया जिसका उद्देश्य मानवाधिकार के संरक्षण के लिए तथा उससे सम्बद्ध मामलों के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, राज्य मानवाधिकार आयोग तथा मानवाधिकार न्यायालयों के गठन आदि विविध प्रकार के प्रावधान करना है।

29.4 शब्दकोश (Keywords)

- **सार्वत्रिक**—सार्वभौमिक, भू-मण्डलीकरण, वैश्वीकरण आदि।
- **अवैधानिक**—जो विधिसम्मत न हो।

29.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा से आप क्या समझते हैं? वर्णन कीजिए।
2. मानवाधिकारों की सार्वभौमिकता विश्व समुदाय के लिए वरदान है। विश्लेषण कीजिए।
3. भारतीय संदर्भ में मानवाधिकार के प्रावधानों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. 44वें गणतंत्र 2. श्रीमती रूजवेल्ट 3. 10 दिसम्बर 1948
4. संयुक्त राष्ट्र संघ 5. जीवन।

29.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर.के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई—30: पर्यावरणीय शिक्षा : अवधारणा एवं आवश्यकता (Environmental Education : Concept and Need)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

30.1 पर्यावरणीय शिक्षा का अर्थ, परिभाषा एवं अवधारणा (Meaning, Definition and Concept of Environmental Education)

30.2 पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता (Need of Environmental Education)

30.3 सारांश (Summary)

30.4 शब्दकोश (Keywords)

30.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

30.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- पर्यावरणीय शिक्षा के अर्थ, अवधारणा और आवश्यकता को समझने एवं व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पर्यावरण में वातावरण की गुणवत्ता तथा शिक्षा में व्यक्ति की गुणवत्ता को प्राथमिकता दी जाती है। शिक्षा को विकास की सतत् प्रक्रिया कहते हैं तथा पर्यावरण में आन्तरिक तथा बाह्य सम्पूर्ण परिस्थितियों को सम्मिलित किया जाता है। यह मनुष्य तथा अन्य जीवों की अभिवृद्धि तथा विकास को प्रभावित करती है। प्रत्येक जीव तथा प्राणी का अपना पर्यावरण होता है। मनुष्य का वातावरण भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनैतिक होता है। शिक्षा द्वारा इसकी गुणवत्ता के लिए परिवर्तन तथा सुधार भी किया जाता है जिससे बालकों को अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाया जा सके। मनुष्य तथा बालकों के व्यवहार परिवर्तन में वातावरण का विशेष महत्व है। **वाटसन** मनोवैज्ञानिक का विश्वास है कि वातावरण द्वारा बालक को जैसा चाहे वैसा बनाया जा सकता है। वंशानुक्रम का कोई महत्व नहीं है।

'बर्नाड' ने पर्यावरण तथा शिक्षा के सम्बन्ध को प्रदर्शित किया है शिक्षा की विकास की क्रिया का सम्पादन विद्यालय तथा कक्षा के अन्तर्गत होता है। कक्षा के अन्तर्गत शिक्षक तथा छात्रों के मध्य अन्त:प्रतिक्रिया होती है। शिक्षक कक्षा में प्रकरण की सहायता से क्रियायें करता है जो शाब्दिक तथा अशाब्दिक होती है जिससे सामाजिक तथा भावात्मक वातावरण उत्पन्न होता है। छात्रों को नये अनुभव प्राप्त होते हैं तथा कुछ करने का अवसर मिलता है जिससे वे सीखते हैं तथा अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन होता है। माता-पिता तथा अभिभावक अच्छी शिक्षण संस्थाओं

नोट

में प्रवेश इसलिए दिलाना चाहते हैं कि वहाँ उन्हें उत्तम वातावरण मिल सकेगा। इस प्रकार शिक्षा के विकास की प्रक्रिया का सम्पादन, भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण में होता है।

30.1 पर्यावरणीय शिक्षा का अर्थ, परिभाषा एवं अवधारणा (Meaning, Definition and Concept of Environmental Education)

'पर्यावरण शिक्षा' एक नया क्षेत्र तथा नया प्रत्यय है इसलिए इसका अर्थ एवं परिभाषा का प्रयास सेमीनार तथा सम्मेलनों में ही किया गया है। कुछ विद्वानों ने इसकी परिभाषा भी दी है जो निम्नलिखित हैं—

पर्यावरण शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत मनुष्य तथा उसके पर्यावरण (सांस्कृतिक तथा भौतिक-जैविक) के पारस्परिक सम्बन्ध तथा निर्भरता को समझने का प्रयास किया जाता है और उसको स्पष्ट करने हेतु कौशल, अभिवृत्ति मूल्यों का विकास करते हैं। यह निर्णय लिया जाता है क्या किया जाए? जिससे वातावरण की समस्याओं का समाधान किया जा सके और पर्यावरण में गुणवत्ता लाई जा सके।" *—यूनेस्को (1970) कार्य समिति*

"पर्यावरण शिक्षा एक प्रक्रिया है जिससे पर्यावरण संरक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त किये जा सकते हैं। विज्ञान तथा अध्ययन क्षेत्र की पृथक् शाखा नहीं है अपितु जीवनपर्यन्त खलने वाली शिक्षा की एकीकृत प्रक्रिया है।"

—यूनेस्को (1976) जम्मी में सेमीनार

"पर्यावरण शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य को पर्यावरण के प्रति जागरूकता, ज्ञान कौशल, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों को विकसित किया जाता है। जिससे पर्यावरण का सुधार किया जा सके।" *—मिश्र (1993)*

"पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत जीवन-पर्यन्त चलने वाली व्यापक शिक्षा सम्मिलित करते हैं जो परिवर्तनशील संसार के प्रति अनुक्रिया करता है। इसके द्वारा व्यक्तियों को प्रशिक्षित करके तैयार किया जाता है जिससे पर्यावरण सम्बन्धी, भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं को समझ सके। व्यक्तियों में कौशल, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जाता है जिससे वे रचनात्मक योगदान कर सके। उत्तम स्वास्थ्य तथा जीवन में गुणवत्ता में ला सकें।"

पर्यावरण शिक्षा का लक्ष्य होता है—भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण की पूर्णरूप में बालक को उसकी जानकारी तथा जागरूकता का विकास करना। पर्यावरण अध्ययन में बालक स्वयं अपने प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण को खोजने तथा जानने का प्रयास करता है। जिससे पर्यावरण की समस्याओं का समाधान कर अपने जीवन का विकास कर सके।

पर्यावरण शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसमें छात्रों को ऐसे अधिगम अनुभव प्रदान किये जाते हैं जिससे पर्यावरण का ज्ञान, सक्षम, कौशल तथा जागरूकता प्राप्त करके अपेक्षित अभिवृत्तियों को विकसित कर सके। प्राकृतिक तथा मानव कृत परिस्थितियों में सम्बन्ध स्थापित कर सके। मानवीय पर्यावरण का सम्बन्ध जनसंख्या, यातायात, स्रोत, तकनीकी, नगरीकरण कृषि तथा योजनाओं से है। पर्यावरण शिक्षा में विविध प्रकार के पर्यावरण तथा शिक्षा आयामों, शिक्षण विधियों तथा प्रयोगात्मक कार्यों का उपयोग किया जाता है। यह छात्रों को कारण-प्रभाव स्थापित करने से सहायता प्रदान करता है जिससे समस्या-समाधान की आलोचनात्मक चिन्तन तथा कौशल का विकास होता है। पर्यावरण शिक्षा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार से चलती रहती है। इसमें अन्त:अनुशासन आयाम का प्रयोग अधिक किया जाता है क्योंकि इसका क्षेत्र अधिक व्यापक है।

"वास्तव में पर्यावरण शिक्षा से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जो विश्व समुदाय को पर्यावरण की समस्याओं के सम्बंध में सचेत करता है। उसकी समस्याओं को समझकर उनका समाधान खोज सके तथा भावी समस्याओं को भी रोक सके।"

पर्यावरण शिक्षा प्राणियों को वर्तमान समस्याओं से बचाये रखने तथा भविष्य में सुरक्षित रहने के लिए जागरूकता का प्रशिक्षण देता है।

नोट

नोट्स "पर्यावरणीय शिक्षा में पर्यावरण के भौतिक-सांस्कृतिक पक्षों की जानकारी दी जाती है और जीवन के वास्तविक परिस्थिति के लिए उसकी सार्थकता का अनुभव प्रदान किया जाता है। समस्याओं एवं कठिनाइयों की पहचान की जाती है। पर्यावरण के असन्तुलन में सुधार करके अपेक्षित पर्यावरण का विकास किया जाता है।"

कुक तथा हैरन (1971) ने पर्यावरण शिक्षा की अधोलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है—

(1) पर्यावरण-शिक्षा समस्या-केन्द्रित होती है,

(2) पर्यावरण-शिक्षा अन्त: अनुशासन आयाम पर आधारित है,

(3) इसमें मूल्यों का अभिविन्यास किया जाता है,

(4) पर्यावरण शिक्षा से अभिविन्यास किया जाता है।

(5) पर्यावरण शिक्षा भविष्य की ओर उन्मुख होती है तथा

(6) छात्रों के स्वप्रक्रम, कौशल तथा क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।

पर्यावरण अध्ययन में प्राकृतिक, भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान को सम्मलित किया जाता है। पर्यावरण अध्ययन, पर्यावरण-शिक्षा का एक पक्ष है जो पर्यावरण की जानकारी तथा जागरूकता तक ही सीमित है परन्तु पर्यावरण शिक्षा सर्जनात्मक कौशल का विकास करता है। पर्यावरण अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करता है तथा प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक कार्यों हेतु प्रशिक्षण भी देता है जिससे स्वस्थ जीवन का आधार बनाया जा सके। यह पर्यावरण शिक्षा का मूल आधार तथा उद्देश्य है। पर्यावरण अध्ययन के अधिकांश विषय 'जानकारी' ही प्रदान करते हैं, परन्तु पर्यावरण के सुधार तथा विकास हेतु विधियों तथा प्राविधियों को नहीं देते हैं जिससे असन्तुलन को दूर करके पर्यावरण में गुणवत्ता लाई जा सके। जिस प्रकार मनोविज्ञान में अधिगम सिद्धान्तों की जानकारी दी जाती है, परन्तु बालकों को सिखाने हेतु कौन-सी विधियों एवं प्रविधियों को प्रयोग किया जाए जिससे छात्र अधिक सीख सके यह जानकारी मनोविज्ञान नहीं प्रदान करता है। पर्यावरण अध्ययन जानकारी अथवा पर्यावरण-सचेतना तक सीमित होता है।

शिक्षा के स्तर	पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य
1. प्राथमिक-शिक्षा ↓	1. पर्यावरण सचेतना तथा वास्तविक अनुभव तथा ज्ञान प्रदान करना।
2. माध्यमिक-शिक्षा ↓	2. पर्यावरण के घटकों एवं समस्याओं की वास्तविक जीवन में सार्थकता का बोध।
3. उच्चमाध्यमिक-शिक्षा ↓	3. पर्यावरण स्रोतों का उपयोग तथा समस्याओं के समाधान हेतु कौशल का विकास करना।
4. उच्च-शिक्षा	4. पर्यावरण समस्याओं का समाधान कर अपेक्षित विकास करना तथा भावना, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करना।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों में सचेतना, जागरूकता, कार्य कुशलता, व्यावहारिकता मूल्यों तथा अभिवृत्तियों का विकास करना है। ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक तीनों प्रकार के उद्देश्यों को महत्व दिया है।

नोट

पर्यावरण शिक्षा की अवधारणाएँ (Concepts of Environmental Education)

'पर्यावरण शिक्षा' का प्रत्यय तथा प्रक्रिया अधोलिखित अवधारणाओं पर आधारित है–

(1) पर्यावरण पर सम्पूर्ण रूप में विचार किया जाता है– भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक तथा राजनैतिक।

(2) पर्यावरण शिक्षा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। प्राथमिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षण किया जाता है।

(3) पर्यावरण शिक्षा की औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार चलती है।

(4) पर्यावरण शिक्षा का प्रत्यय अन्त:अनुशासन आयाम पर आधारित है। पर्यावरण में अध्ययन विषयों को महत्व दिया जाता है।

(5) पर्यावरण की समस्याओं का आकलन क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा स्थानीय दृष्टि से किया जाता है।

(6) समस्याओं के समाधान हेतु कौशल तथा कार्य कुशलता के लिए अवसर प्रदान करना चाहिए जिससे उनकी सक्रीय भागीदारी हो सके।

(7) छात्रों में ऐसी योग्यता का विकास किया जाए जिससे शिक्षा योजनाओं की प्रभावशीलता का आकलन कर सके।

(8) शैक्षिक पर्यटन का आयोजन करना चाहिए जिससे छात्रों को वास्तविक परिस्थितियों के अवलोकन का अवसर मिल सके।

(9) वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन पर्यावरण की समस्याओं तथा सम्भावित साधारण प्रकरणों का आयोजन करना चाहिए।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों की दृष्टि से पाठ्यवस्तु की रूपरेखा विकसित की गई है–

प्रथम खण्ड–पर्यावरण शिक्षा का अर्थ एवं स्वरूप–

1. पर्यावरण का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप
2. शिक्षा का अर्थ एवं स्तर
3. पर्यावरण शिक्षा का अर्थ उद्देश्य एवं स्वरूप
4. पर्यावरण शिक्षा एक अध्ययन का विषय

द्वितीय खण्ड–पर्यावरण शिक्षा का अर्थ एवं स्वरूप–

5. परिस्थिति-विज्ञान तथा परिस्थिति प्रणाली
6. पर्यावरण की गुणवत्ता
7. पर्यावरण प्रदूषण
8. मानव-पारिस्थितिकी तथा पर्यावरणीय सिद्धान्त
9. पर्यावरण में पारस्परिक निर्भरता
10. मानव-जनसंख्या की पारिस्थितिकी

तृतीय खण्ड–शिक्षा-पर्यावरण का अर्थ एवं स्वरूप–

11. शिक्षा-पर्यावरण
12. अभिवृद्धि तथा विकास
13. मनोवैज्ञानिक पर्यावरण तथा मानसिक स्वास्थ्य
14. पर्यावरण शिक्षा तथा अध्यापक-शिक्षा

चतुर्थ खण्ड—पर्यावरण व्यवस्था पर प्रबन्धन

15. पर्यावरण-प्रबन्धन
16. पर्यावरण शिक्षा एवं जन संचार माध्यम
17. प्रौढ़ शिक्षा-पर्यावरण सचेतना
18. मानव तथा उसका पर्यावरण

पर्यावरण शिक्षा की पाठ्यवस्तु को अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम में एक अनिवार्य पाठ्यक्रम के रूप में सम्मिलित किया जाए इसके अतिरिक्त शिक्षण-विषयों से सम्बन्धित पर्यावरण का ज्ञान विशिष्ट रूप में प्रदान किया जाए। यह पाठ्यवस्तु सेवारत् तथा पूर्व सेवा के अध्यापक शिक्षा में सम्मिलित किया जाए। पाठ्यक्रम में प्रयोगात्मक कार्य को भी जोड़ा जाए। कुछ स्थानीय पर्यावरण समस्याओं में सक्रिय कार्य करने के लिए अवसर प्रदान किया जाए जिससे उन्हें वास्तविक अनुभव भी प्राप्त हो सके।

पर्यावरण शिक्षा की अध्यापन विधियाँ (Teaching Method of Environmental Education)

पर्यावरण शिक्षा की पाठ्यवस्तु की प्रकृति सैद्धान्तिक 'व्यावहारिक दोनों ही है इसलिए शिक्षा विधियों तथा शिक्षा आयामों का उपयोग किया जाता है—

(1) व्याख्यान विधि (Lecture method)
(2) सामूहिक वाद-विवाद (Group discussion),
(3) सेमीनार तथा कार्यशाला (Seminar and workshop),
(4) दूरवर्ती-शिक्षण-संचार माध्यम (Distance Teaching use of Media),
(5) शैक्षिक पर्यटन (Educational Excursions) तथा
(6) नाटकीय-विधि (Dramatization method)।

इन विधियों को सैद्धान्तिक पक्ष अथवा ज्ञान, बोध तथा सचेतना के लिए प्रयुक्त किया जाता है। प्रयोगात्मक या व्यावहारिक पक्ष कौशल, कार्यक्षमता, अभिवृत्ति तथा मूल्यों के विकास हेतु अधोलिखित विधियों को प्रयुक्त किया जाता है।

(1) लघु समूह योजना (Small group project),
(2) सामूहिक वृहत योजना (Large group project),
(3) प्रदर्शन-विधि (Demonstration method),
(4) अनुरूपण खेल विधि (Adjusted Playway method),
(5) योजना-विधि (Project-method) तथा
(6) सामाजिक-उत्पादक कार्य (Social Productive work)।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों की दृष्टि से सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक शिक्षण विधियों को समान महत्व देना चाहिए। सैद्धान्तिक विधियाँ पर्यावरण सचेतना के विकास में सहायक होती है। कौशल तथा व्यावहारिक क्षमताओं के लिए प्रयोगात्मक, व्यावहारिक विधियों का उपयोग आवश्यक होता है। सह-सम्बन्ध-शिक्षण विधि अधिक उपयोगी है क्योंकि पाठ्यवस्तु की प्रकृति अन्तःअनुशासन की है। पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु शोधकार्यों का आयोजन भी किया जाता है। पर्यावरण शिक्षा में शोध कार्यों हेतु अन्तःअनुशासन आयाम को महत्व दिया जाता है।

क्या आप जानते हैं सैद्धान्तिक विधियाँ पर्यावरण सचेतना के विकास में सहायक होती हैं। कौशल तथा व्यावहारिक क्षमताओं के लिए प्रयोगात्मक, व्यावहारिक विधियों का उपयोग आवश्यक होता है।

नोट

पर्यावरण शिक्षा के प्रसार में शिक्षक की भूमिका (Role of Teacher in Environmental Education)

पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार के अभियान को व्यापक तौर पर चलाने के लिए पूरे समाज की जिम्मेदारी है किन्तु शिक्षक समाज का एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। इसीलिए इस लक्ष्य की प्राप्ति में उसकी भूमिका विशेष रूप से मानी गई है। शिक्षक का सम्बन्ध विभिन्न आयु वर्ग के छात्रों से होता है। एक पथ प्रदर्शक की भाँति वह समाज की विविध समस्याओं से उन्हें अवगत कराकर उनका नवीन एवं सफल समाधान ढूंढने हेतु छात्रों को प्रेरित कर सकता है। आज के समय में 'पर्यावरण प्रदूषण' एक ज्वलन्त समस्या है जो प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में पूरे विश्व को उसके भौतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक स्वरूपों में विकृति लाकर प्रभावित कर रही है। अत: समाज के बुद्धिजीवी वर्ग से शिक्षक इस समस्या विशेष के प्रति संवेदनशीलता विकसित करने में विशेष भूमिका निभा सकता है क्योंकि वह समाज की समस्याओं का विद्यालय जैसी प्रयोगशाला में अशोधन करने वाला एक संवेदनशील एवं जिम्मेदार नागरिक होता है। जो अपने छात्रों में अपने वातावरण या पर्यावरण, भौतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक के प्रति चेतना विकसित करने के लिए विविध कार्यक्रमों का आयोजन कर सकता है।

(1) पाठ्य सहभागी क्रिया– पाठ्य सहभागी क्रियाओं के आयोजन द्वारा पर्यावरण चेतना विकसित करने हेतु पर्याप्त भूमिका निभा सकता है। पाठ्य-सहभागी क्रियाओं के अन्तर्गत छात्रों द्वारा निम्नांकित क्रियाएँ करवाई जा सकती हैं जिससे पर्यावरण में सुधार हो सकेगा। शिक्षक स्वयं अपनी उपस्थिति में उन्हें उत्प्रेरित कर भौतिक पर्यावरण की वर्तमान स्थिति को सुधारने में मदद कर सकता है। क्योंकि शिक्षक विद्यालय में विभिन्न विषयों का ज्ञान विद्यार्थियों को देता है। इसलिए उस विषय के साथ विभिन्न तरह के पर्यावरण की जानकारी सहज ढंग से दे सकता है। जैसे–

1. वृक्षारोपण, हरी भरी वाटिकाओं का संरक्षण करना।
2. पार्कों एवं जलाशयों की सफाई करवाना तथा स्वच्छता के प्रति जन साधारण को जागरूक बनाने हेतु स्थान-स्थान पर छात्रों द्वारा स्पष्ट एवं सुन्दर अक्षरों में लिखी हुये सन्देश पट्टिकाओं को लगवाना।
3. अपशिष्ट पदार्थों, कूड़ों इत्यादि को उपयुक्त स्थान पर रखने की आदत विकसित करना। प्राय: शिक्षित समाज में आज भी यह कमियाँ दिखायी देती हैं।
4. छात्रों को पर्यावरण को स्वच्छ रखने के प्रति जागरुक बनाने की शिक्षा देना साथ ही क्रियात्मक रूप में गंदी बस्तियों एवं गाँवों में उन्हें ले जाकर ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत करवाना जिससे जनसामान्य पर्यावरण सुधार के प्रति सजग हो सके और इसे सुधारने के लिए सभी वर्ग के लोगों का सहयोग ले सकें।

(2) पर्यावरण के तीनों स्वरूपों–भौतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में उत्पन्न विकृतियों के स्वरूपों को विश्लेषित एवं मूल्यांकित करने में भी शिक्षक की सहायता महत्वपूर्ण हो सकती है।

(3) पर्यावरण सम्बन्धी फिल्में एवं निबंध– लेखों एवं रिपोर्टों को सृजित करने तथा पूर्व निर्मित सामग्रियों में अपेक्षित सुधार लाकर उन्हें सूक्ष्म रूप में समझने में छात्रों की सहायता करता है।

(4) पर्यावरण चेतना विकसित करने में विशेष भूमिका–पर्यावरण के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों में गहराई से अध्ययन करने की दृष्टि से छात्रों के प्रति एवं विशेष रूप से समाज के एक विशेष प्रतिनिधि के रूप में शिक्षक विशेष भूमिका निभा सकता है। भौतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक विषयों से सम्बन्धित नवीन जानकारियों से अवगत कराकर पर्यावरण सुधार के प्रति क्रान्ति ला सकता है।

(अ) शिक्षक वैज्ञानिक की भाँति समस्याओं की पहचान कराकर उनके सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों को अपने छात्रों के समक्ष विश्लेषित कर सकता है तथा प्रत्येक तथ्य की तर्कपूर्ण व्याख्या कर सकता है जिससे छात्रों का मन-मस्तिष्क प्रत्यक्ष एवं सक्रिय रूप से प्रभावित हो सकेगा।

नोट

(ब) चूँकि शिक्षक समाज का प्रतिनिधि सदस्य है। शिक्षक का महत्वपूर्ण दायित्व उसके कन्धों पर है उसका प्रत्यक्ष सम्पर्क सामाजिक क्षेत्र से होता है। अत: सामाजिक पर्यावरण में उत्पन्न भयावह स्थिति और विकृति को कम करने में वह विशेष भूमिका निभा सकता है क्योंकि वह समाज का एक जिम्मेदार एवं संवेदनशील व्यक्ति विशेष होता है।

(स) शिक्षक मनोवैज्ञानिक की भाँति छात्रों की संवेदना, कुण्ठा के प्रति जागरुक होकर एक मित्र की भाँति उनकी विक्षिप्तताओं को समझकर उपयुक्त संसाधन ढूँढ कर सामान्य स्थिति में ला सकता है तथा उनमें प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण का विकास कर सकता है जिससे वे अपनी कुण्ठाओं को समाज पर आरोपित न करें वरन् विद्यालय में ही उसका शोधन किया जाय एवं एक स्वस्थ मानसिक स्थिति वाला जिम्मेदार नागरिक का सृजन हो सके।

(5) पर्यटन द्वारा शिक्षा (Educational Excursion)—छात्रों को भ्रमण एवं पर्यटन के माध्यम से विशिष्ट स्थलों एवं आत्म-विकृतियों तथा प्रदूषण का दृष्टान्त प्रस्तुत कराकर शिक्षक विशेष भूमिका निभा सकता है। ऐसे स्थलों पर वह प्रदूषण द्वारा पड़े प्रभावों का निरीक्षण करने में अपने अनुभवों द्वारा छात्रों की सहायता कर सकता है।

(6) सम्पर्क कार्यक्रमों के आयोजन में विशेष भूमिका—शिक्षक प्रसार शिक्षा के माध्यम से एक प्रसार कार्यकर्त्ता की भाँति गाँवों, शहरों में अभिभावकों तथा सामान्य लोगों के बीच जाकर पर्यावरण प्रदूषण एवं उसके दुष्परिणामों की जानकारी दे सकता है। इस कार्य के लिए वह प्रसार की निम्नांकित आयाम विधियों का प्रयोग कर सकता है।

प्रसार की आयाम विधियाँ

(Approach Method)

↓

व्यक्तिगत आयाम विधि	**सामूहिक आयाम विधि**	**माध्यम आयाम विधि**
(1) व्यक्तिगत भेंट	1. प्रदर्शन	1. सिनेमा तथा स्टाइड्स
(अ) खेल-कूद	2. विचार-विमर्श सभा	2. फालेश कार्ड
(ब) घर, परिवार	3. सामूहिक विचार-विमर्श	3. मुद्रित सामग्री
(2) व्यक्तिगत पत्र		4. प्रदर्शन वस्तु एवं मॉडल, चार्ट
		5. रेडियो, समाचार पत्र व दूरदर्शन

आयाम का उद्देश्य जन-जन में हलचल पैदा करना, किसी निश्चित लक्ष्य के प्रति कार्य करने के लिए प्रेरित करना आदि होना आवश्यक है।

पर्यावरण शिक्षा के कार्य को सुचारू रूप में पूरा करने, पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं के बारे में जन-जागरण लाने तथा उनसे उत्पन्न मानवीय संकटों को समझने में हमारे शिक्षकों की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। शिक्षक अपने प्रभाव से प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक पर्यावरण सुधार में क्रान्ति ला सकता है।

पर्यावरण प्रदूषण दूर करने के लिए शिक्षक द्वारा उठाये जाने योग्य अपेक्षित प्रयास

(1) पर्यावरण चेतना विकसित करना (Developing Environmental Awareness)—न केवल छात्रों को वरन् समाज के सभी सदस्यों को जो शिक्षक के सम्पर्क में आते हैं, उन्हें शिक्षक द्वारा व्यावहारिक रूप में या विविध सम्पर्क कार्यक्रमों द्वारा आवश्यक रूप से अपने पर्यावरण को विकृत होने से बचाने हेतु आवश्यक जानकारी प्रदान की जानी चाहिए। यह शिक्षक का दायित्व होना चाहिए कि वह पर्यावरण सुधार के प्रति समाज को विचार करने हुए बाध्य ही न करे वरन् क्रियात्मक रूप से भी तैयार करे। इस कार्य के सफलता हेतु वह शिक्षा में निम्नांकित तथ्यों को शामिल कर सकता है।

(अ) राष्ट्रीयता की भावना पर बल देना,

नोट

(ब) सामाजिक मूल्यों की शिक्षा देना,

(स) सामाजिक कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता लाना तथा

(द) धार्मिक सहिष्णुता पर बल देना जिससे सामाजिक पर्यावरण प्रदूषण कम हो सके।

(2) शिक्षक संघ द्वारा सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु ठोस प्रयास–शिक्षक संघ द्वारा सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए निम्न ठोस प्रयास किये जा सकते हैं।

(अ) जनसंख्या नियन्त्रण हेतु शिक्षक द्वारा प्रसार कार्यकर्त्ताओं के रूप में योग्य छात्रों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए तथा ऐसी शैक्षिक भ्रमण की व्यवस्था की जानी चाहिए जिसमें ये प्रसार कार्यकर्ता गाँव में, कस्बों में जाकर दृश्य, श्रव्य सामग्री के प्रयोग या लघु नाट्यों द्वारा जनसंख्या नियंत्रण सम्बन्धी संदेश को जनसामान्य तक प्रभावी तरीके से पहुँचा सकें तथा उसके लाभों एवं हानियों से लोगों को अवगत कराकर न केवल सैद्धान्तिक रूप में वरन् व्यावहारिक रूप में जनसंख्या नियन्त्रण करवाकर पर्यावरण में उत्पन्न होने वाले भौतिक-अभौतिक प्रदूषणों को कम कर सकें।

(ब) आर्थिक विभिन्नता, बेरोजगारी भी पर्यावरण को विकृत करने में प्रभावी कारक के रूप में सामने आयी है। शिक्षक अपने विद्यार्थियों की योग्यताओं एवं क्षमताओं तथा रुचि के अनुरूप व्यवसाय के विविध क्षेत्रों को अपनाने हेतु दिशा निर्देश देकर सच्चे पथ प्रदर्शक की भाँति महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जिसके परिणामस्वरूप सैद्धान्तिक रूप में बी. ए. तथा एम. ए. करने वाले छात्र माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त कर जीविकोपार्जन कर सकेंगे। साथ ही कृत्रिम बागवानी इत्यादि से जुड़कर अपनी बंजर हो रही भूमि के उपयोग के साथ ही पर्यावरण को भी शुद्ध बनाने में योगदान कर सकेंगे।

(स) शिक्षक द्वारा बाल्यावस्था से लेकर किशोरावस्था तक ऐसे विषयों, आदतों का विकास छात्र में किया जा सकता है जो आजीवन चिरस्थायी प्रभाव वाले होते हैं जैसे–रात के समय पेड़ नहीं छूना, हरे पेड़ नहीं काटना, घर के कूड़े को बीच सड़क पर नहीं फेंकना इत्यादि। ये सभी सामान्य उदाहरण हैं जिनका प्रभाव बड़ों के भी व्यवहार में दृष्टिगोचर होता है।

अत: शिक्षक वह व्यक्ति है जो कुम्हार की भाँति जैसा चाहे वैसा विद्यार्थी बना सकता है। यह विद्यार्थी समाज का कर्णधार नागरिक होता है जिसके द्वारा समाज की संरचना होती है। नागरिकता के गुणों से ओत-प्रोत व्यक्ति किसी को हानि नहीं पहुँचा सकता। वह न केवल स्वहित वरन् समाज के हित के लिए तत्पर रहता है जिसमें पर्यावरण सुधार भी आवश्यक दायित्व के रूप में सामाजिक नियम जानकर उसके समक्ष उपस्थित होगा। अत: इस प्रकार शिक्षक द्वारा नवीन सृजन की प्रक्रिया द्वारा पर्यावरण सुधार के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जा सकती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. सही विकल्प चुनिए (Choose the correct option)–

(i) पर्यावरण जागरूकता का घटक है–

(*a*) भौतिक घटक (*b*) जैविक घटक

(*c*) उपरोक्त दोनों ही (*d*) उपरोक्त कोई नहीं।

(ii) पर्यावरण शिक्षा का घटक है–

(*a*) बालक (*b*) पर्यावरण

(*c*) उपरोक्त दोनों ही (*d*) उपरोक्त कोई नहीं।

(iii) पर्यावरण जागरूकता में विकास करते हैं–

(*a*) भावात्मक पक्ष (*b*) क्रियात्मक पक्ष

(*c*) ज्ञानात्मक पक्ष (*d*) उपरोक्त कोई नहीं।

नोट

(*iv*) पर्यावरण सचेतना में महत्व दिया जाता है—

(*a*) ज्ञानात्मक पक्ष (*b*) भावात्मक पक्ष

(*c*) क्रियात्मक पक्ष (*d*) उपरोक्त कोई नहीं।

(*v*) पर्यावरण शिक्षा के मुख्य पक्ष है—

(*a*) पर्यावरण शिक्षा (*b*) पर्यावरण सचेतना

(*c*) उपरोक्त दोनों (*d*) उपरोक्त कोई नहीं।

30.2 पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता (Need of Environmental Education)

'पर्यावरण शिक्षा' एक नया प्रत्यय है परन्तु इसकी जड़ें अधिक प्राचीन हैं। ऋग्वेद सभी वेदों में प्राचीन है इसमें पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता का उल्लेख मिलता है।

ऋग्वेद की ऋचाओं में कामना की गयी है कि "पृथ्वी माता की धूल तथा पितृ-तुल्य आकाश का प्रकाश मंगलमय हो, सूर्य अपने पूर्ण तेज के साथ अपने अंश से जुड़ा रहे।" अस्तु प्रत्येक प्रणाली प्रभु को विराट सत्ता के समक्ष अपने को उन्मुक्त कर दे तो वह सत्ता उसमें समाहित हो जायेगी। सम्पूर्ण विश्व अखिल ब्रह्माण्ड प्रभुमय होगा। आनन्द और शांति का अभ्युदय होगा।

किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में आनन्द और शान्ति का स्थान क्रमशः शोक और अशांति ने ले लिया है। जिसका मुख्य कारण है पृथ्वी माता को धूल और पिता समान आकाश के प्रकाश का अमंगलकारी हो जाना अर्थात् प्रदूषित हो जाना। पृथ्वी माता को धूल और पिता आकाश के प्रकाश को बनाये रखने के लिए नितान्त आवश्यक है कि मानव का जागरूक होना। जागरूकता शिक्षा से ही संभव होता है, शिक्षित मानव अपने वातावरण के प्रति अत्यधिक सचेत होगा।

पर्यावरण शिक्षा तथा शिक्षा पर्यावरण

पर्यावरण शिक्षा	शिक्षा पर्यावरण
1. क्षेत्र— इसका व्यापक क्षेत्र-भौतिक जैविक, सामाजिक, सांस्कृतिक संस्थाओं की व्यवस्था तथा कक्षा के वातावरण को सम्मिलित करते हैं।	इसका क्षेत्र सीमित है विद्यालय की संस्थागत व्यवस्था तथा कक्षा के वातावरण तथा स्थानीय, भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों को सम्मिलित करते हैं।
2. उद्देश्य— जागरूकता, कौशल, विश्वास अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करना तथा सुधार हेतु व्यावहारिक कार्य करना।	शैक्षिक प्रक्रियाओं तथा संस्थाओं के सम्बन्ध में जानकारी तथा सुधार क्रियाओं हेतु प्रशिक्षण देना तथा कक्षा में उनका उपयोग करना।
3. अध्ययन विषय— अन्तःअनुशासन आयाम आधारित ज्ञान। सभी अध्ययन विषयों की भागीदारी है।	यह भी अन्तःअनुशासन आयाम पर आश्रित है परन्तु संस्थाओं, कक्षा शिक्षण विधियों तथा प्रविधियों को महत्व देते शिक्षक, छात्र तथा प्राचार्य का विशेष सम्बन्ध है।
4. व्यवस्था— अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय तथा स्थानीय स्तर पर व्यवस्था अनौपचारिक प्रौढ़ शिक्षा का उपयोग किया जाता है।	केन्द्रीय तथा राज्य स्तर पर व्यवस्था होती है। संस्थागत व्यवस्था तथा कला-शिक्षण व्यवस्था इसका व्यावहारिक पक्ष है।

नोट

5. समस्या– पर्यावरण प्रदूषण गुणवत्ता में गिरावट, सामाजिक तथा सांस्कृतिक समस्यायें, जनसंख्या की समस्या का अध्ययन।	शिक्षा प्रशासन, परीक्षा, शिक्षण तथा विद्यालय की समस्या तथा कक्षा-शिक्षण की समस्याओं से सम्बन्ध होता है।
6. प्रभाव का आकलन– समस्या समाधान तथा पर्यावरण की गुणवत्ता का अध्ययन।	संस्थागत व्यवस्था की गुणवत्ता छात्रों का विकास एवं उनकी परिलब्धियाँ।
7. माध्यम– जनसंचार माध्यमों का उपयोग दूरदर्शन तथा रेडियो तथा अन्य सामग्री का उपयोग।	संचार माध्यमों का उपयोग, दूरदर्शन तथा रेडियो के कार्यक्रमों को देखना, शैक्षिक पर्यटन की व्यवस्था करना।
8. प्रबन्धन– शिक्षा साधनों के अतिरिक्त प्रदूषण को रोकने के लिए कानून भी बनाये गये जिससे प्रदूषण को रोका जा सके।	औपचारिक शिक्षा के साथ अनौपचारिक शिक्षा, अध्यापक-प्रशिक्षक सतत् शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, दूरवर्ती शिक्षा, मुक्त शिक्षा प्रणाली का भी उपयोग किया जाता है।

वातावरण के प्रति जागरुकता लाने के लिए आज आवश्यकता है पर्यावरण शिक्षा की। इसी उद्देश्य के लिए 5 जून को पूरे विश्व में "विश्व पर्यावरण दिवस" मनाया जाता है। विश्व के सभी देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरणीय संकट से ग्रस्त हैं पर्यावरणीय संकट को शिक्षा के माध्यम से कुछ कम तो किया जा सकता है किन्तु उसका पूर्व रूप नहीं प्राप्त किया जा सकता।

जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभाव, औद्योगिक क्रान्ति, प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग, मानव के अदूरदर्शितापूर्ण कार्य व्यवहार से जल, वायु, भूमि का दोहन ही पर्यावरण को आन्दोलित एवं असंतुलित करते हैं।

इंदिरा गाँधी ने (1987) में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन में कहा था कि अधिक जनसंख्या गरीबी को बुलावा देती है और गरीबी प्रदूषण को जन्म देती है अतः यदि हम यह कहें कि विश्व में जनसंख्या विस्फोट ने प्रकृति से विरासत में मिले बहुमूल्य पदार्थ वायु, वनस्पति और जल को कम करने के साथ-साथ प्रदूषित ही नहीं किया है, बल्कि पूरी प्रकृति के चक्र को ही विविध प्रकार से डगमगा दिया है तो यह कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अतएव जनसंख्या पर नियन्त्रण करने के लिए साक्षरता बढ़ानी होगी। पर्यावरण संतुलन को विघटन करने वाले कारकों की जानकारी देना ही पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत आता है। पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में आम आदमी की क्या भूमिका हो? उसकी जानकारी प्राप्त करना या कराना ही पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य है।

वास्तव में पर्यावरण शिक्षा से तात्पर्य उस शिक्षा से है जो विश्व समुदाय को पर्यावरण की समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी देता है जिससे वे समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सकें और साथ ही भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोक सकें। पर्यावरण शिक्षा एक सामान्य शिक्षा नहीं बल्कि पर्यावरणीय समस्याओं में उनके निदान, हल और सम्भावित बचाव सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने की शिक्षा है। "पर्यावरण शिक्षा" प्राणी मात्र को वर्तमान में बचाये रखने तथा सुरक्षित भविष्य प्रदान करने की शिक्षा है।

IUCN (International Union for Conservation of Nature and natural Resources) द्वारा आयोजित स्कूली पाठ्यक्रम के लिये पर्यावरण शिक्षा पर अन्तर्राष्ट्रीय बैठक को अन्तिम रिपोर्ट (1970) में पर्यावरणीय शिक्षा को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है।

नोट

पर्यावरण शिक्षा के दायित्वों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव-भौतिक परिवेश के मध्य अपने आपको सम्बद्धता को पहचानने और समझने के लिए आवश्यक कौशल तथा अभिवृत्ति का विकास कर सके।

पर्यावरण शिक्षा, पर्यावरण की गुणवत्ता से सम्बन्धित प्रकरणों के लिए व्यावहारिक संहिता निर्माण करने तथा निर्णय लेने की आदत को व्यवस्थित करती है।

इस प्रकार पर्यावरण शिक्षा प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष में पर्यावरण के संरक्षण रख-रखाव तथा सुधार के बारे में सोचने और समझने का अवसर प्रदान कराती है।

टास्क किस तिथि को पूरे विश्व में 'विश्व पर्यावरण दिवस' मनाया जाता है?

पर्यावरण शिक्षा का महत्व (Importance of Environmental Education)

आज के विघटन हो रहे पर्यावरण को सुधारने तथा उसे और विघटित न होने देने के लिए 'पर्यावरण शिक्षा' ही एक मात्र ऐसी प्रक्रिया है जिससे अत्यन्त विश्वास से उपयोग में लाया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि इसकी योजना अत्यन्त व्यावहारिक हो तथा इसे निष्ठा और लगन के साथ लागू किया जाए।

पर्यावरण शिक्षा के महत्व का निम्न रूपों में आकलन किया जा सकता है–

1. सौरमण्डल में केवल पृथ्वी ही एक-सा ग्रह है जिस पर जीवन सम्भव है। इसे नष्ट होने से बचाना है तथा उस पर बसने वाले प्राणी को सुखद जीवन उपलब्ध करना है।
2. जनसंख्या में जिस गति से वृद्धि प्रतिवर्ष हो रही है उससे सारा प्रकृति चक्र गड़बड़ा गया है। प्रकृति को पुन: संतुलित करने तथा भावी पीढ़ियों को विरासत में सुन्दर और व्यवस्थित भविष्य देने हेतु जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करना है।
3. प्राकृतिक संसाधनों का विशाल भण्डार भी अन्तत: सीमित ही है। उनका उचित और बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग हो, यह लोगों को सिखाना है और पृथ्वी पर निवास करने वाले प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में बैठाना है।
4. पेड़ और वनस्पति ही केवल कार्बन-डाई-आक्साइड को प्राण वायु ऑक्सीजन में परिवर्तित कर सकते हैं। अत: वायुमण्डल में आक्सीजन की आवश्यकता की मात्रा बनाये रखने तथा कार्बन डाई ऑक्साइड की वृद्धि से होने वाली पर्यावरणीय विकृतियों से अवगत कराने हेतु व्यक्तियों को 'करने' योग्य अथवा 'न करने' योग्य की बातें बतानी हैं।
5. औद्योगिक क्रान्ति तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप सुख-सुविधाओं के उपकरणों ने चारों ओर विविध प्रकार का प्रदूषण फैलाया है। उसे नियंत्रित करना तथा बचाव के उपाय सुझाने हेतु कार्यक्रम चलाना है।

यह सभी पर्यावरण शिक्षा से ही सम्भव है, अत: पर्यावरण शिक्षा इस समय की 'आवश्यकता' है।

पर्यावरण विज्ञान की अपेक्षा 'पर्यावरण शिक्षा' का क्षेत्र व्यापक है। अधोलिखित कथनों से इसके क्षेत्र का विस्तार का बोध होता है।

"यदि हम फसल उगाना चाहते हैं तब कुछ माह की योजना तैयार की जाती है। यह कार्य कृषि विज्ञान का है।"

"यदि हम पौधों को उगाना चाहते हैं तब एक वर्ष की योजना बनानी होगी। यह कार्य वनस्पति विज्ञान का है।"

"यदि हम मनुष्य को शिक्षा देना चाहते हैं और उसका विकास करना चाहते हैं तब सौ वर्ष की योजना बनानी होगी।"

कृषि विज्ञान तथा वनस्पति विज्ञान के विशेषज्ञों को शिक्षा दी जाती है तभी योजना बनाने में सफल हो जाते हैं। वास्तव में शिक्षा उत्तम स्तर का विनियोग है जो भविष्य के लिए व्यक्तियों को तैयार करता है। सभी इसके महत्व को स्वीकार करते हैं।

नोट

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता प्रत्येक आयु वर्ग विशेषकर बालकों तथा युवा वर्ग को बढ़ाते हुए पर्यावरण प्रदूषण तथा असन्तुलन के प्रभावों की गहन अनुभूति करने की दृष्टि से 'पर्यावरण शिक्षा' की नितान्त तथा तत्काल आवश्यकता है।

पर्यावरणीय शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Environmental Education)

देश में सरकारी तथा गैर सरकारी अनेक संस्थायें हैं जो पर्यावरण सचेतना को जागृत कर रही हैं। सन् (1982) में पर्यावरण-विभाग की स्थापना हुई और अलग से पर्यावरण मन्त्रालय खोला गया है। अहमदाबाद में 'पर्यावरण शिक्षा केन्द्र' स्थापित किया गया। लगभग दो सौ से अधिक गैर सरकारी संस्थायें 'पर्यावरण शिक्षा' दे रही हैं।

यूनेस्को अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन (1977) में पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य को प्रतिपादित किया गया जिसमें सभी स्तरों तथा औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा के उद्देश्यों का विशिष्टीकरण भी किया गया।

कोठारी शिक्षा आयोग (1966) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों के लिए संस्तुति की थी। छात्रों को भौतिक तथा जैविक पर्यावरण के सम्बन्ध में जानकारी दी जानी चाहिए तथा विद्यालय के अध्ययन विषयों के साथ पर्यावरण शिक्षा को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

जून 1972 में जब पर्यावरण संरक्षण, रख-रखाव तथा सुधार के लिए राष्ट्रीय स्तर के प्रयासों की बात कहीं गयी तब इस बात पर बल दिया गया कि इस संस्था के स्थायी हल के लिए नागरिकों को शिक्षित करना होगा और उन्हें जागरूक कर उन्हें ऐसा मानव बनाना होगा कि पर्यावरण की वर्तमान स्थिति पर काबू रखते हुए उसे आगे विकृत होने से बचाया जा सके। यह भी प्रयास किया जाय कि स्थिति में सुधार हो। तीन वर्ष बाद बेलग्रेड में आयोजित हुई (अक्टूबर 1975) अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में जिसमें 60 राष्ट्रों के 96 संभागीय थे। 10 दिन तक विभिन्न मदों पर विस्तार से चर्चा की। वहीं विस्तार से पर्यावरणीय शिक्षा के उद्देश्य, विषय-वस्तु, शिक्षक-प्रशिक्षण, औपचारिक एवं अनौपचारिक तरीके, प्रत्येक आयु व स्तर के लोगों को सम्मिलित करने आदि पर निर्णय लिये गये। अनेक पूर्व में तैयार पत्रों को चर्चा का आधार बनाया गया जो यूनेस्कों द्वारा प्रकाशित (Trends in Environmental Education 1997) है। यहाँ यह भी निर्णय लिया गया कि विश्व के सभी देशों के लिए समान तथा व्यापक रूप से पर्यावरण शिक्षा के ऐसे वस्तुनिष्ठ उद्देश्य स्वीकार किये जाने चाहिए जो अत्यन्त व्यावहारिक हों और सम्पूर्ण पर्यावरणीय समस्याओं को आत्मसात कर सकते हों।

यूनेस्को अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन तिबल्सी (1977) में 'पर्यावरण शिक्षा के अधोलिखित उद्देश्यों का प्रतिपादन किया गया–

(1) पर्यावरण की जागरुकता का विकास करना तथा पर्यावरण की समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता विकसित करना।

(2) पर्यावरण के घटकों एवं समस्याओं के सम्बन्ध में ज्ञान तथा अनुभव प्रदान करना।

(3) पर्यावरण की समस्याओं के स्वरूप, प्रक्रियाओं का बोध कराना तथा पर्यावरण के घटकों का पारस्परिक निर्भरता का बोध कराना।

(4) पर्यावरण की समस्याओं के समाधान हेतु अपेक्षित कौशल तथा कार्य क्षमताओं का विकास करना।

(5) पर्यावरण के सम्बन्ध में भावना, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करना तथा सक्रिय भाग लेने हेतु अभिप्रेरित करना जिससे पर्यावरण का संरक्षण तथा सुधार हो सके।

(6) छात्रों को व्यावहारिक कार्यों हेतु अवसर प्रदान करना। सभी स्तरों पर सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देना जिससे समस्याओं का समाधान किया जा सके।

(7) शिक्षा की योजनाओं तथा कार्यक्रमों के मूल्यांकन की योग्यता का विकास करना। परिस्थिति विज्ञान, आर्थिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक सौन्दर्यानुभूति के कारकों की प्रभावशीलता का आकलन करना।

उपरोक्त उद्देश्य सभी स्तरों से सम्बन्धित हैं तथा औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा से भी इनका सम्बन्ध है परन्तु इनमें पारस्परिक गहन सम्बन्ध है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)—

1. पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता का उल्लेख .... में किया गया है।
2. पूरे विश्व में .... को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है।
3. प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में .... ने कहा था कि अधिक जनसंख्या गरीबी को बुलावा देती है और गरीबी प्रदूषण को जन्म देती है।
4. पर्यावरण विभाग की स्थापना सन् .... में हुई।
5. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र .... में स्थापित किया गया।

30.3 सारांश (Summary)

- 'पर्यावरण शिक्षा' एक नया क्षेत्र तथा नया प्रत्यय है इसलिए इसके अर्थ एवं परिभाषा का प्रयास सेमीनार तथा सम्मेलनों में ही किया गया है। पर्यावरण शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत मनुष्य तथा उसके पर्यावरण (सांस्कृतिक तथा भौतिक-जैविक) के पारस्परिक सम्बन्ध तथा निर्भरता को समझने का प्रयास किया जाता है और उसको स्पष्ट करने हेतु कौशल, अभिवृत्ति मूल्यों का विकास करते हैं। यह निर्णय लिया जाता है क्या किया जाए? जिससे वातावरण की समस्याओं का समाधान किया जा सके और पर्यावरण में गुणवत्ता लाई जा सके।"
- "पर्यावरण शिक्षा एक मार्ग है जिससे पर्यावरण संरक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त किया जाए। विज्ञान तथा अध्ययन क्षेत्र की पृथक् शाखा नहीं है अपितु जीवनपर्यन्त चलने वाली शिक्षा की एकीकृत प्रक्रिया है।"
- पर्यावरण शिक्षा का लक्ष्य होता है—भौतिक तथा सामाजिक पर्यावरण की बालक को जानकारी देना तथा जागरूकता का विकास करना। पर्यावरण अध्ययन में बालक स्वयं अपने प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण को खोजने तथा जानने का प्रयास करता है जिससे पर्यावरण की समस्याओं का समाधान कर अपने जीवन का विकास कर सके।
- पर्यावरण शिक्षा एक प्रक्रिया है जिसमें छात्रों को ऐसे अधिगम अनुभव प्रदान किये जाते हैं जिससे पर्यावरण का ज्ञान, कौशल तथा जागरूकता प्राप्त करके अपेक्षित अभिवृत्तियों को विकसित कर सके।
- वास्तव में पर्यावरण शिक्षा से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जो विश्व समुदाय को पर्यावरण की समस्याओं के सम्बन्ध में सचेत करता है। उसकी समस्याओं को समझकर उनका समाधान खोज सके तथा भावी समस्याओं को भी रोक सके।
- पर्यावरण अध्ययन में प्राकृतिक, भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान को सम्मिलित किया जाता है। पर्यावरण अध्ययन पर्यावरण-शिक्षा का एक पक्ष है जो पर्यावरण की जानकारी तथा जागरूकता तक ही सीमित है। परन्तु पर्यावरण शिक्षा सर्जनात्मक कौशल का विकास करता है पर्यावरण अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास करता है तथा प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक कार्यों हेतु प्रशिक्षण भी देती है जिससे स्वस्थ जीवन का आधार बनाया जा सके। यही पर्यावरण शिक्षा का मूल आधार तथा उद्देश्य है।
- पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों में सचेतना, जागरूकता, कार्य कुशलता, व्यावहारिकता मूल्यों तथा अभिवृत्तियों का विकास करना है। ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक तीनों प्रकार के उद्देश्यों को महत्व दिया है।
- पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार के अभियान को व्यापक तौर पर चलाने के लिए पूरे समाज की जिम्मेदारी है किन्तु शिक्षक समाज का एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व युक्त सदस्य है। इसीलिए इस लक्ष्य की प्राप्ति में उसकी भूमिका विशेष रूप से मानी गई है शिक्षक का सम्बन्ध विभिन्न आयु वर्ग के छात्रों से होता है।

नोट

- पाठ्य सहभागी क्रियाओं के आयोजन द्वारा पर्यावरण चेतना विकसित करने हेतु पर्याप्त भूमिका निभा सकता है। पाठ्य-सहभागी क्रियाओं के अन्तर्गत छात्रों द्वारा निम्नांकित क्रियाएँ करवाई जा सकती हैं जिससे पर्यावरण में सुधार हो सकेगा।
- 'पर्यावरण शिक्षा' एक नया प्रत्यय है परन्तु इसकी जड़ें अधिक प्राचीन हैं। ऋग्वेद सभी वेदों में प्राचीन है इसमें पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता का उल्लेख मिलता है।
- ऋग्वेद की ऋचाओं में कामना की गयी है कि "पृथ्वी माता की धूल तथा पितृ-तुल्य आकाश का प्रकाश मंगलमय हो, सूर्य अपने पूर्ण तेज के साथ अपने अंश से जुड़ा रहे।"
- वातावरण के प्रति जागरुकता लाने के लिए आज आवश्यकता है पर्यावरण शिक्षा की। इसी उद्देश्य के लिए 5 जून को पूरे विश्व में "विश्व पर्यावरण दिवस" मनाया जाता है। विश्व के सभी देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरणीय संकट से ग्रस्त हैं पर्यावरणीय संकट को शिक्षा के माध्यम से कुछ कम तो किया जा सकता है किन्तु उसका पूर्व रूप नहीं प्राप्त किया जा सकता।
- जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभाव, औद्योगिक क्रान्ति, प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग, मानव के अदूरदर्शिता पूर्ण कार्य व्यवहार से जल, वायु, भूमि का दोहन ही पर्यावरण को आन्दोलित एवं असंतुलित करते हैं।
- वास्तव में पर्यावरण शिक्षा से तात्पर्य उस शिक्षा से है जो विश्व समुदाय को पर्यावरण की समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी देता है। जिससे वे समस्याओं से अवगत होकर उनका हल खोज सकें और साथ ही भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोक सके। पर्यावरण शिक्षा एक सामान्य शिक्षा नहीं बल्कि पर्यावरणीय समस्याओं में उनके निदान, हल और सम्भावित बचाव सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने की शिक्षा है।
- देश में सरकारी तथा गैर सरकारी अनेक संस्थायें हैं जो पर्यावरण सचेतना को जागृत कर रही हैं। सन् (1982) में पर्यावरण-विभाग की स्थापना हुई। अहमदाबाद में 'पर्यावरण शिक्षा केन्द्र' स्थापित किया गया। लगभग दो सौ से अधिक गैर सरकारी संस्थाएँ 'पर्यावरण शिक्षा' दे रही हैं।

30.4 शब्दकोश (Keywords)

- **आलोचनात्मक**–आलोचना सहित।
- **सृजन**–निर्माण।

30.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पर्यावरण एवं शिक्षा के सहसम्बंधों की व्याख्या कीजिए।
2. पर्यावरण शिक्षा की परिभाषा एवं अर्थ समझाइए। पर्यावरण शिक्षा की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता की समीक्षा कीजिए।
4. पर्यावरण शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers: Self Assessment)

1. (*i*) (*c*) (*ii*) (*c*) (*iii*) (*c*) (*iv*) (*b*) (*v*) (*c*)

2. (*i*) ऋग्वेद (*ii*) 5 जून (*iii*) इंदिरा गाँधी (*iv*) 1982 (*v*) अहमदाबाद।

नोट

30.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर. के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

नोट

इकाई–31: पर्यावरणीय जागरूकता के प्रसार में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in Developing Environmental Awareness)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

31.1 पर्यावरण जागरूकता एवं पर्यावरण जागरूकता की विशेषताएँ (Environmental Awarness and Salient Features of Environmental Awareness)

31.2 पर्यावरण जागरूकता के विकास में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in Developing Environmental Awereness)

31.3 सारांश (Summary)

31.4 शब्दकोश (Keywords)

31.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

31.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पर्यावरण जागरूकता एवं उसकी विशेषताओं का विवेचन करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

साधारणत: 'पर्यावरण शिक्षा' तथा 'पर्यावरण जागरूकता' को एक ही अर्थ में प्रयुक्त करते हैं परन्तु इनमें सार्थक अन्तर है। पर्यावरण अध्ययन विषयों-भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, भूगोल, कृषि विज्ञान द्वारा पर्यावरण जागरूकता ही प्रदान की जाती है। इससे व्यक्तियों में कौशल, विश्वास, अभिवृत्ति तथा मूल्यों का विकास नहीं होता है। इसलिए पर्यावरण शिक्षा और पर्यावरण जागरूकता के अन्तर को समझना आवश्यक है।

31.1 पर्यावरण जागरूकता एवं पर्यावरण जागरूकता की विशेषताएँ (Environmental Awareness and Salient Features of Environmental Awareness)

बेलगार्ड की अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला (1975) में जो प्रपत्र पढ़े गये उनसे 'पर्यावरण शिक्षा' की स्थिति का बोध होता है। पर्यावरण जागरूकता में विश्व के पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान तथा बोध प्राप्त किया गया है। इस प्रकार पर्यावरण जागरूकता का अर्थ है–

1. भौतिक पर्यावरण, पौधे, जानवर तथा मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्ध व निर्भरता को पहचानना और अभिवृद्धि तथा विकास को समझना।

2. सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास हेतु व्यक्तिगत रूप में या सामूहिक रूप में क्रियाओं को आरम्भ करना।
3. पर्यावरण के अन्तर्गत मानवीय सामग्री, स्थान तथा समय और स्रोतों को पहचानना जिससे सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास की अभिवृद्धि की जा सके।
4. प्राकृतिक स्रोतों के उपयोग के लिये निर्णय लेना तथा उनके महत्व को समझना और समुदाय प्रयासों में सहायता करना जिससे उनका विशिष्ट उपयोग हो सके।

पर्यावरण जागरूकता की विशेषताएँ (Salient Features of Environmental Awareness)

पर्यावरण जागरूकता 'पर्यावरण शिक्षा' का ही मुख्य अंग है। पर्यावरण शिक्षा का बोध तीन स्तरों पर कराया जाता है–

(1) पर्यावरण के सम्बन्ध में बतलाकर-छात्र सुनते हैं।

(2) पर्यावरण के सम्बन्ध में दिखलाकर-छात्र देखते हैं, तथा

(3) पर्यावरण के सम्बन्ध में करवाकर-छात्र कुछ करते हैं।

इन स्तरों के बोध का प्रभाव एवं गहनता में अधिक भिन्नता होती हैं। इन स्तरों का बोध मनोवैज्ञानिक अधिनियमों पर आधारित है। प्रथम स्तर पर छात्रों की श्रव्य इन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं। जिन तथ्यों को सुनते हैं उन्हें हम शीघ्र भूल जाते हैं। सुनना कभी अधिक अच्छा लगता है फिर भी उन तथ्यों को भूल जाते हैं।

द्वितीय स्तर पर छात्र परिस्थितियों, चित्रों, चलचित्रों आदि को देखते हैं उनमें अधिक रुचि लेते हैं क्योंकि देखने के साथ सुनते हैं। इन्हें हम स्मरण रखते हैं अपेक्षाकृत नहीं भूलते हैं। यदि ताजमहल या किसी बाँध को देख लिया है उसे याद रखते हैं।

तृतीय स्तर पर छात्रों को कुछ करना पड़ता है अत: करके तथ्यों तथा प्रत्ययों का बोध होता है। **'करके सीखने की क्रिया'** अधिक प्रभावशाली होती हैं। क्योंकि इसमें ज्ञान इन्द्रियाँ तथा कर्म इन्द्रियाँ क्रियाशील होती हैं। जिससे स्वभाव तथा आचरण बन जाता है। इस स्तर पर वास्तविक ज्ञान (True knowledge) प्राप्त होता है क्योंकि छात्रों को वास्तविक अनुभव प्राप्त होता है।

पर्यावरण के सम्बन्ध में बतलाते हैं तथा स्थानीय परिस्थितियों को दिखलाते हैं और शैक्षिक पर्यटनों का आयोजन करते हैं। इस प्रकार के कार्यक्रमों से छात्रों में पर्यावरण के सम्बन्ध में जागरूकता का विकास होता है।

इस विवेचन से पर्यावरण की जागरूकता की प्रकृति, स्तर तथा विशेषताओं का बोध होता है। पर्यावरण जागरूकता तथा विशेषताओं का उल्लेख निम्नलिखित है–

1. पर्यावरण जागरूकता में पर्यावरण सम्बन्धी तथ्यों, प्रत्ययों, प्रक्रियाओं का ज्ञान तथा बोध कराया जाता है।
2. पर्यावरण के कारकों तथा घटकों की पारस्परिक निर्भरता, समस्याओं तथा समाधान की जानकारी प्रदान की जाती है।
3. पर्यावरण में प्रदूषणों की जानकारी दी जाती है और प्रदूषकों का भी ज्ञान दिया जाता है
4. पर्यावरण प्रदूषणों का मानव तथा जीवों पर पड़ने वाले कुप्रभावों की जानकारी दी जाती है।
5. पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं तथा उनके समाधान की जानकारी दी जाती है।
6. पर्यावरण घटकों की पारस्परिक निर्भरता और उनमें निहित सिद्धान्तों की जानकारी दी जाती है।
7. पर्यावरण संरक्षण के अधिनियमों तथा उपयोग का ज्ञान दिया जाता है।
8. भारत में पर्यावरण संरक्षण के साधनों एवं अधिनियमों की जानकारी दी जाती है।
9. पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण प्रदूषण की जानकारी दी जाती है।
10. पर्यावरण के विघटन के प्रकार की जानकारी दी जाती है।
11. पर्यावरण प्रदूषण में मानवीय कार्यकलापों के प्रभाव की जानकारी देना है।

नोट

12. मानवीय जनसंख्या वृद्धि का पारिस्थितिकी पर प्रभाव की जानकारी देना है।
13. पर्यावरण प्रबन्धन के सम्बन्ध में जानकारी देना है।
14. पर्यावरण प्रदूषण के समाधान के माध्यमों का योगदान।
15. पर्यावरण जागरूकता के लिए अध्ययन विषयों को, बी.एड. के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।
16. पर्यावरण जागरूकता में भौतिक, जैविक पक्षों के साथ सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा धार्मिक पक्षों की जानकारी देनी है।

पर्यावरण जागरूकता की पाठ्यवस्तु (Content of Environmental Awareness)

इसके अन्तर्गत सामाजिक, जैविक तथा मनोवैज्ञानिक तथा रासायनिक तत्वों तथा मानवीकृत-पर्यावरण को सम्मिलित किया जाता है। पर्यावरण को साधारणत: दो घटकों में विभाजित करते हैं–

(1) **भौतिक घटक**–वायु, जल तथा भूमि, पृथ्वी, तापक्रम आर्द्रता।

(2) **जैविक घटक**–पौधे, जानवर, जीव-जन्तु तथा मानवीय कार्य-कलाप, कृषि, उद्योग, यातायात, आर्थिक पक्ष, राजनैतिक, सांस्कृतिक पक्ष आदि।

इस प्रकार 'पर्यावरण' का सम्बन्ध वैज्ञानिक तथा मानवीय अध्ययन विषयों से है। पर्यावरण जागरूकता जीवन तथा जैविक प्रणाली के मध्य आन्तरिक सम्बन्ध तथा अन्त:प्रक्रिया का ज्ञान है।

क्या आप जानते हैं पर्यावरण शिक्षा में वास्तविक ज्ञान की अनुभूति कराई जाती है। भावात्मक पक्ष का विकास अधिक महत्वपूर्ण होता है जबकि पर्यावरण जागरूकता को प्रथम दो स्तर तक ही सीमित रखते हैं।

31.2 पर्यावरण जागरूकता के विकास में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in Developing Environmental Awareness)

विभिन्न पर्यावरण के अध्ययन विषयों में सेमीनार तथा सम्मेलन हुए हैं और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'पर्यावरण जागरूकता' की आवश्यकता का अनुभव सभी ने किया है। परन्तु इससे समस्या का समाधान सम्भव नहीं है इसलिए 'पर्यावरण शिक्षा' की तत्काल आवश्यकता का अनुभव किया गया। इसमें सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों को महत्व दिया जाता है। 'पर्यावरण जागरूकता' के केवल सैद्धान्तिक पक्ष पर बल दिया जाता है अर्थात् ज्ञानात्मक पक्ष तक ही सीमित रहता है। पर्यावरण शिक्षा के अन्तर्गत, ज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा भावात्मक तीनों पक्षों के विकास को समान महत्व दिया जाता है। प्रभावी विकास हेतु लगन, अभिवृत्ति तथा मूल्यों का विशेष महत्व होता है।

पर्यावरण शिक्षा की व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षक छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान तथा जानकारी ही नहीं देता है अपितु अधिगम हेतु परिस्थितियाँ भी उत्पन्न करता है जिससे उनमें कौशल, बोध, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जा सके। कक्षा-शिक्षण की व्यवस्था को भी बदलना होगा, जिससे छात्रों की सामूहिक क्रियाओं को अवसर दिया जा सके और छात्रों को सक्रिय होने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। शिक्षक को कक्षा की सामूहिक क्रियाओं का पर्यवेक्षण करना होगा तथा निर्देशन प्रदान करना होगा।

नोट्स शिक्षकों को छात्रों में गुणात्मक विकास को महत्व देना होगा केवल पुस्तकीय ज्ञान पर्याप्त नहीं होगा।

नोट

शिक्षकों को कक्षा तथा विद्यालय से बाहर के पर्यावरण का भी अनुभव प्रदान करना होगा, क्योंकि विभिन्न स्थानों में अन्तर अधिक होता है। इसलिए शिक्षकों को छात्रों में विविध प्रकार के पर्यावरण सम्बन्धी जानकारी, कौशल अभिवृत्ति तथा मूल्यों का विकास करना होगा। जिससे छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी ठोस अनुभव प्राप्त हो सकेंगे। शिक्षक को इन क्रियाओं की व्यवस्था हेतु पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। छात्रों को पौधे लगाने तथा अन्य पर्यावरण सम्बन्धी कार्यों के लिए अवसर प्रदान करने होंगे। छात्रों को इस प्रकार की फिल्म भी दिखलानी चाहिए। शैक्षिक पर्यटनों की व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे प्राकृतिक स्रोतों को देखने तथा समझने का अवसर मिल सके। शिक्षकों को दूरदर्शन के कार्यक्रमों को देखने का सुझाव भी देना चाहिए। जिससे छात्र इस प्रकार के कार्यक्रमों को दूरदर्शन पर देखकर नयी जानकारी प्राप्त कर सकें। समाचार पत्रों को भी पढ़ें, रेडियो के कार्यक्रमों को सुनें। पर्यावरण सम्बन्धी, चार्ट, मॉडल तथा शिक्षण सहायता सामग्री को भी कक्षा में दिखाना चाहिए। जिससे छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी प्रदान की जा सके। पर्यावरण प्रदूषण के कारणों का भी बोध हो सके जिसे वे अपने कार्यों में सावधानी रख सकें।

पर्यावरण शिक्षा तथा पर्यावरण जागरूकता में अन्तर (Difference Between Environmental Education and Environmental Awareness)

पर्यावरण शिक्षा के द्वारा पर्यावरण जागरूकता का विकास किया जाता है। पर्यावरण जागरूकता, पर्यावरण शिक्षा का महत्वपूर्ण पक्ष है। इनमें अधोलिखित ढंग से अन्तर कर सकते हैं–

1. पर्यावरण शिक्षा का मुख्य कार्य उत्पादकता है जिससे जीवन का विकास होता है तथा गुणवत्ता लाई जाती है जबकि पर्यावरण जागरूकता में भौतिक तथा जैविक पक्षों की जानकारी तथा पारस्परिक निर्भरता का बोध होता है।
2. पर्यावरण जागरूकता में प्राकृतिक, भौतिक तथा जैविक पर्यावरण तथा मानव सामग्री एवं क्रियाओं की जानकारी विशेष स्थान तथा समय के सन्दर्भ में दी जाती है।

पर्यावरण शिक्षा एवं पर्यावरण जागरूकता में अन्तर

	पर्यावरण शिक्षा (Environmental Education)	पर्यावरण जागरूकता (Environmental Awareness)
1.	पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान बोध, स्वरूप, प्रक्रिया तथा समस्यायें उनके समाधान की जानकारी दी जाती है।	पर्यावरण के सम्बन्ध में ज्ञान तथा बोध, स्वरूप, घटक, पारस्परिक निर्भरता समस्यायें तथा उनके समाधान की जानकारी दी जाती है।
2.	पर्यावरण विकास हेतु भावना अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जाता है।	पर्यावरण के घटकों का सम्बन्ध एवं पारस्परिक निर्भरता का ज्ञान तथा जानकारी दी जाती है।
3.	पर्यावरण की समस्याओं के समाधान के लिए मनुष्यों में कौशलों तथा कार्य क्षमताओं का प्रशिक्षण दिया जाता है।	पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं तथा उनके समाधान की जानकारी दी जाती है। मूल्यांकन तथा आकलन के निष्कर्षों का बोध कराया जाता है। जागरूकता
4.	पर्यावरण शिक्षा में कार्य-कुशलता की सफलता तथा प्रभावशीलता के मूल्यांकन तथा आकलन हेतु कार्यक्रम भी तैयार किया जाता है।	और ज्ञानात्मक पक्ष के विकास तक ही सीमित रहती है।
5.	पर्यावरण शिक्षा में ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों के विकास को सम्मिलित किया जाता है।	इसमें सैद्धान्तिक पक्ष को प्राथमिकता दी जाती है।

नोट

6.	पर्यावरण शिक्षा में सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों को महत्व दिया जाता है।	पर्यावरण के अध्ययन विषयों में जागरूकता को महत्व दिया जाता है। व्यावहारिकता पर ध्यान नहीं देते हैं।
7.	पर्यावरण शिक्षा में जागरूकता भी सम्मिलित होती है। पर्यावरण अध्ययन विषयों में से एक है परन्तु व्यावहारिकता इसकी विशेषता है।	जागरूकता में भौतिक, जैविक पक्षों को महत्व देते हैं। सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों पर ध्यान नहीं देते हैं। जनसंचार माध्यमों से जागरूकता का विकास करते हैं।
8.	पर्यावरण शिक्षा में सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों को सम्मिलित किया जाता है और इनका विशेष महत्व होता है। कक्षा-शिक्षण के माध्यम से जागरूकता का विकास किया जाता है।	

टास्क पर्यावरण शिक्षा किसे कहते हैं?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए (Fill in the blanks)

1. पर्यावरण शिक्षा में भौतिक, सामाजिक तथा .... पक्षों को महत्व दिया जाता है।
2. पर्यावरण सचेतना में .... पक्ष का विकास करते हैं।
3. पर्यावरण जागरूकता में .... पक्ष का विकास होता है।
4. शिक्षा के मुख्य घटक बालक तथा .... होते हैं।
5. पर्यावरण जागरूकता के घटक भौतिक तथा .... होते हैं।

31.3 सारांश (Summary)

- पर्यावरण जागरूकता 'पर्यावरण शिक्षा' का ही मुख्य अंग है। पर्यावरण शिक्षा का बोध तीन स्तरों पर कराया जाता है–

  (1) पर्यावरण के सम्बन्ध में बतलाकर-छात्र सुनते हैं।

  (2) पर्यावरण के सम्बन्ध में दिखलाकर-छात्र देखते हैं, तथा

  (3) पर्यावरण के सम्बन्ध में करवाकर-छात्र कुछ करते हैं।

  इन स्तरों के बोध के प्रभाव एवं गहनता में अधिक भिन्नता होती है। इन स्तरों का बोध मनोवैज्ञानिक अधिनियमों पर आधारित है।
- पर्यावरण के सम्बन्ध में बतलाते हैं तथा स्थानीय परिस्थितियों को दिखलाते हैं और शैक्षिक पर्यटनों का आयोजन करते हैं। इस प्रकार के कार्यक्रमों से छात्रों में पर्यावरण के सम्बन्ध में जागरूकता का विकास होता है।
- इसके अन्तर्गत सामाजिक, जैविक तथा मनोवैज्ञानिक तथा रासायनिक तत्वों तथा मानवीकृत-पर्यावरण को सम्मिलित किया जाता है। पर्यावरण को साधारणतः दो घटकों में विभाजित करते हैं–

  (1) **भौतिक घटक**–वायु, जल तथा भूमि, पृथ्वी, तापक्रम आर्द्रता।

(2) **जैविक घटक**—पौधे, जानवर, जीव-जन्तु तथा मानवीय कार्य-कलाप, कृषि, उद्योग, यातायात, आर्थिक पक्ष, राजनैतिक, सांस्कृतिक पक्ष आदि।

- विभिन्न पर्यावरण के अध्ययन विषयों में सेमीनार तथा सम्मेलन हुए हैं और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 'पर्यावरण जागरूकता' की आवश्यकता का अनुभव सभी ने किया है। परन्तु इससे समस्या का समाधान सम्भव नहीं है इसलिए 'पर्यावरण शिक्षा' की तत्काल आवश्यकता का अनुभव किया गया। इसमें सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्षों को महत्व दिया जाता है। 'पर्यावरण जागरूकता' के केवल सैद्धान्तिक पक्ष पर बल दिया जाता है अर्थात् ज्ञानात्मक पक्ष तक ही सीमित रहता है।
- पर्यावरण शिक्षा की व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षक छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान तथा जानकारी ही नहीं देता है अपितु अधिगम हेतु परिस्थितियाँ भी उत्पन्न करता है जिससे उनमें कौशल, बोध, अभिवृत्तियों तथा मूल्यों का विकास किया जा सके।
- शिक्षकों को कक्षा तथा विद्यालय से बाहर के पर्यावरण का भी अनुभव प्रदान कराना होगा, क्योंकि विभिन्न स्थानों में अन्तर अधिक होता है। इसलिए शिक्षकों को छात्रों को विविध प्रकार के पर्यावरण सम्बन्धी जानकारी, कौशल अभिवृत्ति तथा मूल्यों का विकास कराना होगा जिससे छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी ठोस अनुभव प्रदान किये जा सकेंगे।

31.4 शब्दकोश (Keywords)

- **मानवीकृत**— मानव द्वारा जनित।
- **श्रव्य इन्द्रियाँ**— सुनने की इन्द्रियाँ।

31.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पर्यावरण जागरूकता की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
2. पर्यावरण जागरूकता के प्रसार में शिक्षा एवं शिक्षक की भूमिका का समीक्षात्मक वर्णन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मनोवैज्ञानिक 2. भावात्मक 3. ज्ञानात्मक 4. पर्यावरण
5. जैविक।

31.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. *अध्यापक शिक्षा*—एन.आर. सक्सेना, बी.के. मिश्रा, आर.के. मोहन्ती; विनय रखेजा पब्लिशर्स, राज प्रिन्टर्स (यू.पी.)
2. *पर्यावरण अध्ययन*—डा. बृजविलास पाण्डेय; प्रकाशन केन्द्र लखनऊ।
3. *भारत में शिक्षा का विकास*—प्रो. सुरेश भटनागर, डॉ. संजय कुमार; विनय रखेजा पब्लिशर्स, (यू.पी.)।
4. *शैक्षिक तकनीकी के मूल तत्व एवं प्रबंधन*—डॉ. एस.के. मंगल, श्रीमती शुभ्रा मंगल; इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस (यू.पी.)।

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY
Jalandhar-Delhi G.T. Road (NH-1)
Phagwara, Punjab (India)-144411
For Enquiry: +91-1824-300360
Fax.: +91-1824-506111
Email: odl@lpu.co.in